

समझदार दिल वाले लोग

[सभोपदेशक की किताब पर चिंतन]

विषय-सूची

परिचय

एक व्यर्थ दुनिया (1:1-11)

व्यर्थ ज्ञान (1:12-18)

व्यर्थ सुख-भोग (2:1-11)

वह जो परमेश्वर को प्रसन्न करता है (2:12-26)

परमेश्वर जो हर चीज़ को उसके समय पर सुंदर बनाता है (1) (3:1-14)

परमेश्वर जो हर चीज़ को उसके समय पर सुंदर बनाता है (2) (3:1-14)

हमें संतुलन के साथ जीवन का आनंद लेना चाहिए (3:13-14)
परमेश्वर जो कुछ भी करता है, वह हमेशा बना रहेगा (3:14)
परमेश्वर जो हर चीज़ को उसके समय पर सुंदर बनाता है (3) (3:14-22)
"कोई सांत्वना देने वाला नहीं था" (4:1-3)
"शांति" (4:4-6)
एक से बेहतर दो हैं (4:7-12)
दीन-हीन लोगों की समझदारी (4:13-16)
"परमेश्वर का भय मानो" (5:1-7)
"इससे हैरान मत हो" (5:8-9)
मज़दूर जो चैन की नींद सोता है (5:10-12)
परमेश्वर जो आनंद लेने के लिए धन-दौलत देता है (5:13-20)
धन-दौलत के आशीर्वाद से ज़्यादा ज़रूरी क्या है (5:19)
इंसान पर एक भारी बोझ (6:1-6)
क्या आप जीवन का आनंद ले रहे हैं? (6:3, 6)
परछाई की तरह बीता जीवन (6:7-12)
"जीवित लोग इसे दिल से लगाएंगे" (7:1-4)
आइए मृत्यु के नज़रिए को अपनाएं (7:2)
समझदार की डांट (7:5-7)
लोग व्यभिचार के रिश्तों में क्यों पड़ते हैं? (7:7)
समझदार की सेवा (7:8-10)
जीवन की दौड़ (7:8-10, 14)
बुद्धिमानी की सुंदरता (7:11-14)
बुद्धिमानी की नींव (7:15-18)
बुद्धिमानी जो समझदार को ताकत देती है (7:19-22)
"मैंने यह पाया है" (7:23-29)

“इंसानी बुद्धिमानी” (8:1-8)

“सूरज के नीचे जो कुछ भी होता है” (8:9-13)

परमेश्वर की तरफ से सज़ा में देरी (8:11)

परमेश्वर के रहस्यमयी काम (8:14-9:1)

सबका अंजाम एक ही होता है (9:2-6)

वह व्यक्ति जो परमेश्वर को भाता है (9:7-10)

समय और मौका (9:11-12)

“गरीब समझदार आदमी” (9:13-18)

आइए हम खुद को मूर्ख साबित न करें (10:1-4)

शांत रहें! (10:4)

“एक कमी” (10:5-7)

कामयाबी के लिए बुद्धिमानी फायदेमंद है (10:8-11)

मूर्ख के होंठ (10:12-15)

मुसीबत में फँसा देश (10:16-20)

आइए उस दिन के बारे में सोचें (11:1-8)

“हे जवान आदमी” (11:9-10)

“अपनी जवानी के दिनों में अपने बनाने वाले को याद रख” (12:1-8)

“बात का निचोड़ सुनने के बाद” (12:9-14)

निष्कर्ष

परिचय

मैं 'उपदेशक' (Ecclesiastes) की किताब पर मनन करना चाहता था क्योंकि मुझे परमेश्वर की बुद्धि की बहुत ज़रूरत महसूस हो रही थी। खासकर, जब मैं इस बारे में सोच रहा था कि इस दुनिया में मिली ज़िंदगी को कैसे जिया जाए—जहाँ "व्यर्थ! व्यर्थ! सब कुछ पूरी तरह व्यर्थ है! सब कुछ बेकार है" (उपदेशक 1:2)—तो मेरा मन बुद्धि की किताबों में से एक, 'उपदेशक' पर मनन करने की ओर खिंचा चला गया। जैसे-जैसे परमेश्वर के वचन ने मेरी अपनी मूर्खता को उजागर किया, मैं इस पक्के इरादे के साथ 'उपदेशक' पर मनन करना चाहता था कि मुझे ऐसी व्यर्थ ज़िंदगी नहीं जीनी है। इसलिए, बुधवार की हमारी साप्ताहिक प्रार्थना सभाओं में 'भजन संहिता' (Psalms) की किताब पर मनन करने, उससे उपदेश देने और उस पर दोबारा सोचने का सिलसिला पूरा करने के बाद, मैंने 'उपदेशक' की किताब पर मनन करना शुरू करने का फैसला किया। मैंने इस किताब पर मनन किया, इससे उपदेश दिया और इस पर और गहराई से सोचा—और यह सब परमेश्वर की बुद्धि पाने की गहरी चाहत के साथ किया।

मैंने सबसे पहले बुधवार, 17 अक्टूबर 2009 को 'उपदेशक' की किताब पर मनन करना शुरू किया। उस शाम, बुधवार की प्रार्थना सभा में, मैंने "एक व्यर्थ दुनिया" (A Meaningless World) शीर्षक के तहत 'उपदेशक' के शुरुआती हिस्से (1:1-11) पर मनन किया, उससे उपदेश दिया और उस पर दोबारा सोचा। इसके बाद, लगभग चौदह महीनों तक, मैं लगभग हर बुधवार को यह प्रक्रिया—मनन करना, उपदेश देना और सोचना—जारी रखता रहा। आखिरकार, 22 दिसंबर 2010 को, मैंने "बात का निचोड़ सुनने के बाद" (Having Heard the Conclusion of the Matter) शीर्षक के तहत किताब के आखिरी हिस्से (उपदेशक 12:9-14) पर मनन करके, उससे उपदेश देकर और उस पर दोबारा सोचकर इस सीरीज़ को पूरा किया। 'उपदेशक' पर मनन करने और उससे उपदेश देने की इस प्रक्रिया के दौरान, मैंने परमेश्वर की कृपा से बहुत ही संतोषजनक समय बिताया। परमेश्वर के वचन पर मनन करना अपने आप में बहुत फायदेमंद था, और यह

इसलिए भी संतोषजनक था क्योंकि उस मनन के ज़रिए परमेश्वर ने मुझे कई बातें समझाई—खासकर यह एहसास कि "मैंने यह पाया है" (7:23-29)। खासकर, मैं भगवान का शुक्रगुजार हूँ कि मुझे यह मौका मिला—मौत के नज़रिए से ज़िंदगी को देखने का (7:2)—ताकि मैं "बेकार की समझदारी" (1:12-18)—जैसे कि सिर्फ़ "इंसानी समझदारी" (8:1-8)—और "बेकार की खुशियों" (2:1-11) से दूर हो सकूँ, जबकि मैं इस "बेकार की दुनिया" (1:11) में "परछाई की तरह बीतने वाली ज़िंदगी" (6:7-12) जी रहा हूँ। इसके बजाय, मैं "मन से गरीब लोगों की समझदारी" (4:13-16), "समझदार लोगों को ताकत देने वाली समझदारी" (7:19-22), "कामयाबी के लिए फायदेमंद समझदारी" (10:8-11), और "समझदारी की खूबसूरती" (7:11-14) को अपना सकूँ। इस समझदारी को पाने की मेरी इच्छा इसलिए है ताकि मैं अपनी बेवकूफी साबित करना बंद कर सकूँ (10:1-4)। बल्कि, मैं अपने बनाने वाले भगवान को याद करना चुनता हूँ—"याद रखो... अपनी जवानी के दिनों में..." "अपने बनाने वाले को याद रखो" (12:1-8)]—मेरी इच्छा है कि मैं विश्वास के साथ "ज़िंदगी की दौड़" (7:8-10, 14) को आखिर तक पूरा करूँ, और साथ ही सिर्फ़ भगवान का डर मानूँ["तुम सिर्फ़ भगवान का डर मानो" (5:1-7)] और इस सफ़र का मज़ा लूँ[क्या तुम इसका मज़ा ले रहे हो? (6:3, 6)]।

आज भगवान से प्रेरित होकर, मैं शुक्रगुजार और खुश हूँ कि मैंने अपनी कमियों के बावजूद, एक्लेसियास्टिस (Ecclesiastes) पर लिखी इस किताब के ड्राफ़्ट में ज़रूरी बदलाव पूरे कर लिए हैं; इस किताब पर मैंने पहली बार लगभग पाँच साल पहले मनन किया था। सबसे बड़ी बात यह है कि मुझे खुशी है कि अब मैं एक्लेसियास्टिस पर अपने इन विचारों को अपने प्यारे भाइयों और बहनों के साथ बाँट सकता हूँ। मैं प्रार्थना करता हूँ कि इस तरह बाँटने से, प्रभु अपनी इच्छा पूरी करें और उन लोगों पर अपनी अनमोल कृपा बरसाएँ जो भगवान की समझदारी पाना चाहते हैं।

प्रभु में,

पास्टर जेम्स किम का संदेश

एक व्यर्थ दुनिया

[सभोपदेशक 1:1-11]

आप जीवन को कैसे देखते हैं? मेरा मानना है कि जीवन क्षणभंगुर है। अगर मुझे जीवन का वर्णन करना हो, तो मैं इसे "क्षणभंगुर अस्तित्व" कहूँगा। कोरियाई शब्द *deot-eopda* (जिसका अर्थ है "क्षणभंगुर" या "अस्थायी") में उपसर्ग *deot* का शब्दकोश अर्थ "अंतराल" या "समय की अवधि" से संबंधित है। इस प्रकार, इस शब्द का अर्थ है "कोई स्थायी अंतराल न होना" या "स्थायित्व की कमी," जो यह दर्शाता है कि कुछ भी स्थिर नहीं रहता और सब कुछ तेज़ी से बदलता है—मूल रूप से, यह अस्थायित्व की स्थिति है। ऑनलाइन इस शब्द पर शोध करते समय, मुझे मुहावरा *iljangchunmong* ("वसंत का सपना") मिला। यह वाक्यांश "वसंत के क्षणभंगुर सपने" को संदर्भित करता है और इसका उपयोग लाक्षणिक रूप से "व्यर्थ महिमा या क्षणभंगुर मामलों" का वर्णन करने के लिए किया जाता है। शायद इसीलिए लोग अक्सर मानव जीवन की तुलना ऐसे सपने से करते हैं। भजन के लेखक मूसा ने प्रार्थना की: "हमें अपने दिनों की गिनती करना सिखा" (भजन 90:12)। हमें भी मूसा की तरह प्रार्थना करनी चाहिए। इस प्रार्थना में दो बातें शामिल हैं: "हमें जीवन की व्यर्थता सिखा" और "हमें मूल्यवान जीवन जीना सिखा।" तो, हम जीवन की व्यर्थता को कैसे पहचान सकते हैं? इसके तीन तरीके हैं:

(1) पहला, जीवन व्यर्थ है क्योंकि हम मिट्टी में मिल जाते हैं। भजन 90:3 देखें: "तू मनुष्य को वापस मिट्टी में मिला देता है और कहता है, 'हे मनुष्यों की संतानों, वापस लौट आओ।'"

(2) दूसरा, जीवन व्यर्थ है क्योंकि यह छोटा है। भजन 90:4-6 पर विचार करें: "क्योंकि तेरी दृष्टि में हज़ार वर्ष बीते हुए कल के समान हैं, या रात के एक पहर के समान। तू उन्हें बाढ़ की तरह बहा ले जाता है; वे नींद के समान

हैं, उस घास के समान जो सुबह उगती है। सुबह वह फलती-फूलती और बढ़ती है; शाम तक वह काट दी जाती है और मुरझा जाती है।"

(3) तीसरा, मानव जीवन व्यर्थ है क्योंकि इसमें केवल परिश्रम और दुःख ही होता है। भजन संहिता 90:10 पर विचार करें: "हमारी आयु के दिन सत्तर वर्ष के होते हैं; और यदि बल के कारण वे अस्सी वर्ष के भी हों, तो भी उनका घमंड केवल परिश्रम और दुःख ही है; क्योंकि वे जल्द ही कट जाते हैं, और हम उड़ जाते हैं।"

आज का अंश, उपदेशक 1:1-11, पूरी उपदेशक की पुस्तक की भूमिका के रूप में है। इस भूमिका को दो भागों में बांटा जा सकता है; पहले भाग में आयत 1 शामिल है। यह आयत उपदेशक के लेखक की पहचान सुलैमान के रूप में करती है, जो "दाऊद का पुत्र, यरूशलेम का राजा" था। दूसरे शब्दों में, यह बताता है कि सुलैमान ही वह "उपदेशक" है जिसने यह पुस्तक लिखी थी। दूसरे भाग में आयत 2 से 11 तक शामिल हैं। यह खंड दुनिया की व्यर्थता को बताता है। इसी दूसरे खंड में—जो दुनिया की व्यर्थता के बारे में बात करता है—हमें ये जाने-पहचाने शब्द मिलते हैं: "उपदेशक कहता है: व्यर्थता ही व्यर्थता, सब कुछ व्यर्थता है!" (आयत 2)। यह स्वीकारोक्ति राजा सुलैमान—उपदेशक—के अनुभवों से निकला निष्कर्ष है, जिसने इस दुनिया की हर चीज़ का आनंद लिया था। उसकी स्वीकारोक्ति बस यही है: "सब कुछ व्यर्थ है।" दिलचस्प बात यह है कि सुलैमान ने यहाँ "व्यर्थता" के लिए जिस मूल हिब्रू शब्द का इस्तेमाल किया है, उसका अर्थ "साँस" है। यह "उस चीज़ के लिए एक रूपक के रूप में काम करता है जो क्षणभंगुर है, उसके विपरीत जो ठोस और स्थायी है" (भजन संहिता 90:9) (पार्क युन-सन)। पादरी जॉन मैकआर्थर बताते हैं कि राजा सुलैमान, जो उपदेशक है, उपदेशक की पुस्तक में "व्यर्थता" (या "अर्थहीन") शब्द का इस्तेमाल कम से कम तीन तरीकों से करता है:

(1) पहला अर्थ यह है कि "सूरज के नीचे" लोगों के काम क्षणभंगुर होते हैं। दूसरे शब्दों में, जीवन व्यर्थ है क्योंकि यह "उस धुंध की तरह है जो कुछ समय के लिए दिखाई देती है और फिर गायब हो जाती है" (याकूब 4:14)।

(2) दूसरा अर्थ यह है कि “सूरज के नीचे” लोगों के काम बेकार या अर्थहीन होते हैं। यह उस बुरे असर पर ध्यान केंद्रित करता है जो ब्रह्मांड की शापित स्थिति का पृथ्वी पर इंसानी अनुभवों पर पड़ता है।

(3) तीसरा अर्थ यह है कि “सूरज के नीचे” लोगों के काम समझ से बाहर या रहस्यमयी होते हैं। यह जीवन के उन सवालों पर सोचने के बाद निकला नतीजा है जिनका कोई जवाब नहीं है (मैकआर्थर)।

आज, इस हिस्से और “व्यर्थ दुनिया” के विषय पर ध्यान देते हुए, मैं उन चार कारणों पर विचार करना चाहता हूँ जिनकी वजह से यह दुनिया जिसमें हम रहते हैं, व्यर्थ है। मुझे उम्मीद है कि इस संदेश के ज़रिए, हम इस दुनिया की व्यर्थता को और बेहतर ढंग से समझ पाएँगे। साथ ही, मैं प्रार्थना करता हूँ कि परमेश्वर की दी हुई समझ से, हम इस व्यर्थ दुनिया में एक सार्थक जीवन जी सकें—ऐसा जीवन जिसे परमेश्वर याद रखे।

जिस दुनिया में हम रहते हैं, वह व्यर्थ क्यों है?

पहला, यह दुनिया व्यर्थ है क्योंकि इससे कोई स्थायी फ़ायदा नहीं मिलता। दूसरे शब्दों में, यह व्यर्थ है क्योंकि अंत में इसका कुछ भी नहीं बचता। आज के वचन, उपदेशक 1:3 को देखें: “सूरज के नीचे इंसान अपनी सारी मेहनत से क्या फ़ायदा उठाता है?” इस वचन का मतलब है कि सूरज के नीचे इंसान जो भी मेहनत करता है—परमेश्वर के बिना—उससे कोई फ़ायदा नहीं होता और कुछ भी पीछे नहीं बचता। भजन संहिता 90:10 याद आता है: “हमारे जीवन के दिन सत्तर साल के होते हैं; और अगर मज़बूती के कारण वे अस्सी साल के भी हों, तो भी उनमें बस मेहनत और दुख ही होता है; क्योंकि वे जल्द ही खत्म हो जाते हैं, और हम उड़ जाते हैं।” मूसा, जो “परमेश्वर का जन” था (भजन संहिता 90), सत्तर या अस्सी साल के जीवन का वर्णन करता है—एक ऐसा जीवन जो तेज़ी से बीत जाता है—जिसमें बस मेहनत और दुख ही होता है। जब हम उन सत्तर या अस्सी सालों को पीछे मुड़कर देखते हैं और सोचते हैं कि अपनी सारी मेहनत से हमने क्या पीछे छोड़ा है, तो आप और मैं क्या कहेंगे? राजा सुलैमान, जो उपदेशक था, उपदेशक 5:15-16 में इसके बारे में कहता है: “जैसे वह अपनी माँ के गर्भ से आया था, वैसे ही नंगा लौटेगा, और वैसे ही जाएगा जैसे आया था; और वह अपनी मेहनत से कुछ भी ऐसा नहीं ले जा पाएगा जिसे वह अपने हाथ में ले जा सके। और यह भी एक बहुत बड़ी बुराई है—जैसे वह आया था, वैसे

ही जाएगा। और उसे क्या फ़ायदा जिसने हवा के लिए मेहनत की?" वह कहता है कि परमेश्वर के बिना इस दुनिया में की गई सारी मेहनत हवा को पकड़ने की कोशिश करने जैसी है। हम हवा को कैसे पकड़ सकते हैं? इसका मतलब है कि ऐसी मेहनत बेकार है और इससे हमें कोई फ़ायदा नहीं होता। इसलिए, राजा सुलैमान कहते हैं, "अगर कोई व्यक्ति परमेश्वर से दूर रहकर जीवन जीता है, तो मरने के बाद उसकी ज़िंदगी की कोई भी उपलब्धि बाकी नहीं रहती" (1:3) (पार्क युन-सन)। इसलिए, उपदेशक कहते हैं कि यह दुनिया पूरी तरह से व्यर्थ है।

दूसरी बात, इस दुनिया के व्यर्थ होने का कारण यह है कि इंसान की ज़िंदगी, चाहे कितनी भी लंबी क्यों न हो, आखिर में मिट्टी में ही मिल जाती है। आज के वचन को देखें, उपदेशक 1:5-6: "सूरज उगता है और डूबता है, और तेज़ी से वापस वहीं पहुँचता है जहाँ से वह उगा था। हवा दक्षिण की ओर बहती है और उत्तर की ओर मुड़ती है; वह गोल-गोल घूमती रहती है और हमेशा अपने रास्ते पर लौट आती है।" यह वचन बताता है कि भले ही दुनिया के लोग जोश और बहुत सारी गतिविधियों के साथ अपनी ज़िंदगी जिएं, लेकिन आखिर में वे मिट्टी में ही मिल जाते हैं (पार्क युन-सन)। जवानी में कोई कितना भी ताकतवर और मज़बूत क्यों न दिखे (भजन संहिता 39:5), इंसान आखिर मिट्टी से ही बना है और उसे मिट्टी में ही लौटना है। हमें इस सच्चाई को समझना चाहिए: "हर इंसान घास की तरह है, और उसकी सारी शान-शौकत घास के फूल की तरह है" (1 पतरस 1:24-25)। आखिर में, घास सूख जाती है और फूल गिर जाता है। हमें इस सच्चाई को समझना चाहिए कि "हर कोई बस एक परछाई की तरह घूमता रहता है; वे बेकार में भाग-दौड़ करते हैं और दौलत जमा करते हैं, यह जाने बिना कि वह किसे मिलेगी" (भजन संहिता 39:6)। हमारी ज़िंदगी हवा की तरह है। जैसे हवा दक्षिण की ओर बहती है और उत्तर की ओर मुड़ती है, यहाँ-वहाँ घूमती है और आखिर में अपनी शुरुआत वाली जगह पर लौट आती है (वचन 6), वैसे ही हमारी ज़िंदगी भी—मिट्टी से बनी होने के कारण—आखिर में मिट्टी में ही मिल जाती है। इसीलिए उपदेशक कहते हैं कि यह दुनिया व्यर्थता की व्यर्थता है।

तीसरी बात, यह दुनिया बेकार इसलिए है क्योंकि इंसान का लालच कभी संतुष्ट नहीं होता।

आज के वचन, उपदेशक 1:8 को देखिए: "सब बातें थका देने वाली हैं; मनुष्य उन्हें बयान नहीं कर सकता। आँखें देखने से नहीं भरतीं, और न ही कान सुनने से तृप्त होते हैं।" यह बात कि आँखें और कान कभी संतुष्ट नहीं

होते—चाहे कितना भी देखा या सुना जाए—यह बताती है कि इंसान का लालच, उस समुद्र की तरह है जो लगातार पानी आने के बावजूद कभी नहीं भरता (वचन 7), और कभी संतुष्ट नहीं होता (पार्क युन-सन)। सच तो यह है कि हमारे अंदर "शरीर की अभिलाषा, आँखों की अभिलाषा और जीवन का घमंड" कभी खत्म नहीं होते (1 यूहन्ना 2:16)। इंसान का लालच असीम लगता है। इसीलिए राजा सुलैमान ने कहा, "उसकी आँखें धन-दौलत से कभी नहीं भरतीं" (उपदेशक 4:8)। फिर भी, हम इस बेकार दुनिया में कई चीज़ों के पीछे भागते हैं, ताकि उस कभी न खत्म होने वाले लालच को संतुष्ट कर सकें। लेकिन आखिर में, हमें कोई संतुष्टि नहीं मिलती। राजा सुलैमान ने यहाँ तक कहा, "मैंने अपनी आँखों को वह सब कुछ दिया जिसकी उन्होंने इच्छा की, और अपने दिल को किसी भी खुशी से वंचित नहीं रखा" (2:10)। राजा सुलैमान ने उन सभी चीज़ों का आनंद लिया जिनकी उनकी आँखों ने इच्छा की और जिनसे उनके दिल को खुशी मिली—इसे उन्होंने अपनी सारी मेहनत का फल कहा (2:10)—लेकिन अंत में, उन्होंने माना: "तब मैंने उन सभी कामों को देखा जो मेरे हाथों ने किए थे और उस मेहनत को देखा जो मैंने की थी; और देखा कि सब कुछ व्यर्थ और मन की बेचैनी थी, और सूरज के नीचे कोई लाभ नहीं था" (वचन 11)। आखिर में, नीतिवचन का लेखक कहता है: "पाताल और विनाश-स्थान कभी संतुष्ट नहीं होते, और मनुष्य की आँखें भी कभी संतुष्ट नहीं होतीं" (नीतिवचन 27:20)।

आजकल विज्ञान की तेज़ी से हो रही तरक्की के साथ, हर तरह की नई मशीनें लगातार आ रही हैं। हालाँकि, जब मैं सोचता हूँ कि क्या ऐसी नई मशीनें ईसाइयों—जो यीशु में नई रचना बन गए हैं—के दिलों को संतुष्ट कर सकती हैं, तो मेरा मानना है कि वे कभी ऐसा नहीं कर सकतीं। जैसे-जैसे समय बीतता जाएगा, नई चीज़ें आती रहेंगी; और भले ही हम उन्हें आते ही खरीदते रहें, मेरा मानना है कि उन्हें हासिल करने से हमारे दिल कभी सच में संतुष्ट नहीं होंगे। मेरे ऐसा सोचने का कारण उपदेशक 3:11 में मिलता है: "परमेश्वर ने हर चीज़ को उसके समय पर सुंदर बनाया है। उसने मनुष्य के मन में अनंत काल की समझ भी डाली है..." परमेश्वर ने हमारे अंदर अनंत काल की चाहत रखी है। इसलिए, हम इस दुनिया की क्षणभंगुर चीज़ों में कभी भी पूरी संतुष्टि नहीं पा सकते। ऐसी क्षणिक चीज़ों के पीछे भागना बेकार की कोशिश है—जैसे हवा के पीछे भागना—जिससे कोई असली फ़ायदा नहीं होता। सचमुच, यह दुनिया व्यर्थता की व्यर्थता है।

आखिरकार, इस दुनिया के अर्थहीन होने का चौथा कारण यह है कि आने वाली पीढ़ियाँ आज के ज़माने के लोगों को याद नहीं रखेंगी।

आज के वचन, उपदेशक 1:11 को देखें: “पुरानी पीढ़ियों की कोई याद नहीं रहती, और जो आने वाली हैं, उन्हें भी उनके बाद आने वाले याद नहीं रखेंगे।” राजा सुलैमान कहते हैं, “जो हुआ है, वही फिर होगा; जो किया गया है, वही फिर किया जाएगा; सूरज के नीचे कुछ भी नया नहीं है। क्या कोई ऐसी चीज़ है जिसके बारे में कोई कह सके, ‘देखो! यह कुछ नया है’? यह तो बहुत पहले से ही यहाँ मौजूद थी” (पद 9-10)। इन शब्दों का अर्थ यह है कि चूँकि इस दुनिया में सचमुच कुछ भी नया नहीं है—बस वही दोहराया जाता है जो पहले हो चुका है—इसलिए लोग संतुष्टि नहीं पा सकते (पार्क युन-सन)। इस संदर्भ में, राजा सुलैमान कहते हैं कि दुनिया अर्थहीन है क्योंकि आने वाली पीढ़ियाँ आज के ज़माने के लोगों को याद नहीं रखेंगी (पद 11) (पार्क युन-सन)। चाहे किसी व्यक्ति के पास कितनी भी दौलत, ताकत या प्रभाव क्यों न हो, मरने के बाद क्या बचता है? जैसे-जैसे समय बीतता है, क्या ये सभी चीज़ें आखिरकार भुला नहीं दी जाती? एक पीढ़ी चली जाती है, और दूसरी आती है (पद 3)। और चूँकि पिछली पीढ़ियों को याद नहीं रखा जाता, इसलिए यह दुनिया सचमुच अर्थहीन है—व्यर्थता की व्यर्थता।

कहा जाता है कि शेर जीते-जी जंगल का राजा होता है, लेकिन मरने के बाद कुत्ते उसकी हड्डियाँ इधर-उधर ले जा सकते हैं (पार्क युन-सन)। मौत ऐसी चीज़ों को बेकार कर देती है; मरा हुआ शेर होने से बेहतर है ज़िंदा कुत्ता होना। जीते-जी किसी ने चाहे कितना भी आनंद क्यों न लिया हो, मौत को टाला नहीं जा सकता, और चले जाने के बाद किसी चीज़ का कोई महत्व नहीं रहता। जैसे-जैसे समय बीतता है, इंसान भुला दिया जाता है। सचमुच, यह दुनिया व्यर्थता के अलावा और कुछ नहीं है।

तो फिर, हमें—आपको और मुझे—इस अर्थहीन दुनिया में कैसे जीना चाहिए? पहली बात, जहाँ परमेश्वर से दूर बिताई गई ज़िंदगी की उपलब्धियाँ मौत के बाद कुछ भी पीछे नहीं छोड़तीं, वहीं हमें—यीशु में विश्वास रखने वालों को—परमेश्वर से बुद्धि माँगनी चाहिए और इस दुनिया में समझदारी से जीना चाहिए, उसकी दी हुई बुद्धि के अनुसार।

हमें परमेश्वर से बुद्धि क्यों माँगनी चाहिए? क्योंकि बुद्धि सफलता के लिए फ़ायदेमंद है (10:10)। हमें परमेश्वर से स्वर्गीय बुद्धि (3:17-18) माँगनी चाहिए, जो उदारता से देता है (याकूब 1:5)। और हमें परमेश्वर की दी हुई बुद्धि का इस्तेमाल करके इस बेकार सी दुनिया में समझदारी से जीना चाहिए। ऐसी दुनिया में हम समझदारी से

कैसे जी सकते हैं? हमें ऐसी ज़िंदगी जीनी चाहिए जिसमें परमेश्वर का डर हो और हम उसके वचन का पालन करें, उसकी दी हुई बुद्धि के अनुसार। परमेश्वर की नज़र में यही एक सच में सफल ज़िंदगी है। इसी तरह हम एक सार्थक ज़िंदगी जी सकते हैं जो एक स्थायी विरासत छोड़ती है। दूसरी बात, हमें परमेश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए और कहना चाहिए, "हे प्रभु, मुझे मेरा अंत और मेरे दिनों की गिनती बता; मुझे बता कि मैं कितना क्षणभंगुर हूँ!" (भजन संहिता 39:4)।

भजनकार की तरह—दाऊद की तरह—हमें प्रार्थना करनी चाहिए कि परमेश्वर हमें अपनी ज़िंदगी के अंत और इंसानी जीवन की क्षणभंगुरता को समझने में मदद करे। इस बेकार सी दुनिया में हमें मिले छोटे से सत्तर या अस्सी साल के जीवन में हम समझदारी से कैसे जिँएँ—ऐसा जीवन जो धूल से शुरू होता है और अंत में धूल में ही मिल जाता है? मुझे इसका जवाब उपदेशक 7:2 में मिला: "दावत वाले घर में जाने से शोक वाले घर में जाना बेहतर है, क्योंकि यह सभी इंसानों का अंत है, और जीवित लोग इसे दिल में बिठाएँगे।" दूसरे शब्दों में, हमें इस दुनिया में ऐसे नज़रिए के साथ जीना चाहिए जो मौत को स्वीकार करता हो। यह प्रार्थना करते हुए, "हमें अपने दिनों की गिनती करना सिखा ताकि हम बुद्धिमान हृदय पा सकें" (भजन संहिता 90:12), हमें परमेश्वर की दी हुई बुद्धि का इस्तेमाल करके धरती पर अपने सीमित लेकिन कीमती समय को उसकी महिमा के लिए जीना चाहिए।

तीसरी बात, हमें लालच को छोड़ देना चाहिए और संतोष का जीवन जीना चाहिए, सिर्फ़ यीशु में संतुष्ट रहकर।

भजन संहिता 73:25 में, भजनकार आसाफ़ कहता है: "स्वर्ग में मेरा कौन है तेरे सिवा? और धरती पर भी तेरे सिवा मेरी कोई इच्छा नहीं है।" इस बेकार सी दुनिया में रहते हुए, यीशु ही एकमात्र ऐसे हैं जो हमारी आत्मा को तृप्त कर सकते हैं; वही हमारी गहरी से गहरी ज़रूरतों को पूरा करने में सक्षम हैं। क्योंकि हमारी आत्मा अनंत जीवन के लिए तरसती है, इसलिए केवल अनंत यीशु ही उसे सचमुच तृप्त कर सकते हैं। प्रेरित पौलुस की तरह, हमें भरपूर और तंगी—यानी "हर परिस्थिति" में—संतोषी रहना सीखना चाहिए (फिलिप्पियों 4:11)। हमें केवल यीशु में संतुष्ट रहकर अपना जीवन जीना चाहिए। हमें केवल यीशु में ही अपनी संतुष्टि ढूँढ़नी चाहिए और परमेश्वर के वचन का पालन करना चाहिए। इसके अलावा, हमें अपना जीवन उन चीज़ों को पाने की कोशिश में बिताना चाहिए जो अनंत हैं।

चौथी और आखिरी बात, हमें ऐसा जीवन जीने की कोशिश करनी चाहिए जिसे परमेश्वर याद रखें।

हमारे मरने के बाद, हमें कोई याद नहीं रखेगा। भले ही हमारे बच्चे और पोते-पोतियाँ हमें याद रखें, लेकिन समय बीतने के साथ लोग हमें भूल जाएँगे। फिर भी, आप और मैं ऐसे लोग हैं जिन्हें परमेश्वर याद रखते हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि हम उनकी नज़र में अनमोल और सम्मानित हैं (यशायाह 43:4)। कुरनेलियुस एक ऐसा व्यक्ति था जिसे परमेश्वर ने याद रखा (प्रेरितों के काम 10:4)। कुरनेलियुस की तरह, हमें भी ऐसा जीवन जीना चाहिए जिसे परमेश्वर याद रखें। जिस तरह कुरनेलियुस ने प्रार्थना और दान-पुण्य का जीवन जिया जिसे परमेश्वर ने स्वीकार किया, उसी तरह हमें इस क्षणभंगुर दुनिया में परमेश्वर की नज़र में सार्थक जीवन जीना चाहिए, ताकि हमारा जीवन उनके द्वारा याद रखा जाए।

हम जिस दुनिया में रहते हैं, वह क्षणभंगुर और अर्थहीन है। इससे कोई स्थायी लाभ नहीं मिलता; हमें अंततः मिट्टी में मिल जाना है, और भले ही हम इस दुनिया में लालच पालें, हमें कभी सच्ची संतुष्टि नहीं मिलती—जिससे यह जीवन व्यर्थ हो जाता है। यह दुनिया इसलिए भी क्षणभंगुर है क्योंकि आने वाली पीढ़ियाँ इस युग के लोगों को याद नहीं रखेंगी। तो फिर, हमें ऐसी दुनिया में कैसे जीना चाहिए? हमें परमेश्वर द्वारा दी गई बुद्धि से निर्देशित होकर सार्थक जीवन जीना चाहिए। पृथ्वी पर अपने समय के दौरान, हमें लालच छोड़ देना चाहिए और केवल यीशु में संतोष पाना चाहिए। परमेश्वर का भय मानकर और उनके वचन का पालन करके, हमें परमेश्वर के लोग बनना चाहिए—ऐसे लोग जिनका जीवन उनके द्वारा याद रखा जाए।

बेकार की समझदारी

[सभोपदेशक 1:12-18]

हमने पहले "बेकार की दुनिया" के विचार पर मनन किया था, जिसमें सभोपदेशक 1:1-11 के हिस्से पर ध्यान दिया गया था। हमने चार कारण जाने कि यह दुनिया बेकार क्यों है: (1) कोई स्थायी लाभ या विरासत पीछे नहीं रहती; (2) सब कुछ आखिरकार धूल में मिल जाता है; (3) इंसान का लालच कभी खत्म नहीं होता; और (4) पिछली पीढ़ियों को कोई याद नहीं रखता। दुनिया की इस बेकार स्थिति के इन चार पहलुओं पर मनन करने के बाद, हमें यह भी चार सबक मिले कि ऐसी दुनिया में कैसे जिया जाए। इनमें से पहला सबक यह है कि यीशु में विश्वास रखने वालों के तौर पर, हमें परमेश्वर से समझदारी मांगनी चाहिए और उनकी दी हुई समझदारी का इस्तेमाल करके इस दुनिया में समझदारी से जीना चाहिए। हमें परमेश्वर से समझदारी क्यों मांगनी चाहिए? कारण यह है कि सफलता पाने के लिए समझदारी फायदेमंद होती है (10:10)।

यहाँ, हमें दो तरह की समझदारी के बीच अंतर करने की ज़रूरत है: वह समझदारी जो परमेश्वर हमें देता है और वह समझदारी जो इस दुनिया की है। इस अंतर का एक मुख्य उदाहरण याकूब 3:13-18 में मिलता है। प्रेरित याकूब इन दो तरह की समझदारी के बारे में इस तरह बताते हैं:

(1) प्रेरित याकूब पहली तरह की समझदारी को "ऊपर से मिलने वाली समझदारी" कहते हैं (पद 17)। ऊपर से मिलने वाली यह समझदारी "पहले पवित्र, फिर शांतिप्रिय, कोमल, मानने को तैयार, दया और अच्छे फलों से भरी, बिना भेदभाव और बिना दिखावे के होती है" (पद 17)। जिन विश्वासियों के पास ऊपर से मिलने वाली यह समझदारी होती है, वे अच्छे कामों और कोमल स्वभाव के ज़रिए अपनी समझदारी दिखाते हैं (पद 13)। (2) दूसरी तरह की समझदारी वह है जो "सांसारिक, प्राकृतिक और शैतानी" होती है (पद 15)। जहाँ ऐसी समझदारी

होती है, वहाँ "अव्यवस्था और हर तरह की बुरी हरकत" के साथ-साथ "ईर्ष्या और स्वार्थी महत्वाकांक्षा" भी होती है (पद 16)। इस सांसारिक, प्राकृतिक और शैतानी समझदारी रखने वालों के बीच लड़ाई-झगड़े का कारण यह है कि यह उनके शरीर के अंदर "लड़ती हुई इच्छाओं" से पैदा होती है (4:1)। इसके अलावा, उन्हें अपनी प्रार्थनाओं का जवाब नहीं मिलता क्योंकि वे गलत इरादों से परमेश्वर से मांगते हैं—वे जो कुछ पाते हैं, उसे सिर्फ अपनी इच्छाओं को पूरा करने में खर्च करना चाहते हैं (पद 3)। आज के हिस्से—उपदेशक 1:12-18—में राजा सुलैमान, जो उपदेशक भी थे, दुनिया की समझदारी या ज्ञान की खोज करते हैं। आयत 17 को देखें: "और मैंने अपना मन ज्ञान को जानने और पागलपन और मूर्खता को समझने में लगाया..." यहाँ, हम देखते हैं कि वे परमेश्वर की दिव्य प्रेरणा के बजाय अपने खुद के अनुभव-आधारित शोध पर भरोसा कर रहे हैं (मैकआर्थर)। हम इसे आयत 16 से समझ सकते हैं: "मैंने अपने मन में कहा, 'मैंने बहुत ज्ञान प्राप्त किया है, जो मुझसे पहले यरूशलेम में रहने वाले सभी लोगों से कहीं ज्यादा है, और मेरे मन को ज्ञान और समझ का बहुत अनुभव हुआ है।'" क्योंकि उन्होंने दुनियावी ज्ञान और समझ से—जिसका उन्होंने खुद अनुभव किया था—"बहुत ज्ञान" हासिल किया था, इसलिए राजा सुलैमान ने अपनी अनुभव-आधारित जाँच-पड़ताल के लिए उसी ज्ञान पर भरोसा किया। इस तरह, उन्होंने "सूरज के नीचे किए जाने वाले सभी कामों" (आयत 14) को देखा और "अपना मन ज्ञान के द्वारा उन सभी कामों को खोजने और जाँचने में लगाया जो स्वर्ग के नीचे किए जाते हैं" (आयत 13)। सूरज के नीचे होने वाली हर चीज़ को देखने और जाँचने के बाद वे किस नतीजे पर पहुँचे? दूसरे शब्दों में, उनकी अनुभव-आधारित जाँच का नतीजा क्या था? आज का हिस्सा तीन बातें बताता है:

(1) पहली बात, सूरज के नीचे होने वाली सभी गतिविधियों को देखने और जाँचने के बाद राजा सुलैमान जो नतीजा निकालते हैं, उसके बारे में उपदेशक 1:13 कहता है: "मैंने अपना मन स्वर्ग के नीचे किए जाने वाले सभी कामों को ज्ञान के साथ जाँचने और खोजने में लगाया। परमेश्वर ने इंसानों पर कितना भारी बोझ डाला है, जिसे उन्हें उठाना पड़ता है।" उनकी जाँच का पहला नतीजा यह था कि "दुनिया के सभी काम हमारे लिए एक भारी बोझ हैं—एक ऐसा काम जो परमेश्वर ने हमें कड़ी मेहनत करने के लिए दिया है।" वे उपदेशक 3:10 में इसे फिर से कहते हैं: "मैंने वह बोझ देखा है जो परमेश्वर ने इंसान जाति पर डाला है।"

(2) दूसरी बात, राजा सुलैमान अपनी जाँच-पड़ताल से इस नतीजे पर पहुँचे: "जो टेढ़ा है उसे सीधा नहीं किया जा सकता; जो कमी है उसे गिना नहीं जा सकता" (आयत 15)। इस बात का कि "जो टेढ़ा है उसे सीधा नहीं

किया जा सकता," मतलब यह है कि ज्ञान या समझ—परमेश्वर के बिना—आखिरकार किसी भी बुनियादी समस्या को हल नहीं कर सकती। इसके अलावा, "जो कमी है उसे गिना नहीं जा सकता" वाक्यांश का अर्थ है कि "अपूर्ण को पूर्ण बनाने का कोई तरीका नहीं है।" संक्षेप में, इसका अर्थ है कि मानवीय बुद्धि गिरी हुई मानवता को बचाने का कोई उपाय नहीं देती (पार्क युन-सन)। इस प्रकार, सुलैमान जिस दूसरे निष्कर्ष पर पहुँचे, वह यह था कि हम मानवीय बुद्धि से स्वयं को नहीं बचा सकते। (3) तीसरा, राजा सुलैमान ने पृथ्वी पर किए गए सभी कार्यों को देखने और उनकी गहराई से जाँच करने के बाद जो निष्कर्ष निकाला, वह एक शब्द में यह था कि "सब कुछ व्यर्थ है और हवा के पीछे भागने जैसा है" (पद 14)। कोई व्यक्ति हवा को कैसे पकड़ सकता है? बात यह है कि यह भी उतना ही व्यर्थ है। परमेश्वर के बिना, इस दुनिया में किए गए सभी कार्य और मेहनत अर्थहीन हैं। आज के अंश के पद 17 को देखें: "और मैंने अपना मन बुद्धि को जानने और पागलपन और मूर्खता को जानने में लगाया। मैंने महसूस किया कि यह भी हवा के पीछे भागने जैसा है।" अंततः, अपनी "महान बुद्धि" (पद 16) के सहारे पृथ्वी पर सब कुछ जानने-समझने के बाद, राजा सुलैमान को एहसास हुआ कि ये प्रयास एक कष्टदायक कार्य थे (जो परमेश्वर ने मनुष्यों को भुगतने के लिए दिए हैं), कि मानवीय बुद्धि विनाश की ओर बढ़ रही मानवता को बचाने का कोई उपाय नहीं देती, और यह सब केवल "व्यर्थ और हवा के पीछे भागने जैसा" था। संक्षेप में, राजा सुलैमान की स्वीकारोक्ति यह निष्कर्ष निकालती है कि "पृथ्वी के नीचे" की बुद्धि—अर्थात्, इस दुनिया की बुद्धि—पूरी तरह से व्यर्थ है।

इस दुनिया की बुद्धि व्यर्थ क्यों है? मुझे इसका कारण 1 कुरिन्थियों 1:21 में मिला: "क्योंकि जब परमेश्वर की बुद्धि के अनुसार दुनिया ने बुद्धि के द्वारा परमेश्वर को नहीं जाना, तो परमेश्वर ने हमारी प्रचार की गई मूर्खता के द्वारा उन लोगों को बचाना उचित समझा जो विश्वास करते हैं।" संक्षेप में, इस दुनिया की बुद्धि व्यर्थ है क्योंकि यह परमेश्वर के ज्ञान तक नहीं ले जा सकती। यह व्यर्थ है क्योंकि ऐसी बुद्धि के माध्यम से कोई स्वयं को नहीं बचा सकता। यूनानियों के लिए—जो उस व्यर्थ बुद्धि की तलाश में थे जिसका उल्लेख प्रेरित पौलुस ने 1 कुरिन्थियों 1:22-23 में किया है—यीशु मसीह का क्रूस पर चढ़ाया जाना, जैसा कि पौलुस और उनके सहयोगियों ने प्रचार किया था, "मूर्खता" थी (पद 23)। दूसरे शब्दों में, सांसारिक बुद्धि के दृष्टिकोण से, पौलुस और उनके सहयोगियों द्वारा प्रचारित यीशु मसीह का सुसमाचार मूर्खतापूर्ण लगा। लेकिन, "जिन्हें बुलाया गया है—चाहे वे यहूदी हों या

यूनानी—उनके लिए मसीह परमेश्वर की शक्ति और परमेश्वर की बुद्धि हैं" (पद 24)। बाइबल साफ़ तौर पर कहती है कि यीशु मसीह परमेश्वर की बुद्धि हैं (पद 24)। यीशु मसीह हमारी बुद्धि बनते हैं (पद 30)।

यीशु मसीह ही हमारी बुद्धि हैं। जो लोग यीशु मसीह में विश्वास करते हैं, उनसे परमेश्वर कहते हैं, “परमेश्वर ने दुनिया की मूर्ख चीज़ों को चुना ताकि बुद्धिमानों को शर्मिंदा किया जा सके...” (1 कुरिन्थियों 1:27)। परमेश्वर हमें क्यों चुनते हैं—जो दुनिया के नज़रिए से सच में मूर्ख लगते हैं—ताकि दुनिया की बेकार की बुद्धि रखने वालों को शर्मिंदा किया जा सके? इसका क्या कारण है? 1 कुरिन्थियों 1:29 देखें: “ताकि कोई परमेश्वर के सामने घमंड न करे।” इसके बजाय, परमेश्वर हमें यीशु मसीह में विश्वास करने के लिए प्रेरित करते हैं—जो हमारी बुद्धि हैं—ताकि “जो घमंड करे वह प्रभु में घमंड करे” (आयत 31)। इसलिए, सच्चा बुद्धिमान व्यक्ति केवल यीशु मसीह में घमंड करता है। मेरी उम्मीद है कि, आज के अंश के माध्यम से, हम राजा सुलैमान—दुनिया के सबसे बुद्धिमान व्यक्ति—के निष्कर्ष को विनम्रतापूर्वक स्वीकार करेंगे—जिन्होंने अपनी महान बुद्धि से दुनियावी बुद्धि की जांच की, लेकिन उसे पूरी तरह से बेकार पाया। इसलिए, हमें अब दुनिया की बेकार की बुद्धि के पीछे नहीं भागना चाहिए। हमें केवल अपनी सच्ची बुद्धि के पीछे भागना चाहिए। हमें जीसस क्राइस्ट में विश्वास के ज़रिए मुक्ति मिलनी चाहिए, जो हमारी सच्ची बुद्धि हैं। इसके अलावा, जीसस क्राइस्ट में विश्वास के ज़रिए मुक्ति पाने के बाद—भगवान की बुद्धि—हमें उनके ज्ञान में बढ़ना चाहिए। जैसे-जैसे हम जीसस को बेहतर जानते हैं, हमें और ज़्यादा बुद्धिमान संत बनना चाहिए। और जैसे-जैसे हम बुद्धि में बढ़ते हैं, हमें भगवान की आज्ञाओं का पालन करना चाहिए और उनका और भी ज़्यादा डर रखना चाहिए। जैसे-जैसे हम उनकी आज्ञाओं का पालन करते हैं, हमें ऐसा जीवन जीना चाहिए जो वचन को दर्शाता हो, जिससे भगवान की बुद्धि—जीसस क्राइस्ट—इस बेकार दुनिया को दिखाई दे। एक सच्चा बुद्धिमान व्यक्ति एक सच्चा गवाह होता है, और एक सच्चा गवाह जीसस क्राइस्ट की गवाही देता है। जीसस क्राइस्ट के सुसमाचार का प्रचार करके, ऐसा गवाह बहुत से लोगों को उनकी ओर वापस ले जाता है। मैं प्रार्थना करता हूँ कि आप और मैं ऐसे ही सच्चे बुद्धिमान लोग बन सकें।

“जो बुद्धिमान हैं वे आसमान की चमक की तरह चमकेंगे, और जो बहुतों को नेकी की ओर मोड़ते हैं वे हमेशा-हमेशा के लिए तारों की तरह चमकेंगे” (डैनियल 12:3)।

बेकार का सुख

[सभोपदेशक 2:1-11]

हेडोनिज़्म (सुखवाद) क्या है? एक ऑनलाइन इनसाइक्लोपीडिया के अनुसार, इसे इस तरह परिभाषित किया गया है: "एक नैतिक सिद्धांत जो मानता है कि सुख ही जीवन का उद्देश्य और सबसे अच्छी चीज़ है, और सुख की चाह और दर्द से बचना ही नैतिक सिद्धांत है" (इंटरनेट)। असल में, हेडोनिज़्म इस विश्वास पर आधारित है कि सुख अपने आप में एक अच्छी चीज़ है और दर्द एक बुराई है। यह यूडेमोनिज़्म—यानी खुशी पर आधारित नैतिकता—का एक रूप है, जो कहता है कि जो कुछ भी खुशी देता है, वह अच्छा है (इंटरनेट)। तर्क यह है कि हेडोनिज़्म के अनुसार जीवन का लक्ष्य खुशी है, और खुशी सुख की चाह से मिलती है। व्यक्तिगत रूप से, जब मैं "हेडोनिज़्म" शब्द सुनता हूँ, तो मुझे प्राचीन ग्रीक विचारधारा 'एपिक्यूरियनवाद' (Epicureanism) की याद आती है। एपिक्यूरियनवाद 300 ईसा पूर्व के आसपास हेलेनिस्टिक युग (जिसमें स्टोइसिज़्म भी शामिल था) की प्रमुख विचारधाराओं में से एक के रूप में उभरा; इसकी शुरुआत एपिकुरस ने की थी। इस विचारधारा का मानना था कि खुशी दर्द-मुक्त सुख की स्थिति से पाई जा सकती है (इंटरनेट)। उन्होंने क्षणभंगुर, इंद्रिय-जनित या शारीरिक सुख के बजाय स्थायी मानसिक सुख पर ज़ोर दिया। उन्होंने शारीरिक सुख को प्राथमिकता इसलिए नहीं दी क्योंकि ऐसे सुख—जो क्षणिक, इंद्रिय-जनित और शारीरिक होते हैं—इच्छा से जुड़े होते हैं, और इच्छा से दर्द पैदा होता है। चूँकि शारीरिक इच्छाएँ अनंत होती हैं और उन्हें पूरी तरह से संतुष्ट करना असंभव है—जिससे निश्चित रूप से दुख होता है—इसलिए इस विचारधारा ने, जो दर्द-मुक्त जीवन चाहती थी, शारीरिक सुख के बजाय मानसिक सुख पर अधिक ज़ोर दिया। बेशक, मानसिक सुख इच्छा से पूरी तरह मुक्त नहीं होते (जैसे ज्ञान की इच्छा); हालाँकि, विचार यह है कि इंसान ऐसी इच्छाओं को कम करके—और नतीजतन, दुख को कम करके—खुशी हासिल करता है। एपिक्यूरियन लोगों ने इच्छाओं के कम होने की इस स्थिति को "अटैरेक्सिया"

(ataraxia) कहा—यह मानसिक शांति की स्थिति है जो परेशानी से मुक्त होती है। इस विचारधारा ने ऐसी मानसिक शांति को ही सच्ची खुशी माना, जिसे तर्क के माध्यम से पाया जा सकता है। एपिक्क्यूरियन लोगों के अलावा, प्राचीन ग्रीक हेडोनिज़्म का प्रतिनिधित्व करने वाली एक और विचारधारा थी: साइरेनैक (Cyrenaic) विचारधारा। साइरेनैक लोगों के हेडोनिज़्म को सबसे पहले अरिस्टिपस ने बताया था, जो इस विचारधारा के संस्थापक और सुकरात के मित्र थे। सुकरात से प्रभावित होकर, अरिस्टिपस ने खुशी के उन सिद्धांतों पर ज़ोर दिया जिनका पालन एक नेक इंसान को करना चाहिए। उन्होंने तर्क दिया कि अच्छाई (virtue) आनंद पाने की क्षमता है, और ऐसा आनंद सुख की प्राप्ति से मिलता है; असल में, सुख ही एकमात्र और सबसे बड़ी भलाई है। साइरेनैक (Cyrenaic) विचारकों ने तुरंत मिलने वाले शारीरिक और इंद्रियों के सुख पर ज़ोर दिया, क्योंकि उनका मानना था कि भविष्य हमारे नियंत्रण में नहीं है। अरिस्टिपस के अनुसार, बुद्धिमान व्यक्ति—यानी दार्शनिक—में वर्तमान पल का आनंद लेने की क्षमता होती है; इसलिए, वे सुख के गुलाम बनने के बजाय उसके मालिक बन जाते हैं। नतीजतन, सुखवादी आदर्श (hedonistic ideal) को एक ऐसी स्थिति के रूप में बताया गया है जिसमें व्यक्ति शारीरिक इच्छाओं को पूरा करता है और साथ ही बुद्धिमानी से सुख पर नियंत्रण भी रखता है।

आज के अंश, उपदेशक (Ecclesiastes) 2:1 में, हम राजा सुलैमान—जो उपदेशक भी थे—को "प्रयोग के तौर पर" खुद को खुश करने और जीवन का आनंद लेने की कोशिश करते हुए देखते हैं। दूसरे शब्दों में, उन्होंने एक परीक्षा के रूप में सुख की तलाश की (पद 1-2)। आज के अंश में पद 1 के पहले हिस्से को देखें: "मैंने अपने मन में कहा, 'आओ, मैं तुम्हें सुख के ज़रिए अच्छी चीज़ों का आनंद लेने के लिए परखता हूँ।'" "सुख के ज़रिए परखने" वाक्यांश का अर्थ है कि राजा सुलैमान खुशी या शारीरिक सुख के साथ प्रयोग करना चाहते थे। दूसरे शब्दों में, वह यह पता लगाना चाहते थे कि उन्हें किस चीज़ से ऐसा सुख मिल सकता है। यह अंश उन तीन खास चीज़ों के बारे में बताता है जिन्हें उन्होंने सुख की इस खोज में आजमाया। जब हम आज इन तीन चीज़ों पर विचार करते हैं, तो मैं प्रार्थना करता हूँ कि परमेश्वर हमें अनुग्रह दे ताकि हम इस नश्वर दुनिया में बुद्धिमानी से जी सकें।

पहली चीज़ जिसके साथ राजा सुलैमान ने सुख की खोज में प्रयोग किया, वह थी शराब।

उपदेशक 2:3 को देखें: "मैंने अपने मन में सोचा कि शराब से अपने शरीर को कैसे खुश करूँ—मेरा मन अभी भी मुझे बुद्धिमानी से राह दिखा रहा था—और मूर्खता को कैसे अपनाऊँ, ताकि मैं देख सकूँ कि इंसानों के लिए स्वर्ग के नीचे अपने जीवन के कुछ दिनों में क्या करना अच्छा है।" सुख पाने की कोशिश में सुलैमान ने सबसे पहले शराब का सहारा लिया। उन्होंने इसके ज़रिए अपने शरीर को खुश करने की कोशिश की। फिर भी, अपने शरीर को खुश करने के लिए शराब का सेवन करते हुए भी, उन्होंने अपने मन में बुद्धिमानी का मार्गदर्शन बनाए रखा। प्राचीन यूनानी साइरेनैक स्कूल के दर्शन की तरह ही, सुलैमान ने शराब का गुलाम बने बिना उसका आनंद लिया; वे मालिक बने रहे और बुद्धिमानी से शराब पर नियंत्रण रखा। दूसरे शब्दों में, उन्होंने अपनी समझदारी से शराब पर काबू रखते हुए उसमें आनंद लेने की कोशिश की—ठीक वैसे ही, जैसा कि साइरेनैक्स (Cyrenaics) ने सिखाया था। फिर भी, उनका निष्कर्ष क्या था? यही कि ऐसी कोशिश करना "मूर्खता" थी (पद 3)। संक्षेप में, राजा सुलैमान ने यह निष्कर्ष निकाला कि नशे के ज़रिए आनंद की तलाश करना मूर्खता है।

आखिर शराब पीने से क्या मज़ा मिलता है? लोग नशे में धुत होने तक क्यों पीते हैं? मुझे एक ऑनलाइन लेख मिला जिसमें मज़ाकिया अंदाज़ में बताया गया है कि लोग सोमवार से रविवार तक क्यों पीते हैं: सोमवार को तो बस पीना ही है; मंगलवार को ज़ोर-शोर से पीना है; बुधवार को जब मन करे तब पीना है; गुरुवार को गला सूखने तक पीना है; शुक्रवार को पीना है और फिर तुरंत दोबारा पीना है; शनिवार को उल्टी होने तक पीना है; और रविवार को तब तक पीना है जब तक उठने की हिम्मत न बचे। लेख में शराब पीने के अलग-अलग स्तरों के बारे में भी बताया गया है: एक ड्रिंक सेहत के लिए होती है; हल्का नशा मज़ा देता है; ज़्यादा नशे से इंसान बेफिक्र होकर व्यवहार करता है; और बहुत ज़्यादा नशे से इंसान अजीब और बेतुकी हरकतें करने लगता है। लोग शराब इसलिए भी पीते हैं क्योंकि इससे उन्हें अच्छा महसूस होता है। शराब मूड को बेहतर क्यों बनाती है? कहा जाता है कि थोड़ी मात्रा में शराब पीने से शुरू में सेंट्रल और पेरिफेरल नर्वस सिस्टम उत्तेजित होते हैं, गैस्ट्रिक एसिड का स्राव बढ़ता है, और डोपामाइन नाम का न्यूरोट्रांसमीटर रिलीज़ होता है, जिससे अच्छा महसूस होता है। हालाँकि, बहुत ज़्यादा या लंबे समय तक शराब पीने से दुर्भाग्य से ब्रेन सेल्स तेज़ी से नष्ट होते हैं और दिमाग की कार्यक्षमता कम हो जाती है। सामान्य परिस्थितियों में भी हर दिन लगभग 100,000 ब्रेन सेल्स प्राकृतिक रूप से मर जाते हैं, लेकिन बहुत ज़्यादा शराब पीने से और भी ज़्यादा सेल्स नष्ट हो जाते हैं। पढ़ाई-लिखाई का प्रदर्शन, याददाश्त और सोचने-समझने की क्षमता कम हो जाती है, और कहा जाता है कि यह गिरावट शरीर में शराब की मात्रा के सीधे अनुपात में होती है। बहुत ज़्यादा शराब पीने से नशे की हालत में कहीं या कहीं गई बातें याद न

रहने की समस्या भी हो सकती है—इस स्थिति को आम तौर पर "ब्लैकआउट" कहा जाता है। एक और व्यक्ति उन मौकों के बारे में बताता है जब वह शराब पीता है: "जब कुछ अच्छा होता है तो मैं पीता हूँ। जब कुछ बुरा होता है तो मैं पीता हूँ। जश्न मनाने के लिए मैं पीता हूँ। दूसरों के साथ घुलने-मिलने के लिए मैं पीता हूँ। कोई बात कबूल करने के लिए मैं पीता हूँ। किसी की याद भुलाने के लिए मैं पीता हूँ। जब मैं परेशान होता हूँ तो पीता हूँ। जब मैं किसी की कमी महसूस करता हूँ तो पीता हूँ। जब मैं उदास होता हूँ या बारिश होती है तो पीता हूँ। जब मैं थका हुआ होता हूँ तो पीता हूँ। एकता बढ़ाने के लिए मैं पीता हूँ। उत्सुकतावश मैं पीता हूँ। जब मैं अकेला होता हूँ तो पीता हूँ" (इंटरनेट)।

पीछे मुड़कर देखने पर लगता है कि किशोरावस्था के दौरान शराब पीना शुरू करने का मुख्य कारण उत्सुकता ही थी। जैसा कि कहावत है कि लोग भीड़ का पीछा करते हैं, मैंने भी अपने दोस्तों के साथ शराब पी; मैंने इतनी शराब पी कि नशे में धुत हो गया और उल्टी कर दी। हालाँकि, कॉलेज के पहले साल में, मुझे आध्यात्मिक प्रेरणा मिली और यूनिवर्सिटी के एक रिट्रीट में मैंने पश्चाताप किया, जिसके बाद शराब में मेरी दिलचस्पी खत्म हो गई। उसके बाद भी, मैं अक्सर ऐसी पार्टियों में जाता था जहाँ शराब परोसी जाती थी। जब भी मैंने शराब पीने के कथित फायदों के बारे में सोचा, तो मुझे एक कड़वी सच्चाई का एहसास हुआ: मेरे दो दोस्तों की गोली मारकर हत्या कर दी गई थी—और ये घटनाएँ शराब से जुड़ी थीं। मुझे आज भी उनके अंतिम संस्कार की कई बातें याद हैं। शराब पीने का कोई फायदा नहीं है; यह पूरी तरह बेकार है। इफिसियों 5:18 में, प्रेरित पौलुस कहते हैं: "शराब के नशे में मत पड़ो, जिससे बदचलनी फैलती है। इसके बजाय, पवित्र आत्मा से भरे रहो।" उत्पत्ति 9 में नूह की कहानी है—जिसे बाढ़ के बाद परमेश्वर का आशीर्वाद मिला था (वचन 1)—उसने खेती शुरू की और अंगूर का बाग लगाया (वचन 20)। एक दिन, उसने शराब पी, नशे में धुत हो गया, और अपने तंबू में बिना कपड़ों के सो गया (वचन 21)। नूह एक "धर्मी व्यक्ति, अपने समय के लोगों में बेदाग" था, और वह "परमेश्वर के साथ ईमानदारी से चलता था" (6:9); फिर भी, शराब पीने के बाद वह नशे में धुत और नग्न हो गया। नूह की इस तस्वीर के बारे में सोचने पर मत्ती 24:37-39 के शब्द याद आते हैं: "जैसा नूह के दिनों में हुआ था, वैसा ही मनुष्य के पुत्र के आने के समय भी होगा। क्योंकि बाढ़ से पहले के दिनों में, लोग खाते-पीते थे, शादी-ब्याह करते थे, उस दिन तक जब नूह जहाज में गया; और उन्हें कुछ पता नहीं था कि क्या होने वाला है, जब तक कि बाढ़ नहीं आई और उन सभी को बहा ले गई। मनुष्य के पुत्र के आने के समय भी ऐसा ही होगा।" मेरा मानना है कि हमारा वर्तमान युग नूह के दिनों जैसा है—एक ऐसा समय जब लोग खाते-पीते हैं, और विनाश के आने वाले संकट से बेखबर

रहते हैं। लोग तरह-तरह के सुखों के नशे में डूबे हुए लगते हैं—धन और शोहरत, यौन सुख, और हर तरह की लत। इनमें शराब की लत विशेष रूप से गंभीर लगती है। राजा सुलैमान ने नशे की प्रकृति को एक ही वाक्य में समझाया: "नशा करना मूर्खता को गले लगाना है।" दूसरी बात, राजा सुलैमान ने खुशी पाने के लिए एक प्रयोग के तौर पर जो काम किए, उनमें से एक बहुत बड़ा "प्रोजेक्ट" था।

आज के पाठ में उपदेशक 2:4 का पहला हिस्सा देखें: "मैंने बड़े-बड़े काम किए..."। राजा सुलैमान ने प्रयोग के तौर पर जो दूसरा काम किया—यह पता लगाने के लिए कि "इंसानों के लिए धरती पर अपनी छोटी-सी ज़िंदगी में क्या करना अच्छा है" (आयत 3b)—वह था बड़े-बड़े प्रोजेक्ट्स को संभालना (आयत 4)। यहाँ उन्होंने जो बड़े प्रोजेक्ट्स शुरू किए, वे परमेश्वर के लिए नहीं बल्कि खुद के लिए थे: घर बनाना, अंगूर के बाग लगाना (आयत 4b), तरह-तरह के फलों के पेड़ों वाले बगीचे और फलदार बाग बनाना (आयत 5), और उन जंगलों में सिंचाई के लिए तालाब खोदना जहाँ पेड़ उगते थे (आयत 6)। इन घरों, अंगूर के बागों और बगीचों की देखभाल के लिए, राजा सुलैमान ने पुरुष और महिला गुलाम खरीदे और उनके घर में नौकर भी पैदा हुए (आयत 7)। उन्होंने इतने बड़े प्रोजेक्ट्स क्यों शुरू किए? इसका कारण क्या था? हालाँकि उन्होंने प्रयोग के तौर पर खुशी पाने की कोशिश की, लेकिन असल मकसद "दौलत" था। आयत 7 का आखिरी हिस्सा और आयत 8 का पहला हिस्सा देखें: "...यरूशलेम में मुझसे पहले जितने भी लोग हुए, उन सबसे ज़्यादा मेरे पास पशुओं के झुंड थे। मैंने अपने लिए चाँदी, सोना और राजाओं व प्रांतों का खज़ाना भी इकट्ठा किया..."। राजा सुलैमान ने ऐसी दुनियावी शान-शौकत अपने लिए चाही। उनका नैतिक पतन शांति के समय में हुआ (1 इतिहास 22:9) (पार्क युन-सन)।

राजा सुलैमान की तरह, हम भी शांति के समय में ऐशो-आराम की ज़िंदगी जी सकते हैं। फिर भी, ऐशो-आराम वाली जीवनशैली आखिरकार हमारे चरित्र को बिगाड़ देती है (पार्क युन-सन)। ऐशो-आराम क्या है? इसका मतलब है ज़रूरत से ज़्यादा पैसा या संसाधन खर्च करना या अपनी हैसियत से बढ़कर जीवनशैली जीना (इंटरनेट)। मुझे ऑनलाइन न्यूज़ साइट *OhmyNews* पर "लोग लगज़री ब्रांड्स के इतने दीवाने क्यों हैं?" शीर्षक वाला एक लेख मिला और मैंने उसे पढ़ा (इंटरनेट)। अपनी किताब *Luxury Korea: A Nation of Luxury* में, किम रैंडो लगज़री सामान खरीदने के तरीकों को चार मुख्य समूहों में बांटते हैं: 'दिखावे वाली लगज़री' (conspicuous luxury), 'ईर्ष्या से प्रेरित लगज़री' (envy-driven luxury), 'कल्पना से प्रेरित लगज़री' (fantasy-driven luxury), और 'भीड़-चाल वाली लगज़री' (conformist luxury)।

(1) "दिखावे वाली लग़्ज़री" (Conspicuous luxury) का मतलब है अमीर लोगों द्वारा की गई ऐसी खरीदारी, जिसमें वे अपने क्लास स्टेटस (सामाजिक स्तर) को लेकर बहुत जागरूक होते हैं। उन्हें आम या दूसरों जैसा दिखने से डर लगता है। पूंजीवादी समाज में दौलत होने के कारण, वे खुद को खास मानते हैं और उनमें एक अलग तरह की क्लास-कॉन्शियसनेस (वर्ग-चेतना) होती है; उनके लिए, लग़्ज़री उस स्टेटस को दिखाने का एक ज़रिया है।

(2) दूसरी तरह की लग़्ज़री है "ईर्ष्या से प्रेरित लग़्ज़री" (envy-driven luxury), जिसे "नकली अमीर" (pseudo-wealthy) लोग अपनाते हैं जो असल अमीरों की नकल करना चाहते हैं। अमीरों से ईर्ष्या करते हुए, वे इस बात से भी बहुत डरते हैं कि लोग उन्हें कमतर न समझें; इसलिए, वे लग़्ज़री पर खर्च करना बंद नहीं करते, भले ही उनके पास इसके लिए पैसे न हों।

(3) तीसरी तरह की लग़्ज़री है "कल्पना से प्रेरित लग़्ज़री" (fantasy-driven luxury), जिसे ऐसे लोग अपनाते हैं जिनमें खुद को बहुत ज़्यादा पसंद करने (narcissistic) की प्रवृत्ति होती है; उन्हें खराब या साधारण दिखने से डर लगता है और वे खुद को बदलने का सपना देखते हैं। वे महंगी और मशहूर चीज़ें खरीदने के लिए किसी भी हद तक जा सकते हैं, क्योंकि उन्हें लगता है कि ऐसा करने से उनका स्टेटस या पहचान बेहतर हो जाएगी। हालांकि ऐसी इच्छाएं समझ में आती हैं क्योंकि हर किसी में थोड़ा-बहुत आत्म-प्रेम होता है, लेकिन इस तरह की लग़्ज़री की खपत बहुत चिंताजनक है क्योंकि इससे लत (addiction) जैसे खतरनाक नतीजे निकल सकते हैं।

(4) आखिर में, "भीड़ का अनुसरण करने वाली लग़्ज़री" (conformist luxury) आती है। इसमें लोग दोस्तों या साथियों के स्टैंडर्ड से मेल खाने के लिए खरीदारी करते हैं ताकि उन्हें समाज से अलग-थलग न होना पड़े। इसका एक आम उदाहरण है महंगे ब्रांड के कपड़े पहनने की मजबूरी, सिर्फ इसलिए क्योंकि उनके दोस्त भी ऐसा ही करते हैं; यह व्यवहार खासकर किशोरों में देखा जाता है। लोग अक्सर लग़्ज़री सामान खरीदने—भले ही इसके लिए उन्हें अपनी क्षमता से ज़्यादा खर्च करना पड़े—को सही ठहराने के लिए खुद से कहते हैं, "बाकी सब भी तो खरीद रहे हैं, तो मुझे भी खरीदना चाहिए," और इस तरह वे किसी भी तरह के अपराध-बोध (guilt) से छुटकारा पा लेते हैं; समस्या यह है कि यह व्यवहार बड़े होने पर भी बना रह सकता है।

हमें अपनी क्षमता से ज़्यादा खर्च करके नहीं जीना चाहिए। ऐसा करने से बचने के लिए, अपनी आर्थिक सीमाओं को समझना बहुत ज़रूरी है। मैं कोरियाई-अमेरिकी प्रवासी समुदाय में अक्सर सुनाया जाने वाला एक व्यंग्यात्मक किस्सा साझा करना चाहूंगा: "जब प्रवासी अमेरिका आते हैं, तो जो लोग लॉस एंजिल्स में बसते हैं, वे सबसे पहले एक लग्जरी कार खरीदते हैं, भले ही वे किराए के कमरे में रह रहे हों; जो न्यूयॉर्क जाते हैं, वे सबसे पहले कोई बिज़नेस शुरू करते हैं; और जो शिकागो आते हैं, वे घर खरीदने को प्राथमिकता देते हैं।" यह कहावत न्यूयॉर्क और शिकागो के उन अप्रवासियों की तुलना लॉस एंजिल्स के अप्रवासियों से करती है जो दिखावे और अपनी साख बचाने को असलियत से ज़्यादा अहमियत देते हैं (हालांकि यह ज़रूरी नहीं कि असल में ऐसा ही हो), जबकि न्यूयॉर्क और शिकागो के अप्रवासी असल चीज़ों पर ध्यान देते हैं, अपनी हैसियत के हिसाब से रहते हैं और अपने भविष्य के लिए मज़बूत नींव बनाते हैं। क्या आपने कभी *सुबुन्जिजोक* (守分知足) शब्द सुना है? *सुबुन* (守分) का मतलब है अपनी हैसियत में बने रहना; *जिबुन* (知分) का मतलब है अपनी हैसियत को जानना; और *अनबुन* (安分) का मतलब है अपनी हैसियत में संतोष पाना। ज़िंदगी में हर किसी की अपनी एक हैसियत होती है। हमें अपनी हैसियत को सही ढंग से समझना चाहिए, उसी के अनुसार काम करना चाहिए और उससे बढ़कर जीने से बचना चाहिए। अपनी हैसियत से बढ़कर जीने को *ग्वाबुन* (過分) कहा जाता है। किसी भी चीज़ की अति नुकसानदेह होती है। चीनी अक्षर *ग्वा* (過) के दो अर्थ बताए जाते हैं: पहला, "अति" या "हद से ज़्यादा आगे बढ़ना," और दूसरा, "गलती" या "दोष।" अति करने से गलतियाँ होना तय है। *ग्वा* दुर्भाग्य और बीमारी का कारण बनता है। ज़्यादा खाना-पीना, ज़रूरत से ज़्यादा काम करना, सेक्स में अति करना और फिज़ूलखर्ची करना—ये सब हमारी सेहत को नुकसान पहुँचाते हैं और हमारी खुशियों को खत्म करते हैं। अपनी हैसियत में बने रहने का मतलब है हर चीज़ में अति से बचना। हमें अपनी ज़िंदगी से संतुष्ट रहना सीखना चाहिए और यह जानना चाहिए कि कब कहाँ रुकना है। हमें चीज़ों को पाने की इच्छा से बचना चाहिए। यह बात खासकर उन लोगों के लिए सच है जो बड़े पैमाने पर कारोबार चलाते हैं, जैसे राजा सुलैमान। आखिरकार, चीज़ों को पाने की इच्छा कभी पूरी तरह संतुष्ट नहीं हो सकती। राजा सुलैमान को ही देखिए: हालाँकि "उनके पास यरूशलेम में उनसे पहले के सभी लोगों की तुलना में ज़्यादा मवेशी और झुंड थे" (वचन 7), फिर भी वे उससे संतुष्ट नहीं थे; वे "अपने लिए चाँदी-सोना और राजाओं व प्रांतों का खज़ाना इकट्ठा करने" में लग गए (वचन

8)। इन सब चीज़ों को अपना बनाने की इच्छा ऐसी चीज़ है जो... संतुष्टि नहीं दे सकती। चीज़ों को पाने की इच्छा का स्वभाव ऐसा है कि इंसान के पास जितना ज़्यादा होता है, उसकी चाहत उतनी ही बढ़ती जाती है। आखिरकार, चीज़ों को पाने की यह इच्छा भी बेकार है। इस तरह, राजा सुलैमान ने माना कि यह दूसरी कोशिश—बड़े-बड़े व्यापारिक काम शुरू करना—सिर्फ़ "मूर्खता को अपनाना" था (आयत 3)।

तीसरी बात, सुख-सुविधाओं की अपनी खोज में, राजा सुलैमान ने "बहुत सी पत्नियाँ और रखैलें" रखकर अपनी शारीरिक इच्छाओं को पूरा करने की कोशिश की।

आज के पाठ में सभोपदेशक 2:8 का आखिरी हिस्सा देखिए: "...मैंने गाने-बजाने वाले पुरुष और स्त्रियाँ भी रखे, और इंसानों के लिए सुख-साधन—बहुत सी पत्नियाँ और रखैलें भी जुटाईं।" व्यवस्थाविवरण 17:17 में इसराएल के राजाओं के बारे में यह कहा गया है: "वह अपने लिए बहुत सी पत्नियाँ न रखे, कहीं ऐसा न हो कि उसका मन भटक जाए; और न ही वह अपने लिए बहुत सारा सोना-चाँदी जमा करे।" लेकिन राजा सुलैमान ने इस आज्ञा को नहीं माना। परमेश्वर ने इसराएल के लोगों को साफ-साफ़ हिदायत दी थी कि वे विदेशियों के साथ शादी-ब्याह न करें—खासकर यह आज्ञा दी थी कि कोई भी पक्ष दूसरे के साथ घुल-मिल न जाए (1 राजा 11:1–3)। इस रोक का कारण यह था कि ये विदेशी लोग इसराएलियों का मन परमेश्वर से हटाकर विदेशी देवताओं की ओर मोड़ देंगे (आयत 2)। फिर भी सुलैमान, जो देश का नेता था, "फिरौन की बेटी के अलावा बहुत सी विदेशी औरतों से भी प्यार करता था" (आयत 1)। उसकी सात सौ शाही पत्नियाँ और तीन सौ रखैलें थीं (आयत 3); इन औरतों ने उसका मन भटका दिया (आयत 3), और जैसे-जैसे वह बूढ़ा होता गया, वे उसे दूसरे देवताओं की पूजा करने की ओर ले गईं (आयत 4)। आखिरकार, शारीरिक सुख की चाहत में सुलैमान ने मूर्तिपूजा के ज़रिए आध्यात्मिक व्यभिचार का पाप किया। दूसरे शब्दों में, शारीरिक व्यभिचार का काम—जो शारीरिक वासना को पूरा करने की इच्छा से प्रेरित होता है—आखिरकार आध्यात्मिक व्यभिचार का पापपूर्ण नतीजा देता है।

पिछले शुक्रवार को याहू की एक ऑनलाइन न्यूज़ रिपोर्ट में, 'भगवान की मर्ज़ी के अनुसार यौन संबंध' जैसा वाक्यांश... मुझे "महिला अनुयायियों का यौन शोषण करने वाले पादरी" शीर्षक वाला एक लेख मिला और मैंने उसे पढ़ा: "धार्मिक समूह 'I' के पादरी A (46) के खिलाफ़ दस साल से ज़्यादा समय तक महिला

अनुयायियों के यौन शोषण के आरोप में 'कासी-रेप' (जबरन यौन संबंध) के लिए गिरफ्तारी वारंट की मांग की गई है। सियोल के डोंगजाक-गु में धार्मिक समूह 'T' की स्थापना के बाद, पादरी A पर आरोप है कि उन्होंने पिछले दशक में बीस-तीस साल की उम्र की छह महिला अनुयायियों का दर्जनों बार यौन शोषण किया। उन्होंने दावा किया कि 'यह भगवान की मर्जी से किया जा रहा है, और मेरे साथ यौन संबंध बनाने से सारे पाप धुल जाते हैं।'" इस समूह की पहचान "यूनिफिकेशन चर्च" के तौर पर करने वाली टिप्पणियों को देखकर मुझे राहत मिली, फिर भी मेरा मानना है कि इस तरह के यौन रूप से विकृत आपराधिक कृत्य एक ऐसी सच्चाई हैं जिनसे ईसाई धर्म भी बच नहीं सकता। जब शारीरिक इच्छाओं की बात आती है, तो यौन इच्छा इसका एक प्रमुख उदाहरण है। यौन इच्छा को भोजन और नींद की ज़रूरत के साथ-साथ इंसानों की तीन बुनियादी ज़रूरतों में से एक माना जाता है। जब पुरुष और महिलाएँ यौन इच्छा—एक शारीरिक तलब—के गुलाम बन जाते हैं, तो वे बलात्कार जैसे गंभीर अपराध कर सकते हैं। बलात्कार इस बात का एक प्रमुख उदाहरण है कि कैसे यौन इच्छा अचानक और विनाशकारी काम में बदल जाती है। "अमीर वर्ग में बिना किसी पछतावे के 'वाइफ-स्वैपिंग' (पत्नियों की अदला-बदली); शादी के कॉन्सेप्ट को ही खत्म करने वाले बदलते हुए साथ रहने के तरीके; प्यार के नाम पर बिना रोक-टोक के शादी से पहले सेक्स; तलाक को बहुत हल्के में लेना—सिर्फ इसलिए शादी खत्म कर देना क्योंकि प्यार कम हो गया है; हर उम्र के लोगों के बीच फ़ोन सेक्स या वीडियो सेक्स; कैमरा फ़ोन या वेबकैम के ज़रिए अश्लील तस्वीरों का तुरंत आदान-प्रदान; इंटरनेट चैट के ज़रिए टीनएज प्रॉस्टिट्यूशन (किशोर वेश्यावृत्ति) को बढ़ावा; मिडिल स्कूल, हाई स्कूल और कॉलेज के छात्रों से लेकर प्राइमरी स्कूल के बच्चों तक में यौन अनुभवों का तेज़ी से बढ़ना; और लत जो न सिर्फ पुरुषों बल्कि महिलाओं को भी प्रभावित कर रही है..." ...और इन सबको इंटरनेट और साइबर-पोर्नोग्राफी से बढ़ावा मिल रहा है! हमारी यौन संस्कृति को देखते हुए—जो दिन-ब-दिन ज़्यादा सनसनीखेज, साफ़-साफ़ और अजीब होती जा रही है—ऐसा लगता है कि कोई भी अपनी यौन इच्छाओं पर काबू नहीं रख सकता; इसके अलावा, यौन इच्छाओं को बिना किसी रोक-टोक के पूरा करना—चाहे समय, जगह या साथी कोई भी हो—अक्सर एक बिल्कुल स्वाभाविक घटना मानी जाती है। यह सचमुच एक गंभीर सामाजिक मुद्दा है। आज के समाज में, यह सोच आम हो गई है कि शादी के बाद बेवफाई (धोखाधड़ी) एक आम बात है। हम ऐसे दौर में जी रहे हैं जहाँ शारीरिक सुख-सुविधाओं की भरमार है। ऐसे समय में, हमें राजा सुलैमान के

सुख की खोज और शारीरिक इच्छाओं को पूरा करने की कोशिशों से यह समझना चाहिए कि ऐसी कोशिशें कितनी खतरनाक और बेवकूफी भरी हैं।

आखिरकार, सब कुछ अनुभव करने के बाद—अपनी बुद्धि का इस्तेमाल करते हुए शराब का मज़ा लेना, बड़े-बड़े प्रोजेक्ट्स के ज़रिए धन-दौलत जमा करना और हज़ारों महिलाओं के साथ शारीरिक इच्छाएँ पूरी करना—राजा सुलैमान हमें क्या संदेश देते हैं? उपदेशक (Ecclesiastes) 2:1 का आखिरी हिस्सा और आयत 2 देखिए: "मैंने अपने मन में कहा, 'आओ, मैं तुम्हें सुख-सुविधाओं से आजमाऊँ; मज़ा करो।' लेकिन देखो, यह भी व्यर्थ था। मैंने हँसी के बारे में कहा, 'यह पागलपन है,' और सुख के बारे में कहा, 'इससे क्या हासिल होता है?'" संक्षेप में, खुद को खुश करने और सुख पाने के लिए भोग-विलास का अनुभव करने के बाद, सुलैमान का निष्कर्ष बस यही था: "यह भी व्यर्थ था।" सुख की खोज बेकार क्यों है? राजा सुलैमान को यह बात कैसे समझ आई? ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि उन्होंने... उन्होंने यह सवाल पूछा: "मैंने हँसी के बारे में कहा, 'इससे क्या हासिल होता है?'" दूसरे शब्दों में, उन्होंने पूछा, "सुख से क्या मिलता है?" राजा सुलैमान इसका जवाब देते हैं: "तब मैंने उन सभी कामों को देखा जो मैंने अपने हाथों से किए थे और उस मेहनत को देखा जो मैंने की थी; और देखो, सब कुछ व्यर्थ और मन को दुखी करने वाला था, और इस दुनिया में कोई फ़ायदा नहीं था" (आयत 11)। आखिरकार, भले ही उन्होंने अपनी आँखों की हर चाहत और दिल की हर खुशी को पूरा किया (आयत 10), लेकिन उस अनुभव से उन्हें यही निष्कर्ष मिला कि यह सब "व्यर्थ और हवा को पकड़ने की कोशिश" जैसा था और "इस दुनिया में बेकार" था। संक्षेप में, सुख बेकार और अर्थहीन है।

तो फिर, आपको और मुझे कैसे जीना चाहिए? हमें कैसे जीना चाहिए जब हम राजा सुलैमान—जो उपदेशक थे—का संदेश सुनते हैं? उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि यह दुनिया पूरी तरह से व्यर्थ है और जिन सुखों की उन्होंने खोज की थी, वे असल अनुभव में बेकार और अर्थहीन थे। मुझे इसका जवाब 'वेस्टमिंस्टर शॉर्टर कैटेकिज़्म' के पहले सवाल में मिला। हमें परमेश्वर की महिमा के लिए जीना है और उसी में अपनी खुशी ढूँढनी है। यहाँ "परमेश्वर का आनंद लेने" का मतलब है उसे अपनी सबसे बड़ी खुशी मानना (भजन संहिता 43:4)। जो जीवन परमेश्वर को अपनी सबसे बड़ी खुशी मानता है, वही जीवन परमेश्वर का भय मानता है और खुशी-खुशी उसकी आज्ञाओं का पालन करता है (सभोपदेशक 12:13)। इसलिए, जब हम उसकी आज्ञाओं को मानकर प्रभु के प्रेम में बने रहते हैं, तो हमारी खुशी पूरी हो जाती है (यूहन्ना 15:9-11)। यही आज्ञा मानने

की खुशी है। हमें प्रभु की आज्ञाओं को मानने से मिलने वाली इस खुशी को पाना चाहिए। प्रेरित पौलुस, जिसने इस खुशी का अनुभव किया था, उसने प्रभु की आज्ञा मानी और यीशु मसीह के सुसमाचार का निडरता से प्रचार किया; और फिलिप्पी के संतों को लिखे अपने पत्र में, उसने उन्हें इस तरह संबोधित किया... उसने कहा, "मेरे भाइयों, जिनसे मैं प्रेम करता हूँ और जिनसे मिलने की लालसा रखता हूँ, जो मेरी खुशी और मेरा मुकुट हैं, मेरे बहुत प्यारे लोगों" (फिलिप्पियों 4:1)। मेरी प्रार्थना है कि हम भी यीशु को अपनी सबसे बड़ी खुशी बनाएँ और उसकी आज्ञा मानकर, खुद को यीशु मसीह के सुसमाचार का प्रचार करने और चेले बनाने के काम में समर्पित करें। इससे यीशु के प्यारे चेलों की संख्या लगातार बढ़े—जो हमारी खुशी और मुकुट हैं—ताकि प्रभु की खुशी हममें पूरी हो सके।

2. हे प्रभु, तू ही मेरी खुशी, मेरी आशा और मेरा जीवन है;
हालाँकि मैं तुझे पुकारता हूँ और दिन-रात तेरी स्तुति करता हूँ,
फिर भी मेरा मन और अधिक पाने के लिए तरसता है।

5. हे यीशु, जिसे मैं सचमुच पाना चाहता हूँ—तेरी आवाज़ कितनी सुखद है;
मेरा जीवन और मेरी सच्ची आशा केवल प्रभु यीशु में ही है।

(भजन संख्या 82)।

जो परमेश्वर को प्रसन्न करता है

[सभोपदेशक 2:12-26]

जब आप यह वाक्यांश सुनते हैं कि "जो परमेश्वर को प्रसन्न करता है," तो बाइबल का कौन सा वचन आपके मन में आता है? परमेश्वर को प्रसन्न करने के लिए हमें क्या करना चाहिए? मुझे इब्रानियों 11:6 याद आया: "और बिना विश्वास के परमेश्वर को प्रसन्न करना असंभव है, क्योंकि जो कोई उसके पास आता है, उसे यह विश्वास करना चाहिए कि वह है और वह उन्हें प्रतिफल देता है जो सच्चाई से उसे खोजते हैं।" "बिना विश्वास के परमेश्वर को प्रसन्न करना असंभव है" इन शब्दों पर विचार करने पर, हमें एहसास होता है कि उसे प्रसन्न करने के लिए, हमें विश्वास से जीना होगा। दूसरे शब्दों में, हम परमेश्वर को तभी प्रसन्न कर सकते हैं जब हम विश्वास से जिएं। तो, सभोपदेशक की पुस्तक के नज़रिए से विश्वास से जीने का क्या अर्थ है, जिस पर हम मनन कर रहे हैं? इस नज़रिए से देखने पर, विश्वास से जीने का अर्थ है इस दुनिया की व्यर्थता (1:1-11), सांसारिक ज्ञान की व्यर्थता (1:12-18), और सांसारिक सुखों की व्यर्थता (2:1-11) को समझना। इसका अर्थ है इन व्यर्थ चीज़ों के पीछे भागना छोड़ देना और इसके बजाय आने वाले युग, स्वर्गीय ज्ञान, और स्वयं परमेश्वर को—न कि क्षणभंगुर सुखों को—अपना परम आनंद बनाना (भजन संहिता 43:4), और साथ ही परमेश्वर की महिमा के लिए जीना और उसमें आनंद पाना। परमेश्वर उन लोगों से प्रसन्न होता है जो इस तरह विश्वास से जीते हैं। हमारा क्या? क्या हम विश्वास से जी रहे हैं? क्या हम अभी ऐसा जीवन जी रहे हैं जो परमेश्वर को प्रसन्न करता है? आज के अंश, सभोपदेशक 2:26 में, राजा सुलैमान—जो उपदेशक है—कहता है कि परमेश्वर उन्हें ज्ञान, समझ और आनंद देता है जो उसे प्रसन्न करते हैं। आइए सभोपदेशक 2:12-26 पर ध्यान केंद्रित करते हुए, ऐसे व्यक्तियों—जो परमेश्वर को प्रसन्न करते हैं और उसके दिए गए उपहारों का आनंद लेते हैं—के जीवन जीने के तरीके के दो पहलुओं पर विचार करें, और उसकी दी हुई कृपा को प्राप्त करने का प्रयास करें।

पहला, जो लोग परमेश्वर को प्रसन्न करते हैं, वे अपने स्वयं के ज्ञान को मृत्यु के नज़रिए से देखते हैं।

सभोपदेशक 2:12 के पहले भाग को देखें: "तब मैंने ज्ञान, पागलपन और मूर्खता पर विचार करने के लिए अपना ध्यान लगाया..." राजा सुलैमान ने पहले ही ज्ञान के साथ-साथ पागलपन और मूर्खता को समझने पर अपना मन लगाया था (1:17)। हालांकि उन्होंने खुद को ज्ञान पाने में लगा दिया था, लेकिन उन्हें लगा कि यह सब हवा के पीछे भागने जैसा बेकार काम है। फिर भी, आज के हिस्से में, वे एक बार फिर ज्ञान के विषय पर सोचते हैं (2:12-17)। उन्होंने साफ़ कहा था, "क्योंकि बहुत ज्ञान के साथ बहुत दुख भी आता है; जितना ज़्यादा ज्ञान, उतना ही ज़्यादा दुख" (1:18); उन्हें ज्ञान के विषय पर दोबारा बात करते देख हमें लगता है कि वे फिर से दुख और चिंता के रास्ते पर चल रहे हैं। इस दुख और चिंता के बीच, राजा सुलैमान ने यह सवाल पूछा: "मेरे बाद आने वाला उत्तराधिकारी उस काम से ज़्यादा क्या कर सकता है जो मैंने पहले ही कर लिया है?" (पद 12b)। वे गहराई से सोच रहे हैं कि क्या उनके बच्चे और वंशज—जो इज़राइल के राजा के तौर पर उनकी जगह लेंगे—क्या वे उससे कुछ बेहतर हासिल कर पाएंगे जो उन्होंने अपनी बुद्धिमानी से बनाया था? इस दुनिया से जाने से पहले, हमें अपने दिलों को तैयार करना चाहिए और प्रार्थना करनी चाहिए। हमारी एक उम्मीद यह होती है कि हम अपने बच्चों और वंशजों को विश्वास की विरासत सौंपें। इसके अलावा, आज के हिस्से में राजा सुलैमान की तरह, हमें भी अपने बाद आने वालों के लिए जीवन की वह बुद्धिमानी छोड़नी चाहिए जो हमने धरती पर अपने सत्तर या अस्सी सालों में हासिल की है। दूसरे शब्दों में, अपने जीवन के अंत के समय, हमें अपनी बुद्धिमानी छोड़नी चाहिए ताकि वह हमारे बच्चों और वंशजों को उनके अपने रास्तों पर चलने में मार्गदर्शन दे सके। फिर भी, यहाँ एक सवाल उठता है: भले ही हम उन्हें यह बुद्धिमानी दे दें, क्या हम पक्के तौर पर कह सकते हैं कि वे इसकी कद्र करेंगे और इस पर चलेंगे? मान लीजिए, उदाहरण के लिए, कि—राजा सुलैमान की तरह—हमने हर चीज़ आज़माई हो: शराब पीना, व्यापार से बहुत धन कमाना, और कई महिलाओं के साथ शारीरिक इच्छाएँ पूरी करना—और मरने से पहले हमें एहसास हुआ कि यह सब बेकार और बेमतलब था। मान लीजिए कि तब हम अपने बच्चों और वंशजों से कहें, "जैसा मैंने किया, वैसा जीवन मत जीना।" हम कैसे जान सकते हैं कि वे सच में हमारी सलाह मानेंगे और हमारी बुद्धिमानी से सीखेंगे, और यह तय करेंगे, "मुझे कभी भी वे काम नहीं करने चाहिए जो मेरे पिता ने सुख पाने की चाहत में किए थे; इसके बजाय, मैं उनकी तरह नहीं जीऊंगा, बल्कि परमेश्वर को ही अपनी सबसे बड़ी खुशी मानूंगा और उनकी आज्ञा मानने का आनंद लूंगा"? क्या हमारे बच्चे और वंशज

सच में हमारी बुद्धिमानी की कद्र करेंगे, जीवन से मिली सीख को नम्रता से स्वीकार करेंगे और उनका पालन करेंगे? मेरे मन में एक चिंताजनक विचार आता है: चाहे हम अपने बच्चों और आने वाली पीढ़ियों को अपनी जिंदगी के अनुभवों से सीखी गई बातें कितनी भी लगन से क्यों न सिखाएं, वे भी हमारी तरह ही अपने माता-पिता की सलाह को नज़रअंदाज़ कर सकते हैं। हो सकता है कि वे दुनियावी सुख-सुविधाओं का आनंद लेने के बाद ही अपनी गलती समझें और पछताते हुए कहें, "काश, मैंने उस समय अपने पिता की बात सुनी और मानी होती।" यह विचार 'उपदेशक' (Ecclesiastes) 1:9 से आता है: "जो पहले हुआ है, वही फिर होगा; जो काम पहले किए गए हैं, वही फिर किए जाएंगे; इस दुनिया में कुछ भी नया नहीं है।" इस वचन पर मनन करने पर मुझे एहसास होता है कि हमारे बच्चे भी वही काम ज़रूर करेंगे जो हमने कभी किए थे। भले ही हम उन्हें अपनी समझ और अनुभव सौंप दें—जो अक्सर हमने खुद प्रयोग करके या अपने माता-पिता की बात न मानकर गलतियाँ करते हुए हासिल किए थे—फिर भी इस बात की बहुत संभावना है कि हमारे बच्चे हमारी बात नहीं सुनेंगे और वही गलतियाँ करेंगे जो हमने की थीं। इसीलिए राजा सुलैमान कहते हैं: "...राजा का उत्तराधिकारी उससे ज़्यादा क्या कर सकता है जो पहले ही किया जा चुका है?" (2:12)।

राजा सुलैमान यह भी कहते हैं: "मैंने देखा कि समझदारी मूर्खता से बेहतर है, ठीक वैसे ही जैसे रोशनी अंधेरे से बेहतर होती है" (वचन 13)। समझदारी मूर्खता से किस तरह बेहतर है? वचन 14 का पहला भाग देखिए: "समझदार व्यक्ति की आँखों में रोशनी होती है, जबकि मूर्ख अंधेरे में चलता है..." समझदार व्यक्ति मूर्ख से कैसे बेहतर है? समझदार व्यक्ति की दृष्टि साफ़ होती है; वह मौत की सच्चाई को ध्यान में रखते हुए समझदारी से अपने बाकी दिन बिताने के बारे में सोचता है। इसके विपरीत, मूर्ख अंधेरे में चलता है और मौत के लिए तैयारी नहीं करता (वियर्सबे)। फिर भी, जब राजा सुलैमान ने समझदार और मूर्ख दोनों को मौत के नज़रिए से देखा, तो उन्हें एहसास हुआ कि आखिर में दोनों का अंजाम एक ही होता है (वचन 14b)। इसका क्या मतलब है? आज के वचन, 'उपदेशक' 2:16 को देखिए: "क्योंकि समझदार व्यक्ति को भी, मूर्ख की तरह, ज़्यादा समय तक याद नहीं रखा जाएगा; आने वाले दिनों में दोनों को भुला दिया जाएगा। मूर्ख की तरह, समझदार व्यक्ति को भी मरना ही है!" दूसरे शब्दों में, राजा सुलैमान को एहसास हुआ कि समझदार और मूर्ख दोनों का आखिरी अंजाम मौत ही है। उन्हें यह भी समझ आया कि मौत के बाद, आखिर में दोनों को भुला दिया जाता है। इसलिए, उसने अपने मन में कहा, "मूर्ख का जो हश्र होता है, वही मेरा भी होगा। फिर बुद्धिमान होने का मुझे क्या फ़ायदा?" (पद 15a), और माना, "यह भी व्यर्थ है" (पद 15b)। इस अंश का मतलब है कि जब तक कोई मौत की समस्या को हल नहीं

कर लेता, तब तक सब कुछ बेकार है (पार्क युन-सन)। नतीजतन, उसने कहा, “मुझे जीवन से नफ़रत हो गई” (पद 17)।

राजा सुलैमान ने अपने जीवन पर अफ़सोस क्यों किया? उसे इससे नफ़रत क्यों हुई? कारण यह था कि उसे एहसास हुआ कि दुनिया में किए गए काम उसके लिए दुखदायी थे—सब कुछ व्यर्थ, हवा के पीछे भागने जैसा (पद 17)। निश्चित रूप से, जो बुद्धिमान व्यक्ति परमेश्वर को प्रसन्न करना चाहता है, उसके लिए जीवन के प्रति यह सही नज़रिया नहीं है। जो लोग परमेश्वर को प्रसन्न करते हैं, वे कभी भी उस जीवन पर अफ़सोस नहीं करते या उससे नफ़रत नहीं करते जो उसने उन्हें दिया है; इसके विपरीत, वे जीवन से प्यार करते हैं (1 पतरस 3:10) (वियर्सबे)। दूसरे शब्दों में, जो लोग परमेश्वर को प्रसन्न करते हैं, वे अपने जीवन से प्यार करते हैं। ऐसा करते हुए, वे अपनी बुद्धि को मौत के नज़रिए से देखते हैं और ऐसी बुद्धि के पीछे नहीं भागते जो बेकार है। इसके बजाय, परमेश्वर द्वारा दी गई बुद्धि का उपयोग करते हुए—और मौत की सच्चाई को ध्यान में रखते हुए—वे अपना बचा हुआ जीवन बुद्धिमानी से परमेश्वर की महिमा के लिए जीते हैं, और ऊपर से मिलने वाली बुद्धि से मार्गदर्शन पाते हैं। जो लोग परमेश्वर को प्रसन्न करते हैं, वे कभी भी मूर्खों की तरह आँखें बंद करके अंधेरे में नहीं चलते। इसके बजाय, खुली आँखों से, वे रोशनी में चलते हैं और यीशु के सच्चे शिष्यों के रूप में जीते हैं, जो स्वयं ज्योति है। हमें—आपको और मुझे—यीशु के शिष्यों के रूप में ठीक इसी तरह जीना चाहिए।

दूसरी बात, जो व्यक्ति परमेश्वर में आनंद लेता है, वह अपनी मेहनत को मौत के नज़रिए से देखता है।

मौत के नज़रिए से अपनी समझदारी पर विचार करते हुए अपने जीवन पर अफ़सोस करने के बाद (वचन 17), राजा सुलैमान ने उस सारी मेहनत पर अफ़सोस किया जो उसने इस दुनिया में की थी (वचन 18)। वचन 18 का पहला हिस्सा देखिए: “मुझे अपनी उस सारी मेहनत से नफ़रत हो गई जो मैंने इस दुनिया में की थी...” राजा सुलैमान ने इस दुनिया में की गई अपनी सारी मेहनत पर अफ़सोस क्यों किया? पादरी वॉरेन वियर्सबे तीन कारण बताते हैं:

पहला कारण यह है कि वह अपनी कड़ी मेहनत से कमाई गई दौलत को अपने पास नहीं रख सका।

उपदेशक 2:18 का दूसरा हिस्सा देखिए: "...क्योंकि मुझे इसे उस व्यक्ति के लिए छोड़ना होगा जो मेरे बाद आएगा।" जब राजा सुलैमान ने मौत के नज़रिए से अपनी मेहनत से कमाई चीज़ों और दौलत पर विचार किया, तो उसे अपने काम पर अफ़सोस हुआ। उसे एहसास हुआ कि जीवन में इंसान खाली हाथ आता है और खाली हाथ चला जाता है; वह उस दौलत को अपने साथ नहीं ले जा सकता था, बल्कि मरने पर उसे अपने उत्तराधिकारी के लिए छोड़ना था। पिछले हफ़्ते, मैंने कोरिया से एक बड़ी कंपनी के पूर्व चेयरमैन के आत्महत्या करने की खबर सुनी। उनकी मौत की खबर सुनकर ऐसा लगा कि इस चेयरमैन ने—जिसने कभी बहुत दौलत का आनंद लिया था—अपने बच्चों के लिए संपत्ति के बजाय सिर्फ़ कर्ज़ छोड़ा। उनके और उनके छोटे भाई—जो उसी कंपनी के चेयरमैन रह चुके थे—के बीच खराब रिश्तों की खबरें सुनकर मैंने सोचा: मरने वाले ने असल में अपने बच्चों के लिए क्या छोड़ा? सचमुच, आप और मैं अपने बच्चों और आने वाली पीढ़ियों के लिए क्या छोड़ेंगे? जब हम जीवन को मौत के नज़रिए से देखते हैं, तो हमें क्या लगता है कि हम इस दुनिया से जाते समय अपने साथ क्या ले जा सकते हैं?

दूसरा कारण यह है कि कोई भी अपनी कड़ी मेहनत से कमाई गई दौलत को सुरक्षित नहीं रख सकता।

आज का वचन, उपदेशक 2:19 देखिए: "कौन जानता है कि वह बुद्धिमान होगा या मूर्ख? फिर भी, मेरी मेहनत के सारे फल पर उसका अधिकार होगा, जिसके लिए मैंने इस दुनिया में मेहनत की और समझदारी दिखाई। यह भी व्यर्थ है।" जब राजा सुलैमान ने मौत के नज़रिए से अपनी ज़िंदगी भर की मेहनत के बारे में सोचा, तो उन्हें इस बात का अफ़सोस हुआ कि वे अपनी कमाई हुई दौलत को अपने पास नहीं रख सकते थे; बल्कि, मरने के बाद उन्हें यह सब अपने बच्चों के लिए छोड़ना पड़ता। ज़रा सोचिए: अगर आप अपनी ज़िंदगी भर की कमाई और कामयाबियों—सत्तर या अस्सी साल की कड़ी मेहनत—को अपने बच्चों को सौंपने की तैयारी कर रहे हों, और फिर आपको पता चले कि वे नासमझ हैं और आपकी बनाई हुई हर चीज़ बर्बाद कर देंगे, तो आपको अपनी मेहनत बेकार और अफ़सोसनाक लगेगी। राजा सुलैमान ने ठीक यही अफ़सोस ज़ाहिर किया था। उन्हें अपनी सारी दौलत और कमाई, जिसे वे बचा नहीं पाए थे, अपने बेटे रहोबाम के लिए छोड़नी पड़ी। जैसा कि हम जानते हैं, सुलैमान की मौत के बाद, उनके उत्तराधिकारी रहोबाम के राज में, इसराइल देश दो हिस्सों में बंट गया; जेरोबाम ने उत्तर में और रहोबाम ने दक्षिण में राज किया, और उन्होंने अपने मौकों को गंवा दिया (मैकआर्थर)।

क्या आप इसकी कल्पना कर सकते हैं? राजा सुलैमान के नज़रिए से सोचिए: उन्हें कैसा लगा होगा यह जानकर कि उनके अपने पापों की वजह से, इसराइल का राज्य—जिसे बनाने में उन्होंने अपनी पूरी ज़िंदगी लगा दी थी—उनके बेटे रहोबाम के राज में दो हिस्सों में बंट जाएगा? इस आने वाली और न बदली जा सकने वाली घटना के बारे में जानकर, "इस दुनिया में" की गई अपनी सारी मेहनत के बारे में सोचते हुए उन्हें कैसा लगा होगा? जब हम अपनी ज़िंदगी भर की मेहनत की कमाई अपने बच्चों को सौंपकर इस दुनिया से चले जाते हैं, तो हम उनके लिए उस विरासत की रक्षा नहीं कर पाते। हमें नहीं पता कि हमारे बच्चे समझदार होंगे या नासमझ, या—जब वे हमारे पीछे छोड़ी गई हर चीज़ का कंट्रोल ले लेंगे (वचन 19)—तो क्या वे उसे बर्बाद कर देंगे या परमेश्वर की महिमा के लिए हमारे छोड़े गए साधनों का समझदारी से इस्तेमाल करेंगे। इसीलिए राजा सुलैमान वचन 20 में कहते हैं: "इसलिए मैंने अपना मन बदल लिया और 'इस दुनिया में' की गई अपनी सारी मेहनत के बारे में निराशा से भर गया।" आखिरकार, जब उन्होंने मौत के नज़रिए से अपनी सारी कड़ी मेहनत को देखा, तो वे निराशा से भर गए।

तीसरी और आखिरी वजह यह है कि हम अपनी मेहनत से कमाई गई दौलत का पूरा मज़ा नहीं ले सकते।

राजा सुलैमान ने शायद अपनी ज़िंदगी में कमाई गई दौलत का मज़ा लिया होगा। फिर भी, वचन 21 से 23 में, वे बहुत निराशावादी सोच ज़ाहिर करते हैं। उदाहरण के लिए, वे कहते हैं कि जब कोई व्यक्ति समझदारी, ज्ञान और हुनर के साथ मेहनत करता है, तो उसे अपनी मेहनत का फल किसी ऐसे व्यक्ति के लिए छोड़ना पड़ता है जिसने उसके लिए काम नहीं किया; वे इसे व्यर्थ और एक बड़ी बुराई मानते हैं (पद 21)। वे खुद से यह भी पूछते हैं, "इस दुनिया में कड़ी मेहनत और चिंता भरी कोशिशों से इंसान को क्या मिलता है?" (पद 22) और इस नतीजे पर पहुँचते हैं: "उसके सारे दिन दुख और परेशानी में बीतते हैं; रात में भी उसका मन शांत नहीं रहता। यह भी व्यर्थ है" (पद 23)। इसका क्या मतलब है? इसका मतलब है कि चिंता और कड़ी मेहनत में बिताई गई पूरी ज़िंदगी का नतीजा सिर्फ़ दुख होता है। राजा सुलैमान कहते हैं, "यह भी व्यर्थ है," क्योंकि कड़ी मेहनत वाली ज़िंदगी का नतीजा—जिसमें लगातार चिंता और बिना नींद की रातें हों—सिर्फ़ दुख ही होता है (पद 21, 23)।

इस तरह, जब राजा सुलैमान मौत के नज़रिए से अपनी समझदारी और मेहनत के बारे में सोचते हैं, तो वे इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि वे व्यर्थ हैं। इससे उन्होंने क्या ज़रूरी सबक सीखा? आज के हिस्से, उपदेशक 2:24 को

देखिए: "इंसान के लिए खाने-पीने और अपनी मेहनत में संतुष्टि पाने से बेहतर कुछ नहीं है। मैंने देखा है कि यह भी परमेश्वर की ओर से है।" अपनी समझदारी और मेहनत की व्यर्थता को समझते हुए सुलैमान ने यह सबक सीखा कि धरती पर अपने काम में संतुष्टि और खुशी पाने की क्षमता खुद से नहीं, बल्कि परमेश्वर से मिलती है। इस धरती पर रहते हुए खाने-पीने और अपनी मेहनत का फल पाने की क्षमता परमेश्वर का दिया हुआ तोहफ़ा है। अगर हम यहाँ भौतिक जीवन की खुशियों का आनंद ले पाते हैं, तो यह परमेश्वर की कृपा का तोहफ़ा है; यह सिर्फ़ हमारी अपनी समझदारी, ज्ञान या हुनर से मिलने वाली खुशी नहीं है। इसीलिए राजा सुलैमान पूछते हैं, "क्योंकि उसके बिना कौन खा सकता है या आनंद ले सकता है?" (पद 25)। आखिर में, परमेश्वर उन्हें समझदारी, ज्ञान और खुशी देते हैं जो उन्हें खुश करते हैं, और इस तरह उन्हें उन भौतिक आशीषों का आनंद लेने के काबिल बनाते हैं जो वे देते हैं (पद 26)। यह इंतज़ाम ऐसा है कि आखिरकार परमेश्वर उस धन को—जिसे पापियों ने कड़ी मेहनत से इकट्ठा किया है—उन लोगों को सौंप देते हैं जो उन्हें खुश करते हैं (पद 26)। जो पापी अविश्वास और आज्ञा न मानने का जीवन जीते हैं—और परमेश्वर को खुश नहीं कर पाते—उन्हें अपनी सांसारिक मेहनत से कमाए धन का आनंद भी नहीं लेने दिया जाता; इसके बजाय, परमेश्वर उन लोगों को—जो उनमें विश्वास करते हैं, उनकी बात मानते हैं और उन्हें खुश करते हैं—उन्हीं पापियों द्वारा जमा किए गए धन का आनंद लेने देते हैं। मेरी प्रार्थना है कि आप और मैं ऐसे लोग बनें जो परमेश्वर को खुश करें और उस बुद्धि, ज्ञान और आनंद का अनुभव करें जो वे उन लोगों को देते हैं जो उनकी नज़र में कृपा पाते हैं।

वह परमेश्वर जो हर चीज़ को उसके सही समय पर सुंदर बनाता है (1)

[सभोपदेशक 3:1-14]

आपको क्या लगता है कि हम अभी किस समय में जी रहे हैं? पिछले शनिवार की शाम, दूसरे चर्च के एक डीकन हमारे चर्च की डिस्ट्रिक्ट 1 सर्विस में शामिल हुए। सर्विस के बाद डिनर करते समय, उन्होंने मुझे हाल ही में रिलीज़ हुई फ़िल्म '2012' के बारे में बताया। उन्होंने बताया कि यह फ़िल्म दो घंटे से ज़्यादा लंबी है और इसमें शुरू से आखिर तक बहुत सारा एक्शन है। इसलिए, मैंने इंटरनेट पर इस फ़िल्म '2012' के बारे में कुछ जानकारी जुटाई। यह फ़िल्म पूरी तरह से तबाही की घटनाओं पर आधारित है, जिसकी कहानी के अनुसार 21 दिसंबर, 2012 को पृथ्वी नष्ट हो जाएगी। प्राचीन माया सभ्यता के समय से ही मानवता के अंत के बारे में कई कहानियाँ प्रचलित रही हैं; इनमें से 21 दिसंबर, 2012 को पृथ्वी के नष्ट होने की भविष्यवाणी का एक कारण यह माना जाता है कि माया लोगों द्वारा बनाए गए कैलेंडर में केवल 21 दिसंबर, 2012 तक की ही तारीखें शामिल हैं। इसके अलावा, जाने-माने वैज्ञानिकों का कहना है कि सालों की रिसर्च के बाद यह पता चला है कि तबाही का असली साल 2012 ही है। कहा जाता है कि सूरज का व्यवहार पहले से कहीं ज़्यादा उग्र हो गया है—खासकर 1940 के दशक और 2003 के बाद से—जबकि हिमयुग (Ice Age) के अंत में तेज़ी से हो रही ग्लोबल वार्मिंग के कारण ग्लेशियरों के पिघलने की शुरुआत 11,000 साल पहले ही हो गई थी। अब तक की जानकारी के आधार पर, सूरज का अध्ययन करने वाले भौतिक विज्ञानी (physicists) अनुमान लगाते हैं कि 2012 तक सौर गतिविधि (solar activity) एक बार फिर अपने चरम पर पहुँच जाएगी। कहा जाता है कि जब सूरज पर कोई तूफ़ान आता है, तो पृथ्वी पर भी तूफ़ान आता है। इसी आधार पर, फ़िल्म में एक ऐसा दृश्य दिखाया गया है जिसमें दुनिया भर में भूकंप, ज्वालामुखी का फटना और भयंकर सुनामी जैसी कई प्राकृतिक आपदाएँ आती हैं, जिससे एक ऐसा अंतिम क्षण आता है जिसे कोई रोक नहीं

सकता। पिछले शनिवार को इस फ़िल्म के बारे में सुनने के बाद, अगले ही दिन—रविवार को—मैंने अपने चर्च के नब्बे साल से ज़्यादा उम्र के एक डीकन के साथ लंच के दौरान इस पर चर्चा की। मैंने यह बात इसलिए छोड़ी क्योंकि उन्होंने पहले मुझे जापानी अखबार का एक लेख दिखाया था जिसमें भविष्यवाणी की गई थी कि दुनिया 2050 में खत्म हो जाएगी। उस समय, मैंने मज़ाक में कहा था, "खैर, आप 2050 में तो होंगे नहीं, इसलिए आपको इसकी चिंता करने की ज़रूरत नहीं है।" हालाँकि, चूँकि नई भविष्यवाणी यह थी कि दुनिया 2050 के बजाय 2012 में खत्म हो जाएगी, इसलिए मैंने उनसे इस बारे में हल्के-फुल्के अंदाज़ में बातचीत शुरू की। ऐसी फ़िल्मों और अखबार के लेखों—"दुनिया के अंत" के बारे में इन सांसारिक चर्चाओं—पर आपकी क्या राय है? व्यक्तिगत रूप से, मुझे लगता है कि दुनिया के लोगों को भी किसी न किसी स्तर पर यह एहसास होता है कि एक दिन अंत ज़रूर होगा। इन विचारों के बीच, मुझे लूका 12:56-57 की बातें याद आईं: "हे पाखंडियों! तुम धरती और आकाश के संकेतों को समझना जानते हो। तो फिर तुम इस वर्तमान समय को क्यों नहीं समझ पाते? और तुम खुद यह क्यों नहीं परखते कि क्या सही है?" लोग मौसम के संकेतों को समझना जानते हैं, फिर भी वे उस समय को नहीं पहचान पाते जिसमें हम सभी जी रहे हैं। बेशक, *2012* जैसी आपदा वाली फ़िल्में और दुनिया के विनाश के बारे में किताबें आती रहती हैं, लेकिन ऐसा लगता है कि बहुत से लोग अपनी ज़िंदगी इस बात से बेखबर होकर जीते हैं कि यह मौजूदा दौर असल में दुनिया का आखिरी समय है।

आज के अंश, उपदेशक 3:11 में, राजा सुलैमान—जो उपदेशक भी थे—कहते हैं कि परमेश्वर ने हर चीज़ को उसके सही समय पर सुंदर बनाया है। इसलिए, इस अंश—खासकर उपदेशक 3:1-14—और शीर्षक "परमेश्वर जो सब कुछ अपने समय में सुंदर बनाता है (1)" पर ध्यान केंद्रित करते हुए, मैं विनम्रतापूर्वक उस अनुग्रह को स्वीकार करना चाहता हूँ जो परमेश्वर देता है, और इस बात पर विचार करना चाहता हूँ कि वह कैसे हर चीज़ को उसके सही समय पर सुंदर बनाता है।

पहला, परमेश्वर हर चीज़ को उसके समय में सुंदर बनाता है क्योंकि वह हर मकसद को पूरा करता है।

आज के पाठ में उपदेशक 3:1 को देखें: "हर चीज़ का एक मौसम होता है, स्वर्ग के नीचे हर मकसद के लिए एक समय होता है।" यहाँ, राजा सुलैमान कहते हैं कि हर चीज़ के लिए एक तय समय होता है और हर

मकसद को पूरा करने के लिए एक खास पल होता है। वे बताते हैं कि क्योंकि परमेश्वर हमारी व्यक्तिगत ज़िंदगी में काम कर रहे हैं, इसलिए वे आखिर में अपने मकसद और अपनी इच्छा को पूरा करते हैं (वियर्सबे)। इस संदर्भ में, राजा सुलैमान आयत 2 से 8 तक अलग-अलग समय का ज़िक्र करते हैं। मैंने इन समयों को पाँच समूहों में बाँटा है:

(1) पहला, पैदा होने का समय और मरने का समय।

सभोपदेशक 3:2 को देखिए: "जन्म लेने का समय, और मरने का समय; बोनो का समय, और बोई हुई चीज़ को उखाड़ने का समय।" राजा सुलैमान ने पहले कहा था कि "बुद्धिमान व्यक्ति की भी, मूर्ख की तरह, कोई स्थायी याद नहीं रहती" और "बुद्धिमान भी वैसे ही मरता है जैसे मूर्ख" (2:16)। अब, सभोपदेशक 3:2 में, वे कहते हैं कि जहाँ जन्म का समय होता है, वहीं मौत का समय भी ज़रूर आता है। जन्म और मौत के बारे में—या पेड़ की मिसाल का इस्तेमाल करें तो—बोनो का समय होता है और बोई हुई चीज़ को उखाड़ने का समय भी होता है। यहाँ सबसे ज़रूरी बात परमेश्वर की सर्वोच्च सत्ता है। यानी, लोग परमेश्वर की सर्वोच्च सत्ता के दायरे में ही पैदा होते हैं और मरते हैं। न सिर्फ़ इंसानी ज़िंदगी, बल्कि पेड़ की ज़िंदगी भी परमेश्वर के सर्वोच्च नियंत्रण में होती है। सबसे ज़रूरी बात यह है कि हमारी ज़िंदगी और मौत के ज़रिए सिर्फ़ प्रभु की इच्छा पूरी हो। दूसरे शब्दों में, हमारे होने और हमारे जाने के ज़रिए सिर्फ़ प्रभु की महिमा ज़ाहिर होनी चाहिए। तभी हमारी ज़िंदगी और मौत सच में खूबसूरत बनती हैं। परमेश्वर ही हैं जो हमारी ज़िंदगी और मौत के ज़रिए अपनी सर्वोच्च इच्छा पूरी करके हर चीज़ को खूबसूरत बनाते हैं। जब मैंने आज के वचन—सभोपदेशक 3:2—पर मनन किया, तो मैंने यह प्रार्थना की: "हे परमेश्वर, कृपया मेरी मौत को मेरे जन्म से भी ज़्यादा खूबसूरत बना।" मैं प्रार्थना करता रहता हूँ कि परमेश्वर मुझे एक खूबसूरत मौत दे। पेड़ की मिसाल का इस्तेमाल करते हुए, मैं प्रार्थना करता हूँ कि मैं अच्छी तरह से बोया जाऊँ, तेज़ी से बढ़ूँ, और आखिर में उखाड़े जाने से पहले परमेश्वर की महिमा के लिए बहुत सारे फल दूँ। फिर भी, मैं प्रार्थना करता हूँ कि मेरी अपनी इच्छा नहीं, बल्कि परमेश्वर की सर्वोच्च इच्छा ही मेरी ज़िंदगी और मौत के ज़रिए पूरी हो। इसकी वजह यह है कि मेरा जीवन और मृत्यु तभी सच में सुंदर हो सकते हैं जब परमेश्वर की सर्वोच्च इच्छा पूरी हो—मेरी अपनी इच्छा नहीं।

(2) दूसरी बात, अनुशासन और बहाली के समय भी होते हैं।

उपदेशक 3:3, 5-6 और आयत 7 के पहले हिस्से को देखिए: "मारने का समय और चंगा करने का समय, गिराने का समय और बनाने का समय... पत्थर फेंकने का समय और पत्थर इकट्ठा करने का समय, गले लगाने का समय और गले लगाने से दूर रहने का समय, खोजने का समय और खोया हुआ मानकर छोड़ देने का समय, रखने का समय और फेंकने का समय, फाड़ने का समय और जोड़ने का समय..." संक्षेप में, यह हिस्सा हमें बताता है कि ऐसे समय होते हैं जब परमेश्वर हमें अनुशासित करते हैं और ऐसे समय भी होते हैं जब वे हमें बहाल करते हैं (पार्क युन-सन)। मारना, इमारतें गिराना, पत्थर फेंकना, गले लगाने से बचना और फाड़ना जैसे काम परमेश्वर के अनुशासन को दिखाते हैं। इसके विपरीत, चंगा करना, बनाना, पत्थर इकट्ठा करना, गले लगाना, खोजना, रखना और जोड़ना जैसे काम बहाली की ओर इशारा करते हैं। राजा सुलैमान अनुशासन और बहाली के समय की बात क्यों करते हैं? इसकी वजह यह है कि जन्म से लेकर मृत्यु तक, भले ही हम परमेश्वर की कृपा से यीशु पर विश्वास करते हैं, हम कमज़ोर बने रहते हैं और पुरानी आदतों के अनुसार जीने की ओर झुके रहते हैं; लाज़मी तौर पर, हम परमेश्वर के विरुद्ध पाप करते हैं और इस तरह उनके अनुशासन का सामना करते हैं। फिर भी, परमेश्वर की अद्भुत कृपा इस बात में है कि वे ऐसे परमेश्वर हैं जो न केवल पाप करने पर हमें अनुशासित करते हैं, बल्कि हमें बहाल भी करते हैं। यहाँ हमें यह ध्यान में रखना चाहिए कि इस दिव्य अनुशासन और बहाली में दो महत्वपूर्ण बातें शामिल हैं: परमेश्वर का प्रेम, और हमारा पाप स्वीकार करना और पश्चाताप करना।

परमेश्वर हमें अनुशासित क्यों करते हैं और फिर हमें बहाल क्यों करते हैं? इसका कारण यह है कि वे हमसे प्रेम करते हैं। यदि परमेश्वर हमसे प्रेम न करते, तो उन्हें हमें अनुशासित करने की कोई आवश्यकता न होती। चूँकि वे हमसे प्रेम करते हैं, इसलिए जब हम आज्ञा का उल्लंघन करते हैं और पाप करते हैं तो वे हमें दंड देते हैं; और चूँकि वे हमसे प्रेम करते हैं, इसलिए वे हमारे घावों पर मरहम लगाते हैं। इसके अलावा, परमेश्वर के प्रेमपूर्ण अनुशासन और हमारी बहाली के बीच, हमारी ओर से पाप की स्वीकारोक्ति और पश्चाताप होना आवश्यक है। ऐसा इसलिए है क्योंकि पाप की स्वीकारोक्ति और पश्चाताप के बिना बहाली नहीं हो सकती। अंततः, अनुशासन और बहाली की प्रक्रिया के माध्यम से—जिसमें उनका प्रेम और हमारी स्वीकारोक्ति व पश्चाताप शामिल हैं—परमेश्वर अपने सर्वोच्च उद्देश्य को पूरा करते हैं और हमें कुछ सुंदर में बदल देते हैं।

(3) तीसरा, रोने का समय और हँसने का समय होता है।

आज के वचन, उपदेशक 3:4 को देखें: "रोने का समय और हँसने का समय, शोक मनाने का समय और नाचने का समय।" यह संसार चिंताओं, कठिनाइयों, पाप और मृत्यु से भरा है। जैसा कि भजनकार मूसा ने कहा, हमारे दिन सत्तर वर्ष के हो सकते हैं, या यदि हममें शक्ति हो तो अस्सी वर्ष के, फिर भी उनमें से सबसे अच्छे दिन भी केवल कष्ट और दुःख से भरे होते हैं (भजन संहिता 90:10)। इसलिए, चाहे कोई यीशु में विश्वास करे या न करे, इस दुःख-भरे संसार में रहने पर रोने का समय अनिवार्य रूप से आता है। हालाँकि, विश्वास करने वाले का दुःख अविश्वासी के दुःख से भिन्न होता है—या यूँ कहें कि, उसे भिन्न *होना चाहिए*। दुःख के इस संसार में विश्वासियों और अविश्वासियों को एक ही प्रकार के आँसू नहीं बहाने चाहिए। जो लोग यीशु में विश्वास करते हैं, उन्हें पश्चात्ताप के आँसू बहाने चाहिए। जब हम परमेश्वर के विरुद्ध पाप करते हैं और अनुशासन का सामना करते हैं, तो हमें अपने कष्ट और पीड़ा के बीच रोना और शोक मनाना चाहिए। ऐसे आँसू और दुःख वास्तव में बहुमूल्य हैं। इसीलिए राजा सुलैमान कहते हैं कि हँसी से दुःख बेहतर है (उपदेशक 7:3)। हमारे चेहरों पर दुःख का भाव होना चाहिए, क्योंकि ऐसा दुःख हमारे हृदयों को बेहतर बना सकता है। यह हमारे हृदयों को कैसे बेहतर बनाता है? ऐसा इसलिए है क्योंकि परमेश्वर-संबंधी दुःख हमें पश्चात्ताप की ओर ले जाता है, और अंततः हमें हँसी और आनंद प्रदान करता है। दूसरे शब्दों में, हमारे चेहरों पर दुःख बहुमूल्य है क्योंकि परमेश्वर-संबंधी दुःख हमें पापों की क्षमा प्राप्त करने और परमेश्वर द्वारा प्रदान की गई बहाली की कृपा का आनंद लेने में सक्षम बनाता है। इसलिए, हमें दुःख और आनंद दोनों ही समयों में परमेश्वर का धन्यवाद करना चाहिए। हम धन्यवाद देते हैं क्योंकि परमेश्वर की मर्जी से आने वाले दुखों के ज़रिए हम अपने पापों को मानकर पछतावा कर पाते हैं। जब हम अपने पापों को मानते हैं और पछतावा करते हैं, तो हमें वह सच्ची खुशी मिलती है जो परमेश्वर देता है। आखिर में, चाहे हम रो रहे हों या हंस रहे हों, परमेश्वर अपने मकसद पूरे करके हमें सुंदर बनाता है।

(4) चौथा, चुप रहने का भी समय होता है और बोलने का भी।

आज के वचन में सभोपदेशक 3:7 का आखिरी हिस्सा देखें: "...चुप रहने का समय और बोलने का समय।" राजा सुलैमान ने सभोपदेशक 5:2 में पहले ही इसके बारे में कहा था: "अपनी ज़बान से जल्दबाज़ी न करना,

और परमेश्वर के सामने कुछ भी कहने में जल्दबाज़ी न करना। क्योंकि परमेश्वर स्वर्ग में है और तुम धरती पर हो; इसलिए तुम्हारे शब्द कम हों।" वह हमें सिखा रहा है कि जब हम परमेश्वर से प्रार्थना करें तो जल्दबाज़ी में या बिना सोचे-समझे न बोलें। बेशक, इसका मतलब यह नहीं है कि परमेश्वर के सामने हमें लंबी प्रार्थनाओं के बजाय छोटी प्रार्थनाएँ करनी चाहिए। हाँ, मेरा मानना है कि बार-बार एक ही बात दोहराने वाली लंबी और बेकार की प्रार्थनाओं के बजाय, दिल खोलकर और सच्चे मन से परमेश्वर से विनती करना उसे ज़्यादा पसंद आता है। असल बात प्रार्थना की लंबाई नहीं है—चाहे वह लंबी हो या छोटी—बल्कि प्रार्थना करने का *तरीका* मायने रखता है।

जब हम प्रार्थना करते हैं, तो हमें सबसे पहले परमेश्वर के सामने शांत होना चाहिए। इस शांति के दो मतलब हैं: परमेश्वर पर पूरा भरोसा रखना और उसकी आवाज़ सुनना। हमें अपनी प्रार्थना की शुरुआत उस शांति के साथ करनी चाहिए जो उस पर पूरे भरोसे से आती है। उस भरोसे के साथ, हमें उसकी आवाज़ सुनने की कोशिश करनी चाहिए। ऐसा करने के लिए, हमें परमेश्वर *से* बात करने पर कम और उसके वचन के *ज़रिए* उसकी आवाज़ सुनने पर ज़्यादा ध्यान देना चाहिए। खासकर, हमें परमेश्वर के सामने शांत रहना चाहिए और उसके वचन को अपने दिल से बात करने देना चाहिए। उस वचन के ज़रिए हमें अपने पापों का एहसास होना चाहिए। तभी हमें परमेश्वर के सामने उन पापों को मानने के लिए अपना मुँह खोलना चाहिए। आखिर में, परमेश्वर हमें शांत रहने और बोलने, दोनों के लिए प्रेरित करके सुंदर बनाता है। दूसरे शब्दों में, वह हमें उस पर पूरा भरोसा करने के काबिल बनाकर और हमें अपना मुँह खोलकर अपने पापों को मानने के लिए प्रेरित करके हमें सुंदर बनाता है।

(5) पाँचवाँ और आखिरी, प्यार करने का भी समय होता है और नफ़रत करने का भी। आज के वचन, उपदेशक 3:8 को देखिए: "प्यार करने का समय और नफ़रत करने का समय, युद्ध का समय और शांति का समय।" यीशु पर विश्वास करने वाले तब सुंदर लगते हैं जब वे परमेश्वर के वचन का पालन करते हैं और अपने पड़ोसियों से प्यार करते हैं। हम तब भी सुंदर लगते हैं जब हम परमेश्वर के वचन का पालन करते हैं और बुराई से नफ़रत करते हैं। फिर भी, आजकल अपने कलीसिया को देखें तो लगता है कि हम इसके उलट कर रहे हैं: जिन पड़ोसियों से हमें प्यार करना चाहिए, उनसे नफ़रत कर रहे हैं और जिस पाप से हमें नफ़रत करनी चाहिए, उससे प्यार कर रहे हैं। इसीलिए कलीसिया अक्सर सुंदर दिखने के बजाय बदसूरत लगती है। हमें साफ़ तौर पर यह समझना होगा कि हमें किनसे प्यार करना है और किनसे नफ़रत। परमेश्वर हमें अपने

पड़ोसियों से प्यार करने और बुराई से नफ़रत करने का आदेश देते हैं। वे हमें प्रभु के प्यार से एक-दूसरे से प्यार करने और बुराई से नफ़रत करने के काबिल बनाकर सुंदर बनाना चाहते हैं। इसलिए, परमेश्वर के वचन का पालन करते हुए, हमें शैतान के उन प्रलोभनों के खिलाफ़ आध्यात्मिक लड़ाई लड़नी चाहिए जो हमारे प्यार और नफ़रत के विषयों को उलझाना चाहते हैं। हमें जीत के भरोसे के साथ इस आध्यात्मिक लड़ाई में शामिल होना चाहिए, क्योंकि यीशु पहले ही क्रूस पर जीत हासिल कर चुके हैं। उनकी जीत हमारी जीत है। परमेश्वर हमें इस आध्यात्मिक लड़ाई में जीत दिलाकर और हमें शांति देकर सुंदर बनाते हैं। इस तरह, परमेश्वर हर चीज़ को सुंदर बनाते हैं—चाहे वह प्यार और शांति हो या नफ़रत और युद्ध। आखिरकार, वे प्यार और नफ़रत, युद्ध और शांति के बीच अपनी सर्वोच्च इच्छा पूरी करके हमें सुंदर बनाते हैं।

हमारे परमेश्वर ही हैं जो हर चीज़ को उसके सही समय पर सुंदर बनाते हैं। चाहे हमारा जन्म हो रहा हो या हम मर रहे हों, रो रहे हों या हँस रहे हों, अनुशासन से गुज़र रहे हों या बहाली का अनुभव कर रहे हों, चुप हों या बोल रहे हों, प्यार कर रहे हों या नफ़रत—हर स्थिति में, परमेश्वर अपनी सर्वोच्च इच्छा पूरी करके हमें सुंदर बनाते हैं। उनकी सर्वोच्च इच्छा इन सभी समयों में काम कर रही है, और हमें यीशु जैसा बनने के लिए बदल रही है। ऐसा करने में, भले ही हम दुनिया की नज़र में वैसी सुंदरता न रखें जिसकी वे तारीफ़ करते हैं (यशायाह 53:2), हम परमेश्वर की नज़र में उनके सुंदर बच्चे बन जाएँगे। इसलिए, हम परमेश्वर के सामने यह भजन गाते हैं "तेरी इच्छा पूरी हो" (भजन 431):

(पद 1) हे प्रभु, तेरी इच्छा पूरी हो; मैं अपना पूरा शरीर और आत्मा तुझे सौंपता हूँ। इस दुनिया के सुख-दुख में मेरी अगुवाई कर; मेरी बागडोर संभाल लें और आपकी मर्ज़ी पूरी हो।

(पद 2) हे प्रभु, आपकी मर्ज़ी पूरी हो; घोर संकट में भी मेरा हौसला न टूटे। आप भी कभी-कभी रोए थे; मेरी बागडोर संभाल लें और आपकी मर्ज़ी पूरी हो।

(पद 3) हे प्रभु, आपकी मर्ज़ी पूरी हो; मैं अपने सारे काम आपको सौंपता हूँ। मैं चुपचाप स्वर्ग के घर की ओर बढ़ूँगा; चाहे मैं जीवित रहूँ या मर जाऊँ, आपकी मर्ज़ी पूरी हो। आमीन।

वह परमेश्वर जो हर चीज़ को उसके सही समय पर सुंदर बनाता है (2)

[सभोपदेशक 3:1-14]

आने वाले शुक्रवार को, हमारे चर्च के डीकन चोई के बेटे के लिए एक श्रद्धांजलि सभा आयोजित की जाएगी। जब मैं डीकन के बेटे—जिनका 55 साल की कम उम्र में अचानक निधन हो गया—के लिए सभा की तैयारी कर रहा हूँ, तो मुझे उस संदेश की याद आती है जिस पर मैंने पिछले बुधवार को मनन किया था: "वह परमेश्वर जो हर चीज़ को उसके सही समय पर सुंदर बनाता है (1)।" हमारे जीवन में जन्म लेने और मरने, दोनों का समय होता है; एक समय ऐसा आएगा जब हम सभी को मृत्यु का सामना करना होगा। डीकन चोई के दिवंगत बेटे के बारे में सोचते हुए, मैं प्रार्थना करता हूँ और इस विश्वास के साथ आगे देखता हूँ कि मृत्यु में भी, परमेश्वर अपने उद्देश्य और अपनी सर्वोच्च इच्छा को पूरा करके हर चीज़ को सुंदर बनाता है।

पिछले बुधवार की प्रार्थना सभा के दौरान, सभोपदेशक 3:1-14 के अंश पर ध्यान केंद्रित करते हुए, हमें "वह परमेश्वर जो हर चीज़ को उसके सही समय पर सुंदर बनाता है" शीर्षक वाले संदेश का पहला भाग मिला। मुख्य संदेश यह है कि परमेश्वर हर उद्देश्य को पूरा करके हर चीज़ को उसके सही समय पर सुंदर बनाता है (पद 1)। इस "समय" के बारे में, राजा सुलैमान आज के अंश के पद 2 से 8 तक विभिन्न उदाहरण देते हैं। मैंने मनन करने के लिए इन्हें पाँच समूहों में वर्गीकृत किया, और यह देखा कि परमेश्वर अपनी सर्वोच्च इच्छा को पूरा करके इन सभी क्षणों में हर चीज़ को सुंदर बनाता है: (1) जन्म लेने का समय और मरने का समय (पद 2); (2) अनुशासन का समय और बहाल करने का समय (पद 3, 5-6, और पद 7 का पहला भाग); (3) रोने का समय और हँसने का समय (पद 4); (4) चुप रहने का समय और बोलने का समय (पद 7 का दूसरा भाग); और (5) प्रेम करने का समय और घृणा करने का समय। परमेश्वर ही वह है जो हर मौसम में अपने

उद्देश्यों को पूरा करके हर चीज़ को सुंदर बनाता है। हर चीज़ के लिए एक निश्चित समय होता है—जन्म और मृत्यु, गिराना और बनाना, रोना और हँसना, चुप्पी और बोलना, प्रेम और घृणा—और इन समयों के भीतर, परमेश्वर अपनी सर्वोच्च इच्छा को पूरा करता है, जिससे हर चीज़ सुंदर बन जाती है। इसीलिए हम भजन 43:1, "हे प्रभु, तेरी इच्छा पूरी हो" (या "हे मेरे प्रभु, तेरी इच्छा के अनुसार"), उनकी स्तुति में गाते हैं।

आज, उपदेशक 3:1-14 के अंश को आगे बढ़ाते हुए, मैं इस विषय पर विचार करना चाहता हूँ: "परमेश्वर जो हर चीज़ को उसके सही समय पर सुंदर बनाता है (भाग 2)।" खास तौर पर, मैं इस बात पर मनन करना चाहता हूँ कि परमेश्वर *कैसे* हर चीज़ को उसके सही समय पर सुंदर बनाता है और उसकी दी हुई कृपा को कैसे प्राप्त किया जाए।

दूसरी बात, परमेश्वर हमारे अंदर अनंत काल की चाहत रखकर हर चीज़ को उसके सही समय पर सुंदर बनाता है।

उपदेशक 3:11 के पहले हिस्से को देखें: "परमेश्वर ने हर चीज़ को उसके सही समय पर सुंदर बनाया है; उसने मनुष्य के हृदय में अनंत काल की बात भी रखी है..." इस दुनिया में रहते हुए—एक ऐसी दुनिया जिसे अक्सर "व्यर्थता की व्यर्थता" कहा जाता है—हमें राजा सुलैमान की तरह खुद से यह सवाल पूछना चाहिए: "इस धरती पर मैं जो भी मेहनत और परिश्रम करता हूँ, उससे मुझे असल में क्या हासिल होता है?" राजा सुलैमान ने इस अंश से पहले भी दो बार यह सवाल पूछा था: "सूरज के नीचे की गई सारी मेहनत से मनुष्य को क्या लाभ होता है?" (1:3) और "सूरज के नीचे की गई सारी मेहनत और दिल की जद्दोजहद से मनुष्य को क्या मिलता है?" (2:22)। फिर भी, यहाँ उपदेशक 3:9 में, वह वही सवाल फिर से पूछते हैं: "काम करने वाले को उस काम से क्या लाभ होता है जिसमें वह मेहनत करता है?" बार-बार वही सवाल पूछने के बाद, राजा सुलैमान कहते हैं: "मैंने वह बोझ देखा है जो परमेश्वर ने मानव जाति पर डाला है" (3:10)। वह मानते हैं कि इस धरती पर हम जो मेहनत और परिश्रम करते हैं, वे काम परमेश्वर ने ही हमें सौंपे हैं। परमेश्वर हमसे इस धरती पर मेहनत और परिश्रम क्यों करवाते हैं? सुलैमान ने साफ-साफ कहा, "उसके सारे दिन दुख और दर्द में बीतते हैं; यहाँ तक कि रात में भी उसका मन शांत नहीं रहता। यह भी व्यर्थ है" (2:23)। परमेश्वर ऐसे काम या मेहनत क्यों तय करते हैं जो देखने में व्यर्थ लगते हैं? मुझे इसका जवाब आज के अंश, उपदेशक

3:11 में मिला। पृथ्वी पर रहते हुए परमेश्वर हमें मेहनत का यह बोझ इसलिए देते हैं ताकि हम हमेशा रहने वाली चीज़ों की चाहत रखें और उन्हें पाने की कोशिश करें। इसलिए, परमेश्वर चाहते हैं कि हम बेकार के कामों या मेहनत में लगे रहने के बजाय प्रभु में जो चीज़ें हमेशा रहने वाली हैं, उन्हें अपनाएँ और ऐसे काम करें जो उनकी नज़र में सार्थक हों।

तो फिर, परमेश्वर की नज़र में सार्थक काम क्या है? वह है "भलाई करना।" उपदेशक 3:12 को देखिए: "मैं जानता हूँ कि लोगों के लिए इससे बेहतर कुछ नहीं है कि वे खुश रहें और जीते-जी भलाई करें।" इस पृथ्वी पर रहते हुए हमारे लिए खुशी मनाने और भलाई करने से बेहतर कुछ नहीं है। यहाँ "भलाई करने" का क्या मतलब है? इसका मतलब है ऐसे काम करना जिनसे दूसरों का भला हो (पार्क युन-सन)। तो, वे कौन सी चीज़ें हैं जिनसे दूसरों का भला होता है? चूँकि परमेश्वर ने हममें से उन लोगों के दिलों में हमेशा बने रहने की चाहत डाली है जो यीशु मसीह में नई रचना बन गए हैं, इसलिए हमें दूसरों का भला करने के काम को हमेशा बने रहने वाले नज़रिए से देखना चाहिए। दूसरे शब्दों में, जब हम भलाई करते हैं—यानी जब हम ऐसे काम करते हैं जिनसे दूसरों का भला होता है—तो हमें इसे हमेशा बने रहने वाले नज़रिए से सोचना चाहिए। तो फिर, हमेशा बने रहने वाले नज़रिए से दूसरों का भला करने का क्या मतलब है? इसका मतलब है उनसे परमेश्वर के कभी न खत्म होने वाले प्रेम से प्यार करना। परमेश्वर के कभी न खत्म होने वाले प्रेम से दूसरों से प्यार करने का मतलब है उन्हें हमेशा रहने वाले प्रभु से परिचित कराना; इसका मतलब है उनके साथ यीशु मसीह के सुसमाचार को साझा करना। ऐसा करके, हम उन्हें भी, हमारी तरह, यीशु मसीह में हमेशा का जीवन पाने में मदद करते हैं। यही तो परमेश्वर का काम है। इस दुनिया में रहते हुए, परमेश्वर का काम करने में खुशी और आनंद पाने से बेहतर हमारे लिए कुछ नहीं है। इसलिए, हमें अपनी मेहनत के फल का आनंद लेना चाहिए—खाना-पीना और परमेश्वर के लिए काम करना (उपदेशक 3:13)। संक्षेप में, चाहे हम खाएँ या पिएँ या कुछ भी करें, हमें पृथ्वी पर परमेश्वर के मकसद—उनकी इच्छा—को पूरा करने में खुशी मिलनी चाहिए। यह परमेश्वर का उपहार है। क्या हम सचमुच अभी परमेश्वर के इस उपहार को पा रहे हैं और इसका आनंद ले रहे हैं?

इस पृथ्वी पर रहते हुए, हमें परमेश्वर के काम में लगन से मेहनत करनी चाहिए। यह क्यों ज़रूरी है? आज के वचन, उपदेशक 3:14 को देखिए: "मैं जानता हूँ कि परमेश्वर जो कुछ भी करता है, वह हमेशा बना रहेगा;

उसमें न तो कुछ जोड़ा जा सकता है और न ही कुछ घटाया जा सकता है। परमेश्वर ऐसा इसलिए करता है ताकि लोग उसका आदर करें।" हमें परमेश्वर के उन कामों में हिस्सा लेना चाहिए जो हमेशा बने रहते हैं। और जब हम ऐसा करते हैं, तो हमें परमेश्वर का आदर करने वाले दिल के साथ करना चाहिए। जब हम ऐसा करते हैं, तो परमेश्वर हर चीज़ को उसके सही समय पर सुंदर बना देगा। पिछले सोमवार को, मैंने अपनी कार में रखी छोटी सी 'नई वाचा' (New Testament) की किताब खोली—जिसे मैं कभी-कभी पढ़ने के लिए साथ ले जाता हूँ—और रोमियों की पत्री (Book of Romans) पढ़ना शुरू किया। मेरी नज़र रोमियों 13:11 पर रुकी: "और समय को पहचानते हुए ऐसा करो, कि अब नींद से जागने का समय आ गया है; क्योंकि अब हमारा उद्धार उस समय की तुलना में और भी निकट है जब हमने पहली बार विश्वास किया था।" परमेश्वर के इस वचन के बारे में आपके क्या विचार हैं—कि जिस समय में हम अभी जी रहे हैं, उसका मतलब है कि "हमारा उद्धार उस समय की तुलना में और भी निकट है जब हमने पहली बार विश्वास किया था"? क्या आप इस एहसास के साथ जीते हैं कि इन अंतिम दिनों में हमारा उद्धार निकट आ रहा है? क्या आप उस उद्धार के लिए तरसते हैं और उसकी इच्छा रखते हैं? जब यीशु इस पृथ्वी पर लौटेंगे, तो वे हमारे उद्धार के द्वारा सब कुछ सुंदर बना देंगे। प्रभु हमें—जो अनंत जीवन की इच्छा रखते हैं—स्वर्ग के अनंत राज्य में ले जाएँगे। वहाँ, हम प्रभु के साथ हमेशा रहेंगे और अनंत आनंद का अनुभव करेंगे। आज पृथ्वी पर रहते हुए इस आशा को मज़बूती से थामे हुए, मैं प्रार्थना करता हूँ कि हम सब परमेश्वर की इच्छा को पूरा करने का प्रयास करें, उसकी उस कृपा से सामर्थ्य पाकर जो ज़रूरत के समय हमारी मदद करती है।

हमें जिंदगी का मज़ा संतुलन के साथ लेना चाहिए।

“हर कोई खा-पी सके और अपनी मेहनत का फल पाकर संतुष्ट हो सके—यह परमेश्वर का उपहार है। मैं जानता हूँ कि परमेश्वर जो कुछ भी करता है, वह हमेशा बना रहता है; उसमें न तो कुछ जोड़ा जा सकता है और न ही कुछ घटाया जा सकता है। परमेश्वर ऐसा इसलिए करता है ताकि लोग उसका आदर करें” (सभोपदेशक 3:13-14)।

जिंदगी एक थका देने वाला सफ़र है (सभोपदेशक 1:3)। ऐसा लगता है कि इंसानों की थकान शब्दों से परे है (पद 3, *कंटेम्पररी कोरियन वर्शन*)। यह एक दर्दनाक सफ़र है (पद 13)। “परमेश्वर ने इंसानों के लिए जो किस्मत तय की है, वह मुश्किलों और दुखों से भरी है” (पद 13, *कंटेम्पररी कोरियन वर्शन*)। यह चिंता और दुख से भरा सफ़र है (2:23)। “पूरी जिंदगी मेहनत करने के बाद भी, चिंता और दर्द के अलावा कुछ नहीं मिलता,” और मेरे दिल को “रात में भी आराम नहीं मिलता; यह भी बेकार है” (पद 23, *कंटेम्पररी कोरियन वर्शन*)। यह एक बेकार और व्यर्थ सफ़र है (पद 11)। “इसका कोई मतलब नहीं है; यह सब हवा के पीछे भागने जैसा बेकार है” (पद 11, *कंटेम्पररी कोरियन वर्शन*)। इसलिए, “मुझे इस दुनिया में की गई अपनी कड़ी मेहनत पर पछतावा होता है” (पद 20, *कंटेम्पररी कोरियन वर्शन*)। तो फिर, हमें क्या करना चाहिए?

हमें जो कुछ भी हम कर रहे हैं, उसे रोककर गहराई से सोचना चाहिए। सोचते समय, हमें खुद से सही सवाल पूछने चाहिए। बेशक, ऐसे कई सवाल हैं जो हम खुद से पूछ सकते हैं। उदाहरण के लिए, राजा सुलैमान, जो उपदेशक थे (1:1), ने ऐसे सवाल पूछे: “इंसान को उस सारी मेहनत से क्या फ़ायदा मिलता है जो वह सूरज

के नीचे करता है?" (पद 3); "हँसी के बारे में मैंने कहा, 'इसका क्या फ़ायदा?'" (2:2); "इंसान को उस सारी मेहनत और कोशिश से क्या मिलता है जो वह सूरज के नीचे करता है?" (पद 22); और "काम करने वाले को अपनी मेहनत से क्या फ़ायदा मिलता है?" (3:9)। मैंने इन चार सवालों को असल ज़िंदगी में लागू करने के लिए दो सवालों में बदल दिया है: (1) अपनी मेहनत और काम से मुझे असल में अभी क्या फ़ायदा मिल रहा है? (2) अपनी कड़ी मेहनत और परिश्रम से मैं क्या हासिल करने की कोशिश कर रहा हूँ?

सबसे पहले, हमें खुद से ये सवाल पूछने चाहिए और सोचना चाहिए कि अभी हमें क्या मिल रहा है और क्या हम खो रहे हैं। दूसरे शब्दों में, हमें ध्यान से सोचना होगा कि हमें क्या पाना चाहिए और क्या छोड़ देना चाहिए। आसान शब्दों में कहें तो, हमें फायदे और नुकसान को तौलना होगा। फिर, सही समझ के साथ, हमें उन चीज़ों को पक्के तौर पर छोड़ देना चाहिए जिन्हें छोड़ना ज़रूरी है, और उन चीज़ों को अपनाना चाहिए जिन्हें पाना ज़रूरी है। उदाहरण के लिए, हमें निश्चित रूप से उन चीज़ों को छोड़ देना चाहिए जो परमेश्वर की नज़र में "व्यर्थ से भी व्यर्थ" हैं (1:2, 14; 2:11, 15, 17, आदि)। दूसरे शब्दों में, हमें उन चीज़ों को छोड़ देना चाहिए जो परमेश्वर की नज़र में बेकार हैं (2:11)। तो, वे कौन सी चीज़ें हैं जो परमेश्वर की नज़र में हमारे लिए बेकार हैं? इनमें शामिल हैं "खुद को शराब से खुश करना" (वचन 3), "बड़े-बड़े काम शुरू करना" (वचन 4), "ज़्यादा संपत्ति जमा करना" और "अपने लिए चीज़ें इकट्ठा करना" (वचन 7-8), "महान बनना" (वचन 9), "जो चाहा वो पाना" और "खुद को किसी भी खुशी से वंचित न रखना" (वचन 10), वगैरह। तो फिर, परमेश्वर की नज़र में हमारे लिए सच में फायदेमंद क्या है? बस यही कि इंसान खाए-पिए और अपनी सारी मेहनत में संतुष्टि पाए (वचन 24; 3:13)। यह "परमेश्वर की ओर से दिया गया" (2:24) है और "परमेश्वर का उपहार" (3:13) भी है।

हमें परमेश्वर के इस उपहार को विनम्रता से स्वीकार करना चाहिए और इसका आनंद लेना चाहिए। दूसरे शब्दों में, हमें खाने-पीने में खुशी मिलनी चाहिए। खासकर, हमें अपने प्रियजनों के साथ खाने-पीने का आनंद लेना चाहिए। कोई पूछ सकता है, "खाने-पीने में ऐसी क्या खास बात है?" फिर भी, अपने ससुर को देखकर—जो पिछले लगभग छह सालों से मुँह से कुछ खा-पी नहीं पा रहे हैं—मुझे एहसास होता है कि खा-पी सकना कितना बड़ा आशीर्वाद है; एक ऐसा काम जिसे हम अक्सर इंसानी ज़िंदगी के लिए बहुत मामूली समझते हैं। उनके बारे में और उन दूसरे अपनों के बारे में सोचते हुए, जिन्होंने नर्सिंग होम या इंटेंसिव केयर यूनिट में

समय बिताया है, मुझे पक्का यकीन है कि हमें खाने-पीने की क्षमता के लिए शुक्रगुजार होना चाहिए और सच में इसका आनंद लेना चाहिए। इसके अलावा, हमें अपने काम में खुशी ढूंढनी चाहिए। राजा सुलैमान, जो एक शिक्षक थे, ने माना: "इसलिए मैंने देखा कि इंसान के लिए अपने काम का आनंद लेने से बेहतर कुछ नहीं है..." (3:22)। हमें जो काम हम करते हैं, उसमें खुशी मिलनी चाहिए (वचन 22)। और हमें उस काम में संतुष्टि मिलनी चाहिए (5:18, *कंटेम्पररी कोरियन बाइबिल*)। हमारी आत्मा को ऐसी खुशी से संतुष्ट होना चाहिए (6:3)। अगर हम अपने काम में खुशी और संतुष्टि नहीं पाते हैं, तो सब बेकार है (5:10)। भले ही हम दो हज़ार साल जिएं, लेकिन अगर हम ज़िंदगी का आनंद नहीं लेते तो क्या फ़ायदा (6:6, *कंटेम्पररी कोरियन बाइबिल*)? इसलिए, राजा सुलैमान ने कहा: "मैंने देखा है कि इंसान के लिए यह अच्छा और सुंदर है कि वह खाए-पीए और उस थोड़ी-सी ज़िंदगी में, जो परमेश्वर ने उसे दी है, अपनी सारी मेहनत का आनंद ले—क्योंकि यही उसका हिस्सा है" (5:18) [*कंटेम्पररी कोरियन बाइबिल*: "मुझे एहसास हुआ कि परमेश्वर द्वारा दी गई छोटी-सी ज़िंदगी जीते हुए सबसे अच्छी बात है खाना-पीना और अपने काम में संतुष्टि पाना; यही इंसान की नियति है"। "इसलिए मैं ज़िंदगी का आनंद लेने की सलाह देता हूँ, क्योंकि इंसान के लिए खाने-पीने और खुश रहने से बेहतर कुछ नहीं है। तब परमेश्वर द्वारा दी गई ज़िंदगी के सभी दिनों में उनकी मेहनत के साथ खुशी भी होगी" (8:15) [*कंटेम्पररी कोरियन बाइबिल*: "इसलिए, इंसान को ज़िंदगी का आनंद लेने में सक्षम होना चाहिए। क्योंकि इस दुनिया में खाने-पीने और खुश रहने से बेहतर कुछ नहीं है। हालाँकि, ऐसी खुशी इस दुनिया में परमेश्वर द्वारा दी गई ज़िंदगी जीते हुए कड़ी मेहनत करने में मिलनी चाहिए"। हमें धरती पर मिली छोटी-सी ज़िंदगी का आनंद लेना चाहिए जो परमेश्वर ने हमें दी है।

आखिरकार, हमें इस बात पर सोचना चाहिए कि हम अपनी ज़िंदगी में क्या हासिल करने की कोशिश और मेहनत कर रहे हैं। उपदेशक राजा सुलैमान ने "बुद्धि से उन सब कामों को खोजने और जांचने में अपना मन लगाया जो धरती पर होते हैं" (1:13)। उन्होंने "बुद्धि को जानने और पागलपन व मूर्खता को समझने में भी अपना मन लगाया" (वचन 17)। उन्होंने अपने दिल में गहराई से सोचा (2:3)। फिर उन्होंने खुशी पाने और मज़ा करने की कोशिश की (2:1-2)। उन्होंने बुद्धि से अपने दिल को चलाते हुए शराब के साथ ज़िंदगी का मज़ा लेने की कोशिश की (वचन 3, *कंटेम्पररी कोरियन वर्शन*)। उन्होंने ऐसा इसलिए किया क्योंकि उनका मानना था कि "दुनिया के लोगों के लिए अपनी छोटी सी ज़िंदगी जीने का यह सबसे अच्छा तरीका है" (वचन 3, *कंटेम्पररी

कोरियन वर्शन*)। इसके अलावा, राजा सुलैमान ने बड़े-बड़े काम किए; उन्होंने घर बनवाए, अंगूर के बाग लगाए और अपने लिए कई तरह के बगीचे और फलों के बाग तैयार किए (वचन 4-5)। उन्होंने अपने लिए "चांदी, सोना और राजाओं व प्रांतों का खजाना" इकट्ठा किया (वचन 8)। उन्होंने अपनी आँखों को किसी भी चीज़ से वंचित नहीं रखा जिसकी उन्हें चाहत थी और अपने दिल को किसी भी ऐसी चीज़ से नहीं रोका जिससे उसे खुशी मिलती थी (वचन 10)। फिर भी उनका नतीजा यह था: "इसका क्या फ़ायदा?" (वचन 2), "इससे कोई लाभ नहीं है" (वचन 2, *कंटेम्पररी कोरियन वर्शन*), "यह सब बेकार था" (वचन 11, *कंटेम्पररी कोरियन वर्शन*), और "यह सब हवा के पीछे भागने जैसा था" (1:14)। नतीजतन, उन्हें इस दुनिया में की गई अपनी सारी मेहनत से नफ़रत हो गई और वे निराशा महसूस करने लगे (2:18, 20)। राजा सुलैमान ने ये बातें मानीं: "सभी लोगों का अंजाम एक जैसा होता है; सूरज के नीचे किए जाने वाले हर काम में यही बुराई है: लोगों के दिल ज़िंदगी भर बुराई और पागलपन से भरे रहते हैं, और आखिर में, वे मरे हुएों में शामिल हो जाते हैं" (9:3); और "इंसान जन्म के समय नंगा आता है; चाहे वह कुछ पाने के लिए कितनी भी मेहनत क्यों न करे, जब वह इस दुनिया से जाएगा तो अपने साथ कुछ भी नहीं ले जाएगा" (5:15, *कंटेम्पररी कोरियन वर्शन*)। फिर भी, इन बातों पर सोचते हुए राजा सुलैमान को यह सच समझ आया कि "परमेश्वर ने हर चीज़ को उसके समय पर सुंदर बनाया है और इंसानों के दिलों में हमेशा बने रहने की चाहत भी रखी है" (3:11), और "परमेश्वर जो कुछ भी करता है, वह हमेशा बना रहेगा" (वचन 14)।

परमेश्वर ने हममें से उन लोगों के दिलों में हमेशा बने रहने की चाहत रखी है जो यीशु मसीह पर विश्वास करते हैं। हालाँकि हम इस धरती पर रहते हैं—परमेश्वर द्वारा दिए गए खाने-पीने का आनंद लेते हैं और अपनी छोटी सी ज़िंदगी में अपने काम से खुशी पाते हैं—फिर भी ये खुशियाँ और आनंद हमेशा के लिए नहीं होते। ये बस कुछ समय के लिए होते हैं; ये ऐसी खुशियाँ हैं जिनका अनुभव हम सिर्फ़ इसी दुनिया में कर सकते हैं। हमें परमेश्वर से मिले इन उपहारों को विनम्रता से स्वीकार करना चाहिए और इनका आनंद लेना चाहिए, लेकिन हमें सिर्फ़ इन्हीं से संतुष्ट नहीं होना चाहिए। इसका कारण यह है कि परमेश्वर चाहता है कि हम हमेशा रहने वाली संतुष्टि का अनुभव करें। दूसरे शब्दों में, परमेश्वर नहीं चाहता कि हम सिर्फ़ *इस युग* में खुशी और आनंद पाएँ; वह चाहता है कि हम *आने वाले युग* में भी हमेशा आनंदित रहें और खुशी पाएँ। इसीलिए उसने हमारे दिलों में हमेशा बने रहने की चाहत रखी है (3:11)। इसके अलावा, जो कुछ हमेशा बना रहता है उसे पूरा करने के लिए, परमेश्वर ने हमें उसका भय मानने के लिए प्रेरित किया है (वचन 14) और हमें अपने काम में शामिल होने के लिए बुलाया

है। परमेश्वर का वह काम असल में यीशु की दोहरी आज्ञा और उसके सुसमाचार का प्रचार करना है। इसलिए, पवित्र आत्मा की अगुवाई में, हमें अपने पूरे दिल, प्राण, शक्ति और मन से अपने प्रभु परमेश्वर से प्रेम करना चाहिए और अपने पड़ोसियों से वैसे ही प्रेम करना चाहिए जैसे हम खुद से करते हैं (लूका 10:27)। हमें परमेश्वर और अपने पड़ोसियों से उसी प्रेम से प्रेम करना चाहिए जिससे परमेश्वर हमेशा हमसे प्रेम करता है। जब हम ऐसा करते हैं, तो परमेश्वर का आनंद हमारे दिलों में उमड़ पड़ता है; इस प्रकार, हमें यीशु की दोहरी आज्ञा का पालन करने में खुशी और आनंद मिलना चाहिए। हमें यीशु के सुसमाचार का प्रचार भी करना चाहिए (मरकुस 16:15)। यीशु मसीह के हृदय के साथ (फिलिप्पियों 1:8), हमें उन लोगों के साथ यीशु मसीह का शुभ समाचार साझा करना चाहिए जो उसे जाने बिना मर रहे हैं। उन खोई हुई आत्माओं को बचाने के परमेश्वर के काम में विश्वास के साथ विनम्रतापूर्वक भाग लेकर, हम परमेश्वर के आनंद को अपना बना लेते हैं और स्वर्ग के राज्य के आनंद का अनुभव करते हैं (लूका 15:7, 10, 24)।

हमें संतुलित तरीके से आनंद खोजना चाहिए। हमें इस दुनिया में भगवान से मिली चीज़ों को विनम्रता से स्वीकार करना चाहिए और उनका आनंद लेना चाहिए। हमें खाने-पीने और अपने काम का आनंद लेना चाहिए और अपनी छोटी सी ज़िंदगी में खुशी ढूँढ़नी चाहिए। साथ ही, हमें आने वाली दुनिया में भगवान द्वारा दी गई चीज़ों को भी विनम्रता से स्वीकार करना चाहिए और उनका पूरा आनंद लेना चाहिए। भगवान ने हमारे अंदर हमेशा बने रहने की चाहत रखी है और हमें उनके अनंत कामों में हिस्सा लेने के काबिल बनाया है। इसलिए, हमें यीशु के दोहरे आदेश और उनके सुसमाचार का प्रचार करने के आदेश का पालन करने में खुशी मिलनी चाहिए। जब हम ऐसा करेंगे, तो हम हमेशा खुश रहेंगे—न सिर्फ़ इस दुनिया में, बल्कि आने वाली दुनिया में भी।

परमेश्वर जो कुछ भी करता है, वह हमेशा बना रहेगा।

“परमेश्वर जो कुछ भी करता है, वह हमेशा बना रहेगा; उसमें न तो कुछ जोड़ा जा सकता है और न ही उसमें से कुछ घटाया जा सकता है। परमेश्वर ऐसा इसलिए करता है ताकि लोग उसका आदर करें।” (सभोपदेशक 3:14)

पृथ्वी पर अपने पूरे जीवन में हम जो मेहनत करते हैं, उसका क्या फ़ायदा है? (सभोपदेशक 1:3) इस दुनिया में हम जो सुख-सुविधाएँ भोगते हैं, उनका क्या मतलब है? (2:2) इस दुनिया में हमारे दिलों की सारी मेहनत और कोशिशों से क्या हासिल होता है? (2:22) अपनी मेहनत से हमें क्या फ़ायदा मिलता है? (3:9)

राजा सुलैमान, जो उपदेशक भी था, कहता है: “उसके जीवन के सभी दिन दुख और पीड़ा से भरे होते हैं; यहाँ तक कि रात में भी उसके मन को आराम नहीं मिलता। यह भी व्यर्थ है।” पूरी ज़िंदगी मेहनत और चिंता करना—जबकि रात में भी मन को आराम न मिले—और उस मेहनत से कुछ भी हासिल न हो (5:15) और केवल दुख ही मिले, यह कितना व्यर्थ है—खासकर यह देखते हुए कि हम जो कुछ भी कमाते हैं, उसे अपने साथ नहीं ले जा सकते (5:15)। तो फिर, हमें कैसे जीना चाहिए? हमें किस चीज़ के लिए मेहनत करनी चाहिए?

आज, सभोपदेशक 3:14 हमें बताता है, “परमेश्वर जो कुछ भी करता है, वह हमेशा बना रहेगा” (कंटेम्पररी कोरियन वर्शन)। परमेश्वर के वे कौन से “काम” हैं जो हमेशा बने रहते हैं? बेशक, हम शुरू से अंत तक परमेश्वर के काम को पूरी तरह से नहीं समझ सकते (वचन 11, *कंटेम्पररी कोरियन वर्शन*)। हालाँकि, पवित्रशास्त्र के

ज़रिए परमेश्वर ने जो बताया है, उसके अनुसार वह जो काम करता है, वह असल में प्रभु के “अनंत उद्धार” का काम है (यशायाह 45:17)। यहाँ, प्रभु के अनंत उद्धार के काम का अर्थ है अपने लोगों को अनंत जीवन (1 यूहन्ना 2:25) देने की उनकी योजना—जिनसे उन्होंने अनंत प्रेम किया (यिर्मयाह 31:3), जिन्हें दुनिया की नींव रखे जाने से पहले ही मसीह में चुना, और अपनी इच्छा के अनुसार उद्धार के लिए पहले से तय किया (इफिसियों 1:4–5)—और उन्हें उद्धारकर्ता यीशु मसीह के अनंत राज्य में पहुँचाना (भजन संहिता 145:13; 2 पतरस 1:11), जिससे उन्हें ऐसी अनंत महिमा मिले जो बाकी सब चीज़ों से कहीं बढ़कर हो (2 कुरिन्थियों 4:17)। संक्षेप में, परमेश्वर जो भी स्थायी काम करते हैं, उनका मकसद हमें “मसीह यीशु में मिलने वाले उद्धार को अनंत महिमा के साथ पाने” के काबिल बनाना है (2 तीमुथियुस 2:10)। इसे पूरा करने के लिए, परमेश्वर ने अपने एकलौते पुत्र, यीशु को क्रूस पर दे दिया; ऐसा करके, वे हमें “अनंत क्रोध” (मलाकी 1:4) और “अनंत आग की सज़ा” (यहूदा 1:7) से बचाते हैं, और इसके बजाय हमें “स्वर्ग में हमारे अनंत घर” (2 कुरिन्थियों 5:1)—जो परमेश्वर की अनंत महिमा का स्थान है (1 पतरस 5:10)—की ओर ले जाते हैं।

प्रिय लोगों, परमेश्वर ने हमारे अंदर अनंत काल की चाहत रखी है (सभोपदेशक 3:11)। इसलिए, हमें उस चीज़ की चाहत रखनी चाहिए जो अनंत है। हमें प्रभु के उस अनंत राज्य की चाहत रखनी चाहिए, जिस पर वे हमेशा राज करते हैं (भजन संहिता 145:13)। हालाँकि इस धरती पर रहते हुए हमें थोड़ी-बहुत मुश्किलें झेलनी पड़ सकती हैं, फिर भी हमें उद्धार की कृपा के लिए शुक्रगुजार दिल के साथ परमेश्वर के अनंत उद्धार के काम में विनम्रता से हिस्सा लेना चाहिए—यह कृपा उस परमेश्वर ने दी है जो सारी कृपा का स्रोत है, और जिसने हमें मसीह में अपनी अनंत महिमा में हिस्सा लेने के लिए बुलाया है (1 पतरस 5:10)। इसके लिए, हमें परमेश्वर का भय मानना चाहिए (सभोपदेशक 3:14) और उनके बुलावे को मानना चाहिए (1 कुरिन्थियों 7:22; रोमियों 1:6; प्रकाशितवाक्य 17:14)। मसीह के सेवकों के तौर पर, हमें यीशु मसीह के “अनंत सुसमाचार” का प्रचार करना चाहिए (प्रकाशितवाक्य 14:6)। मेरी प्रार्थना है कि हम चाहे खाएं-पीएं या कुछ भी करें, हम सब परमेश्वर की महिमा के लिए प्रभु यीशु मसीह के सनातन सुसमाचार का प्रचार करके आत्माओं को बचाने के परमेश्वर के काम में हिस्सा लें (1 कुरिन्थियों 10:31; फिलिप्पियों 1:5, 7)।

वह परमेश्वर जो हर चीज़ को उसके सही समय पर सुंदर बनाता है (3)

[सभोपदेशक 3:14-22 पर मनन]

पिछले रविवार को लीडर्स की मीटिंग के दौरान, हमने बारी-बारी से पिछले साल को याद किया और परमेश्वर की उस कृपा के बारे में संक्षेप में बताया जो उसने हम पर की थी। व्यक्तिगत रूप से, जब मैंने साल के बारे में सोचा, तो मैंने क्रिसमस कार्ड के साथ कुछ पत्र भी लिखे। उन पत्रों में एक वाक्य यह था: "परमेश्वर की कृपा से, मैं पूरे साल मुस्कुराता रहा। उदासी के पल थे, रोने का समय था, और दिल के दर्द और संघर्ष के दौर भी थे, लेकिन आखिरकार, परमेश्वर ने मुझे खुशी और हंसी दी। यह सचमुच उसके महान प्रेम और कृपा का प्रमाण है।" मैं उस परमेश्वर को धन्यवाद और स्तुति दे सकता हूँ, जिसने मुझे पिछले साल के हर मौसम में मदद पाने की कृपा दी। सचमुच, हमारा परमेश्वर ही वह है जो "हर चीज़ को उसके सही समय पर सुंदर बनाता है।"

पिछले दो हफ्तों से बुधवार की प्रार्थना सभाओं में, हम "वह परमेश्वर जो हर चीज़ को उसके सही समय पर सुंदर बनाता है" विषय पर मनन कर रहे हैं, जिसमें सभोपदेशक 3:1-14 पर ध्यान केंद्रित किया गया है। हमने दो मुख्य बिंदुओं पर चर्चा की: पहला, कि परमेश्वर हर चीज़ को उसके सही समय पर सुंदर बनाता है क्योंकि वह हर उद्देश्य को पूरा करता है; और दूसरा, कि वह हमारे अंदर अनंत काल की चाहत रखकर हर चीज़ को उसके सही समय पर सुंदर बनाता है। आज, सभोपदेशक 3:14-22 पर ध्यान केंद्रित करते हुए, मैं विनम्रतापूर्वक उस कृपा को स्वीकार करना चाहता हूँ जो परमेश्वर देता है, जब हम "वह परमेश्वर जो हर चीज़ को उसके सही समय पर सुंदर बनाता है (3)" शीर्षक पर मनन करते हैं और इस बात पर विचार करते हैं कि वह ठीक कब और कैसे यह सुंदरता लाता है।

तीसरा, परमेश्वर ही वह है जो हर चीज़ को सुंदर बनाता है क्योंकि, जब सांसारिक अदालतों में अन्यायपूर्ण फैसले सुनाए जाते हैं, तब भी वह अपने उद्देश्य और इच्छा को पूरा करता रहता है। आज के वचन, सभोपदेशक 3:16 को देखें: "इसके अलावा मैंने सूरज के नीचे देखा: न्याय की जगह पर दुष्टता थी; और धार्मिकता की जगह पर अधर्म था।" बुद्धिमान राजा सुलैमान ने इस दुनिया में—"सूरज के नीचे"—कुछ देखा। उसने देखा कि सांसारिक अदालतों में न्यायाधीश धर्मी और दुष्ट के बीच निष्पक्ष रूप से अंतर करने में विफल रहे (पार्क युन-सन)। दुनिया की अदालतों में कितना अन्याय होता है, चाहे वह सुलैमान के समय की बात हो या आज की? इन अदालतों में—जहाँ न्याय करने वाले जज रिश्तत लेते हैं और गलत फैसले सुनाते हैं, और जहाँ पैसे वाले लोग हत्या जैसे अपराध करने के बाद भी बड़े वकीलों को रखकर बरी हो सकते हैं—क्या हमें न्याय के बजाय अन्याय और सच्चाई के बजाय झूठ नहीं दिखता? इसका नतीजा यह होता है कि विश्वास करने वालों को दुख उठाना पड़ सकता है। लूट का अनुभव भी कुछ ऐसा ही था, जब वह सदोम और अमोरा शहरों में रहता था। सदोम और अमोरा के कानून न मानने वाले—यानी अधर्मी—लोगों के बीच रहते हुए, धर्मी लूट हर दिन उनके गैर-कानूनी कामों को देखकर और सुनकर बहुत परेशान होता था (2 पतरस 2:6-8)। फिर भी, राजा सुलैमान कहता है कि ऐसे अन्याय के बीच भी—और खासकर तब जब गलत फैसले सुनाए जाते हैं—परमेश्वर सुंदरता लाता है क्योंकि वह अपना मकसद और अपनी इच्छा पूरी करता है (सभोपदेशक 3:14-22)। परमेश्वर यह सुंदरता कैसे लाता है? बाइबल इसके एक-दो तरीके बताती है:

(1) पहला, बाइबल हमें बताती है कि जब इस दुनिया में गलत फैसले सुनाए जाते हैं, तो परमेश्वर आने वाले जीवन में धर्मी और दुष्ट लोगों का न्याय करके सब कुछ सुंदर बना देता है। आज के वचन, सभोपदेशक 3:17 को देखिए: "मैंने अपने मन में कहा, 'परमेश्वर धर्मी और दुष्ट दोनों का न्याय करेगा, क्योंकि हर मकसद और हर काम के लिए एक समय तय है।'" राजा सुलैमान का पक्का विश्वास था कि परमेश्वर ज़रूर न्याय करेगा। इसके अलावा, यह न्याय इस जीवन में न्याय करने के लिए परमेश्वर के दखल देने के बारे में नहीं है, बल्कि आने वाले जीवन में सबके न्याय के बारे में है (पार्क युन-सन)। इसीलिए उसने सभोपदेशक 12:14 में कहा: "परमेश्वर हर काम का न्याय करेगा, जिसमें हर छिपी हुई बात भी शामिल है, चाहे वह अच्छी हो या बुरी।" आखिरकार, सच तो यह है कि परमेश्वर हमारे सभी कामों और हर छिपी हुई बात का—चाहे वह अच्छी हो या बुरी—आने वाले जीवन में न्याय करेगा। फिर भी, समस्या क्या है? समस्या यह है कि बहुत से लोग इस दुनिया में परमेश्वर के इस न्याय के

बारे में सोचे बिना जीते हैं। यहाँ तक कि हम मसीही, जो यीशु पर विश्वास करते हैं, अक्सर परमेश्वर के न्याय के बारे में जागरूक नहीं होते। बेशक, जो विश्वास नहीं करते, उनका न्याय विश्वास करने वालों से अलग होता है। जो लोग विश्वास नहीं करते और जिनके नाम परमेश्वर की 'जीवन की पुस्तक' में नहीं लिखे हैं, उन्हें आखिरी न्याय का सामना करना पड़ेगा—जिसके बाद उन्हें आग की झील (हमेशा की सज़ा की जगह, जिसे आम तौर पर नरक कहा जाता है) में डाल दिया जाएगा—जबकि हम विश्वास करने वालों को हमारे कामों के अनुसार इनाम मिलेगा। इसलिए, राजा सुलैमान नौजवानों को यह सलाह देते हैं: "हे जवान, अपनी जवानी में खुश हो, और जवानी के दिनों में अपने दिल को खुश होने दे; अपने दिल की इच्छाओं और अपनी आँखों की पसंद के अनुसार चल; लेकिन याद रख कि इन सब कामों के लिए परमेश्वर तेरा न्याय करेगा" (सभोपदेशक 11:9)। वह नौजवानों को जवानी के दिनों में अपने दिल की इच्छाओं और आँखों की पसंद के पीछे चलने के बारे में चेतावनी देते हैं। वह यह चेतावनी कैसे देते हैं? राजा सुलैमान नौजवानों को चेतावनी देते हैं कि मरने के बाद परमेश्वर न्याय करेगा। उस आखिरी न्याय के समय, हमें अपने सभी कामों का हिसाब देना होगा।

चूँकि हमें अपने सभी कामों का हिसाब देना है, इसलिए परमेश्वर के इस आखिरी न्याय के बारे में हमें कैसा नज़रिया रखना चाहिए? राजा सुलैमान की तरह, हमें अपने दिल में यह कहना चाहिए: "परमेश्वर धर्मी और दुष्ट दोनों का न्याय करेगा, क्योंकि हर मकसद और हर काम के लिए एक समय तय है" (3:17)। धरती पर हर चीज़ के लिए एक तय समय है, और हर मकसद के लिए एक समय है (आयत 1)। उन तय समयों में, न्याय का समय भी ज़रूर है (आयत 17)। हमें विश्वास करना चाहिए कि न्याय के उस समय में भी, परमेश्वर अपनी सर्वोच्च इच्छा पूरी करते हुए सब कुछ सुंदर बनाता है। हमें दुनिया की अदालतों में होने वाले अन्याय को परमेश्वर के नज़रिए से देखना चाहिए; यानी, हमें विश्वास करना चाहिए कि परमेश्वर हर किसी का न्याय सच्चाई और ईमानदारी से करेगा। भले ही हमें इस दुनिया में अन्याय का सामना करना पड़े, हमें परमेश्वर के सही न्याय की उम्मीद रखते हुए डटे रहना चाहिए। इसके अलावा, हमें परमेश्वर का डर मानना चाहिए (आयत 14)। चूँकि हम परमेश्वर का डर मानते हैं, इसलिए हमें उसकी आज्ञाओं—उसके वचन—को मानना चाहिए। उसकी आज्ञा मानते हुए, हमें इस उम्मीद के साथ काम करना चाहिए कि परमेश्वर हमारे सभी कामों के लिए हमें इनाम देगा। परमेश्वर के प्रति आदर-भाव रखते हुए, हमें एक नेक और सही जीवन जीना चाहिए।

(2) दूसरी और आखिरी बात, जब दुनिया के अन्याय का फैसला होता है, तो परमेश्वर हमें विनम्र बनाकर सब कुछ सुंदर बनाते हैं।

आज के वचन, उपदेशक 3:18 को देखिए: "मैंने अपने मन में इंसानों की हालत के बारे में कहा कि परमेश्वर उनकी परीक्षा लेते हैं, ताकि वे देख सकें कि वे खुद जानवरों जैसे हैं।" राजा सुलैमान कहते हैं कि भले ही हम विश्वास करने वाले इस दुनिया में अन्यायपूर्ण फैसले के कारण दुख सहें (वचन 16), परमेश्वर बुरे लोगों के अन्यायपूर्ण फैसलों का इस्तेमाल भी हमारी परीक्षा लेने के लिए करते हैं। यहाँ, यह बात कि परमेश्वर हमारी "परीक्षा" लेते हैं, इसका मतलब है कि वे मुश्किलों के ज़रिए हमें विनम्र बनाते हैं (पार्क युन-सन)। परमेश्वर मुश्किलों के ज़रिए संतों को विनम्र क्यों बनाते हैं? इसका मकसद क्या है? डॉ. पार्क युन-सन ऐसी मुश्किलों का मकसद इस तरह बताते हैं: "मुश्किल का मकसद लोगों को यह एहसास दिलाना है कि जुल्म के कारण होने वाली शारीरिक मौत के मामले में वे जानवरों से अलग नहीं हैं, और इस तरह उन्हें शरीर की इच्छाओं पर केंद्रित जीवन जीने से रोकना है।" आखिरकार, मुश्किलों का मकसद हमें विनम्र बनाना है ताकि हम शरीर की इच्छाओं के अनुसार न जिएं। इसलिए, राजा सुलैमान उपदेशक 3:19-20 में इस तरह कहते हैं: "क्योंकि जो इंसानों के साथ होता है, वही जानवरों के साथ भी होता है; एक ही बात उन पर बीतती है: जैसे एक मरता है, वैसे ही दूसरा भी मरता है। सचमुच, उन सबमें एक ही साँस है; इंसान को जानवरों पर कोई फ़ायदा नहीं है, क्योंकि सब कुछ व्यर्थ है। सब एक ही जगह जाते हैं: सब मिट्टी से बने हैं, और सब मिट्टी में ही मिल जाते हैं।" उनकी बात का मतलब यह है कि, चूँकि इंसान और जानवर दोनों आखिरकार मर जाते हैं, इसलिए शरीर की इच्छाओं पर केंद्रित जीवन जीना बेकार है। कभी-कभी, जब हम टीवी या ऑनलाइन समाचारों में किसी ऐसे हत्यारे को देखते हैं जिसने भयानक अपराध किया हो, तो हम कह सकते हैं, "वह व्यक्ति जानवर से भी बदतर है।" कुछ समय पहले, मैंने एक ऐसे आदमी की कहानी देखी जिसने जुड़वाँ बच्चों की माँ बनने वाली एक कोरियाई महिला का बलात्कार किया और उसकी हत्या कर दी, और मैंने सोचा, "कोई इतना क्रूर कैसे हो सकता है?" साठ की उम्र के एक व्यक्ति ने हमला होते देख बीच-बचाव करने की कोशिश की थी लेकिन नाकाम रहा; हालाँकि उन्होंने आपातकालीन सेवाओं को बुलाया, लेकिन आखिरकार महिला और उसके अजन्मे बच्चे मारे गए। क्या आप जानते हैं कि भजनकार आसाफ ने भी खुद के बारे में कहा था, "मैं... तेरे सामने पशु के समान था" (भजन संहिता 73:22)? क्या आसाफ ने कोई भयानक हत्या की थी? नहीं, उसने ऐसा नहीं किया था। तो फिर, उसने खुद को पशु क्यों कहा? उसने जो पाप किया था, वह था बुरे लोगों की समृद्धि से जलन करना। लेकिन क्या बुरे लोगों की

समृद्धि से जलन करना सचमुच किसी पशु जैसा काम है? यहाँ हमें जो सीख मिलती है—उपदेशक 3:19-20 के आज के अंश के संदर्भ में—वह यह है कि शरीर पर केंद्रित जीवन पशु के जीवन से अलग नहीं है। राजा सुलैमान ऐसे जीवन को "व्यर्थ" या "बेमतलब" बताते हैं। जैसा कि हमने पहले उपदेशक 3:11 पर मनन किया था, हमने सीखा कि परमेश्वर ने हमारे दिलों में अनंत काल की चाहत रखी है। इसलिए, हमें अनंत चीजों की ओर बढ़ना चाहिए; हमें केवल शरीर की चीजों के पीछे भागकर व्यर्थ, पशु जैसा जीवन कभी नहीं जीना चाहिए।

हमें राजा सुलैमान के संदेश पर ध्यान देना चाहिए: "इसलिए मैंने देखा कि मनुष्य के लिए अपने काम का आनंद लेने से बेहतर कुछ नहीं है, क्योंकि यही उसका हिस्सा है। क्योंकि उसके बाद क्या होगा, यह उसे कौन दिखा सकता है?" (पद 22)। इसका क्या अर्थ है? यहाँ संदेश यह है कि जब तक हम इस धरती पर रहते हैं, अपने काम में—खासकर प्रभु के अनंत कार्य में—आनंद पाने और उसके प्रति वफादार रहने से बेहतर कुछ नहीं है। यही वह हिस्सा है जो हमें मिला है। ऐसा क्यों है? जैसा कि पद 22 के बाद वाले हिस्से में कहा गया है, एक बार जब कोई व्यक्ति मर जाता है, तो वह इस दुनिया में वापस नहीं आ सकता। चूँकि हम केवल एक बार जीते हैं, इसलिए हमें अपना जीवन केवल शरीर के मामलों में बर्बाद नहीं करना चाहिए। यह देखते हुए कि मानव आत्मा का भाग्य पशुओं से अलग है (पद 21), हम केवल सांसारिक मामलों पर ध्यान केंद्रित करते हुए जानवरों की तरह कैसे जी और मर सकते हैं?

कल सुबह की प्रार्थना सभा के दौरान, 2 थिस्सलुनीकियों 3:3 पर मनन करते हुए, हमने प्रेरित पौलुस की सलाह पर विचार किया: यह जानते हुए कि यीशु के दूसरे आगमन से पहले उसका समय कम है, शैतान विश्वासियों को भी लुभाने और उन्हें गिराने की कोशिश करता है; इसलिए, हमें दृढ़ रहना चाहिए। जो लोग कानून नहीं मानते—यानी जो सच से प्यार नहीं करते बल्कि झूठ पर यकीन करते हैं—वे सुसमाचार की बात नहीं मानते और इस दुनिया में अन्यायपूर्ण काम करते हैं। यहाँ तक कि जब हम, मसीही होने के नाते, दुनिया की अदालतों में अन्याय या गलत फैसलों का सामना करते हैं, तब भी हमें भरोसा रखना चाहिए कि परमेश्वर सही समय पर सब कुछ सुंदर बना देता है। वह चीजों को सुंदर कैसे बनाता है? वह आने वाले जीवन में प्रभु के सही न्याय पर हमारा विश्वास मज़बूत करके और इन मुश्किलों का इस्तेमाल करके हमारे अंदर विनम्रता पैदा करता है। इसके अलावा, वह हमें शारीरिक इच्छाओं से दूर ले जाकर आध्यात्मिक कामों—यानी प्रभु के कामों—की ओर ले जाता है और

इस तरह हमें उस असली हिस्से का आनंद लेने का मौका देता है जो इंसानियत के लिए तय किया गया है। मैं प्रार्थना करता हूँ कि परमेश्वर, जो सही समय पर सब कुछ सुंदर बनाता है, आप में से हर एक के जीवन को और भी सुंदर बनाए।

“कोई दिलासा देने वाला नहीं है”

[सभोपदेशक 4:1-3]

नए साल के पहले रविवार, 3 जनवरी को चर्च के लीडरों के साथ आखिरी प्रार्थना सभा के बाद दो घटनाएँ हुईं। पहली घटना यह थी कि चर्च के एक डीकन ने नींद की गोलियों की ज़्यादा डोज़ लेकर आत्महत्या करने की कोशिश की। उस रविवार दोपहर, मेरी पत्नी, एक एल्डर और दो बहनें मदद करने के लिए उनसे मिलने गईं। जब मेरी पत्नी अगले दिन डीकन के अपार्टमेंट में गईं, तो उन्हें पता चला कि डीकन को एम्बुलेंस से अस्पताल ले जाया जा चुका था और अब वे एक नर्सिंग होम में थे। दूसरी घटना यह थी कि कोरिया में जिस चर्च में मैंने सेवा की थी, वहाँ का एक यूनिवर्सिटी स्टूडेंट मिशन ट्रिप के दौरान डूब गया। मुझे याद आया कि जब वह मिडिल स्कूल में था, तब मैंने उसे इंग्लिश सर्विस में देखा था—उस समय मैं उसकी माँ के साथ इंग्लिश मिनिस्ट्री में सेवा करता था—इसलिए मिशन ट्रिप पर उसके डूबने की खबर सुनकर मुझे गहरा सदमा लगा। बहुत परेशान होकर और यह सोचते हुए कि मैं उसके माता-पिता को कैसे दिलासा दे सकता हूँ, मैंने दिल से चिंता ज़ाहिर करते हुए एक चिट्ठी लिखी और परमेश्वर से प्रार्थना की। “अब्बा, पिता” कहकर मैंने परमेश्वर से विनती की कि वे खुद उस नौजवान के माता-पिता, उसकी बहन, उसके दोस्तों और उसके चर्च परिवार को दिलासा दें।

सचमुच, यह दुनिया दुख, मुश्किलों, पाप और मौत से भरी हुई है। जब हम नए साल की शुरुआत करते हैं, तो हम देखते हैं कि हमारे प्यारे भाई-बहन कई तरह के दर्द और तकलीफों से गुज़र रहे हैं। तो फिर, हम मुश्किल समय में इन अपनों को सच में कैसे दिलासा दे सकते हैं? व्यक्तिगत रूप से, जब भी मैं “दिलासा” शब्द के बारे में सोचता हूँ, तो मुझे अय्यूब 16:2 में अय्यूब के दोस्त और प्रेरितों के काम 4:16 में बरनबास याद आते हैं। अय्यूब 16:2 में, अय्यूब उन दोस्तों का ज़िक्र करता है जो उसे दिलासा देने आए थे, लेकिन वे “बेकार दिलासा देने वाले”

साबित हुए—ऐसे दिलासा देने वाले जिन्होंने असल में उसे और परेशान किया। इसके उलट, प्रेरितों के काम 4:16 में बरनबास को “हौसला बढ़ाने वाला” (Son of Encouragement) बताया गया है। जहाँ अय्यूब के दोस्त उसकी तकलीफ के समय दिलासा देने के बजाय परेशानी का कारण बने, वहीं शुरुआती चर्च के बरनबास एक सच्चे दिलासा देने वाले थे। इसलिए, जब मैं अपने लिए प्रार्थना करता हूँ, तो अक्सर कहता हूँ: “मैं भी प्यार से भरा एक दिलासा देने वाला और सुसमाचार सुनाने वाला बनूँ।” फिर भी, मुझे अक्सर यह समझने में मुश्किल होती है कि अपने आस-पास के उन प्यारे भाई-बहनों को कैसे दिलासा दूँ जो मुश्किलों और दर्द से गुजर रहे हैं। हालाँकि मैं प्रभु के प्यार से उन्हें दिलासा देना चाहता हूँ, लेकिन कई बार मुझे समझ नहीं आता कि क्या करूँ।

पास्टर रॉबर्ट स्ट्रैंड की किताब *द स्पिरिटुअलिटी ऑफ़ कम्फर्ट* (The Spirituality of Comfort) में दुखी आत्माओं को दिलासा देने के बारे में 101 कहानियाँ हैं। प्रस्तावना में, फादर हेनरी नूवेन बताते हैं कि “दिलासा” (comfort) शब्द का मतलब है किसी अकेले व्यक्ति के “साथ होना”। वे कहते हैं कि दिलासा देने का मतलब दर्द को दूर करना नहीं है, बल्कि बस दूसरे व्यक्ति के साथ मौजूद रहना है। नूवेन साथ रहने के इस काम को “आत्मा की देखभाल” (care of the soul) कहते हैं। साथ मिलकर रोना, मुश्किलों का सामना करना और भावनाओं को साझा करना—सच्ची देखभाल दया और सहानुभूति पर आधारित होती है। इस बारे में फादर हेनरी नूवेन ने कहा: “अक्सर, हमारा दुख हमें नाचने पर मजबूर करता है, और हमारा नृत्य हमारे दुख के लिए जगह बनाता है। किसी प्यारे दोस्त को खोने पर बहाए गए आँसुओं में हमें एक अप्रत्याशित खुशी मिल सकती है; इसके विपरीत, सफलता का जश्न मनाने वाली पार्टी के बीच हमें गहरा दुख महसूस हो सकता है। जैसे एक जोकर का चेहरा—जो हमें हँसाता और रुलाता भी है—एक ही समय में उदास और खुश दिख सकता है, वैसे ही दुख और नृत्य, पीड़ा और हँसी, शोक और खुशी सब एक-दूसरे से जुड़े हैं। जीवन की सुंदरता ठीक वहीं मिलती है जहाँ शोक और नृत्य मिलते हैं (स्ट्रैंड)।” हमारे बारे में क्या? क्या हम उस सुंदरता को देखते हुए अपना जीवन जी रहे हैं जहाँ शोक और नृत्य का मिलन होता है?

राजा सुलैमान, जो आज के उपदेशक (Ecclesiastes) 4:1-3 के अंश में शिक्षक हैं, बताते हैं कि उन्होंने क्या देखा: “फिर मैंने देखा और दुनिया में हो रहे सभी अत्याचारों को देखा: मैंने पीड़ितों के आँसू देखे—और उन्हें दिलासा देने वाला कोई नहीं था; ताकत उनके अत्याचार करने वालों के पक्ष में थी—और उन्हें दिलासा देने वाला

कोई नहीं था" (पद 1)। उन्होंने इस दुनिया में ताकतवर लोगों को दूसरों पर अत्याचार करते देखा; उन्होंने अत्याचार के शिकार लोगों को देखा। उन्होंने उन लोगों के आँसू भी देखे जिन पर अत्याचार हुआ था। फिर भी, समस्या क्या थी? समस्या यह थी कि इन पीड़ित लोगों को दिलासा देने वाला कोई नहीं था। राजा सुलैमान ने ठीक यही देखा: पीड़ितों के लिए दिलासा देने वाले का न होना। इस स्थिति को देखकर, वह कहते हैं: "इसलिए मैंने उन मरे हुआओं को, जो पहले ही मर चुके हैं, उन जीवित लोगों से ज़्यादा भाग्यशाली माना जो अभी भी जीवित हैं; और उन दोनों से बेहतर वह है जो अभी तक पैदा नहीं हुआ है और जिसने सूरज के नीचे होने वाले बुरे कामों को नहीं देखा है" (पद 2-3)। इसका क्या मतलब है? इसका मतलब यह बिल्कुल नहीं है कि जुल्म सहते हुए जीने से मर जाना बेहतर है। राजा सुलैमान किसी भी तरह से आत्महत्या की वकालत नहीं कर रहे हैं, या यह नहीं कह रहे हैं कि जुल्म सहने से बेहतर अपनी जान दे देना है। आज हम ऐसी दुनिया में रहते हैं जो आत्महत्या को बढ़ावा देती हुई लगती है। हम इसे आत्महत्या के लिए बनी वेबसाइटों के अस्तित्व में देख सकते हैं; असल में, कोरियाई समाचार रिपोर्टों में ऐसी घटनाओं का ज़िक्र आया है जहाँ अजनबी लोग ऐसी साइटों के ज़रिए मिलकर आत्महत्या करते थे। मैं व्यक्तिगत रूप से ऐसे कई लोगों को जानता हूँ जिन्होंने अपनी जान दे दी है। जैसे-जैसे आर्थिक मुश्किलें बढ़ती हैं और जीवन ज़्यादा दर्दनाक होता जाता है, कई लोग आत्महत्या के विचारों से जूझ रहे हैं और अपनी कीमती जान खत्म करने की कोशिश कर रहे हैं। नतीजतन, सफल आत्महत्याओं की संख्या बढ़ती हुई दिख रही है। ऐसी मुश्किल हालत में लोग 'उपदेशक 4:2' का गलत मतलब निकाल सकते हैं और सोच सकते हैं, "यहाँ तक कि बुद्धिमान राजा सुलैमान भी कहते हैं कि जुल्म के साये में जीने से मर जाना बेहतर है।" हालाँकि, सिर्फ़ इसलिए अपनी जान नहीं देनी चाहिए क्योंकि जीना असहनीय लगता है। राजा सुलैमान इस हिस्से में आत्महत्या की वकालत नहीं कर रहे हैं। बल्कि, वह इस दुनिया में ताकतवर लोगों द्वारा सताए गए लोगों के आँसू देख रहे हैं और बता रहे हैं कि ऐसे पीड़ितों के लिए, उनका जीवन मौत से भी बदतर लगता है। दूसरे शब्दों में, राजा सुलैमान आज के इस हिस्से में यह नहीं कह रहे हैं कि परमेश्वर द्वारा दिया गया जीवन मौत से बदतर है; बल्कि, वह यह कह रहे हैं कि अन्यायपूर्ण जुल्म से भरा दर्दनाक जीवन मौत से भी बदतर है (पार्क युन-सन)।

किस तरह का जीवन सचमुच मौत से भी बदतर होता है? जब मैं इस सवाल पर सोचता हूँ, तो मुझे उत्तर कोरिया से भागकर आए लोगों (डिफेक्टर्स) की याद आती है। एक बार मुझे *वॉल स्ट्रीट जर्नल* (1 मई, 2006 का) का एक ऑनलाइन लेख मिला, जिसमें चीन में भागकर आए लोगों के दयनीय जीवन का विवरण था। यह विवरण उन महिलाओं की गवाही पर आधारित था जो 'उत्तर कोरिया मानवाधिकार अधिनियम' के तहत संयुक्त राज्य

अमेरिका आई थीं। लेख में "हन्ना" नाम की एक 36 वर्षीय महिला का ज़िक्र था। वह प्योंगयांग में शिक्षिका थीं, लेकिन अपने संघर्ष कर रहे परिवार की मदद के लिए उन्होंने कपड़े का व्यापार शुरू किया; सामान खरीदने के लिए सीमावर्ती शहर जाने पर, रात के खाने के दौरान वह बेहोश हो गई और जब उसे होश आया तो पता चला कि उसे तस्करी करके चीन ले जाया गया था। वहाँ, उसे एक चीनी व्यक्ति को बेच दिया गया, जिसने उसे इतना बुरी तरह पीटा कि उसकी हड्डियाँ टूट गईं और उसे बुरा-भला कहा, "तुम जैसी उत्तर कोरियाई को मारना मुर्गी को मारने से भी आसान है।" उसने बताया कि उसने आत्महत्या के बारे में भी सोचा था, और इस अनुभव को "नरक में जीने" जैसा बताया (इंटरनेट)। उत्तर कोरिया से भागकर आए लोगों की ऐसी अनगिनत गवाहियाँ हैं। मैं उनकी मुश्किलों को पूरी तरह समझने का दावा नहीं कर सकता, लेकिन एक पादरी की कही बात मैं कभी नहीं भूल पाया: "जब मैं उत्तर कोरिया से भागकर आए लोगों से मिलता हूँ, तो 'एक्सोडस' (निर्गमन) की किताब मेरे लिए सचमुच जीवंत हो उठती है।"

ऐसे लोगों के लिए, 'एक्लेसियास्टिस' (उपदेशक) 4:3 के शब्द—जो आज के पाठ में हैं—व्यक्तिगत स्तर पर कितने गहरे असर करते होंगे? कि "मरे हुए और जीवित, दोनों से बेहतर वह है जो अभी तक पैदा नहीं हुआ है और जिसने सूरज के नीचे होने वाली बुराई को नहीं देखा है।" कितना अच्छा होता अगर उत्तर कोरिया से भागकर आए लोग कभी पैदा ही न हुए होते? उन्हें इस दुनिया में होने वाली बुराई को न देखना पड़ता, और न ही ऐसी पीड़ा सहनी पड़ती जो इंसान को मौत की कामना करने पर मजबूर कर दे। आपके बारे में क्या? जब आप अपने जीवन को पीछे मुड़कर देखते हैं, तो क्या ऐसे समय आए हैं जब आप सिर्फ़ इसलिए जीवित रहे क्योंकि आप खुद को मौत के हवाले नहीं कर पाए? क्या ऐसे दर्द भरे पल आए हैं जब साँस लेना भी मौत से बदतर लगा—ऐसे समय जब आप लगातार आँसू बहाते रहे? फिर भी, जब हम मौत की कामना करने की हद तक पीड़ा सहते हैं, तो दर्द से भी ज़्यादा मुश्किल बात यह होती है कि हमें सांत्वना देने वाला कोई नहीं होता (पद 1)। हमारी सबसे बड़ी मुश्किलों, तकलीफ़ और दिल के दर्द के पलों में, हमें और भी ज़्यादा परेशान करने वाली बात यह होती है कि हमारे आस-पास कोई ऐसा नहीं होता जो सच में हमारे दर्द को समझे, हमदर्दी दिखाए और सच्चा दिलासा दे। यह और भी ज़्यादा तकलीफ़देह होता है जब हमारे आस-पास ऐसे लोग हों जो हमसे प्यार करते हों और हमें दिलासा देने की कोशिश करते हों, फिर भी कोई हमें सच्चा सुकून न दे पाए—या शायद, हमारे गहरे दुख में, हम ही उनके दिलासे को ठुकरा रहे हों। जब ज़ालिम की बुराई कभी न खत्म होने वाली लगे, और जुल्म व अत्याचार के खत्म होने का कोई संकेत न दिखे, तो हम सपने देखना छोड़ देते हैं। हम उम्मीद करना छोड़ देते

हैं; हम उम्मीद की उस आखिरी डोर को भी छोड़ देते हैं। इससे हम निराशा में डूब जाते हैं। उम्मीद के बिना ज़िंदगी का नतीजा हमेशा निराशा ही होता है। तो, जब हम ऐसी निराशा में हों, तब हमें क्या करना चाहिए? हम बाइबल से तीन बातें सीख सकते हैं:

सबसे पहले, जब हम घोर निराशा में हों, तो हमें अपनी आत्मा से बात करनी चाहिए।

एक किताब जो मुझे हमेशा याद रहती है, वह है डॉ. मार्टिन लॉयड-जोन्स की *स्पिरिटुअल डिप्रेशन* (Spiritual Depression)। इसे पढ़ते समय जिस बात ने मुझे गहराई से प्रभावित किया, वह यह थी कि जब हम निराश या हताश हों, तो हमें अपनी आत्मा से वैसे ही बात करनी चाहिए जैसे भजनकार ने की थी। हमें कैसे बात करनी चाहिए? डॉ. लॉयड-जोन्स भजन संहिता 42:5, 11 और 43:5 के शब्दों की ओर इशारा करते हैं: "हे मेरी आत्मा, तू क्यों उदास है? तू मेरे भीतर क्यों व्याकुल है? परमेश्वर पर आशा रख, क्योंकि मैं अभी भी उसकी स्तुति करूँगा, जो मेरा उद्धारकर्ता और मेरा परमेश्वर है।" इसलिए, जब भी मैं निराश महसूस करता हूँ, तो मैं इन वचनों को याद करता हूँ और खुद से यह कहते हुए प्रार्थना करता हूँ: "जेम्स, तू क्यों उदास है? तू क्यों चिंतित है? जेम्स, परमेश्वर पर आशा रख।" ऐसा करते समय, मैं प्रार्थना में जान-बूझकर प्रभु की ओर—जो मेरी मदद का स्रोत हैं—देखने की कोशिश करता हूँ। ऐसा करने पर, मैं अक्सर परमेश्वर की मदद का अनुभव करता हूँ। मैं आपको भी ऐसा करने के लिए प्रोत्साहित करता हूँ। जब आपका मन निराशा या हताशा से भरा हो, तो खुद से परमेश्वर के वचन को कहने की कोशिश करें, ठीक वैसे ही जैसे भजनकार ने किया था। भले ही आप भजन संहिता के इन खास वचनों का इस्तेमाल न करें, आप परमेश्वर के किसी भी ऐसे वादे को थामे रख सकते हैं जो आपको प्रिय हो, और प्रार्थना करते समय उन्हें ज़ोर से कह सकते हैं। जब मैं कलीसिया की सेवा करते हुए मुश्किलों का सामना करता हूँ, तो मैं परमेश्वर से प्रार्थना करके और उनके दिए वादे को दोहराकर आगे बढ़ता हूँ: "...मैं अपनी कलीसिया बनाऊँगा" (मत्ती 16:18)। परमेश्वर निश्चित रूप से हमारी मदद करेंगे।

दूसरी बात, निराशा के बीच हमें यीशु की चाहत रखनी चाहिए।

जब हम निराशा में हों, तो हमें यीशु की चाहत रखनी चाहिए; हमें सच्चे दिल से उनकी इच्छा करनी चाहिए। खासकर, जब हम दुख के कारण निराशा में हों, तो हमें क्रूस पर यीशु के दुख को देखना चाहिए। ऐसा क्यों है?

ऐसा इसलिए है क्योंकि सच्चा सुकून और चंगाई तभी मिल सकती है जब हम शांति से उनके दुख को देखें और उस पर मनन करें, और इस तरह अपने दर्द को यीशु के दुख से जोड़ें। व्यक्तिगत रूप से, जब मैं निराश महसूस करता हूँ, तो मुझे अक्सर योना 2:4 के शब्द याद आते हैं: "मैंने कहा, 'मैं तेरी दृष्टि से दूर कर दिया गया हूँ; फिर भी मैं तेरे पवित्र मंदिर की ओर फिर से देखूँगा।'" मैं योना की पुस्तक पर इसलिए विचार करता हूँ क्योंकि मैं योना जैसा बनना चाहता हूँ—प्रभु का वह सेवक जिसने परमेश्वर की आज्ञा न मानने के कारण अनुशासन के तूफ़ान और समुद्र में घोर निराशा का सामना करने के बावजूद, "प्रभु के पवित्र मंदिर की ओर फिर से देखने" और सच्चे दिल से उनकी चाहत रखने का संकल्प लिया। मुझे उम्मीद है कि जब आप भी निराशा और हताशा का सामना करेंगे, तो आप योना के संदेश पर भरोसा करेंगे और "फिर से" प्रभु की ओर देखेंगे। मुझे उम्मीद है कि आप निराशा और हताशा के पलों को प्रभु की चाहत रखने के अवसरों में बदल सकेंगे।

तीसरी बात, हमें अपनी निराशा के बीच यीशु पर अपनी आशा रखनी चाहिए।

अंततः, मेरा मानना है कि निराशा ही हमें यीशु पर आशा रखने की ओर ले जाती है। जब हम इस दुनिया में विभिन्न परीक्षाओं का सामना करते हैं जो हमें निराशा की ओर ले जाती हैं, तो वही निराशा प्रभु की चाहत रखने का एक मुख्य अवसर बन जाती है। इसके अलावा, मैं निराशा को परमेश्वर द्वारा दिया गया एक अवसर मानता हूँ—एक ऐसा पल जब दुनिया और स्वयं का ध्यान हट जाता है, जिससे हम अपना ध्यान पूरी तरह से प्रभु पर केंद्रित कर पाते हैं और उन पर अपनी आशा रख पाते हैं। इसलिए, हमें इस दुनिया के प्रति पूरी निराशा और हताशा का अनुभव करने के लिए तैयार रहना चाहिए। साथ ही, हमें खुद से भी पूरी तरह निराश और हताश होने के लिए तैयार रहना चाहिए। इसका कारण यह है कि ऐसी निराशा के बिना, हम शायद ही कभी परमेश्वर की चाहत रखते हैं या उन पर आशा रखते हैं। इसीलिए मुझे व्यक्तिगत रूप से भजन 488 (पहले 539), "माई होप इज़ बिल्ट ऑन नथिंग लेस" (मेरी आशा किसी कम चीज़ पर नहीं टिकी है) का तीसरा पद बहुत पसंद है: "जब मेरे आस-पास मेरी आत्मा डगमगाने लगती है, तब वही मेरी एकमात्र आशा और सहारा होते हैं।" मुझे ये बोल इसलिए प्रिय हैं क्योंकि ठीक उसी समय, जब इस दुनिया में जिन चीज़ों पर हमने भरोसा किया था, वे सब बिखर जाती हैं, तब हम सचमुच प्रभु पर विश्वास करते हैं और उन पर निर्भर होते हैं; ऐसा करने से, हमारे भीतर की निराशा गायब हो जाती है, और हम उनमें आशा से भर जाने के चमत्कार का अनुभव करते हैं। जब ऐसा होता है, तो हम परमेश्वर की स्तुति में ये शब्द कह सकते हैं: "(पद 1) मेरी खुशी, मेरी आशा, और मेरी..." "भले ही मैं

दिन-रात प्रभु—जो मेरा जीवन है—को पुकारता हूँ और उसकी स्तुति करता हूँ, फिर भी मुझे लगता है कि यह कभी काफ़ी नहीं है” (पद 5); “यीशु, जिसके लिए मैं सचमुच तरसता हूँ—आपकी आवाज़ कितनी सुखद है; आप ही मेरा जीवन और मेरी सच्ची आशा हैं” [भजन 82, “आप मेरी खुशी और मेरी आशा हैं,” पद 1 और 5]।

प्रभु, जो हमारी आशा है, आपको सांत्वना दे। जब कोई और सांत्वना न दे सके, तब हमारा प्रभु आपको सांत्वना दे। यहाँ तक कि जब आपका दुख इतना गहरा हो कि आप इंसानी सांत्वना को ठुकरा दें, तब भी मैं प्रार्थना करता हूँ कि प्रभु आपके दिल को अपने लिए तड़प और उसमें आशा से भर दे। मैं प्रार्थना करता हूँ कि आप जीवन की सुंदरता—खासकर एक मसीही की सुंदरता—को उस मोड़ पर खोज सकें जहाँ दुख और खुशी मिलते हैं। इस चिंतन को समाप्त करते हुए, मैं आपके साथ एक रचना साझा करता हूँ जिसे मैंने एक *ग्वोंसा* (एक वरिष्ठ ले-लीडर) के बारे में सोचते हुए लिखा था, जिन्होंने मुझे एक मसीही की सच्ची सुंदरता दिखाई थी:

“आप सुंदर हैं।

आप, जो दिल में आँसू होने के बावजूद चेहरे पर मुस्कान रखते हैं—आप सुंदर हैं।

आप, जो अपने प्यारे बेटे की मृत्यु के समय भी परमेश्वर का धन्यवाद करते हैं—आप सुंदर हैं।

आप, जो अपने घर-परिवार से ज़्यादा अपने कलीसियाई परिवार की परवाह करते हैं—आप सुंदर हैं।

आप, जो सांत्वना पाने के बजाय सांत्वना देते हैं—आप सुंदर हैं।

आप, जो लेने के बजाय देने में खुशी महसूस करते हैं—आप सुंदर हैं।

आप, जो परमेश्वर पिता के हृदय को अपनाते हैं और आत्माओं को बचाने के लिए खुद को समर्पित करते हैं—
आप सुंदर हैं।" उस वरिष्ठ सेविका (डीकनेस) के लिए जो परमेश्वर की महिमा करती है—आप सुंदर हैं।
मैं आपमें मसीह को देखता हूँ...

आपके साथ परमेश्वर की उपस्थिति को देखकर मैं यह कहने के लिए प्रेरित होता हूँ, "आप सुंदर हैं।"

सादर, पास्टर जेम्स

“शांति”

[उपदेशक 4:4-6]

इन दिनों आपका मन कैसा है? क्या आपके मन में शांति है? क्या आपने कभी “शांति की प्रार्थना” (The Serenity Prayer) पढ़ी है? यह कुछ इस तरह है: “हे परमेश्वर, हमें उन चीज़ों को स्वीकार करने की शांति दे जिन्हें हम बदल नहीं सकते, जिन्हें हम बदल सकते हैं उन्हें बदलने का साहस दे, और इन दोनों के बीच का अंतर समझने की समझ दे। आमीन।” आप क्या सोचते हैं? क्या आपने कभी इस प्रार्थना की तरह परमेश्वर से “उन चीज़ों को स्वीकार करने की शांति” मांगी है जिन्हें हम बदल नहीं सकते? मुझे नहीं लगता कि मैंने कभी परमेश्वर से खास तौर पर यह प्रार्थना की है। हालाँकि मैंने उस शांति के लिए प्रार्थना की है जो दुनिया नहीं दे सकती, लेकिन मुझे याद नहीं कि मैंने कभी उन चीज़ों को स्वीकार करने की शांति मांगी हो जो मेरे नियंत्रण से बाहर हैं। इसके बजाय, मैं अक्सर खुद ही चीज़ों को बदलने की कोशिश करता रहता हूँ, और जो चीज़ें बदली नहीं जा सकतीं, उनकी सच्चाई को स्वीकार नहीं कर पाता। दूसरे शब्दों में, कई बार मैंने संघर्ष किया है—परमेश्वर के सामने चीज़ों को बदलने की बेकार कोशिश की है—क्योंकि मैं उन चीज़ों को मानने और स्वीकार करने के लिए खुद को तैयार नहीं कर पाया जिन्हें मैं बदल नहीं सकता था। नतीजतन, मैं अक्सर अंदरूनी शांति की कमी के कारण उलझन, चिंता और खुद को कोसने की स्थिति में फँसा रहता था। फिर भी, परमेश्वर ने मुझ पर दया की है और अपने वचन के ज़रिए मेरा मार्गदर्शन किया है; उन्होंने मुझे सिखाया है कि मैं अपने जीवन की उन बातों को विनम्रता से स्वीकार करूँ जिन्हें बदला नहीं जा सकता (जैसा कि पवित्र शास्त्र में बताया गया है), उन्हें प्रार्थना में परमेश्वर को सौंप दूँ, और उनके स्पर्श का इंतज़ार करूँ। इसके ज़रिए, परमेश्वर ने मेरे मन को शांति दी है—और लगातार दे रहे हैं।

मैं पोप जॉन पॉल द्वितीय द्वारा लिखे गए "शांति के दस नियम" (Ten Commandments of Serenity) साझा करना चाहूँगा। ऐसा लगता है कि पोप जॉन पॉल द्वितीय ने अपने मन में शांति बनाए रखने के लिए अपने खुद के "शांति के दस नियम" बनाए और उनका पालन करने की कोशिश की:

1. सिर्फ आज के लिए, मैं सिर्फ आज का दिन जीने की कोशिश करूँगा, और एक ही बार में अपने जीवन की सभी समस्याओं को सुलझाने की कोशिश नहीं करूँगा।
2. सिर्फ आज के लिए, मैं बहुत सावधानी से व्यवहार करूँगा। मैं किसी की आलोचना नहीं करूँगा, और न ही दूसरों को सुधारने की कोशिश करूँगा; मैं सिर्फ खुद की आलोचना करने और खुद को सुधारने की कोशिश करूँगा।
3. सिर्फ आज के लिए, मैं इस विश्वास के साथ खुश रहूँगा कि मुझे खुशी के लिए बनाया गया है—सिर्फ दूसरों के लिए नहीं, बल्कि खुद दुनिया के लिए भी।
4. सिर्फ आज के लिए, मैं हालात या घटनाओं को अपनी मर्जी के हिसाब से बदलने की कोशिश करने के बजाय, खुद को हालात के मुताबिक ढालूँगा।
5. सिर्फ आज के लिए, मैं पढ़ने में दस मिनट लगाऊँगा। जैसे शरीर को खाने की ज़रूरत होती है, वैसे ही आत्मा को अच्छी चीज़ें पढ़ने की ज़रूरत होती है।
6. सिर्फ आज के लिए, मैं कोई अच्छा काम करूँगा और किसी को इसके बारे में बताऊँगा नहीं।
7. सिर्फ आज के लिए, मैं कुछ ऐसा करूँगा जिसका मेरी अपनी इच्छाओं से कोई लेना-देना न हो। अगर मुझे कोई नाराज़गी महसूस होती है, तो मैं ध्यान रखूँगा कि किसी को इसका पता न चले।
8. सिर्फ आज के लिए, मैं पक्का यकीन रखूँगा—भले ही चीज़ें मेरी मर्जी के खिलाफ हों—कि ईश्वर की कृपा मेरा वैसे ही ध्यान रख रही है जैसे मैं दुनिया का अकेला इंसान होऊँ।
9. सिर्फ आज के लिए, मैं किसी चीज़ से नहीं डरूँगा। खासकर, मैं खूबसूरत चीज़ों में खुशी ढूँढ़ने या उनकी तारीफ़ करने से नहीं डरूँगा।
10. सिर्फ आज के लिए, मैं एक पक्का शेड्यूल बनाऊँगा। भले ही मैं उस प्लान को ठीक-ठीक पूरा न कर पाऊँ, फिर भी मैं उसे बनाऊँगा। साथ ही, हमें दो बुराइयों से बचना चाहिए: बिना सोचे-समझे जल्दबाज़ी में काम करना और बिना फ़ैसला लिए उलझन में रहना।

आज के हिस्से—एक्लेसियास्टेस 4:4-6—में राजा सुलैमान, जो उपदेशक थे, तीन सबक देते हैं कि हम मन की शांति कैसे बनाए रख सकते हैं।

पहला, मन की शांति बनाए रखने के लिए, हमें जलन को दूर करना होगा।

एक्लेसियास्टेस 4:4 देखिए: "और मैंने देखा कि सारी मेहनत और सारी कामयाबी एक इंसान की दूसरे इंसान से जलन की वजह से होती है। यह भी बेकार है, हवा के पीछे भागने जैसा है।" पिछले हफ्ते बुधवार की प्रार्थना सभा के दौरान, एक्लेसियास्टेस 4:1-3 पर मनन करते हुए, हमने इस बात पर गौर किया था कि कैसे राजा सुलैमान ने ताकतवर लोगों को कमज़ोर और बेबस लोगों पर जुल्म करते देखा था। दूसरे शब्दों में, उन्होंने जुल्म सहने वालों और उनके आँसुओं को देखा था। आज के हिस्से, यानी आयत 4 में, वह बताते हैं कि उन्होंने लोगों को जलन से प्रेरित होकर कड़ी मेहनत और हुनर वाले काम करते देखा। असल में, सुलैमान ने इस दुनिया में लोगों को जलन और मुकाबले की भावना से प्रेरित होकर कड़ी मेहनत करते देखा। यह सब बेकार है—हवा के पीछे भागने जैसा।

तो फिर, जलन क्या है? इसका मतलब है किसी ऐसे व्यक्ति के प्रति बिना किसी ठोस वजह के नफ़रत या नापसंदगी रखना जो आपसे बेहतर स्थिति में है; यह हार न मानने की ज़िद और दूसरों की सफलता को पाने की चाहत से भी पैदा होता है। 'si' (眚) अक्षर 'कुत्ते' (犬) के लिए इस्तेमाल होने वाले रेडिकल और 'नीले/हरे' (靑) रंग के अक्षर को मिलाकर बना है; यह उस स्थिति को दिखाता है जब कोई कुत्ता किसी दूसरे कुत्ते के पास खाना देखकर गुर्रति हुए 'नीले' या गुस्से से तमतमाए रंग का हो जाता है। वहीं, 'gi' (忌) अक्षर 'gi-sim' (己心), जिसका मतलब है 'खुद के बारे में सोचने वाला दिल' का छोटा रूप है और यह खुद पर केंद्रित सोच से पैदा होने वाली जलन और नफ़रत की भावनाओं को दिखाता है। लैटिन शब्द *invidia* का मतलब है 'बुरी नज़र से देखना' और यह मन की उस स्थिति को बताता है जिसमें कोई 'बुरी नज़र' डालता है। दूसरे शब्दों में, जलन किसी दूसरे व्यक्ति की चीज़ों—खासकर उन चीज़ों के लिए जो अपनी चीज़ों से बेहतर हों—को देखकर दुख और नाराज़गी महसूस करना है, और साथ ही उन चीज़ों को छीन लेने की इच्छा भी रखना है। 1 शमूएल 18:9 में बाइबल बताती है कि राजा शाऊल दाऊद पर कड़ी नज़र रखता था। खासकर, जब दाऊद ने गोलियत को हराया और औरतें

नाचते-गाते हुए कहने लगीं, "शाऊल ने हज़ारों को मारा है, और दाऊद ने दस हज़ारों को" (पद 7), तो उस दिन के बाद से राजा शाऊल दाऊद को 'जलन भरी नज़र' से देखने लगा; नतीजतन, उसने दाऊद को मारने की कोशिश की। हाल ही में, सुबह की प्रार्थना सभाओं के दौरान उत्पत्ति (Genesis) की किताब पढ़ते हुए, हमने बाइबल के किरदारों के बीच जलन के उदाहरण देखे हैं। उदाहरण के लिए, उत्पत्ति 30:1 में याकूब की पत्नी राहेल—जो माँ नहीं बन पा रही थी—अपनी बड़ी बहन लेआ से जलती है, जिसके बच्चे हो रहे थे; राहेल अपने पति याकूब को परेशान करते हुए कहती है, "मुझे बच्चे दे, नहीं तो मैं मर जाऊँगी।" इसके अलावा, उत्पत्ति 37:11 में यूसुफ के भाई उससे जलते हैं क्योंकि उनके पिता याकूब उसे बहुत प्यार करते थे। आखिरकार, जलन में आकर यूसुफ के भाई उसे मारने की साज़िश तक रच डालते हैं। जलन कितनी भयानक चीज़ है! यहाँ तक कि भजन रचने वाले आसाप ने भी एक बार बुरे लोगों की खुशहाली देखकर जलन महसूस की थी (भजन संहिता 73)। जब हम बुरे लोगों को आराम और खुशहाली में जीते हुए और नेक लोगों को मुश्किलों और तकलीफों से जूझते हुए देखते हैं, तो हमें जलन होना बहुत स्वाभाविक है। जलन तब पैदा होती है जब किसी की तारीफ़ करने की भावना दुख और नाराज़गी में बदल जाती है, और आखिर में यह भावना उस चीज़ को पाने—या ज़बरदस्ती छीनने—की इच्छा में बदल जाती है जो बुरे लोगों के पास है। इसीलिए राजा सुलैमान ने कहा था: "शांत मन शरीर को जीवन देता है, लेकिन जलन हड्डियों को गला देती है" (नीतिवचन 14:30)। जहाँ मन की शांति और सुकून शरीर को जीवन देते हैं, वहीं जलन ऐसी सड़न पैदा करती है जो हड्डियों की गहराई तक पहुँच जाती है। जैसा कि एक पादरी ने कहा: "अच्छे शब्द, खुशमिजाज़ दिल और मन की शांति हड्डियों के लिए फायदेमंद होते हैं; इसके उलट, जलन, चिंता और गुस्सा नुकसानदेह होते हैं। जलन हड्डियों को गला देती है, चिंता उन्हें सुखा देती है और गुस्सा उन्हें खत्म कर देता है" (इंटरनेट स्रोत)।

मुझे एक बात आज भी अच्छी तरह याद है: एक सेमिनरी प्रेसिडेंट के उद्घाटन समारोह में एक सीनियर पादरी ने कहा कि वे अपने सहयोगी पादरियों के बीच "अच्छे कॉम्पिटिशन" (मुकाबले) को बढ़ावा देते हैं। उस समय, मैं थोड़ा हैरान था। मुझे समझ नहीं आ रहा था कि एक सीनियर पादरी अपने सहयोगी पादरियों को एक-दूसरे के खिलाफ कैसे खड़ा कर सकता है, और क्या ऐसी होड़ को "अच्छा कॉम्पिटिशन" कहना सही है। लोग अक्सर कॉम्पिटिशन की भावना के साथ काम करते हैं, चाहे चर्च के अंदर हो या बाहर। यहाँ तक कि घर पर भी, माता-पिता कभी-कभी बच्चों की परवरिश करते समय इस तरह के "अच्छे कॉम्पिटिशन"

को बढ़ावा देते हैं। क्या आपको लगता है कि "अच्छा कॉम्पिटिशन" सही है? आज के हमारे पाठ, उपदेशक (Ecclesiastes) 4:4 में राजा सुलैमान के शब्दों के आधार पर, मेरा मानना है कि दूसरों के प्रति कॉम्पिटिशन की भावना रखना सही नहीं है। कारण यह है कि कॉम्पिटिशन की भावना आखिरकार हमसे मन की शांति छीन लेती है। अगर हम हर चीज़ को कॉम्पिटिशन की सोच के साथ देखते हैं, तो हमारे दिलों में शांति के बजाय जलन, चिंता और गुस्सा भरने की संभावना ज़्यादा होती है। इसीलिए राजा सुलैमान उपदेशक 4:4 में कहते हैं कि पड़ोसी से मुकाबला करने की इच्छा से की गई मेहनत बेकार है। इसलिए, हमें कॉम्पिटिशन की भावना और जलन को छोड़ देना चाहिए जो हमारी अंदरूनी शांति को छीन लेती हैं। हमें लालच और पड़ोसियों से मुकाबला करने की इच्छा से पैदा होने वाली बेकार मेहनत में नहीं पड़ना चाहिए। मुझे उम्मीद है कि हम—आप और मैं दोनों—जलन को छोड़ देंगे और अपने दिलों में शांति बनाए रखेंगे।

दूसरी बात, मन की शांति बनाए रखने के लिए हमें मेहनत से काम करना चाहिए।

उपदेशक 4:5 को देखिए: "मूर्ख अपने हाथ मोड़कर बैठ जाता है और खुद को बर्बाद कर लेता है।" राजा सुलैमान कहते हैं कि "मूर्ख"—यानी नासमझ व्यक्ति—"अपने हाथ मोड़कर बैठ जाता है।" इस संदर्भ में "हाथ मोड़कर बैठने" का क्या मतलब है? इसका मतलब है कि मूर्ख व्यक्ति काम करने से इनकार करता है। बाइबल कहती है, "आलसी की इच्छा उसे मार डालती है, क्योंकि उसके हाथ काम करने से इनकार करते हैं" (नीतिवचन 21:25)। जो आलसी व्यक्ति अपने हाथों से काम करने से इनकार करता है, वह मूर्ख है (उपदेशक 4:5)। इस आयत पर विचार करने से मुझे 2 थिस्सलुनीकियों 3:10 की याद आई—एक ऐसी आयत जिससे आप शायद परिचित होंगे: "...अगर कोई काम करने को तैयार नहीं है, तो उसे खाना भी नहीं चाहिए..." पौलुस के समय में थिस्सलुनीके की कलीसिया में कुछ ऐसे भाई थे जिन्होंने काम करने से इनकार कर दिया था। समस्या सिर्फ़ यह नहीं थी कि वे आलसी थे; वे कलीसिया में अव्यवस्थित ढंग से काम कर रहे थे और कोई उपयोगी काम करने के बजाय परेशानियाँ खड़ी कर रहे थे (पद 11)। उन्होंने काम करने से इनकार क्यों किया और इसके बजाय कलीसिया में परेशानियाँ क्यों खड़ी कीं? दूसरे शब्दों में, वे मूर्खतापूर्ण ढंग से आलसी क्यों थे—यानी मेहनत करने से क्यों बचते थे? इसका कारण उनकी गलत एस्केटोलॉजी (अंत-समय के बारे में गलत समझ) थी। थिस्सलुनीके की कलीसिया में जिन लोगों ने काम करना बंद कर दिया था, उन्होंने ऐसा इसलिए किया क्योंकि यीशु के दोबारा आने के बारे में उनकी समझ गलत थी। यह कुछ वैसा

ही था जैसे 'यहोवा के साक्षी' (Jehovah's Witnesses)—अपने संस्थापक चार्ल्स टेज़ रसेल की इस भविष्यवाणी पर विश्वास करते हुए कि यीशु 1874 में लौटेंगे—उस घटना की तैयारी के लिए बाकी सभी गतिविधियाँ रोक दी थीं; ठीक वैसे ही, थिस्सलुनीके के कुछ विश्वासियों ने मसीह की वापसी के बारे में अपनी गलत समझ के कारण काम करना बंद कर दिया था। इस गलत समझ के अलावा, और किन कारणों से हम मसीही लोग काम करने से पीछे हटते हैं और आलस में डूबे रहते हैं?

दोस्तों, आलसी व्यक्ति की क्या विशेषताएँ होती हैं? एक विशेषता है बहाने बनाने की आदत। नीतिवचन 26:13 को देखिए: "आलसी कहता है, 'रास्ते में शेर है! सड़कों पर शेर है!'" रास्ता और सड़क उन जगहों को दर्शाते हैं जहाँ लोग काम करते हैं। अगर वहाँ शेर होता, तो कोई ऐसी जगह पर नहीं जा पाता। यह दिखाता है कि जब कोई व्यक्ति किसी काम को करने से डरता है या उसमें आत्मविश्वास की कमी होती है, तो वह किस तरह के बहाने बनाता है। आलसी व्यक्ति की एक और विशेषता है—सोने से प्यार। नीतिवचन 26:14 को देखिए: "जैसे दरवाज़ा अपने कब्ज़ों पर घूमता है, वैसे ही आलसी अपने बिस्तर पर करवटें बदलता रहता है।" इसका मतलब है कि आलसी व्यक्ति अपनी सोने की जगह के आस-पास ही पड़ा रहता है; दूसरे शब्दों में, उसे बिस्तर पर लेटे रहना और सोना पसंद होता है। इन पदों के अलावा, नीतिवचन की पुस्तक में आलस के बारे में विस्तार से बताया गया है: "हे आलसी, तू कब तक पड़ा रहेगा? तू अपनी नींद से कब उठेगा? थोड़ी नींद, थोड़ी ऊँघ, थोड़ा हाथ पर हाथ रखकर आराम करना—और गरीबी तुझ पर एक डाकू की तरह आ पड़ेगी, और तंगी एक हथियारबंद आदमी की तरह" (नीतिवचन 6:9–11); "आलसी हाथ गरीबी लाते हैं, लेकिन मेहनती हाथ धन लाते हैं" (नीतिवचन 10:4); "आलसी की भूख कभी नहीं मिटती, लेकिन मेहनती लोगों की इच्छाएँ पूरी हो जाती हैं" (नीतिवचन 13:4); "आलस इंसान को गहरी नींद में डाल देता है, और बेकार रहने वाला व्यक्ति भूखा रहता है" (नीतिवचन 19:15)। आज के वचन, उपदेशक 4:5 में, राजा सुलैमान कहते हैं, "मूर्ख अपने हाथ मोड़कर बैठता है और अपना ही मांस खाता है।" इसका मतलब है कि मूर्ख व्यक्ति आलस के कारण कोई कमाई नहीं करता और बस अपना ही विनाश करता है (पार्क युन-सन)। इसलिए, वे कहते हैं, "आलस के कारण छत की कड़ियाँ झुक जाती हैं; बेकार हाथों के कारण घर टपकने लगता है" (10:18)। इस वचन का अर्थ है कि आलसी शासकों की लापरवाह जीवनशैली देश के पतन का कारण बनती

है। इसके विपरीत, मेहनती व्यक्ति अमीर बनता है (नीतिवचन 10:4)। दूसरे शब्दों में, किसी व्यक्ति की समृद्धि उसकी मेहनत पर निर्भर करती है (12:27)। बाइबिल सिखाती है कि मेहनती लोग न केवल अमीर बनते हैं (10:4) बल्कि दूसरों पर शासन भी करते हैं (12:24), उन्हें दिल का संतोष मिलता है (13:4), और वे पूरी आशा पाते हैं (इब्रानियों 6:11)। मेहनती व्यक्ति के दिल में शांति होती है। हालाँकि, आलसी व्यक्ति के दिल में चिंता, परेशानी, बहाने, नाराज़गी और शिकायतें ही होती हैं।

तीसरी बात, दिल की शांति बनाए रखने के लिए, हमें केवल परमेश्वर में ही संतोष रखना चाहिए।

आज के वचन, उपदेशक 4:6 को देखें: "शांति के साथ एक मुट्ठी भर चीज़, मेहनत और हवा के पीछे भागने वाली दो मुट्ठी चीज़ों से बेहतर है।" इसका मतलब है कि बेकार की कोशिशों में मेहनत करके दो मुट्ठी चीज़ें पाने के बजाय, शांति के साथ एक मुट्ठी चीज़ पाना बेहतर है। दूसरे शब्दों में, किसी के पास कितनी चीज़ें हैं, यह उतना मायने नहीं रखता जितना कि यह कि उसके पास दिल की शांति है या नहीं। समस्या यह है कि जब हम बहुत सारी भौतिक चीज़ें या संपत्ति पाने की कोशिश करते हैं, तो अक्सर हम लालच में आकर काम करते हैं, और अपने पड़ोसियों से मुकाबला करते हैं या उनसे ईर्ष्या करते हैं। नतीजतन, हम निश्चित रूप से अपनी आंतरिक शांति खो देते हैं। इससे भी बड़ा खतरा यह है कि इस शांति को खोने के अलावा, हम परमेश्वर के बजाय भौतिक धन-दौलत में संतुष्टि खोजने लगते हैं। उस संतुष्टि को बनाए रखने की चाहत में हम और ज़्यादा लालची हो जाते हैं; जितना ज़्यादा लालच बढ़ता है, हमारा दिल शांति के बजाय तनाव, बेचैनी और चिंता से भर जाता है। जब हमारा दिल इस स्थिति में पहुँच जाता है, तो परमेश्वर का वचन रुक जाता है, जिससे हम ऐसा जीवन नहीं जी पाते जो फलदायी हो (मत्ती 13:22)। इसीलिए भजनकार कहता है: "बहुत से दुष्टों की बहुतायत से धर्मी का थोड़ा ही बेहतर है" (भजन संहिता 37:16)। राजा सुलैमान ने भी कहा: "अन्याय से मिली बड़ी कमाई से धर्म के साथ थोड़ा ही बेहतर है" (नीतिवचन 16:8)। इसका क्या मतलब है? इसका मतलब है कि आय की मात्रा सबसे ज़्यादा मायने नहीं रखती; बल्कि, धर्मी और दुष्ट के बीच—और धर्म और अन्याय के बीच—का अंतर ही असल में मायने रखता है। इसका यह मतलब नहीं है कि धर्मी व्यक्ति के पास हमेशा कम ही होना चाहिए; बाइबिल हमें दिखाती है कि अब्राहम और अय्यूब जैसे धर्मी लोगों के पास बहुत धन-दौलत थी। न ही इसका मतलब यह है कि दुष्टों के पास हमेशा बहुत कुछ होता है; इस दुनिया में अनगिनत दुष्ट लोग हैं जिनके पास बहुत कम है। मुख्य अंतर यह है कि धर्मी व्यक्ति का दिल केवल प्रभु में संतुष्टि पाता

है, जबकि दुष्ट व्यक्ति का दिल प्रभु से अलग भौतिक सुख-सुविधाओं में संतुष्टि ढूँढता है। ऐसा दिल—दुष्ट का दिल—न तो उस शांति को पाता है जो परमेश्वर देता है और न ही उसे बनाए रखने में सक्षम होता है।

अपने दिलों में शांति बनाए रखने के लिए, हमें केवल प्रभु में संतुष्टि पाने का रहस्य सीखना होगा। फिलिप्पियों 4:11–13 को देखें: "मैं यह इसलिए नहीं कह रहा हूँ कि मुझे किसी चीज़ की कमी है, क्योंकि मैंने हर परिस्थिति में संतुष्ट रहना सीख लिया है। मैं जानता हूँ कि कमी में रहना क्या होता है, और मैं जानता हूँ कि भरपूर मात्रा में होना क्या होता है। मैंने हर स्थिति में संतुष्ट रहने का रहस्य सीख लिया है, चाहे पेट भरा हो या भूखा, चाहे भरपूर मात्रा में जी रहा हूँ या कमी में। मैं वह सब कुछ उसके द्वारा कर सकता हूँ जो मुझे शक्ति देता है।" प्रेरित पौलुस की तरह, हमें भी कमी और भरपूर मात्रा—दोनों समयों को संभालना सीखना चाहिए। हमें इन अलग-अलग परिस्थितियों के बीच संतुष्टि का रहस्य सीखना होगा। वह रहस्य है केवल प्रभु में संतुष्टि पाना—वही जो हमें शक्ति देता है। जब हम ऐसा करते हैं, तो हम शांति के राजकुमार, प्रभु द्वारा दी गई सच्ची शांति का आनंद ले सकते हैं।

मेरे दिल में एक ऐसी याद बसी है जिसे मैं कभी नहीं भूल सकता। यह याद कई साल पहले एक हॉस्पिस में मार्क नाम के एक भाई से मिलने और रोते हुए गॉस्पेल गीत "माई पीस आई गिव अनटू यू" (मैं तुम्हें अपनी शांति देता हूँ) गाने की है। इसके बोल कुछ इस तरह हैं: "मैं तुम्हें शांति देता हूँ—ऐसी शांति जो दुनिया नहीं दे सकती, ऐसी शांति जिसे दुनिया जान नहीं सकती... मैं तुम्हें शांति देता हूँ!" यह गीत मुझे उस शांति की याद दिलाता है जो मैंने हाई स्कूल के दिनों में एक सपने में इसे गाते हुए महसूस की थी। हालाँकि हम ऐसी दुनिया में रहते हैं जहाँ शांति नहीं है, लेकिन चूँकि यीशु—शांति के राजकुमार—हमारे दिलों में बसते हैं, इसलिए हम परमेश्वर को शांति का यह गीत सुना सकते हैं। मैं यीशु के नाम से प्रार्थना करता हूँ कि आज हम सब उस सच्ची शांति का आनंद ले सकें जो केवल प्रभु ही दे सकते हैं—ऐसी शांति जो दुनिया नहीं दे सकती।

एक से भले दो।

[उपदेशक 4:7-12]

पास्टर ली डोंग-वोन के नहेमायाह पर दिए गए उपदेश में "सहयोगी सेवा के सिद्धांत" (Principles of Collaborative Ministry) के परिचय के तौर पर, वे ली इयाकोका (Lee Iacocca) द्वारा बताए गए मशहूर 3-P का जिक्र करते हैं। ली इयाकोका को डूबती हुई अमेरिकी ऑटोमोबाइल कंपनी 'क्रिसलर' को फिर से खड़ा करने वाले मैनेजमेंट जीनियस के तौर पर जाना जाता है; उन्होंने ये 3-P तब बताए थे जब एक अखबार के रिपोर्टर ने उनसे मैनेजमेंट के राज़ पूछे थे (इंटरनेट)। 3-P सिद्धांत का मतलब है: सिद्धांत (Principle), अभ्यास (Practice) और दृढ़ता (Persistence)। संक्षेप में, यह सिद्धांत बनाने और उन्हें अमल में लाने, और ऐसा लगातार और पूरी लगन से करने का सबक है। इसके बाद पास्टर ली "सिद्धांत-आधारित नेतृत्व" (Principle-centered Leadership) पर चर्चा करते हैं, जिसे हाल ही में अच्छे नेतृत्व के आदर्श के तौर पर पेश किया गया है। वे बताते हैं कि बाइबिल के नेता नहेमायाह ने यरूशलेम शहर को फिर से बसाते समय इसी सिद्धांत-आधारित नेतृत्व का असरदार ढंग से इस्तेमाल करके एक बड़ा काम पूरा किया था। फिर उन्होंने यह सवाल उठाया कि उनके लिए नेतृत्व के कौन से सिद्धांत अहम थे, और उन्हें लगभग तीन बिंदुओं में समेटा। इनमें सबसे पहला है "सहयोग का सिद्धांत"। नहेमायाह ने 75 से ज़्यादा लोगों के साथ मिलकर यरूशलेम की दीवारें फिर से बनाईं, जैसा कि नहेमायाह अध्याय 3 में बताया गया है; शहर के पुनर्निर्माण के काम को पूरा करने के लिए ये 75 लोग कंधे से कंधा मिलाकर सहयोग करते हुए अपनी-अपनी जगह पर डटे रहे। इसके उलट, कहा जाता है कि कोरियाई नेतृत्व में सबसे बड़ी कमी इसी सहयोग की भावना की है। यहाँ तक कि हम ईसाई भी बहुत ज़्यादा अकेले काम करने वाले और सहयोग न करने वाले होते हैं। ऐसे अकेले काम करने वाले और सहयोग न करने वाले लोगों की तुलना "ज़हर में पड़े केकड़ों" से की जाती है। जार में मौजूद हर केकड़े में बाहर निकलने की पूरी काबिलियत होती है, फिर भी उनमें से कोई भी बाहर नहीं निकल पाता। वजह यह है कि जब भी कोई एक केकड़ा बाहर निकलने की कोशिश करता है, तो दूसरा

उसके पिछले पैरों को पकड़कर उसे वापस नीचे खींच लेता है। संक्षेप में, उनके बचने का तरीका यह सोच है कि "अगर मैं डूबूँगा, तो तुम्हें भी अपने साथ ले डूबूँगा।" क्या यह हद दर्जे की स्वार्थ की भावना आज चर्च की हालत को नहीं दिखाती?

आज के वचन, उपदेशक 4:7 में, राजा सुलैमान "सूरज के नीचे" कुछ "बेमतलब" चीज़ देखने की बात करते हैं। वह बेमतलब चीज़ क्या है? आयत 8 को देखिए: "एक अकेला व्यक्ति है, जिसका कोई साथी नहीं: न तो उसका कोई बेटा है और न ही कोई भाई। फिर भी उसकी मेहनत का कोई अंत नहीं है, और न ही उसकी आँखें धन-दौलत से तृप्त होती हैं। लेकिन वह कभी नहीं पूछता, 'मैं किसके लिए इतनी मेहनत कर रहा हूँ और खुद को अच्छी चीज़ों से वंचित क्यों रख रहा हूँ?' यह भी व्यर्थ है और एक बड़ी दुर्भाग्यपूर्ण बात है।" यह अंश उस व्यक्ति की मेहनत की व्यर्थता को दिखाता है जो केवल अपने लालच को पूरा करने की इच्छा से प्रेरित होकर काम करता है (पार्क युन-सन)। राजा सुलैमान ने "सूरज के नीचे" जो देखा, वह यह था कि लोग एक-दूसरे से जलन के कारण हर तरह की मेहनत और कुशलता वाला काम कर रहे थे (आयत 4)। ऐसी जलन आखिरकार जलन रखने वाले व्यक्ति के दिल में लालच पैदा करती है; इसके अलावा, वह व्यक्ति उस लालच को पूरा करने की कोशिश में एक बहुत ज़्यादा आत्म-केंद्रित व्यक्ति बन जाता है। इस प्रकार, यह लेख ऐसे आत्म-केंद्रित व्यक्ति का वर्णन करता है जो "अकेला है, जिसका कोई साथी नहीं—न तो कोई बेटा है और न ही कोई भाई" (आयत 8)। इसका मतलब है कि ऐसा आत्म-केंद्रित व्यक्ति अपने बेटे या भाई की भी परवाह नहीं करता (पार्क युन-सन)। आखिरकार, वह आत्म-केंद्रित व्यक्ति इस दुनिया में केवल अपने लिए धन इकट्ठा करने में कोई कसर नहीं छोड़ता, लेकिन बाद में उसे यह एहसास होता है: "मैं किसके लिए इतनी मेहनत कर रहा हूँ और खुद को अच्छी चीज़ों से वंचित क्यों रख रहा हूँ? यह भी व्यर्थ है और एक बड़ी दुर्भाग्यपूर्ण बात है।" संक्षेप में, बहुत ज़्यादा आत्म-केंद्रित जीवन व्यर्थ और बेकार है; ऐसी सारी मेहनत का कोई मतलब नहीं है। राजा सुलैमान ने ऐसे आत्म-केंद्रित लोगों में एक पैटर्न देखा: अपनी आत्मा को कभी सच्चा संतोष न मिलने के बावजूद जीवन भर मेहनत करने के बाद, जब वे पीछे मुड़कर देखते हैं तो उन्हें एहसास होता है, "मैंने एक व्यर्थ जीवन जिया है।"

सचमुच, जैसे राजा सुलैमान ने देखा, हम भी इस दुनिया में बहुत ज़्यादा आत्म-केंद्रित लोगों की व्यर्थ और बेकार मेहनत को देखते हैं... क्या आपने कभी ऐसे सचमुच दयनीय जीवन देखे हैं—ऐसे लोग जिन्होंने अपने बच्चों और भाई-बहनों की उपेक्षा की, और केवल धन इकट्ठा करने के लिए जीवन भर अथक परिश्रम किया, फिर भी उन्हें अपनी आत्मा में कोई सच्चा संतोष या खुशी नहीं मिली? वे दावा कर सकते हैं कि उन्होंने अपने बच्चों और परिवार के लिए इतनी मेहनत की, लेकिन चूँकि वे वास्तव में उनकी परवाह करने में विफल रहे, इसलिए उनके रिश्ते टूट गए; नतीजतन, जबकि उन्हें लगता था कि उनकी मेहनत परिवार के लिए थी, उनके परिवार के सदस्यों ने इसे उस नज़रिए से नहीं देखा। इस प्रकार, बहुत ज़्यादा आत्म-केंद्रित लोग अक्सर खुद को गहरे अकेलेपन में पाते हैं और पूछते हैं, "आखिर मैंने किसके लिए इतनी मेहनत की?" क्या आपने कभी अपने आस-पास के लोगों को ऐसे सवाल पूछते देखा है? क्या आपने कभी किसी ऐसे व्यक्ति को देखा है जिसने जीवन भर कड़ी मेहनत की और आखिरकार आर्थिक रूप से सुरक्षित हो गया, लेकिन अपनी जमा की गई दौलत का आनंद लिए बिना ही—चाहे बीमारी से या किसी दुर्घटना में—मर गया, और इतना ही नहीं, अपने बच्चों और भाई-बहनों के साथ खराब रिश्तों के कारण अकेलेपन में मर गया? "यह भी व्यर्थ और बहुत दुखदायी परिश्रम है" (पद 8)।

राजा सुलैमान ने कुछ ऐसा देखा जो न तो व्यर्थ था और न ही बेकार—बल्कि सचमुच फायदेमंद था (पद 9–12)। वह फायदा क्या था? संक्षेप में, राजा सुलैमान ने जो फायदेमंद देखा, वह यह था कि एक से बेहतर दो होते हैं। पद 9 देखें: "एक से बेहतर दो होते हैं, क्योंकि उन्हें अपनी मेहनत का अच्छा फल मिलता है।" दो लोग एक से बेहतर क्यों होते हैं? कारण यह है कि उन्हें अपनी मिलकर की गई मेहनत का अच्छा फल मिलता है (पद 9)। यह बात कि "एक से बेहतर दो होते हैं," केवल लोगों की संख्या के बारे में नहीं है, बल्कि एकता और सहयोग के फायदों के बारे में है (पार्क युन-सन)। असल में ये फायदे क्या हैं? दो लोग एक से बेहतर क्यों होते हैं? राजा सुलैमान आज के हिस्से में तीन कारण बताते हैं:

पहला, एक से बेहतर दो होते हैं क्योंकि अगर एक गिरता है, तो दूसरा उसे उठाने में मदद कर सकता है।

उपदेशक 4:10 देखें: "अगर उनमें से कोई गिर जाता है, तो दूसरा उसे उठाने में मदद कर सकता है। लेकिन उस व्यक्ति पर तरस आता है जो गिर जाता है और उसे उठाने वाला कोई नहीं होता।" अगर आप अकेले हैं

और गिर जाते हैं, तो आपको उठाने वाला कौन है? लेकिन, अगर दो लोग साथ चल रहे हैं और एक गिर जाता है, तो दूसरा उसे उठाने में मदद कर सकता है। इस प्रकार, राजा सुलैमान समझाते हैं कि एक से बेहतर दो होते हैं क्योंकि वे एक-दूसरे का सहारा बन सकते हैं और एक-दूसरे को उठा सकते हैं। दूसरे शब्दों में, एक से बेहतर दो होते हैं क्योंकि वे मुश्किल समय में एक-दूसरे की मदद कर सकते हैं। आपके बारे में क्या? क्या कोई ऐसा है जो आपकी मदद कर सके जब आप सचमुच संघर्ष कर रहे हों? चर्च समुदाय ऐसी जगह होनी चाहिए जहाँ सदस्य मुश्किल समय में एक-दूसरे की मदद करें। एक ऐसा समुदाय जो गिरे हुए लोगों का सहारा बने, उन्हें मज़बूत करे और उनकी मदद करे—यही चर्च का असली स्वरूप है।

दूसरा, एक से बेहतर दो होते हैं क्योंकि वे एक-दूसरे को दिलासा दे सकते हैं।

उपदेशक 4:11 देखें: "अगर दो लोग साथ लेटते हैं, तो उन्हें गर्माहट मिलती है। लेकिन अकेला व्यक्ति कैसे गर्म रह सकता है?" राजा सुलैमान ने इस दुनिया में सताए हुए लोगों और उनके आँसुओं को देखा; साथ ही, उन्होंने यह भी देखा कि उन्हें दिलासा देने वाला कोई नहीं था (पद 1)। मुश्किल और कठिन समय में, हमें न केवल मदद करने वाले की ज़रूरत होती है, बल्कि हमें दिलासा देने वाले की भी बहुत ज़रूरत होती है। हमें ऐसे दिलासा देने वाले की ज़रूरत है जो अकेलेपन में हमारे साथ रहे और जब हम दुख से रोएँ तो हमारे साथ रोएँ। ऐसे दिलासा देने वाले के ज़रिए हम परमेश्वर के गहरे प्यार को महसूस कर सकते हैं और सुकून पा सकते हैं। हमें ऐसी ही कलीसिया बनना है। एक ऐसा समुदाय जो एक-दूसरे को दिलासा दे, हिम्मत बढ़ाए और मज़बूत करे—यही कलीसिया की असली पहचान है।

तीसरी बात, एक से भले दो होते हैं क्योंकि साथ मिलकर वे मज़बूती से खड़े रह सकते हैं और किसी भी मुश्किल का सामना कर सकते हैं।

आज के वचन, उपदेशक 4:12 को देखिए: “भले ही कोई अकेला व्यक्ति हार जाए, पर दो लोग अपना बचाव कर सकते हैं। तीन धागों वाली रस्सी आसानी से नहीं टूटती।” क्या यह दिलचस्प नहीं है? राजा सुलैमान आयत 8 में एक व्यक्ति की बात करते हैं, आयतों 9 से 11 में दो लोगों की, और फिर आयत 12 में वे “तीन धागों वाली रस्सी” के उदाहरण से तीन लोगों का ज़िक्र करते हैं। इस “तीन धागों वाली रस्सी” का क्या मतलब है? इसका

मतलब है कि जहाँ एक धागा आसानी से टूट जाता है और दो धागे शायद थोड़े ज़्यादा मज़बूत हों, वहीं तीन धागों से बुनी हुई रस्सी आसानी से नहीं टूटती (वियर्सबे)। क्या आप कभी सैन फ्रांसिस्को के गोल्डन गेट ब्रिज गए हैं? क्या आप उसे सहारा देने वाले केबलों के बारे में कुछ जानते हैं? कहते हैं कि वे केबल अनगिनत स्टील के तारों को एक साथ जोड़कर एक विशाल केबल के रूप में बनाए गए हैं। केबल 92.4 सेंटीमीटर मोटा है—ज़्यादातर पुराने पेड़ों से भी ज़्यादा चौड़ा—जिससे किसी वयस्क के लिए अपनी बाहों से उसे घेरना मुश्किल होता है। एक केबल बनाने के लिए, 27,572 पतले तारों को मिलाया गया था; पेंसिल जितने मोटे तारों को 61 बंडलों में इकट्ठा किया गया, जिन्हें फिर दबाकर और एक साथ बांधकर तीन फ़ीट व्यास वाला केबल बनाया गया। आखिर में, चिकनी फ़िनिश के लिए केबल को पतले तार से लपेटा गया। कुल मिलाकर, उस विशाल केबल को बनाने के लिए 129,000 किलोमीटर स्टील के तार एक साथ बुने गए थे (इंटरनेट)। क्या यह अद्भुत नहीं है? जैसे गोल्डन गेट ब्रिज के केबल आसानी से नहीं टूटते, वैसे ही जब तीन लोग एक मन और एक सोच के साथ एकजुट होते हैं, तो वे मज़बूती से खड़े रहते हैं और मिलकर किसी भी मुश्किल का सामना करने में सक्षम होते हैं। वे न केवल एक-दूसरे की मदद और हिम्मत बढ़ा सकते हैं, बल्कि जीवन की मुश्किलों का सामना करते और उन पर जीत हासिल करते हुए एक-दूसरे की रक्षा भी कर सकते हैं। क्या आप प्रभु में ऐसी प्यार भरी संगति नहीं चाहते? क्या आप ऐसे समुदाय का सपना नहीं देखना चाहते?

आज के समय में, अत्यधिक व्यक्तिवाद—जहाँ लोग सिर्फ़ खुद से प्यार करते हैं—तेज़ी से बढ़ रहा है (2 तीमुथियुस 3:2)। हम यह प्रवृत्ति उन लोगों में देखते हैं जो सिर्फ़ अपने लालच को पूरा करने के लिए मेहनत करते हैं (उपदेशक 4:8)। जब हम ऐसे लोगों को देखते हैं जिन्होंने दौलत जमा करने के लिए ज़िंदगी भर कड़ी मेहनत की, फिर भी वे संतुष्ट नहीं हुए—और दौलत जमा करते-करते अपने परिवार से दूर हो गए और बिल्कुल अकेले रह गए—तो हम भी यह सोचने पर मजबूर हो जाते हैं: "आखिर मैं किसके लिए मेहनत कर रहा हूँ?" ज़िंदगी भर की मुश्किलों के बाद अकेलेपन में मरने वाले लोगों को देखकर, जिन्हें कभी अपने मन में खुशी नहीं मिली, हम राजा सुलैमान की आज के पाठ में कही गई बात को दोहराए बिना नहीं रह सकते: "यह भी व्यर्थ है और बहुत बड़ी मेहनत है।" इस हद से ज़्यादा व्यक्तिवाद के साथ-साथ, मेरा मानना है कि आज की दुनिया में हम "स्वार्थी परिवारवाद" भी देखते हैं। लोग सिर्फ़ अपने परिवारों की परवाह करते हैं और दूसरों में कोई दिलचस्पी नहीं दिखाते। मैं इसे परिवारों के टूटने के दौर की एक चरम प्रतिक्रिया के रूप में देखता हूँ; दूसरे शब्दों में, जैसे-जैसे

परिवार बिखर रहे हैं, एक स्वार्थी परिवारवाद उभरा है जहाँ लोग दूसरों की परवाह किए बिना सिर्फ अपने परिवार वालों की सुरक्षा पर ध्यान देते हैं। नतीजतन, हम ईसाई जो यीशु में विश्वास करते हैं, अक्सर चर्च में अपने विश्वास के जीवन को केवल अपने परिवारों के लिए प्रार्थना करने तक ही सीमित रखते हैं। क्या सचमुच अपने विश्वास को जीने का यही आदर्श तरीका है? आज के पाठ के माध्यम से, राजा सुलैमान हमें विश्वास समुदाय में सही जीवन जीने के सिद्धांत सिखाते हैं। वह सिद्धांत यह है कि "एक से बेहतर दो हैं।" दूसरे शब्दों में, एक स्वस्थ विश्वास समुदाय की कुंजी आपसी सहयोग है—एक साथ काम करने की भावना। सहयोग का यह सिद्धांत फायदेमंद है क्योंकि मुश्किल समय में हम एक-दूसरे की मदद और हिम्मत बढ़ा सकते हैं; एकता में मज़बूती से खड़े होकर हम किसी भी मुश्किल का सामना कर सकते हैं। मुझे उम्मीद है कि हमारा समुदाय सहयोग के इस सिद्धांत पर कायम रहेगा और एक-दूसरे की मदद और हिम्मत बढ़ाते हुए जीत की ओर एक साथ आगे बढ़ेगा।

मन से दीन लोगों की समझदारी

[सभोपदेशक 4:13-16]

पिछले शनिवार की सुबह की प्रार्थना सभा में निर्गमन 36:1-7 पर मनन करते समय, मुझे कलीसिया—जो मसीह की देह है—की सेवा करने के बारे में प्रार्थना के तीन विषय मिले और मैंने उन्हें परमेश्वर के सामने रखा। वे तीन विषय थे: (1) पहला, "हे परमेश्वर, हमें समझदारी और ज्ञान दे"; (2) दूसरा, "हे परमेश्वर, हमें एक तत्पर हृदय दे"; और (3) तीसरा, "हे परमेश्वर, हमारे दिलों से लालच दूर कर।" हम परमेश्वर से समझदारी और ज्ञान—जो प्रार्थना का पहला विषय है—इसलिए मांगते हैं ताकि हम उसकी आज्ञाओं को पूरा कर सकें। दूसरे शब्दों में, हमें परमेश्वर से समझदारी और ज्ञान मांगना चाहिए ताकि हम उसकी इच्छा (कि *क्या* करना है) को समझ सकें और यह जान सकें कि उस इच्छा को कैसे पूरा करना है (कि *कैसे* करना है)। आसान शब्दों में कहें तो, हम परमेश्वर से समझदारी इसलिए मांगते हैं ताकि हम उसकी इच्छा और उसके तरीकों, दोनों को जान सकें। ठीक वैसे ही जैसे परमेश्वर ने इस्राएलियों में से काम करने वालों को बुलाया—उन्हें समझदारी और ज्ञान दिया—और उन्हें खास तौर पर निर्देश दिया कि पवित्र तम्बू (Tabernacle) कैसे बनाना है, वैसे ही हमारा प्रभु अपनी कलीसिया को बनाने के लिए काम करने वालों को तैयार करता है और उन्हें समझदारी देता है ताकि उसकी इच्छा असल में पूरी हो सके। इसलिए, हमें कलीसिया की सेवा नासमझी से नहीं करनी चाहिए; बल्कि, हमें समझदारी से सेवा करनी चाहिए, और उस समझदारी का इस्तेमाल करना चाहिए जो परमेश्वर देता है।

जब मैंने आज के वचन—सभोपदेशक 4:13-16—पर मनन किया और खास तौर पर "भले ही गरीब" (पद 13) और "गरीब आदमी" (पद 13) जैसे वाक्यांशों पर ध्यान दिया, तो मुझे मन से दीन लोगों की समझदारी (और उनके अकेलेपन) के स्वभाव के बारे में सोचने का मौका मिला। बेशक, आज के वचन में जिस गरीबी और गरीब लोगों का जिक्र है, वह असल में भौतिक गरीबी है, न कि कोई आध्यात्मिक स्थिति। हालाँकि, जब मैंने इस वचन

पर मनन किया और इसे अपने जीवन में लागू करने की कोशिश की, तो मुझे इसके आध्यात्मिक पहलू—खास तौर पर उन लोगों की समझदारी जो "मन से दीन" हैं—पर विचार करने का ख्याल आया। मेरा मानना है कि भौतिक गरीबी और मन की गरीबी के बीच एक संबंध है। मेरी नज़र में, इस संबंध का आधार मत्ती 5:3 में मिलता है: "धन्य हैं वे जो मन से दीन हैं, क्योंकि स्वर्ग का राज्य उन्हीं का है।" बेशक, ऐसे कई सच्चे और ईश्वर को मानने वाले लोग हैं जो भौतिक रूप से अमीर हैं, फिर भी उनमें 'आत्मा की दीनता' (यानी विनम्रता) है। इसके उलट, कई लोग ऐसे भी हैं जो भौतिक रूप से गरीब हैं, लेकिन उनमें आत्मा की वह दीनता नहीं है। मुख्य बात यह नहीं है कि कोई भौतिक रूप से गरीब है या अमीर; बल्कि, चाहे गरीब हो या अमीर, एक विश्वासी की आत्मा हमेशा दीन (विनम्र) होनी चाहिए। ऐसा इसलिए है क्योंकि परमेश्वर आत्मा से दीन लोगों पर आशीष बरसाते हैं—और उन आशीषों में से एक है बुद्धि।

"आत्मा से दीन लोगों की बुद्धि" विषय के तहत आज के वचन—उपदेशक 4:13-16—पर विचार करते हुए, मैं इस बुद्धि के तीन पहलुओं को समझना चाहता हूँ और उन सीखों को जानना चाहता हूँ जो परमेश्वर हमें देना चाहते हैं।

पहला, आत्मा से दीन लोगों की बुद्धि इस बात में है कि वे चेतावनी पर ध्यान दे सकें।

उपदेशक 4:13 को देखें: "एक गरीब लेकिन बुद्धिमान युवा, उस बूढ़े लेकिन मूर्ख राजा से बेहतर है जो अब चेतावनी पर ध्यान देना नहीं जानता।" यहाँ, राजा सुलैमान तीन तुलनाएँ करते हैं: "युवा" बनाम "राजा", बुद्धि बनाम मूर्खता, और गरीबी बनाम अमीरी। इस तुलना का सार यह है कि यह वचन एक गरीब लेकिन बुद्धिमान युवा की तुलना एक अमीर, बूढ़े और मूर्ख राजा से करता है। इस तुलना का मुख्य अर्थ क्या है? यह गरीबी बनाम अमीरी, या जवानी बनाम बुढ़ापे, या लड़के और राजा के बीच के अंतर के बारे में नहीं है; बल्कि, सबसे महत्वपूर्ण बात बुद्धि है। एक बुद्धिमान व्यक्ति सलाह को स्वीकार करना जानता है। इसके विपरीत, एक मूर्ख या नासमझ व्यक्ति सलाह मानने से इनकार कर देता है। वह बूढ़ा और मूर्ख राजा सलाह या चेतावनी पर ध्यान देना नहीं जानता (वचन 13)।

इस वचन पर मनन करते हुए, मेरे मन में एक सवाल आया: "क्या यह बूढ़ा, मूर्ख राजा हमेशा से ऐसा ही था, यहाँ तक कि अपनी जवानी में भी?" मुझे लगा कि शायद जब वह युवा था—या राजा बनने से पहले—तो उसने अपने आस-पास के लोगों की प्यार भरी सीख, सलाह या चेतावनियों को विनम्रता से सुना होगा। अगर ऐसा था, तो बुढ़ापे में वह इतना नासमझ कैसे हो गया? मुझे लगता है कि राजा के रूप में उसकी दौलत और ताकत ने शायद उसमें ऐसा अहंकार पैदा कर दिया होगा जिसने उसे नासमझ बना दिया। डॉ. पार्क युन-सन ने कहा: "यह उस व्यक्ति की बदकिस्मती को दिखाता है जो बुढ़ापे तक गद्दी पर रहने के कारण घमंडी हो गया है और इसलिए सही सलाह मानने से इनकार करता है" (पार्क युन-सन)। घमंडी लोग कभी भी सही सलाह नहीं सुनते; उनमें इसे सुनने के लिए न तो कान होते हैं और न ही दिल। लेकिन समझदार लोग सही सलाह सुनते हैं। जैसा कि नीतिवचन का लेखक कहता है: "मूर्ख को अपनी ही राह सही लगती है, लेकिन समझदार व्यक्ति सलाह सुनता है" (नीतिवचन 12:15)। जब सुलैमान राजा बनने वाले थे, तो उन्होंने परमेश्वर से "समझदार दिल" माँगा। उन्होंने ऐसा इसलिए किया क्योंकि वे प्रभु के लोगों का न्याय करते समय अच्छे और बुरे के बीच फ़र्क कर पाना चाहते थे (1 राजा 3:9)। यहाँ एक दिलचस्प बात यह है कि हिब्रू शब्द जिसका अनुवाद "समझदार" के तौर पर किया गया है—*शेमा*—उसका असल मतलब है "सुनना"। इससे पता चलता है कि सुलैमान का विश्वास भरा नज़रिया आज्ञा मानने का था, जिसका मूल अर्थ था, "अगर परमेश्वर बोलते हैं, तो यह सेवक सुनेगा; बोलिए, प्रभु!" हमें भी राजा सुलैमान की तरह आज्ञा मानने के नज़रिए से परमेश्वर के वचन को सुनना चाहिए। हमें नीतिवचन 19:20 की बातों पर ध्यान देना चाहिए: "सलाह सुनो और शिक्षा स्वीकार करो, ताकि अंत में तुम समझदार बन सको।" मुझे उम्मीद है कि आप और मैं 'आत्मा में दीन' लोगों की समझदारी हासिल करेंगे और ऐसे लोग बनेंगे जो सही सलाह सुनते हैं।

दूसरी बात, हम जानते हैं कि परमेश्वर मन के दीन लोगों की बुद्धि को ऊँचा उठाता है।

आज के वचन, उपदेशक 4:14 को देखिए: "वह जेल से निकलकर राजा बना, भले ही वह उस राज्य में गरीब पैदा हुआ था।" यहाँ, राजा सुलैमान बताते हैं कि एक बुद्धिमान युवा—अपनी गरीबी के बावजूद—एक बूढ़े, मूर्ख राजा से बेहतर क्यों है, जो अब चेतावनी पर ध्यान देना नहीं जानता। इसका कारण क्या है? इसका कारण यह है कि वह बुद्धिमान युवा, जो गरीबी में पैदा हुआ था और जेल भी गया था, आखिरकार जेल से छूटकर उस देश का राजा बना। इस वचन का मतलब यह नहीं है कि उस बूढ़े, मूर्ख राजा के साथ कोई और राजा भी राज कर

रहा था जो सलाह नहीं मानता था; बल्कि इसका मतलब है कि बूढ़ा, मूर्ख राजा सत्ता से हट गया, और यह बुद्धिमान, गरीब युवा उसकी जगह राजा बना। जब आप यह सुनते हैं, तो बाइबल का कौन सा पात्र याद आता है? क्या यह आपको उत्पत्ति की किताब के यूसुफ की याद नहीं दिलाता? बेशक, यूसुफ मिस्र का राजा नहीं बना। हालाँकि, जब मैं उपदेशक 4:13-14 में बताए गए "बुद्धिमान युवा" के बारे में सोचता हूँ—जो गरीबी के बावजूद "जेल से निकलकर राजा बना"—तो मुझे यूसुफ की याद आती है। वह जेल में था, लेकिन परमेश्वर से मिली बुद्धि से उसने फिरौन के सपने का अर्थ बताया और आखिरकार मिस्र का प्रधानमंत्री बना। यूसुफ की कहानी पर विचार करें: हालाँकि उसके भाई उससे नफरत करते थे, उसे लगभग मार ही डाला था, और मिस्र में गुलाम के तौर पर बेच दिया था, फिर भी परमेश्वर उससे बहुत प्यार करता था और उसके साथ था, उसे सफलता और बुद्धि देता था। जेल में रहते हुए उसने प्याला पिलाने वाले (और रोटी बनाने वाले) के सपनों का अर्थ बताया, और आखिरकार खुद फिरौन के सपने का अर्थ भी बताया; इससे न केवल वह जेल से छूटा, बल्कि मिस्र का प्रधानमंत्री भी नियुक्त हुआ।

यहाँ हमें यह सीख मिलती है कि परमेश्वर मन के दीन—यानी नम्र—लोगों को ऊँचा उठाता है। बाइबल कई जगहों पर इस सच्चाई के बारे में बताती है। उदाहरण के लिए, 1 पतरस 5:5-6 में प्रेरित पतरस की "युवा पुरुषों" को दी गई सलाह पर विचार करें: "हे युवा पुरुषों, तुम भी बुजुर्गों के अधीन रहो। और तुम सब एक-दूसरे के प्रति नम्रता का व्यवहार करो, क्योंकि 'परमेश्वर घमंडी का विरोध करता है, पर नम्र लोगों पर अनुग्रह करता है।'" इसलिए, परमेश्वर के शक्तिशाली हाथ के नीचे खुद को विनम्र करें, ताकि वह सही समय पर आपको ऊँचा उठाए।" प्रेरित याकूब की बात भी देखें जो याकूब 4:10 में कही गई है: "प्रभु के सामने खुद को विनम्र करें, और वह आपको ऊँचा उठाएगा।" इस तरह, बाइबल साफ़ तौर पर कहती है कि जब हम प्रभु के सामने खुद को विनम्र करते हैं, तो वह हमें ऊँचा उठाता है। क्या आप परमेश्वर के इस वादे पर विश्वास करते हैं?

ऐसा क्यों है कि जो लोग मन से दीन हैं, उनके पास प्रभु के सामने विनम्र होने के अलावा कोई चारा नहीं है? ऐसा इसलिए है क्योंकि हमारे प्रभु यीशु ने खुद को विनम्र किया। यीशु ने किस हद तक खुद को विनम्र किया? यीशु, "जो असल में परमेश्वर थे, उन्होंने परमेश्वर के बराबर होने को अपने फ़ायदे के लिए इस्तेमाल नहीं किया; बल्कि, उन्होंने एक सेवक का रूप धारण करके खुद को कुछ नहीं समझा और इंसानों जैसा रूप लिया। और इंसान के रूप में पाए जाने पर, उन्होंने खुद को विनम्र किया और मौत तक—यहाँ तक कि क्रूस की मौत तक—आज्ञाकारी

बने रहे!" (फिलिप्पियों 2:6-8)। ऐसा करने पर, परमेश्वर ने "उन्हें सबसे ऊँचे स्थान पर पहुँचाया और उन्हें वह नाम दिया जो हर नाम से ऊपर है, ताकि यीशु के नाम पर हर घुटना झुके—चाहे स्वर्ग में हो, पृथ्वी पर हो या पृथ्वी के नीचे—और हर ज़बान यह माने कि यीशु मसीह ही प्रभु हैं, ताकि पिता परमेश्वर की महिमा हो" (पद 9-11)। आइए हम सब भी वैसे ही विनम्र बनें जैसे यीशु बने थे। आइए हम प्रभु के सामने खुद को विनम्र करें। जब हम ऐसा करेंगे, तो परमेश्वर निश्चित रूप से हमें ऊँचा उठाएगा।

तीसरी बात, मन से दीन लोगों की समझ दुनिया के सम्मान की व्यर्थता को पहचानती है।

आज के वचन, उपदेशक 4:15-16 को देखें: "मैंने देखा कि सूरज के नीचे रहने वाले सभी जीवित लोग उस युवा—उत्तराधिकारी—के पीछे हो लिए, जिसने राजा की जगह ली थी। उनसे पहले के लोगों की कोई गिनती नहीं थी। लेकिन जो लोग बाद में आए, वे उस उत्तराधिकारी से खुश नहीं थे। यह भी व्यर्थ है, हवा के पीछे भागने जैसा है।" राजा सुलैमान ने "सूरज के नीचे" जो देखा, वह यह था: एक गरीब लेकिन बुद्धिमान युवा (पद 13)—जो गरीबी में पैदा होने के बावजूद जेल से निकलकर राजा बना (पद 14)—शुरू में उसके राज में अनगिनत लोगों द्वारा पसंद किया गया और उसकी तारीफ़ की गई (पद 15)। फिर भी, जब वह युवा राजा बूढ़ा हो गया, तो "बाद में आने वाले लोग"—यानी उन्हीं लोगों की अगली पीढ़ी जो उसकी जवानी में उसके साथ थे—उस बूढ़े राजा से खुश नहीं रहे। इसलिए, वह कहता है, "यह भी बेकार है—हवा के पीछे भागने जैसा" (वचन 16)। जब हम इसे खुद पर लागू करते हैं, तो राजा सुलैमान का कहना यह है कि दुनिया का सम्मान बेकार है—यह हवा के पीछे भागने जैसा है (वचन 15-16)।

कभी-कभी, कोरिया या अमेरिका में राष्ट्रपति चुनाव के दौरान, मैं सोचता हूँ: "वे राष्ट्रपति बनने के लिए इतने बेताब क्यों होते हैं?" किसी देश को चलाना बहुत मुश्किल काम होगा; फिर वे चुनाव जीतने के लिए इतनी कड़ी मेहनत क्यों करते हैं? आपके हिसाब से राष्ट्रपति बनने की इच्छा के पीछे क्या वजह होती है? क्या यह सत्ता की चाहत है? कुछ देशों में तो नेताओं ने तख्तापलट करके सत्ता हासिल की है। फिर भी, सिर्फ़ सत्ता की चाहत के अलावा, दुनिया का सम्मान पाने की भी कोशिश होती है। इससे मेरे मन में यह सवाल उठता है: "असल में दुनिया का सम्मान क्या है?" एक बार मैंने एक फ़िल्म से जाना कि कुछ पेशेवर सैनिक होते हैं—जैसे मरीन—जो सम्मान

के लिए जीते और मरते हैं। लेकिन परमेश्वर की नज़र में या हमेशा के नज़रिए से ऐसे दुनिया के सम्मान का क्या फ़ायदा है? हमेशा के नज़रिए से देखने पर इसकी असल में क्या कीमत है?

आज के हिस्से (सभोपदेशक 4:15-16) में बताए गए राजा के बारे में—भले ही उसे दुनिया का बहुत सम्मान मिला हो—मुझे नहीं लगता कि उसने उतना सम्मान महसूस किया होगा जितना खुद सुलैमान ने किया था। सच तो यह है कि पूरे पुराने और नए नियम में, शायद ही कोई ऐसा राजा रहा हो जिसे सुलैमान जितना दुनिया का सम्मान मिला हो। फिर भी, वह कहता है कि ऐसा सम्मान बेकार है—कि "सूरज के नीचे" इसके पीछे भागना हवा के पीछे भागने जैसा है। वह कहता है कि दुनिया के सम्मान का कोई असली फ़ायदा नहीं है। जो लोग मन के दीन हैं, वे इस सच्चाई को समझते हैं। परमेश्वर से मिली बुद्धि के कारण, वे जानते हैं कि दुनिया के सम्मान के पीछे भागना बेकार है। इसलिए, दुनिया का सम्मान पाने के बजाय, वे परमेश्वर की महिमा चाहते हैं। जो लोग मन के दीन हैं, वे बेकार के दुनिया के सम्मान के लिए नहीं, बल्कि परमेश्वर की सच्ची और फ़ायदेमंद महिमा के लिए जीते हैं, जिसकी कीमत हमेशा बनी रहती है। वे प्रभु के वचन के ज़रिए दी गई सलाह को मानते हैं, उनके सामने विनम्र रहते हैं और उनके वचन का पालन करते हुए ऐसा जीवन जीते हैं जो परमेश्वर को भाता है।

मेरी प्रार्थना है कि हम सब परमेश्वर से 'आत्मा में दीन' होने की समझ पाएँ और ऐसे लोग बनें जो न केवल इस धरती पर रहते हुए प्रभु की सलाह को ध्यान से सुनें, बल्कि अपने आस-पास के लोगों की सलाह पर भी ध्यान दें। साथ ही, मेरी प्रार्थना है कि हम विनम्र जीवन जीएँ—प्रभु के सामने खुद को छोटा समझें और भरोसा रखें कि वे सही समय पर हमें ऊँचा उठाएँगे। हम ऐसे समझदार लोग बनें जो सचमुच 'आत्मा में दीन' हों और इस दुनिया के बेकार सम्मान के पीछे भागने के बजाय परमेश्वर की महिमा के लिए जीएँ।

“लेकिन तुम्हें परमेश्वर का भय मानना चाहिए।”

[सभोपदेशक 5:1-7]

क्या आप और मैं सचमुच परमेश्वर का भय मानते हैं? पिछले हफ़्ते बुधवार की प्रार्थना सभा के बाद, सेशन और नियुक्त डीकनों के साथ बाइबल अध्ययन के दौरान, हमने यह सवाल पूछा: “प्रभु के सेवक, भविष्यद्वक्ता योना और गैर-यहूदी (अविश्वासी) नाविकों में से, कौन सचमुच परमेश्वर का ज़्यादा भय मानता था?” योना अध्याय 1 में, “भय” शब्द चार बार आता है: “नाविक डर गए” (1:5), “वह एक ऐसा व्यक्ति था जो प्रभु का भय मानता था” (1:9), “वह बहुत डर गया था” (1:10), और “वे लोग प्रभु का बहुत भय मानने लगे” (1:16)। यहाँ, एक उदाहरण भविष्यद्वक्ता योना के बारे में है जो कहता है कि वह परमेश्वर का भय मानने वाला व्यक्ति था, जबकि बाकी तीन उदाहरण गैर-यहूदी नाविकों के डर का वर्णन करते हैं। हालाँकि योना ने गैर-यहूदी नाविकों के सामने माना कि वह परमेश्वर का भय मानने वाला व्यक्ति था, लेकिन उसके काम कुछ संदेह पैदा करते हैं कि क्या वह सचमुच परमेश्वर का भय मानता था। इसके विपरीत, गैर-यहूदी नाविक तब डर गए थे जब एक बड़े तूफ़ान के कारण जहाज़ लगभग डूबने वाला था, लेकिन योना की बात सुनकर वे और भी ज़्यादा डर गए। वे सृष्टिकर्ता परमेश्वर से डरने लगे, उस परमेश्वर से जिसने समुद्र और ज़मीन बनाई थी, और अंत में, योना को समुद्र में फेंकने और समुद्र को शांत होते देखने के बाद, वे परमेश्वर का बहुत भय मानने लगे (1:16)। सचमुच, परमेश्वर का भय कौन ज़्यादा मानता था? क्या वह योना था, प्रभु का सेवक? या वे गैर-यहूदी नाविक थे?

आज के पाठ में सभोपदेशक 5:7 के बाद वाले हिस्से को देखें, तो उपदेशक राजा सुलैमान कहते हैं, “लेकिन तुम्हें परमेश्वर का भय मानना चाहिए।” आज, मैं सभोपदेशक 5:1-7 के पाठ के आधार पर तीन बातें बताना चाहता हूँ कि जो लोग परमेश्वर का भय मानते हैं, वे कैसा व्यवहार करते हैं। मेरी प्रार्थना है कि आप और मैं दोनों इन बातों को अपनाएँ और ऐसा जीवन जिएँ जिसमें सचमुच परमेश्वर का भय हो।

पहली बात, जो लोग परमेश्वर का भय मानते हैं, वे उसके वचन पर ध्यान देते हैं।

सभोपदेशक 5:1 को देखें: “जब तुम परमेश्वर के घर जाओ तो अपने कदमों का ध्यान रखो। मूर्खों की तरह बलिदान चढ़ाने के बजाय सुनने के लिए पास जाओ, क्योंकि वे नहीं जानते कि वे गलत काम कर रहे हैं।” जिस हिस्से पर हमने पहले मनन किया था—सभोपदेशक 4:13-16—उसमें राजा सुलैमान ने एक गरीब लेकिन बुद्धिमान युवक की तुलना एक बूढ़े, मूर्ख राजा से की है, जो सलाह या सीख मानने से इनकार करता था (पद 13)। हमने वहाँ सीखा कि बुद्धिमान वे हैं जो सलाह लेना जानते हैं। अब, सभोपदेशक 5:1 में, वह फिर से “वचन सुनने” के बारे में बात करते हैं। वह हमें बताते हैं कि बुद्धिमान व्यक्ति परमेश्वर के घर में जाता है और परमेश्वर के वचन को ध्यान से सुनता है। जब मैंने इस हिस्से पर मनन किया, तो मुझे एहसास हुआ कि केवल बुद्धिमान ही परमेश्वर का वचन नहीं सुनते; जो लोग परमेश्वर का भय मानते हैं, वे भी उस पर ध्यान देते हैं। मेरे विचार का सार यह है: बुद्धिमान व्यक्ति (4:13) वह है जो परमेश्वर का भय मानता है (5:7), और जो परमेश्वर का भय मानता है, वही बुद्धिमान व्यक्ति है। इस प्रकार बुद्धि और परमेश्वर का भय आपस में जुड़े हुए हैं। इसका आधार हमें नीतिवचन 1:7 में मिलता है: “यहोवा का भय ज्ञान का आरंभ है, परन्तु मूर्ख बुद्धि और शिक्षा को तुच्छ जानते हैं।” तो, परमेश्वर का भय मानने वाला बुद्धिमान व्यक्ति क्या करता है? परमेश्वर के घर में प्रवेश करते समय, वह न केवल अपने कदमों को संभालता है बल्कि परमेश्वर के करीब भी आता है, और उनकी आवाज़ सुनने के लिए उत्सुक रहता है (सभोपदेशक 5:1)। इसके विपरीत, मूर्ख लोग बुद्धि और शिक्षा को तुच्छ समझते हैं (नीतिवचन 1:7) और परमेश्वर की आवाज़ सुनने के बजाय बलिदान चढ़ाते हैं। इससे पुराने नियम का कौन सा पात्र याद आता है? क्या यह आपको राजा शाऊल की याद नहीं दिलाता? परमेश्वर ने अमालेकियों को पूरी तरह नष्ट करने का आदेश दिया था, फिर भी शाऊल ने आज्ञा नहीं मानी और उन्हें पूरी तरह नष्ट करने में विफल रहा। उसने सबसे अच्छे पशुओं को बचा लिया; जब बाद में भविष्यद्वक्ता शमूएल ने उससे सवाल किया, तो उसने बहाने बनाए और दावा किया कि उसने अच्छे जानवरों को परमेश्वर को बलिदान चढ़ाने के लिए रखा था। शमूएल का जवाब क्या था? बस यही: “आज्ञा मानना बलिदान से बेहतर है” (1 शमूएल 15:22)। परमेश्वर आज्ञाकारिता चाहते हैं, न कि आज्ञा न मानते हुए बलिदान चढ़ाना।

हमें परमेश्वर का भय मानना चाहिए। बुद्धिमान लोग, जो परमेश्वर का भय मानते हैं, वे केवल उनके वचन को सुनते ही नहीं बल्कि उसका पालन भी करते हैं। हमें परमेश्वर के वचन को सुनना और मानना चाहिए; हमें उस

पर ध्यान देना चाहिए। पिछले मंगलवार को, सुबह की प्रार्थना सभा के दौरान, जब हमने लैव्यव्यवस्था 26 को पढ़ा और उस पर मनन किया, तो हमने देखा कि परमेश्वर हमें आज्ञाएँ देते हैं: यदि हम उन्हें सुनते हैं और उनका पालन करते हैं, तो आशीष मिलती है, लेकिन यदि हम उन पर ध्यान नहीं देते, तो हमें अनुशासन का सामना करना पड़ता है। एक दिलचस्प बात यह है कि यदि इस्राएल के लोग परमेश्वर की सभी आज्ञाओं को सुनने और मानने में विफल रहते (पद 14), तो वे उन्हें अनुशासित करते; फिर भी, यदि परमेश्वर की मार पड़ने के बाद भी वे आज्ञा न मानते, तो वे बार-बार—वास्तव में चार बार—घोषणा करते कि वे उन्हें "सात गुना अधिक" दंड देंगे (पद 18, 21, 24 और 28)। इसका क्या अर्थ है? यह दिखाता है कि इस्राएल के लोग कितनी लगातार परमेश्वर के वचन पर ध्यान देने में विफल रहे। जब हम आज्ञा नहीं मानते तो परमेश्वर हमें सुधारते हैं, और यदि हम तब भी सुनने से इनकार करते हैं और आज्ञा न मानने पर अड़े रहते हैं, तो वे हमें सात गुना अधिक कठोरता से दंड देते हैं। वे ऐसा क्यों करते हैं? वे ऐसा इसलिए करते हैं क्योंकि वे चाहते हैं कि आप और मैं उनके वचन को सुनें और उसका पालन करें। यह परमेश्वर वही परमेश्वर है जिसकी सेवा आप और मैं करते हैं। हमारे परमेश्वर हमारी आज्ञाकारिता चाहते हैं; आज्ञा मानना बलिदान से बेहतर है। इसलिए, हमें परमेश्वर के वचन को सुनने और उसका पालन करने के बाद ही उनकी आराधना करने के लिए उनके घर में प्रवेश करना चाहिए। हमें कभी भी रविवार को आराधना के लिए प्रभु के घर नहीं आना चाहिए यदि हम अपने दैनिक जीवन में उनके वचन पर ध्यान नहीं देते हैं। ऐसा आचरण परमेश्वर की दृष्टि में मूर्खतापूर्ण है—यह उस व्यक्ति का व्यवहार है जो उनसे नहीं डरता। आपको और मुझे ऐसे लोग बनना चाहिए जो परमेश्वर के वचन को ध्यान से सुनकर और उसका पालन करके परमेश्वर का भय मानते हैं।

दूसरी बात, जो लोग परमेश्वर का भय मानते हैं, वे सही तरीके से उनसे प्रार्थना करते हैं। आज के वचन, उपदेशक 5:2 को देखें: "अपने मुँह से जल्दबाजी न करें, और परमेश्वर के सामने जल्दबाजी में कुछ भी न कहें। क्योंकि परमेश्वर स्वर्ग में हैं, और आप पृथ्वी पर हैं; इसलिए आपके शब्द कम हों।" राजा सुलैमान कहते हैं कि जो व्यक्ति परमेश्वर का भय मानता है, वह न केवल परमेश्वर के वचन पर ध्यान देने के लिए उनके घर में प्रवेश करता है, बल्कि उनकी उपस्थिति में जल्दबाजी या बिना सोचे-समझे बोलने से भी बचता है। जो लोग परमेश्वर का भय मानते हैं, वे प्रार्थना करने के लिए उनके घर में प्रवेश करते समय लापरवाही से नहीं बोलते; दूसरे शब्दों में, वे प्रार्थना में कम शब्दों का उपयोग करते हैं (पार्क युन-सन)। जो लोग परमेश्वर का आदर करते हैं, वे उससे प्रार्थना करते समय कम शब्द क्यों बोलते हैं? इसका कारण यह है कि परमेश्वर स्वर्ग में हैं, जबकि हम पृथ्वी पर हैं (पद

2)। इस बात पर मनन करने से मुझे यशायाह 55:8-9 की याद आई: “क्योंकि मेरे विचार तुम्हारे विचार नहीं हैं, और न ही तुम्हारे मार्ग मेरे मार्ग हैं, यहोवा कहता है। क्योंकि जैसे आकाश पृथ्वी से ऊँचा है, वैसे ही मेरे मार्ग तुम्हारे मार्गों से और मेरे विचार तुम्हारे विचारों से ऊँचे हैं।” हम, जो पृथ्वी पर रहते हैं, परमेश्वर के उन विचारों की पूरी गहराई, विस्तार और ऊँचाई को कैसे समझ सकते हैं जो स्वर्ग में हैं? फिर भी, मुझे डर है कि हम अक्सर परमेश्वर के महान विचारों को ठीक से समझे बिना ही प्रार्थना में बहुत सारे शब्द बोल देते हैं। हमें परमेश्वर के वचन के माध्यम से उसके ऊँचे विचारों को समझते हुए प्रार्थना करनी चाहिए। साथ ही, जैसे-जैसे हमारा विश्वास बढ़ता है, हमें और अधिक विश्वास के साथ परमेश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए। प्रार्थना करते समय हमें परमेश्वर के वचन पर विश्वास के साथ दृढ़ रहना चाहिए और उस पर पूरी तरह भरोसा करना चाहिए। प्रार्थना करते समय कम शब्द बोलने का एक और कारण—परमेश्वर के प्रति आदर के कारण—यह है कि “बहुत सारे शब्द” बोलने से “मूर्ख की आवाज़” निकलती है (पद 3)। मूर्ख की आवाज़ कैसी होती है?

सभोपदेशक 10:12-14 को देखिए: “बुद्धिमान के मुँह की बातें अनुग्रहपूर्ण होती हैं, लेकिन मूर्ख अपने ही होंठों से बर्बाद हो जाते हैं। शुरुआत में उनकी बातें मूर्खतापूर्ण होती हैं; अंत में, वे दुष्टतापूर्ण पागलपन बन जाती हैं—और मूर्ख लोग बहुत ज़्यादा बातें करते हैं। कोई नहीं जानता कि आगे क्या होने वाला है—कौन किसी दूसरे को बता सकता है कि उनके बाद क्या होगा?” मूर्ख के मुँह से निकलने वाली बातें मूर्खता से शुरू होती हैं और दुष्टतापूर्ण पागलपन में खत्म होती हैं; इसके अलावा, मूर्ख व्यक्ति बहुत ज़्यादा बोलता है। फिर भी, अंत में, मूर्खतापूर्ण बातों का वह ढेर सिर्फ़ व्यर्थता है। यह सोचना कितना मूर्खतापूर्ण है कि परमेश्वर ऐसी खोखली बातों से भरी प्रार्थनाओं का जवाब देंगे! जो लोग परमेश्वर का भय मानते हैं, उनमें बुद्धि होती है; वे परमेश्वर के वचन को सुनते हैं और उनकी इच्छा के अनुसार अपनी विनती करते हैं। नतीजतन, वे बिना मतलब की बातों को दोहराते नहीं हैं। दूसरे शब्दों में, जो लोग परमेश्वर का भय मानते हैं, वे उनके सामने बेतुकी बातें करके या बिना मतलब के वाक्यांशों को बार-बार दोहराकर प्रार्थना नहीं करते। इसके विपरीत, मूर्ख व्यक्ति—जो परमेश्वर की आवाज़ नहीं सुनता और इसलिए उनकी इच्छा जाने बिना प्रार्थना करता है—भ्रम और जल्दबाजी में बिना सोचे-समझे बोलता है और एक ही प्रार्थना को बार-बार दोहराता है। वे एक ही प्रार्थना क्यों करते रहते हैं? परमेश्वर से प्रार्थना करते समय वे इतना ज़्यादा क्यों बोलते हैं? हमें इसका जवाब मत्ती 6:7 में मिल सकता है: “और जब तुम प्रार्थना करो, तो अन्यजातियों की तरह बक-बक न करो, क्योंकि वे सोचते हैं कि बहुत ज़्यादा बोलने से उनकी

सुनी जाएगी।" अन्यजातियों का मानना था कि परमेश्वर तक अपनी प्रार्थना पहुँचाने के लिए उन्हें बहुत ज़्यादा बोलना पड़ता था। एक तरह से, यह इंसानी काबिलियत पर भरोसा करने जैसा है—यह विश्वास कि इंसान अपनी कोशिशों से, जैसे लंबी प्रार्थनाएँ करके या बहुत ज़्यादा बोलकर, प्रार्थना का जवाब पा सकता है। हमें यीशु के क्रूस की काबिलियत पर भरोसा करके परमेश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए। जब हम प्रार्थना करते हैं, तो हमें सही तरीके से करनी चाहिए। हमें परमेश्वर से सही तरीके से प्रार्थना कैसे करनी चाहिए? सही ढंग से प्रार्थना करने के लिए, हमें तैयार दिल के साथ परमेश्वर के पास जाना चाहिए। ऐसा इसलिए है क्योंकि हमारे दिल में जो होता है, वही हमारे मुँह से निकलता है (मत्ती 12:34-37)। *द पिलग्रिम्स प्रोग्रेस* के लेखक जॉन बनियन ने कहा है: "प्रार्थना में, बिना शब्दों के दिल का होना, बिना दिल के शब्दों के होने से बेहतर है" (वियर्सबे)। हमें सिर्फ शब्दों से नहीं, बल्कि सच्चे दिल से परमेश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए; यही वह प्रार्थना है जो परमेश्वर की नज़र में सही है। जब हम ऐसा करते हैं, तो प्रार्थना करते समय हम बिना सोचे-समझे या लापरवाही से नहीं बोलेंगे (सभोपदेशक 5:2)। दूसरे शब्दों में, हम बेकार की बातों को दोहराने से बचेंगे और कम शब्द बोलेंगे। बेशक, आज के हिस्से की दूसरी आयत का यह मतलब नहीं है कि हमें लंबी प्रार्थना नहीं करनी चाहिए। कम शब्द बोलने की सलाह का मतलब यह नहीं है कि हमारी प्रार्थनाएँ छोटी होनी चाहिए। डॉ. पार्क युन-सन ने कहा: "यह हिस्सा इस बात का विरोध नहीं करता कि सच्ची प्रार्थना लंबी और विस्तृत हो सकती है। सच्ची प्रार्थना लंबी और विस्तृत हो सकती है। ऐसा इसलिए है क्योंकि विश्वास में स्वर्ग में रहने वाले परमेश्वर पर भरोसा करना शामिल है, जो इंसान को अपनी आत्मा को उंडेलने और विस्तार से प्रार्थना करने के लिए प्रेरित करता है" (पार्क युन-सन)। हमें परमेश्वर से ऐसी प्रार्थनाएँ करनी चाहिए—ऐसी प्रार्थनाएँ जिनमें हम अपनी आत्मा को उंडेल दें और विस्तार से बात करें, और उन पर पूरा भरोसा रखें।

सभोपदेशक 4:13-16 के पहले पढ़े गए हिस्से के साथ सभोपदेशक 5:1-7 पर विचार करते हुए, मुझे एहसास हुआ कि जब हम परमेश्वर से प्रार्थना करते हैं, तो हमें सबसे पहले उनके वचन को सुनना चाहिए और उसका पालन करना चाहिए। दूसरे शब्दों में, प्रार्थना और वचन का पालन साथ-साथ चलने चाहिए। परमेश्वर के वचन का पालन करना और परमेश्वर से प्रार्थना करना कभी भी अलग नहीं किया जाना चाहिए; वे एक ही सिक्के के दो पहलुओं की तरह हैं। इसलिए, जब हम परमेश्वर से प्रार्थना करते हैं, तो सिर्फ लंबी-चौड़ी बातें करने के बजाय, हमें सबसे पहले उनके वचन का पालन करना चाहिए। दूसरे शब्दों में, जो लोग परमेश्वर का भय मानते हैं, वे उनके वचन का पालन करते हुए सच्ची प्रार्थना में अपनी आत्मा को उंडेल देते हैं।

तीसरी बात, जो लोग परमेश्वर का भय मानते हैं, वे उनसे किए गए वादों को पूरा करते हैं।

आज के वचन, सभोपदेशक 5:4 को देखें: "जब तुम परमेश्वर से कोई वादा करो, तो उसे पूरा करने में देर न करो; उन्हें मूर्खों से कोई खुशी नहीं मिलती। जो वादा तुमने किया है, उसे पूरा करो।" अगर हम सच में परमेश्वर से डरते हैं, तो हम उनकी बात मानकर और सच्चे दिल से प्रार्थना करके अपने विश्वास के अनुसार जिएँगे। विश्वास भरे ऐसे जीवन से हम अपनी सच्चाई दिखाते हैं। हम परमेश्वर के सामने अपना सच्चा दिल कैसे दिखाते हैं? हम ईमानदारी भरे जीवन से ऐसा दिखाते हैं। और ईमानदारी भरे ऐसे जीवन का मतलब है परमेश्वर से किए गए वादों को पूरा करना। हमें उनसे किए गए वादों को निभाना चाहिए (5:5)। यहाँ "वादा" (vow) क्या है? परमेश्वर से वादा करने का क्या मतलब है? इसका मतलब है उनसे एक पक्का संकल्प करना—एक ऐसा संकल्प जिसे पूरा करने पर आशीष मिलती है, लेकिन तोड़ने पर श्राप मिलता है। पुराने नियम में, परमेश्वर से ऐसा वादा करने वाले पहले व्यक्ति याकूब थे। जब याकूब बेशेबा से हारान की ओर यात्रा कर रहे थे (उत्पत्ति 28:10), तो वे एक जगह रुके, एक पत्थर को तकिए की तरह इस्तेमाल किया और सो गए; सपने में उन्होंने परमेश्वर के स्वर्गदूतों को एक सीढ़ी पर ऊपर-नीचे जाते देखा, जो धरती से स्वर्ग तक जाती थी। परमेश्वर की आवाज़ सुनने (पद 11-15) और नींद से जागने के बाद, उन्होंने उस जगह का नाम बेतेल रखा; वहाँ, याकूब ने परमेश्वर से एक वादा किया: "तब याकूब ने यह वादा किया: 'अगर परमेश्वर मेरे साथ रहें और इस यात्रा में मेरी देखभाल करें और मुझे खाने के लिए भोजन और पहनने के लिए कपड़े दें ताकि मैं सुरक्षित अपने पिता के घर लौट सकूँ, तो प्रभु मेरे परमेश्वर होंगे और यह पत्थर जिसे मैंने खंभे की तरह खड़ा किया है, परमेश्वर का घर होगा, और आप मुझे जो कुछ भी देंगे, उसमें से मैं आपको दसवाँ हिस्सा दूँगा'" (पद 20-22)। बाइबल के अनुसार, परमेश्वर से किए गए वादे या तो उनसे कृपा पाने की उम्मीद (उत्पत्ति 28:20) से या उनकी आशीषों के लिए धन्यवाद (भजन संहिता 116:12-14) के कारण किए जाते थे (यंगब्लड)। इसके अलावा, वादा करना परमेश्वर की रोज़ाना की भक्ति का हिस्सा था (भजन संहिता 61:8) या यह सालाना त्योहारों से जुड़ा था (1 शमूएल 1:21)। ऐसी मन्त्रों अपनी मज़ी से लेनी होती थीं, और एक बार लेने के बाद, उन्हें पूरा करना ज़रूरी होता था (व्यवस्थाविवरण 23:21-23; उपदेशक 5:4-6)। इसलिए, मन्त्र लेने से पहले अच्छी तरह सोच-विचार करना ज़रूरी था (नीतिवचन 20:25) (यंगब्लड)।

जब मैंने मन्त्रों के बारे में इस हिस्से पर मनन किया, तो मैंने परमेश्वर और हमारे बीच के वाचा के रिश्ते पर विचार किया। इससे मैंने यह सीखा कि जिस तरह परमेश्वर हमारे साथ की गई वाचा को ईमानदारी से पूरा करते हैं,

उसी तरह हमें भी उनके साथ की गई मन्त्रों को ईमानदारी से पूरा करना चाहिए। अगर हमने परमेश्वर की कृपा पाते हुए और खुद को समर्पित करने की प्रार्थना करते हुए कोई मन्त्र मानी है, तो हमें उस मन्त्र को पूरा करने में देर नहीं करनी चाहिए (उपदेशक 5:4)। अगर हम परमेश्वर से कोई मन्त्र मानते हैं लेकिन उसे पूरा नहीं करते, या उसे पूरा करने में देर करते हैं, तो हम उनके खिलाफ़ पाप कर रहे होते हैं। इस बात पर गौर करें: अगर हम परमेश्वर से कोई मन्त्र मानते हैं और उसे पूरा नहीं करते, तो क्या हम सच्चाई के परमेश्वर से झूठ नहीं बोल रहे होते? इसके अलावा, अगर हम मन्त्र पूरी नहीं कर पाते और यह कहकर बहाना बनाते हैं कि यह गलती से हुआ, तो बाइबल चेतावनी देती है: "परमेश्वर तेरी बातों से क्यों नाराज़ हो और तेरे हाथों के काम को क्यों नष्ट करे?" (पद 6)। इसलिए, बाइबल कहती है कि "मन्त्र न मानना ही बेहतर है, बजाय इसके कि मन्त्र मानी जाए और पूरी न की जाए" (पद 5)। हमें पवित्र शास्त्र की इन बातों पर ध्यान देना चाहिए: "क्योंकि बहुत से सपनों और बहुत सी बातों में व्यर्थता होती है। लेकिन परमेश्वर का भय मान" (पद 7)।

मैं आपके साथ रेवरेंड ए. डब्ल्यू. टोज़र की एक प्रतिज्ञा वाली प्रार्थना साझा करना चाहता हूँ: "हे प्रभु! जब मैंने आपकी आवाज़ सुनी तो मैं डर गया था। घोर संकट के समय, आपने मुझे एक पवित्र कार्य करने के लिए बुलाया। आप राष्ट्रों, पृथ्वी और स्वर्ग को हिला देंगे ताकि केवल वही चीज़ें बची रहें जो हिल नहीं सकतीं। हे प्रभु, मेरे प्रभु! आपने स्वयं को विनम्र किया और मुझे ऊँचा उठाया, मुझे अपना सेवक बनाया। कोई भी व्यक्ति आपका सेवक होने का गौरव तब तक प्राप्त नहीं कर सकता जब तक कि हारून की तरह उसे परमेश्वर द्वारा न बुलाया जाए। आपने मुझे यह कार्य सौंपा ताकि मैं उन लोगों को सुसमाचार सुना सकूँ जिनके दिल कठोर हो गए हैं और जिनके कान सुनने में सुस्त हैं। चूँकि उन्होंने आपको, अपने स्वामी को अस्वीकार कर दिया, इसलिए वे मुझे भी, आपके सेवक को, अस्वीकार कर देंगे। मेरे परमेश्वर! मैं अपनी कमज़ोरी और अक्षमता पर विलाप करने में समय बर्बाद नहीं करूँगा। ज़िम्मेदारी आपकी है, मेरी नहीं। आपने कहा, 'मैंने तुम्हें जाना, तुम्हें अलग किया और तुम्हें पवित्र किया,' और यह भी कहा, 'जहाँ मैं तुम्हें भेजूँ वहाँ जाओ, और वह सब कहो जो मैं तुम्हें आज्ञा दूँ।' मैं कौन हूँ जो आपसे बहस करूँ? मैं कौन हूँ जो आपकी सर्वोच्च पसंद पर सवाल उठाऊँ? निर्णय आप लेते हैं, मैं नहीं। प्रभु, आप ही निर्णय लें। मेरी इच्छा नहीं, बल्कि आपकी इच्छा पूरी हो। हे भविष्यद्वक्ताओं और प्रेरितों के परमेश्वर! यदि मैं आपको ऊँचा उठाऊँगा, तो आप मुझे ऊँचा उठाएँगे। इसलिए, दयालु परमेश्वर, मुझे यह गंभीर प्रतिज्ञा अपने जीवन भर की सेवा में निभाने और आपकी महिमा करने का सामर्थ्य दें—चाहे अनुकूल हवा के साथ आगे बढ़ूँ या विपरीत हवा के विरुद्ध संघर्ष करूँ।" मुझे यह प्रतिज्ञा तब तक निभाने का सामर्थ्य दें जब तक मुझमें साँस है—चाहे जीवन में हो या मृत्यु में। हे परमेश्वर! अब आपके कार्य करने का समय है। शत्रु आपके चरागाह में घुस

आया है, भेड़ों को फाड़ रहा है और तितर-बितर कर रहा है। फिर भी, ऐसे कई झूठे चरवाहे हैं जो दावा करते हैं कि कोई खतरा नहीं है; वे आपके झुंड के सामने आने वाले खतरों को नज़रअंदाज़ करते हैं। दुख की बात है कि इन भाड़े के लोगों द्वारा धोखा खाई भेड़ें उत्साहपूर्वक उनके पीछे चलती हैं, जबकि भेड़िया उन्हें मारने और नष्ट करने के लिए पास आ रहा होता है। हे परमेश्वर! मैं प्रार्थना करता हूँ, मुझे शत्रु के आने का आभास करने की समझ दें। मुझे जो मैंने देखा है उसे ईमानदारी से घोषित करने का साहस दें। मेरी आवाज़ आपकी आवाज़ का प्रतिबिंब बने; तब, भेड़ों में जो बीमार हैं, वे भी मेरे ज़रिए आपकी आवाज़ सुनेंगे और आपके पीछे चलेंगे। प्रभु यीशु, जब मैं आपके सामने आता हूँ, तो मुझे आध्यात्मिक रूप से तैयार करें। मुझ पर अपना हाथ रखें। मुझे नए नियम के नबी के तेल से अभिषेक करें। मुझे केवल एक धार्मिक लेखक न बनने दें। मुझे अपनी नबी वाली बुलाहट को भूलने की गलती से बचाएँ। मुझे उस श्राप के बीज से बचाएँ जो आज के कई धर्मगुरुओं के चेहरों पर दिखता है—समझौता करने, दूसरों की नकल करने और पेशेवर रूटीन में फँसने की वह श्रापित आदत। चर्च को उसके आकार, उसकी प्रसिद्धि या उसके सालाना चढ़ावे की मात्रा से परखने की मूर्खता से बचने में मेरी मदद करें। मुझे याद रहे कि मैं एक नबी हूँ, कोई शोमैन या धार्मिक प्रशासक नहीं। मैं एक नबी के तौर पर अपनी पहचान कभी न भूलूँ। मैं शोर मचाने वाली भीड़ का गुलाम न बनूँ। मेरी सांसारिक इच्छाओं को ठीक करें; मुझे लोकप्रियता की चाहत से आज़ाद करें... मुझे आज़ाद करें। साथ ही, मुझे भौतिक चीज़ों का गुलाम न बनने दें। मैं ऐसा न बनूँ जो घर पर बेकार बैठकर समय बर्बाद करता हो। हे परमेश्वर! मुझे ऐसा बनाएँ कि मैं आपका भय मानूँ! तब मैं प्रार्थना की जगह ढूँढ़ूँगा और इस दुनिया की बुराई की ताकतों, सत्ताओं और अंधकार के शासकों के खिलाफ़ लड़ूँगा। मुझे ज़्यादा खाने या ज़्यादा सोने से बचाएँ। मुझे यीशु मसीह का अच्छा सिपाही बनने के लिए खुद को अनुशासित करने में मदद करें। मैं इस दुनिया में कड़ी मेहनत करना और बदले में कम पाना चुनता हूँ। मैं आराम की ज़िंदगी नहीं चाहता। मैं ऐसे किसी भी गलत तरीके को ठुकरा दूँगा जो मेरी ज़िंदगी को ज़्यादा आरामदायक बना सकता हो। भले ही दूसरे आसान रास्ता चुनें, मैं मुश्किल रास्ता चुनूँगा और उन्हें बुरा-भला नहीं कहूँगा। ऐसे लोग होंगे जो मेरा विरोध करेंगे, फिर भी मैं शांति से उन्हें जवाब दूँगा। जब प्रभु के भले लोग—जैसा कि वे अक्सर प्रभु के सेवकों के लिए करते हैं—मुझे धन्यवाद के तौर पर तोहफ़े देने की कोशिश करें, तो मुझे संभालना ताकि मैं लड़खड़ा न जाऊँ। मुझे जो कुछ भी दिया जाए, उसका सही इस्तेमाल करने की समझ दें; ताकि उससे न तो मेरी आत्मा को और न ही मेरी आध्यात्मिक शक्ति को कोई नुकसान पहुँचे। अगर आप अपनी गहरी योजना के तहत मुझे अपने चर्च में सम्मान देते हैं, तो मुझे हमेशा दो बातें याद रहें: पहली, कि मैं आपकी छोटी-सी-छोटी कृपा के भी लायक नहीं हूँ; और दूसरी बात यह कि अगर लोग मेरी असलियत जानते, तो वे मुझे इतना सम्मान न देते, या मुझसे ज़्यादा काबिल लोगों को यह सम्मान देते। हे स्वर्ग और पृथ्वी के स्वामी!

मैं अपने बाकी दिन आपके नाम करता हूँ। चाहे आप उन्हें छोटा रखें... ..या मेरी ज़िंदगी लंबी हो। अगर आपकी मर्जी हो, तो मुझे ताकतवर लोगों के सामने खड़ा होने दें; और अगर आपकी मर्जी हो, तो मुझे दीन-दुखियों और गरीबों की सेवा करने दें। यह फैसला मेरा नहीं है; सच तो यह है कि अगर यह फैसला मेरा होता भी, तो भी मैं इसे नहीं चुनता। मैं तो बस आपकी मर्जी पूरी करने वाला एक सेवक हूँ। आपकी मर्जी मेरे लिए रुतबे, दौलत या सम्मान से कहीं ज़्यादा कीमती है; मैं स्वर्ग और पृथ्वी की हर चीज़ से बढ़कर आपकी मर्जी को चुनता हूँ। आपने मुझे चुना है और एक पवित्र और ऊँचे बुलावे का सम्मान दिया है। फिर भी, मुझे याद दिलाते रहें कि मैं बस राख और धूल हूँ, और कभी न भूलूँ कि मैं एक इंसान हूँ जो उन कमियों और भावनाओं के साथ पैदा हुआ है जो इंसानों को परेशान करती हैं। इसलिए, हे मेरे प्रभु और उद्धारकर्ता, मुझे खुद से बचाएँ; दूसरों के लिए आशीष बनने की कोशिश में मैं अपनी ही आत्मा को चोट न पहुँचाऊँ। मुझे पवित्र आत्मा की शक्ति से भर दें, ताकि मैं आपकी ताकत से चल सकूँ और आपकी धार्मिकता का प्रचार कर सकूँ। जब तक मुझमें साँस है, मैं आपके उद्धार करने वाले प्रेम का संदेश फैलाता रहूँगा। और इसलिए, हे प्रेम करने वाले प्रभु, जब मैं बूढ़ा और थका हुआ हो जाऊँ और और काम न कर सकूँ, तो मेरे लिए स्वर्ग में रहने की जगह तैयार करें, और मुझे अपने उन संतों में शामिल करें जो हमेशा के सम्मान में रहते हैं। मैं यीशु के नाम से प्रार्थना करता हूँ। आमीन।

“इससे हैरान न हों”

[सभोपदेशक 5:8-9]

कल, मंगलवार दोपहर को, मैं चर्च के एक डीकन के जीजाजी के अंतिम संस्कार में शामिल हुआ। रोज़ हिल्स मेमोरियल पार्क के अंदर स्काईरोज़ चैपल पहुँचने पर, मैं सबसे पहले उस ताबूत के पास गया जहाँ मृतक लेटा हुआ था और मैंने अपना हाथ उसके हाथ पर रखा। उसका हाथ ठंडा था। जब मैं सेंट विसेंट अस्पताल के इंटेंसिव केयर यूनिट में उससे मिलने गया था और प्रार्थना करने के लिए अपना हाथ उसके हाथ पर रखा था, तब उसका हाथ गर्म था; लेकिन अब, जब वह अपनी आखिरी नींद सो चुका था, तो वह सचमुच ठंडा था। इसके बाद, मैंने शोक संतप्त परिवार का अभिवादन किया और प्रार्थना-सभा की तैयारी के लिए एक निजी कमरे में चला गया; वहाँ रहते हुए, मैंने रोज़ हिल्स के अमेरिकी फ़्यूनरल कोऑर्डिनेटर द्वारा दिया गया एक दस्तावेज़ पढ़ा। मुझे पता चला कि मृतक का जन्मदिन—3 मार्च—वही था जो मेरे पहले बच्चे, जू-यंग का था, जिसकी मेरे हाथों में ही मृत्यु हो गई थी। नतीजतन, अंतिम संस्कार के दौरान, परमेश्वर का संदेश देते हुए मैंने जू-यंग की कहानी सुनाई। ऐसा करते हुए, मैंने शोक संतप्त परिवार के सामने “परमेश्वर के प्रेम” की घोषणा की। हालाँकि मैं मृतक को तीन सप्ताह से भी कम समय से जानता था, लेकिन जब मैंने परमेश्वर की आराधना की, तो पवित्र आत्मा ने मेरे दिल को उसके परिवार और भाई-बहनों के प्रति प्रेरित किया, जिससे मुझे परमेश्वर के वचन की सच्चाई से घोषणा करने की प्रेरणा मिली। उस शाम, मैं अपनी प्यारी बेटियों, येरी और ये-उन के कमरे में गया और येरी को—जो अभी सोई नहीं थी—अंतिम संस्कार की घटनाओं के बारे में बताया। मैंने समझाया कि मृतक की हाई स्कूल की उम्र की दो बेटियाँ थीं जो अपने प्यारे पिता को खोने पर फूट-फूट कर रो रही थीं, और मैंने उसे बताया कि मैंने उन दोनों बहनों के लिए परमेश्वर से प्रार्थना की थी। तब येरी ने पूछा, “तो, जब मैं और ये-उन हाई स्कूल की छात्राएँ बन जाएँगी, तो क्या हम भी वैसी ही होंगी?” ऐसा लगता है कि येरी ने कल्पना की थी कि जब वह और

उसकी छोटी बहन, ये-उन, हाई स्कूल की उम्र तक पहुँचेंगी, तो मेरी मृत्यु हो जाएगी और उन्हें मेरा अंतिम संस्कार करना होगा। इसलिए, मैंने उससे कहा, "भले ही डैडी की मृत्यु हो जाए, अगर तुम यीशु पर विश्वास करती हो, तो तुम्हें पुनरुत्थान की आशा होगी, और हम स्वर्ग में फिर से मिलेंगे।" फिर, येरी को उबासी लेते देख मैंने मज़ाक में कहा, "तुम बिल्कुल अपनी माँ जैसी हो; जब भी डैडी किसी गंभीर बात पर चर्चा करते हैं, तो तुम्हें नींद आने लगती है, हाहा।" वह भी इस बात पर हँस पड़ी।

येरी से बात करने के बाद, मैंने सोचा कि क्या मैंने बहुत छोटे बच्चों के सामने मौत का विषय छेड़ दिया था। फिर भी, दूसरी ओर, मैं अपने प्यारे बच्चों को यह सच्चाई सिखाना चाहता था कि एक दिन उन्हें हमसे अलग होना होगा, और साथ ही—सबसे बढ़कर—यीशु में विश्वास के ज़रिए उनमें पुनरुत्थान और स्वर्ग की उम्मीद जगाना चाहता था। इसलिए, हमारे परिवार में मौत के बारे में बातचीत होना कोई असामान्य बात नहीं है। हालाँकि, कई बार मैं सचमुच हैरान रह जाता हूँ। जब भी मैं बच्चों के साथ विश्वास और मौत के बारे में चर्चा करता हूँ, तो हमारी सबसे छोटी बेटी, यीउन, अक्सर ऐसी बातें कहती है जो मुझे चौंका देती हैं। उदाहरण के लिए, आज बच्चों को चर्च ले जाते समय, मैंने उन्हें पास्टर गोमेज़ से मिलने के लिए अस्पताल जाने के बारे में बताया, जो हमारे चर्च की हिस्पैनिक मिनिस्ट्री (हिस्पैनिक समुदाय के लिए सेवा कार्य) का नेतृत्व करते हैं। यीउन ने कहा, "भगवान उन्हें बचा लेंगे क्योंकि वह भगवान से प्यार करते हैं, वह एक प्रचारक हैं..." मैं हैरान हूँ क्योंकि वह ऐसी बातें कहती है जिनके बारे में मैंने सोचा भी नहीं था; जब मैं उसकी बातों पर विचार करता हूँ, तो मुझे महसूस होता है कि उसकी सोच तेज़ी से आध्यात्मिक होती जा रही है। मैं अक्सर यह देखकर चकित रह जाता हूँ कि वह हर चीज़ को भगवान को केंद्र में रखकर कैसे देखती और उसके बारे में बात करती है।

आज के वचन, उपदेशक 5:8 में, राजा सुलैमान हमसे कहते हैं, "इस बात पर हैरान मत हो।" दूसरे शब्दों में, वह कह रहे हैं कि आश्चर्यचकित न हों। वह हमें किस बात पर हैरान न होने के लिए कह रहे हैं? वह बात है "गरीबों पर अत्याचार और न्याय का गलत इस्तेमाल।" दूसरे शब्दों में कहें तो, राजा सुलैमान कह रहे हैं कि हमें तब भी हैरान नहीं होना चाहिए जब हम गरीब किसानों पर अत्याचार होते और उन्हें उनके अधिकारों से वंचित होते देखते हैं। उपदेशक 5:8 का पहला भाग देखें: "यदि तुम किसी प्रांत में गरीबों पर अत्याचार और न्याय का गलत इस्तेमाल होते देखो, तो इस बात पर हैरान मत हो।" राजा सुलैमान ने इस दुनिया में जो देखा, वह गरीबों पर अत्याचार था। उन्होंने किन्हें उन पर अत्याचार करते देखा, और कैसे? उन्होंने "उच्च अधिकारियों"—ज़ालिम

प्रशासकों—को न्याय को गलत तरीके से मोड़कर गरीबों पर अत्याचार करते देखा। फिर भी, दिलचस्प बात यह है कि हमसे कहा गया है कि ऐसी चीज़ें देखने पर हम हैरान न हों। हमें ऐसे बुरे कामों पर हैरानी क्यों नहीं होनी चाहिए? इसकी क्या वजह है? सबसे पहले, हमें यह साफ़ करना होगा कि राजा सुलैमान किसी भी तरह से उन ज़ालिम अधिकारियों के गैर-कानूनी कामों को सही नहीं ठहरा रहे हैं जो गरीबों पर जुल्म करते हैं (वियर्सबे)। बल्कि, राजा सुलैमान ने जो यह कहा कि "इस बात पर हैरान न हों," उसकी वजह यह है कि उन्होंने पहले ही वह सारा जुल्म देख लिया था जो "सूरज के नीचे" (यानी इस दुनिया में) होता है (4:1)। दूसरे शब्दों में, उन्होंने अक्सर ताकतवर लोगों को कमज़ोर और बेबस लोगों पर जुल्म करते देखा था, इसलिए वे कह रहे हैं कि ऐसी घटनाएँ हैरान करने वाली नहीं हैं। और साफ़ तौर पर कहें तो, राजा सुलैमान ने न्याय की जगह पर और जहाँ न्याय होना चाहिए था, वहाँ भी बुराई देखी थी; इसलिए उन्हें इस बात से कोई हैरानी नहीं हुई कि ताकतवर और बुरे लोग न्याय को कुचल देंगे और कमज़ोर व गरीब लोगों पर जुल्म करेंगे (3:16)।

इस दुनिया में अमीर और ताकतवर लोगों द्वारा आम और बेबस लोगों के साथ बुरा बर्ताव करने और उनके अधिकार छीनने की घटनाएँ देखना या उनके बारे में सुनना कोई हैरानी की बात नहीं है; ऐसी घटनाएँ बहुत आम हैं। दुनिया की सबसे बड़ी मानवाधिकार संस्था, एमनेस्टी इंटरनेशनल की सातवीं महासचिव, आइरीन खान की एक किताब है जिसका नाम है *द अनहर्ड टुथ: पॉवर्टी एंड ह्यूमन राइट्स* (अनसुनी सच्चाई: गरीबी और मानवाधिकार)। यह किताब गरीबी से जुड़े मानवाधिकार मुद्दों के विश्लेषण पर केंद्रित है। इस किताब के ज़रिए, खान ने यह बताने की कोशिश की कि गरीबी की असली वजह सिर्फ़ आमदनी की कमी नहीं है, बल्कि वह भेदभाव है जिसका लोगों को सामना करना पड़ता है। जब उन्होंने कोरिया का दौरा किया और 'एव्हा गर्ल्स हाई स्कूल सेंटेनियल मेमोरियल हॉल' में "मानवाधिकार: अभी सही समय है" (Human Rights: The Time Is Now) नाम से एक खास मीटिंग की—जिसमें एमनेस्टी इंटरनेशनल कोरिया के लगभग 400 सदस्य शामिल हुए—तो खबर है कि उन्होंने "हॉट इंटरव्यू" सेशन (जिसमें सदस्यों के साथ सवाल-जवाब हुए) और *द हंक्वोरेह* की प्लानिंग कमेटी के सदस्य होंग से-हवा के साथ खास बातचीत के दौरान ये बातें कहीं: "ये लोग अस्थिरता में रहते हैं, हाशिए पर हैं और उनकी आवाज़ नहीं सुनी जाती। खासकर, उन्हें शिक्षा, स्वास्थ्य और आवास जैसे बुनियादी अधिकारों से वंचित रखा जाता है। यह कोई इत्तेफ़ाक नहीं है कि दुनिया के 70% गरीब लोग महिलाएं हैं। इसके अलावा, गरीब आबादी में जातीय अल्पसंख्यकों, प्रवासियों और मूल निवासियों के कई सदस्य शामिल हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि लोग गरीब इसलिए हैं क्योंकि उन्हें भेदभाव का सामना करना पड़ता है, और उन्हें भेदभाव

का सामना इसलिए करना पड़ता है क्योंकि वे गरीब हैं" (इंटरनेट)। एक और मुद्दा जिसके बारे में हमें पता है— काफी हद तक मीडिया कवरेज के ज़रिए—वह है "बाल गुलामी"। खबर है कि बच्चों को अक्सर दुर्व्यवहार और जबरन मज़दूरी का शिकार बनाया जाता है और उनके अधिकारों से वंचित रखा जाता है, खासकर गरीब देशों में। इंटरनेशनल लेबर ऑर्गनाइज़ेशन (ILO) की 2005 की एक रिपोर्ट में ऐसे बच्चों की संख्या 12.3 मिलियन (1.23 करोड़) बताई गई थी। कहा जाता है कि इंटरनेशनल मानव तस्करी—जो गुलामी के व्यापार का एक आधुनिक रूप है—में हर साल 800,000 से 900,000 लोग शामिल होते हैं, और इसका बाज़ार मूल्य \$10 बिलियन से \$32 बिलियन के बीच है। आधुनिक गुलामी एक वैश्विक समस्या है: मध्य पूर्व में घरेलू गुलामी देखी जाती है; दक्षिण एशिया में कर्ज-बंधुआ गुलामी है; युगांडा और श्रीलंका में बाल-सैनिक गुलामी है; और विकसित देशों में यौन गुलामी की दरें अधिक हैं। गुलामों के व्यापारी हिंसा, अपहरण, धोखाधड़ी, डराने-धमकाने और नशीली दवाएं देने जैसे तरीकों से गुलाम बनाते हैं। मानव तस्करी करने वाले ऐसे गिरोह हैं जो अच्छी नौकरी या मुफ्त यात्रा का वादा करके गुलामों की तलाश करते हैं, और ऐसे गरीब माता-पिता भी हैं जो अपने बच्चों को आधुनिक गुलाम व्यापारियों को बेच देते हैं। आधुनिक "गुलाम उद्योग" बेहतर परिवहन, हल्की सज़ा, ढीले बॉर्डर कंट्रोल और उच्च-स्तरीय सरकारी अधिकारियों और इंटरनेशनल गुलाम-व्यापार नेटवर्क के बीच मिलीभगत जैसे कारणों से फल-फूल रहा है; ग्लोबलाइज़ेशन इस उद्योग को बढ़ावा दे रहा है। इसलिए, राजा सुलैमान हमें सलाह देते हैं कि जब हम ज़ालिम अधिकारियों द्वारा गरीबों के साथ बुरा बर्ताव होते और उन्हें उनके अधिकारों से वंचित होते देखें, तो हैरान न हों।

इस दुनिया में एक ऐसी बात है जो हमें हैरान कर देनी चाहिए: ज़ालिम अधिकारी जो गरीबों के साथ बुरा बर्ताव करते हैं, उन्हें इस बात का पता ही नहीं होता कि उनसे ऊपर भी अधिकारी हैं जो उनकी बुराई के लिए उन्हें सज़ा देंगे। उपदेशक 5:8 का आखिरी हिस्सा देखिए: "...क्योंकि ऊँचे अधिकारी पर एक और ऊँचा अधिकारी नज़र रखता है, और उनसे भी ऊपर और भी ऊँचे अधिकारी होते हैं।" राजा सुलैमान को यह देखकर हैरानी नहीं हुई कि इस दुनिया में ज़ालिम अधिकारी गरीबों के हक छीन रहे हैं और उनके साथ बुरा बर्ताव कर रहे हैं, लेकिन उन्हें यह बात सचमुच हैरान करने वाली लगी कि ये अधिकारी अपने से ऊपर मौजूद लोगों के बारे में जानते तक नहीं थे। बुद्धिमान होने के नाते, सुलैमान उस प्रभु—राजाओं के राजा—के बारे में जानते थे जो उनसे भी ऊपर थे; फिर भी, इस दुनिया के मूर्ख राजा और अधिकारी, जिनमें ऐसी बुद्धि की कमी थी, प्रभु की सर्वोच्चता

को नहीं पहचान पाए। नतीजतन, उन्होंने कमज़ोर और बेबस गरीबों के साथ बुरा बर्ताव करने के लिए अपनी सत्ता का गलत इस्तेमाल किया। आखिरकार, ये मूर्ख शासक गरीबों के साथ बुरा बर्ताव इसलिए करते हैं क्योंकि उन्हें इस बात का एहसास नहीं होता कि प्रभु उनसे ऊपर हैं। ऐसा बुरा बर्ताव करते समय न तो उन्हें न्याय का डर होता है, और न ही उन्हें इस बात का पता होता है कि ऐसा कोई न्याय भी होता है। राजा सुलैमान को यह अज्ञानता हैरान करने वाली लगी। उन्हें खास तौर पर इस बात पर हैरानी होती थी कि शासक और अधिकारी किसानों के साथ बुरा बर्ताव क्यों करते हैं—वही लोग जिनकी मेहनत से ज़मीन की उपज मिलती है जिससे उनकी अपनी आजीविका चलती है (पद 9) (पार्क युन-सन)। क्या यह अजीब नहीं है? राष्ट्रपति, राजनेता और सरकारी अधिकारी सभी किसानों और आम नागरिकों की कड़ी मेहनत की वजह से अपनी आजीविका चलाते हैं; तो क्या यह हैरान करने वाली बात नहीं है कि ज़ालिम लोग उन्हीं लोगों के हक छीनते हैं और उनके साथ बुरा बर्ताव करते हैं? जब मैंने इस हिस्से पर मनन किया, तो मुझे इफिसियों 6:9 की याद आई: "मालिको, अपने गुलामों के साथ भी वैसा ही बर्ताव करो। उन्हें धमकाओ मत, क्योंकि तुम जानते हो कि जो उनका और तुम्हारा मालिक है, वह स्वर्ग में है, और वह किसी के साथ भेदभाव नहीं करता।" काम की जगहों पर बॉस भेदभाव करके और धमकाकर अपने कर्मचारियों के साथ बुरा बर्ताव क्यों करते हैं? ऐसा इसलिए है क्योंकि उन्हें इस बात का एहसास नहीं होता कि स्वर्ग में उनका भी एक मालिक है—यानी, वे प्रभु की मौजूदगी को नहीं मानते। भले ही उन्हें प्रभु के होने का पता हो, वे अपने काम-काज में उनकी सर्वोच्चता को नहीं पहचान पाते, जिससे वे अपने कर्मचारियों के साथ बुरा बर्ताव करते हैं और उन्हें धमकाते हैं। नतीजतन, उनमें परमेश्वर के प्रति कोई आदर-भाव नहीं होता। क्योंकि वे न्याय करने वाले परमेश्वर से नहीं डरते, इसलिए उन्हें गरीबों पर जुल्म करने का पाप करने में कोई डर नहीं लगता; दूसरे शब्दों में, वे अपने गलत कामों को बेधड़क करते हैं। हम परमेश्वर द्वारा दिए गए अधिकारों का गलत इस्तेमाल करते हैं क्योंकि हम उनसे नहीं डरते। इसीलिए राजा सुलैमान ने कहा, "तुम्हें परमेश्वर का डर मानना चाहिए" (सभोपदेशक 5:7)। हमें परमेश्वर का डर मानना चाहिए और यह याद रखना चाहिए कि हम जो कुछ भी करते हैं, वह उसे देखते और परखते हैं। हमें खास तौर पर यह याद रखना चाहिए कि परमेश्वर अनाथों, विधवाओं, गरीबों और अपने उन लोगों की देखभाल करते हैं जिनके साथ बुरा बर्ताव किया जा रहा है; इसलिए, हमें गरीबों या गरीब किसानों के अधिकारों को छीनकर उनके साथ बुरा बर्ताव नहीं करना चाहिए। इसके बजाय, मसीही होने के नाते, हमें उनकी देखभाल करनी चाहिए। इसके अलावा, जब हम जुल्म करने वाले अधिकारियों को कमज़ोर, बेसहारा और गरीब लोगों के साथ बुरा बर्ताव करते हुए देखते या सुनते हैं, तो हमें प्रभु से गुहार लगानी चाहिए—जो ऐसे सभी शासकों से ऊपर हैं—और परमेश्वर से छुटकारा पाने के लिए

प्रार्थना करनी चाहिए। इस दुनिया में रहते हुए हम कितनी पापपूर्ण चीज़ों का सामना करते हैं, सुनते हैं और महसूस करते हैं? जब हम लोगों को एक-दूसरे की हत्या करते हुए देखते या ऐसी खबरें सुनते हैं, तो हमें अब हैरानी नहीं होती। यहाँ तक कि जब हम किसी ऐसे हत्यारे के बारे में सुनते हैं जिसने बेरहमी से हत्या की हो—भले ही इससे इंसानी क्रूरता की हद पर सवाल उठें—तो भी हमें सच में हैरानी नहीं होती। इसका कारण यह है कि ऐसे काम इंसान के पापपूर्ण स्वभाव को दिखाते हैं। इसीलिए मुझे सभोपदेशक 5:8-9 में राजा सुलैमान द्वारा बताए गए जुल्म करने वाले अधिकारियों के बारे में पढ़कर अजीब नहीं लगता—वे जो न्याय को कुचलते हैं और गरीबों के साथ बुरा बर्ताव करते हैं। मुझे इंसानों के ऐसे पापपूर्ण व्यवहार पर अब हैरानी नहीं होती। हालाँकि, आजकल एक और चीज़ है जो मुझे बहुत खास लगती है—एक ऐसी चीज़ जो अक्सर मुझे हैरानी से भर देती है। ऐसा तब होता है जब मैं आध्यात्मिक आँखों और कानों से देखता हूँ कि परमेश्वर मेरे अपने जीवन में और मेरे आस-पास के उन लोगों के जीवन में कैसे काम कर रहे हैं जिनसे मैं प्यार करता हूँ। उदाहरण के लिए, आज सुबह, जब मैंने सुबह की प्रार्थना सभा में जाने के लिए अपनी कार स्टार्ट की और अपना फ़ोन चालू किया, तो मुझे एक वॉइसमेल मिला। यह एक प्रचारक का संदेश था—मान लीजिए उनका नाम प्रचारक किम है—जो मेरी और हमारे चर्च की बहुत परवाह करते हैं। वह यह बताने के लिए फ़ोन कर रहे थे कि उन्हें आखिरकार एक बेहतरीन साथी (म्यूज़िक में साथ देने वाला) मिल गया है। वह संदेश सुनकर मेरे चेहरे पर मुस्कान आ गई। मैंने परमेश्वर का धन्यवाद किया, यह सोचकर कि वे कितनी सटीकता से और सही समय पर हमारे चर्च के लिए ज़रूरी सहयोगी भेजते हैं। पिछले सोमवार को लंच के समय, मैंने एक डिकनेस (चर्च की सेविका) से फ़ोन पर बात की; उन्हें हमारे चर्च के लिए एक अकंपनिस्ट (संगीत में साथ देने वाले) की ज़रूरत के बारे में बताया। उन्होंने और उनके पति ने हमारे चर्च की एक महीने तक मदद करने का वादा किया था, और क्योंकि आने वाले रविवार को वह समय पूरा हो रहा था, इसलिए मैंने उनसे कहा कि वे हमारे बारे में चिंता न करें और बेझिझक अपने होम चर्च (अपने मूल चर्च) लौट जाएं। मैंने उनसे कहा कि चूँकि यह चर्च प्रभु द्वारा स्थापित किया गया है, इसलिए वे ही इसकी देखभाल करेंगे, इसलिए चिंता करने की कोई बात नहीं है। हालाँकि, उन्होंने जवाब दिया कि जब तक कोई दूसरा अकंपनिस्ट नहीं मिल जाता, तब तक वे बस हमारी मदद करना बंद करके अपने चर्च नहीं लौट सकतीं। मैं अक्सर यह देखकर हैरान रह जाता हूँ कि परमेश्वर हमारे चर्च में कैसे काम करते हैं। फिर भी, जैसे-जैसे मैं विश्वास के रास्ते पर आगे बढ़ता हूँ, मैं इस अद्भुत सच्चाई से चकित रह जाता हूँ कि यीशु को मेरे जैसे पापी के लिए क्रूस पर चढ़ाया गया और उन्होंने मेरे लिए प्राण दिए।

प्रियजनों, एक ऐसी घटना होने वाली है जो हम सभी को चकित कर देगी: हमारे प्रभु यीशु का दूसरा आगमन। उस दिन और उस घड़ी, हम न केवल कुछ ऐसा देखेंगे बल्कि महसूस भी करेंगे जो हमारी कल्पना से परे है। हम प्रभु की महिमापूर्ण वापसी को देखकर विस्मित हो जाएंगे और उसके साथ होने वाले शानदार बदलाव का अनुभव करेंगे। जब हम इस धरती पर रहते हैं—प्रार्थना और उम्मीद के साथ उस दिन का इंतज़ार करते हुए—तो आइए हम पवित्र आश्चर्य की भावना के साथ परमेश्वर को धन्यवाद, स्तुति, आराधना और महिमा दें, और ऐसी दुनिया के बीच उनके महान कार्यों का अनुभव करें जो अब परमेश्वर की बातों को महत्व नहीं देती।

सुकून से सोने वाले काम करने वाले

[सभोपदेशक 5:10-12]

क्या आप रात में अच्छी नींद लेते हैं? कीम्युंग यूनिवर्सिटी डॉंगसन हॉस्पिटल के न्यूरोलॉजी विभाग और कोरियन स्लीप रिसर्च सोसाइटी के प्रोफेसर योंग-वोन चो के अनुसार, 5,000 कोरियाई वयस्क पुरुषों और महिलाओं के एक सर्वे से पता चला कि 1,141 लोग रात में नींद की समस्याओं से पीड़ित थे, यानी लगभग 22.8% लोगों में अनिद्रा (insomnia) पाई गई। पश्चिम में, यह बताया गया है कि कुल वयस्क आबादी का लगभग 20-30% हिस्सा रात में नींद की समस्याओं से पीड़ित है (इंटरनेट)। व्यक्तिगत रूप से, मैंने जापानी औपनिवेशिक युग के दौरान ऐसी कहानियाँ सुनी हैं कि जापानी पुलिस कोरियाई लोगों को प्रताड़ित करने के तरीके के तौर पर उन्हें सोने नहीं देती थी। सो न पाना कितना कष्टदायक होता है? हाल के अध्ययनों से पता चलता है कि यदि किसी को पर्याप्त नींद नहीं मिलती है, तो मानसिक थकान बढ़ जाती है और शारीरिक स्वास्थ्य खराब हो जाता है; गंभीर मामलों में, इससे हाई ब्लड प्रेशर, डायबिटीज, स्ट्रोक और कैंसर का खतरा बढ़ सकता है (इंटरनेट)।

****सुकून से सोने वाले काम करने वाले**** भजन संहिता 127:2 के उत्तरार्ध में, भजनकार राजा सुलैमान कहते हैं: "इसलिए प्रभु अपने प्रियजनों को नींद देते हैं।" रात की अच्छी नींद हमारे शरीर को क्या लाभ पहुँचाती है? शोध के अनुसार, थकान से उबरने, शारीरिक विकास, रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने, शरीर का तापमान बनाए रखने और सोचने-समझने की क्षमता व याददाश्त को बनाए रखने के लिए नींद बहुत ज़रूरी है (इंटरनेट)। उम्र के हिसाब से सही नींद की अवधि के बारे में बात करें तो, 2 से 3 महीने की उम्र में दूध पीने के बाद बच्चे लगभग 30 मिनट तक जागते रहते हैं, और उसके बाद, उनके सोने का समय धीरे-धीरे कम हो जाता है। आम तौर पर, नींद की अनुशंसित अवधि इस प्रकार है: शिशुओं के लिए 16-20 घंटे, छोटे बच्चों (toddlers) के लिए 12-13 घंटे, प्राथमिक स्कूल के निचले ग्रेड के छात्रों के लिए 10-11 घंटे और ऊपरी ग्रेड के छात्रों के लिए 9-10 घंटे, किशोरावस्था में 8-9 घंटे, युवावस्था में 7-8 घंटे और अधेड़ उम्र में 6-7 घंटे। अधेड़ उम्र के वयस्कों के लिए, 6-

7 घंटे की सलाह दी जाती है; यदि कोई बिना जागे सिर्फ़ छह घंटे भी गहरी नींद ले पाता है, तो जागने पर वह सचमुच तरोताज़ा महसूस करता है। इसके उलट, अगर कोई बार-बार जागता है या रात भर बेचैन रहता है, तो सुबह उसे बहुत थकान महसूस होती है।

आज के वचन, उपदेशक 5:12 में, राजा सुलैमान (जो उपदेशक भी थे) कहते हैं: "मज़दूर की नींद मीठी होती है, चाहे वह कम खाए या ज़्यादा, लेकिन अमीर आदमी की बहुत ज़्यादा दौलत उसे सोने नहीं देती।" इस वचन पर मनन करते समय, मेरे मन में यह शीर्षक आया: "वह मज़दूर जो मीठी नींद सोता है"; मैंने इसे ही इस संदेश का शीर्षक बनाया और खुद से पूछा, "आखिर एक मज़दूर इतनी मीठी नींद कैसे सो पाता है?" मुझे इस सवाल के एक-दो जवाब इसी वचन में मिले:

पहला, मज़दूर के मीठी नींद सोने की मुख्य वजह यह है कि वह मेहनत करता है। दूसरे शब्दों में, मज़दूर इसलिए मीठी नींद सोता है क्योंकि वह कड़ी मेहनत करता है।

मज़दूर मीठी नींद सोता है क्योंकि वह कड़ी मेहनत करता है। दूसरे शब्दों में कहें तो, वह आलसी नहीं होता; वह लगन और मेहनत से काम करता है, जिससे उसे मीठी नींद आती है। वहीं बाइबल कहती है कि अमीर लोग सो नहीं पाते। इसकी क्या वजह है? मुझे दो संभावित कारण समझ आए हैं:

(1) पहला कारण है आलस। उपदेशक 4:5 को देखिए: "मूर्ख हाथ पर हाथ धरे बैठा रहता है और खुद को बर्बाद कर लेता है।" यहाँ, "हाथ पर हाथ धरे बैठना" या "हाथ न चलाना" इस बात का संकेत है कि "मूर्ख व्यक्ति काम नहीं करता।" दूसरे शब्दों में, मूर्ख व्यक्ति आलसी होता है और आलसी व्यक्ति को काम करना पसंद नहीं होता (नीतिवचन 21:25)।

इसके अलावा, जो लोग काम करना पसंद नहीं करते, वे ईमानदारी की मेहनत का पसीना नहीं बहाते, और इसलिए, वे मीठी नींद का आनंद नहीं ले पाते।

(2) दूसरा कारण है ज़रूरत से ज़्यादा खाना। उपदेशक 5:12 पर गौर करें: "मज़दूर की नींद मीठी होती है, चाहे वह कम खाए या ज़्यादा, लेकिन अमीर आदमी की बहुत ज़्यादा दौलत उसे सोने नहीं देती।" शारीरिक नज़रिए से देखें तो, जब हम भरपेट खाना खाते हैं और पेट भरा हुआ महसूस होता है, तो आराम से लेटकर सोना मुश्किल

हो जाता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि खाए गए भोजन को पचाने के लिए शारीरिक हलचल की ज़रूरत होती है; अगर कोई बिना ऐसी हलचल के सोने की कोशिश करता है, तो पेट भरा होने के कारण अच्छी नींद नहीं आ पाती। भौतिक नज़रिए से भी देखें तो, जब हम भौतिक रूप से अमीर और संतुष्ट होते हैं, तो हम अक्सर आलस की बुराई की ओर झुक जाते हैं—यानी बिना काम किए आराम की ज़िंदगी जीना। ईमानदारी से मेहनत किए बिना, हम सुकून भरी नींद का मज़ा नहीं ले सकते। इसके उलट, एक मज़दूर जो कड़ी मेहनत करता है, उसे उसी मेहनत की वजह से सुकून भरी नींद आती है।

मेहनत क्या है? मेहनत भगवान के उस हुक्म को मानने का एक नेक काम है जिसमें कहा गया है कि मेहनत करो और खाओ (पार्क युन-सन)। हमें भगवान के हुक्म को मानते हुए और उनके प्रति आदर भाव रखते हुए मेहनत करनी चाहिए। हमें लगन से काम करना चाहिए। हमें इतनी मेहनत करनी चाहिए कि पसीना आ जाए। हालाँकि, एक ज़रूरी बात याद रखनी चाहिए: हमारी मेहनत फायदेमंद होनी चाहिए। यीशु को मानने वाले बहुत से लोग ऐसी ज़िंदगी जीते हैं जिसमें बेकार या व्यर्थ की मेहनत शामिल होती है। वे ऐसे कामों में पसीना बहाते हैं और मेहनत करते हैं जिनसे कोई फायदा नहीं होता—बेकार काम जो भगवान की नज़र में कोई मूल्य नहीं रखते। इसीलिए राजा सुलैमान ने उपदेशक 2:22-23 में कहा: "इस दुनिया में लोग जो कड़ी मेहनत और चिंता भरी कोशिशें करते हैं, उससे उन्हें क्या मिलता है? उनके सारे दिन दुख और तकलीफ में बीतते हैं; यहाँ तक कि रात में भी उनके मन को आराम नहीं मिलता। यह भी व्यर्थ है।" हमें बेकार की मेहनत में नहीं पड़ना चाहिए। हमें सिर्फ़ अपनी बड़ाई के लिए काम नहीं करना चाहिए। अगर हम सिर्फ़ अपने लालच को पूरा करने के लिए पसीना बहाते हैं और मेहनत करते हैं, तो हम उस सुकून भरी नींद का मज़ा नहीं ले सकते जो भगवान देते हैं। इसके बजाय, हमें ऐसी मेहनत करनी चाहिए जो सच में फायदेमंद हो। भगवान की नज़र में किस तरह की मेहनत फायदेमंद है? वह मेहनत जो भगवान की महिमा के लिए की जाती है। दूसरे शब्दों में, फायदेमंद मेहनत वह है जिसमें प्रभु का काम किया जाता है। जब हम प्रभु की महिमा के लिए लगन से उनका काम करते हैं, तो भगवान हमें सुकून भरी नींद देते हैं।

दूसरी बात, एक मज़दूर गहरी नींद सो सकता है क्योंकि उसकी ज़िंदगी में संतुष्टि का भाव होता है।

अमीर लोग अलग होते हैं; उनकी ज़िंदगी में संतुष्टि की कमी होती है। बहुत सारा पैसा और दौलत होने के बावजूद, वे कभी संतुष्ट नहीं होते—और न ही वे कभी अपनी लगातार बढ़ती कमाई से संतुष्ट हो सकते हैं। राजा सुलैमान कहते हैं: "जो पैसे से प्यार करता है, उसका मन कभी नहीं भरता; जो दौलत से प्यार करता है, वह अपनी कमाई से कभी संतुष्ट नहीं होता। यह भी व्यर्थ है" (उपदेशक 5:10)। वह यह भी कहते हैं: "सब बातें थका देने वाली हैं, इतनी कि बयान नहीं की जा सकतीं। आँखें देखने से कभी नहीं भरतीं और न ही कान सुनने से तृप्त होते हैं" (1:8)। यह बात कि आँखें और कान कभी संतुष्ट नहीं होते, यह दिखाती है कि जैसे समुद्र में लगातार पानी बहने के बावजूद वह कभी नहीं भरता (आयत 7), वैसे ही इंसान का लालच भी कभी खत्म नहीं होता। इसलिए, जब हम बहुत सारी चीज़ें जमा करके अपने लालच को पूरा करने की कोशिश करते हैं, तो हमें नींद नहीं आती। इसका कारण यह है कि लालच कभी संतुष्ट नहीं हो सकता। क्योंकि वे हमेशा ज़्यादा पैसे कमाने और दौलत जमा करने की सोच में डूबे रहते हैं, इसलिए वे चैन की नींद नहीं सो पाते। संक्षेप में, अमीर लोग अच्छी नींद क्यों नहीं ले पाते, इसका कारण है पैसे से उनका प्यार—और चूँकि पैसा हमें सचमुच संतुष्ट नहीं कर सकता, इसलिए उन्हें सुकून भरी नींद नहीं मिल पाती। जैसा कि 1 तीमोथियुस 6:10 की जानी-मानी आयत कहती है, "पैसे का प्यार हर तरह की बुराई की जड़ है"; ज़ाहिर है, जो लोग पैसे से प्यार करते हैं, वे चैन से नहीं सो सकते। लेकिन, जो काम करने वाले पैसे के बजाय परमेश्वर से प्यार करते हैं, वे चैन की नींद सो सकते हैं। दूसरे शब्दों में, जो काम करने वाले भौतिक दौलत का लालच छोड़ देते हैं और यीशु में ही संतुष्ट रहकर खुशी-खुशी जीते हैं, वे रात को अच्छी नींद ले पाते हैं। क्योंकि उन्होंने लालच छोड़ दिया है, इसलिए उन्हें मन की शांति मिलती है, जिससे वे अच्छी नींद सो पाते हैं। इसके अलावा, क्योंकि वे प्रभु की महिमा के लिए काम करते हैं—और उनके पास कितनी दौलत है, इसकी परवाह नहीं करते—इसलिए परमेश्वर उन्हें मीठी और सुकून भरी नींद देता है। समझदार काम करने वाले जो प्रभु में ही संतुष्ट रहते हैं, वे चैन की नींद सोते हैं। क्या आप चैन की नींद सो रहे हैं?

मेरे परिवार में, मेरे बेटे डिलन और मेरे अलावा बाकी सभी बहुत अच्छी नींद लेते हैं। मेरी सबसे बड़ी बेटी, येरी, तो बहुत गहरी नींद सोती है; बिस्तर पर लेटते ही वह दो-तीन मिनट में सो जाती है। मुझे लगता है कि इस मामले में वह अपनी माँ जैसी है। मेरी पत्नी भी, दिन भर काम और घर के कामों से थकने के बाद, बिस्तर पर लेटते ही बहुत जल्दी सो जाती है। मैं उससे कहता था, "इतनी जल्दी सो जाना कितना अच्छा लगता होगा।" मैंने ऐसा

इसलिए कहा क्योंकि मैं ऐसा इंसान नहीं हूँ जिसे गहरी नींद आती हो। इसका मतलब यह नहीं है कि मुझे अनिद्रा (नींद न आने) की बीमारी है। लेकिन, जब भी मैं ठीक से सो नहीं पाता, तो मुझे उन लोगों की याद आती है जिन्हें अच्छी नींद नहीं आती। मैं अक्सर सोचता हूँ, "वे कितना बुरा महसूस करते होंगे।" दोस्तों, अच्छी नींद एक वरदान है। जैसा कि आज का धर्मग्रंथ बताता है, मीठी और सुकून भरी नींद का आनंद लेना एक बहुत बड़ा वरदान है। ईश्वर यह वरदान उन अमीर लोगों को नहीं देते जो पहले से ही संतुष्ट हैं, बल्कि उन मेहनती मजदूरों को देते हैं जो लगन से काम करते हैं और अपने जीवन में संतोष पाते हैं। क्या हम प्रभु के लिए कड़ी मेहनत कर रहे हैं? क्या हमारे दिलों में शांति है और क्या हम केवल प्रभु में ही अपनी संतुष्टि पाते हैं?

जो परमेश्वर धन-दौलत देता है, वही हमें उसका आनंद लेने की क्षमता भी देता है

[सभोपदेशक 5:13-20]

क्या आप जानते हैं कि दुनिया का सबसे अमीर व्यक्ति कौन है? पिछले हफ़्ते मैंने इंटरनेट पर एक समाचार लेख देखा जिसका शीर्षक था, "2010 की दुनिया के अमीरों की सूची: बिल गेट्स नंबर 1 से हटे," और उसमें बताया गया है कि 2010 में दुनिया का सबसे अमीर व्यक्ति मैक्सिको के कार्लोस स्लिम हेल् ने (कुल संपत्ति: \$53.3 बिलियन) (इंटरनेट)। कार्लोस स्लिम हेल् ने 70 साल की उम्र में एक कंपनी शुरू करके अपनी दौलत बनाई, और कहा जाता है कि वे जो कंपनी चलाते हैं, वह लैटिन अमेरिका की सबसे बड़ी टेलीकम्युनिकेशन कंपनी है। वे कितने अमीर हैं, इसका अंदाज़ा इस बात से लगाया जा सकता है कि एक कहावत है कि अगर मैक्सिको के लोग रोज़ 100 वॉन खर्च करते हैं, तो उसमें से 70 वॉन उनकी जेब में जाते हैं। अमेरिकी बिज़नेस मैगज़ीन फोर्ब्स के अनुसार, टेल्मेक्स टेलीकॉम के चेयरमैन कार्लोस स्लिम हेल् ने एक ही साल में अपनी कुल संपत्ति में \$18.5 बिलियन की बढ़ोतरी की, जिससे उनकी कुल संपत्ति \$53.5 बिलियन (लगभग 60.65 ट्रिलियन वॉन) हो गई और वे दुनिया के सबसे अमीर व्यक्ति बन गए (इंटरनेट)। 1994 के बाद, यानी 16 सालों में यह पहली बार हुआ है जब दुनिया का सबसे अमीर व्यक्ति अमेरिका के अलावा किसी दूसरे देश से आया है। क्षेत्र के हिसाब से देखें तो 2010 में एशिया में सबसे ज़्यादा नए अरबपति बने, जिनकी संख्या 97 थी। इसके अलावा, चीन पहली बार अरबपतियों की संख्या के मामले में दूसरा सबसे बड़ा देश बनकर उभरा। दक्षिण कोरिया, जहाँ पिछले साल सिर्फ़ चार अरबपति थे, वहाँ इस साल यह संख्या बढ़कर 11 हो गई। सैमसंग के पूर्व चेयरमैन ली कुन-ही 205वें स्थान से उछलकर 100वें स्थान पर पहुँच गए, क्योंकि उनकी कुल संपत्ति दोगुनी से भी ज़्यादा होकर \$7.2 बिलियन हो गई। तो फिर, वे इतने अमीर उद्योगपति कैसे बने?

आज के वचन, सभोपदेशक 5:19 में, राजा सुलैमान—जो उपदेशक भी थे—कहते हैं: "जिस किसी मनुष्य को परमेश्वर ने धन-दौलत दी है, और उसे उसमें से खाने, अपनी विरासत को स्वीकार करने और अपनी मेहनत का आनंद लेने की शक्ति दी है—यह परमेश्वर का वरदान है।" राजा सुलैमान के ज़रिए, हमें वे तीन बातें सीखनी चाहिए जो परमेश्वर हमें सिखाते हैं।

पहली बात, परमेश्वर ही हमें धन-दौलत और संपत्ति देते हैं।

यहाँ, "हमें" शब्द का मतलब उन लोगों से नहीं है जिनका ज़िक्र उपदेशक 5:10 में "चाँदी से प्यार करने वालों" के तौर पर किया गया है। परमेश्वर उन्हें धन-दौलत नहीं देते जो पैसे से प्यार करते हैं। अगर वे उन्हें ऐसी चीज़ें देते भी हैं, तो यह आशीर्वाद के बजाय एक श्राप—या सज़ा का एक रूप—होगा। जो लोग पैसे से प्यार करते हैं, उनके लिए धन-दौलत कैसे श्राप या सज़ा बन सकती है? ऐसी ही एक सज़ा है कभी न मिटने वाली लालच की भूख। जब पैसे से प्यार करने वाले और ज़्यादा पैसा कमाते हैं, तो उनका लालच और बढ़ जाता है, जिससे उन्हें ज़िंदगी में कभी संतुष्टि नहीं मिलती। यही तो सज़ा है। लालची दिल रखना कितना भयानक श्राप है जो कभी संतुष्ट नहीं हो सकता! जो लोग पैसे से प्यार करते हैं और जिनमें ऐसी कभी न मिटने वाली लालच होती है, उन्हें अपने दिल में शांति नहीं मिलती। इस संदर्भ में, "हमें" का मतलब उन लोगों से नहीं है जो पैसे से प्यार करते हैं, बल्कि उन लोगों से है जो परमेश्वर से प्यार करते हैं। दूसरे शब्दों में, परमेश्वर उन्हें धन-दौलत देते हैं जो उनसे प्यार करते हैं। यहाँ, "जो परमेश्वर से प्यार करते हैं" का मतलब उन लोगों से है जो उनसे डरते हैं और उनकी आज्ञाओं का पालन करते हैं। भजन संहिता 112:1-3 को देखिए: "यहोवा की स्तुति करो! धन्य है वह मनुष्य जो यहोवा का भय मानता है, जो उसकी आज्ञाओं में बहुत आनंद लेता है। उसकी संतान पृथ्वी पर शक्तिशाली होगी; नेक लोगों की पीढ़ी धन्य होगी। उसके घर में धन-दौलत होगी, और उसकी धार्मिकता सदा बनी रहेगी।" परमेश्वर उन लोगों को आशीर्वाद देते हैं जो उनसे डरते हैं और उनकी आज्ञाओं में बहुत आनंद लेते हैं, और उनके घरों में धन-दौलत देते हैं। तो फिर, परमेश्वर उन लोगों को धन-दौलत का आशीर्वाद कैसे देते हैं जो उनसे डरते हैं और उनकी आज्ञाओं का पालन करते हैं? वे उन्हें "धन कमाने की शक्ति" (व्यवस्थाविवरण 8:18) देकर यह आशीर्वाद देते हैं। जो लोग परमेश्वर से नहीं डरते, वे ऐसा नहीं सोचते; यह मानने के बजाय कि परमेश्वर ने उन्हें धन कमाने की क्षमता दी है, वे मानते हैं कि उन्होंने अपनी ताकत से पैसा कमाया है। ऐसे लोगों के लिए, भौतिक धन आशीर्वाद के बजाय श्राप बन जाता है।

दूसरी बात, परमेश्वर ही हमें उस धन-दौलत का सही मायने में आनंद लेने के काबिल बनाते हैं जो उन्होंने हमें दिया है। मेरा मानना है कि दुनिया में सबसे बेवकूफ वे लोग हैं जिनके पास बहुत सारा धन तो है, लेकिन वे उसका आनंद नहीं ले पाते। अगर कोई उस धन का इस्तेमाल कर भी ले, तो उसे बेकार की मौज-मस्ती में उड़ा देना कितनी बड़ी बेवकूफी है! वे अपने इतने सारे धन का आनंद क्यों नहीं ले पाते? मुझे इसका जवाब आज के वचन, उपदेशक 5:13 में मिला: "मैंने सूरज के नीचे एक बहुत बुरी बात देखी है: मालिक ने अपनी ही हानि के लिए धन जमा करके रखा है।" वे अपने इतने सारे धन का आनंद क्यों नहीं ले पाते? ऐसा इसलिए है क्योंकि मालिक अपने धन को इस तरह जमा करता है जिससे उसे नुकसान पहुँचता है। यह कितनी बेवकूफी भरी बात है। लोग धन से इतना क्यों चिपके रहते हैं कि वह उन्हें नुकसान पहुँचाने लगता है? इसकी मूल वजह यह है कि वे खुद से ज़्यादा पैसे—या भौतिक चीज़ों—से प्यार करते हैं। पैसा भला इंसानी ज़िंदगी से ज़्यादा कीमती कैसे हो सकता है? डॉ. पार्क युन-सन ने एक बार कहा था, "ऐसी चीज़ के लिए अपनी जान देना नुकसानदेह है जिसे आप हमेशा के लिए अपने पास नहीं रख सकते।" यह सचमुच एक बहुत बड़ी बेवकूफी है। राजा सुलैमान ने अपनी दौलत को बचाने की बहुत कोशिश की—यहाँ तक कि खुद का नुकसान करके भी—लेकिन एक आपदा में सब कुछ गँवा बैठे; आखिर में उनके हाथ कुछ नहीं लगा और वे अपने बच्चों के लिए कुछ भी नहीं छोड़ पाए (वचन 14)। इसलिए, उन्होंने देखा: "जैसे वह अपनी माँ के गर्भ से नंगा आया था, वैसे ही नंगा वापस जाएगा; और अपनी मेहनत से वह कुछ भी ऐसा नहीं ले जा पाएगा जिसे वह अपने हाथ में ले सके। और यह भी एक बहुत बुरी बात है—कि जैसे वह आया था, वैसे ही जाएगा। और जिसने हवा के लिए मेहनत की, उसे क्या फायदा हुआ?" (वचन 15-16)। आखिरकार, हम इस दुनिया में खाली हाथ आते हैं और खाली हाथ ही चले जाते हैं। चाहे हम धन जमा करने के लिए कितनी भी कड़ी मेहनत क्यों न करें, मरने पर हम अपने साथ एक भी चीज़ नहीं ले जा सकते। अपनी भलाई की कीमत पर बहुत सारा धन जमा करने का क्या फायदा? अगर कोई उस धन का आनंद नहीं ले पाता और आखिर में आपदा में सब कुछ गँवा देता है, तो वह बेकार है। नतीजा बस यही होता है कि "अपने सारे दिन वह अंधेरे में खाता है, बहुत दुख, बीमारी और गुस्से के साथ" (वचन 17)। आखिरकार, वह मूर्ख अमीर आदमी अपनी पूरी ज़िंदगी हवा के पीछे भागने जैसी बेकार मेहनत में बिता देता है। इसके उलट, जो लोग परमेश्वर से प्यार करते हैं—यानी वे बुद्धिमान लोग जिनसे परमेश्वर प्यार करते हैं—उन्हें वह धन-दौलत और भरपूर चीज़ें देता है, साथ ही उनका सही मायने में आनंद लेने की क्षमता भी देता है। यहाँ एक ज़रूरी सच्चाई है जिसे हमें याद रखना

चाहिए। इसका मतलब है कि परमेश्वर न केवल हमें भरपूर धन कमाने की शक्ति देता है, बल्कि वह हमें उस भरपूर धन का असल में आनंद लेने के काबिल भी बनाता है।

तीसरी बात, परमेश्वर ही वह है जो हमें अपनी मेहनत में खुशी पाने के काबिल बनाता है।

राजा सुलैमान ने दुनिया में जो बड़ी बुराई देखी (आयत 13), वह थी एक मालिक का अपने ही नुकसान के लिए धन जमा करना, और फिर किसी मुसीबत में वह सब खो देना (आयत 14)। संक्षेप में, उसने जो बड़ी बुराई देखी, वह हवा के पीछे भागने जैसी बेकार कोशिश थी (आयत 16)। फिर भी, इसके साथ-साथ राजा सुलैमान ने कुछ अच्छा और सुंदर भी देखा (आयत 18)। आयत 18 में इसे इस तरह लिखा गया है: "मैंने देखा है कि इंसान के लिए यह अच्छा और सुंदर है कि वह खाए-पीए और अपनी ज़िंदगी के उन दिनों में, जो परमेश्वर ने उसे दिए हैं, दुनिया में की गई अपनी सारी मेहनत में आनंद पाए; क्योंकि यही उसका तय किया हुआ हिस्सा है।" जिसे उसने अच्छा और सुंदर माना, वह था इस दुनिया में अपनी पूरी ज़िंदगी के दौरान खाते-पीते और मेहनत करते हुए खुशी पाना। दूसरे शब्दों में, राजा सुलैमान को एहसास हुआ कि खाने-पीने और काम करने में खुशी पाना एक अच्छी और सुंदर बात है (पार्क युन-सन)। वह आगे कहते हैं कि यह वह हिस्सा है जो परमेश्वर मेहनत करने वालों को देता है। यहाँ "तय किए हुए हिस्से" का क्या मतलब है? हालाँकि इसका मतलब "जन्मजात आशीष" से है, लेकिन शब्द का मूल अर्थ "मेहनत," "काम," "मुश्किल" और "दुख" को भी शामिल करता है। असल में, यह "जन्मजात आशीष" काम करते हुए, मेहनत करते हुए और मुश्किलों को सहते हुए जीने का ही काम है (इंटरनेट)। अहम सवाल यह है कि क्या उस काम, मेहनत और मुश्किल के बीच दिल में खुशी है? क्या आपको अपनी कड़ी मेहनत और मशक्कत के बीच अपने दिल में खुशी मिलती है? चाहे परमेश्वर हमें आनंद लेने के लिए धन-दौलत और भरपूर चीज़ें दे, या हमें मुश्किलों के ज़रिए अपना हिस्सा और मेहनत का फल मिले (आयत 19), हमारे दिलों में खुशी होनी चाहिए। दिल की यह खुशी ईश्वर का तोहफ़ा है (वचन 19)। ईश्वर "हमें [हमारे] दिल की खुशी में व्यस्त रखते हैं" (वचन 20)। क्या आप सचमुच उस खुशी को पा रहे हैं और उसका आनंद ले रहे हैं जो ईश्वर हमारे दिलों को तोहफ़े के तौर पर देते हैं? धन की मात्रा—चाहे ज़्यादा हो या कम—मायने नहीं रखती; असल बात यह है कि दिल में खुशी है या नहीं। अगर हमारे पास ईश्वर द्वारा दी गई दिल की खुशी है, तो हम अपनी ज़िंदगी के दिनों के बारे में बहुत ज़्यादा चिंता नहीं करेंगे (वचन 20)। मेरी प्रार्थना है कि हम सब इस ईश्वरीय

खुशी—जो ईश्वर का तोहफ़ा है—का आनंद लें और उनकी नज़र में जो अच्छा और सुंदर है, उसे करते हुए मेहनत करें।

आज, बाइबल के उस हिस्से के आधार पर, हमें ईश्वर से तीन बातें सीखने को मिली हैं: (1) पहली, कि ईश्वर ही हमें धन और भरपूर चीज़ें देते हैं; (2) दूसरी, कि ईश्वर ही हमें उस धन और भरपूर चीज़ों का आनंद लेने के काबिल बनाते हैं जो उन्होंने दी हैं; और (3) तीसरी, कि ईश्वर ही हमें अपनी मेहनत में खुशी पाने का मौका देते हैं। तो फिर, हमें कैसे जीना चाहिए? मुझे उपदेशक 3:12-13 के शब्द याद आते हैं, जिन पर हमने पहले भी मनन किया है: "मैं जानता हूँ कि लोगों के लिए इससे बेहतर कुछ नहीं है कि वे खुश रहें और जीते-जी अच्छा काम करें। कि उनमें से हर कोई खाए-पीए और अपनी सारी मेहनत में संतुष्टि पाए—यह ईश्वर का तोहफ़ा है।" सचमुच, इस धरती पर जीते हुए खुश रहने और अच्छा काम करने से बेहतर कुछ नहीं है। खाने-पीने के आनंद के साथ-साथ अपनी मेहनत में खुशी पाने से बेहतर कुछ नहीं है। मुझे उम्मीद है कि आप और मैं दोनों ही ईश्वर के इस तोहफ़े को पाएँगे और उसका आनंद लेंगे।

धन-दौलत के आशीर्वाद से ज़्यादा ज़रूरी क्या है...

“इसके अलावा, जब परमेश्वर किसी को धन-संपत्ति देता है, और उसका आनंद लेने की क्षमता देता है, ताकि वे अपनी किस्मत को स्वीकार करें और अपनी मेहनत में खुश रहें— तो यह परमेश्वर का एक उपहार है” (सभोपदेशक 5:19)।

क्या परमेश्वर से धन-दौलत का आशीर्वाद मांगना गलत है? क्या ऐसी दुनिया में, जहाँ गुज़ारा करना इतना मुश्किल है और गरीबी से जूझते हुए जीवन बिता रहे हों, भौतिक सुख-सुविधाओं के लिए प्रार्थना करना पाप है? क्या बहुत ज़्यादा धन-दौलत होने से सच में खुशी नहीं मिलती?

तो फिर, बाइबल किस खुशी की बात करती है? जब मैं "खुशी" शब्द के बारे में सोचता हूँ, तो बाइबल की एक-दो आयतें मेरे मन में आती हैं। पहली आयत जो मन में आती है, वह व्यवस्थाविवरण 33:29 का पहला हिस्सा है: “हे इस्राएल, तुम सचमुच एक खुशहाल लोग हो। तुम्हारे जैसा कौन सा राष्ट्र है, जिसे प्रभु ने बचाया हो? वह तुम्हारी ढाल और तलवार है, जो तुम्हारी रक्षा करता है और तुम्हें जीत दिलाता है; तुम्हारे दुश्मन तुम्हारे सामने झुकेंगे, और तुम उन्हें अपने पैरों तले कुचल दोगे” (समकालीन कोरियाई संस्करण)। इस आयत को देखने पर, बाइबल में बताई गई खुशी परमेश्वर द्वारा बचाए जाने और उनकी सुरक्षा व जीत दिलाने में मिलती है। ठीक इस्राएल के लोगों की तरह, हम जो यीशु में विश्वास करते हैं, खुशहाल लोग हैं क्योंकि हमें परमेश्वर ने बचाया है और हमें उनकी सुरक्षा और जीत मिलती है। दूसरी आयत जो मन में आती है, वह उत्पत्ति 39:2 (पहला हिस्सा), 3, और 23 (दूसरा हिस्सा) में मिलती है: “प्रभु यूसुफ के साथ थे, और वह समृद्ध हुआ...” (आयत 2a); “उसके मालिक ने देखा कि प्रभु उसके साथ थे और प्रभु ने उसे हर काम में सफलता दी” (आयत 3); “...क्योंकि प्रभु

यूसुफ के साथ थे और उन्होंने उसे हर काम में सफलता दी" (आयत 23b)। ये आयतें हमें दिखाती हैं कि सच्ची खुशी परमेश्वर की उपस्थिति में है। प्रलोभन, अन्याय और दुख के बीच भी, जिसे परमेश्वर खुशहाल मानते हैं, वह वही है जिसके साथ वे रहते हैं। इस नज़रिए से, हम यूसुफ की तरह खुशहाल लोग हैं—क्योंकि इममानुएल, यानी परमेश्वर, हमारे साथ हैं। उपदेशक 5:19 के संदर्भ को देखें—खासकर अध्याय 6 की आयतें 3 और 6—तो हमें "खुशी" (अंग्रेज़ी में "समृद्धि" के रूप में अनुवादित) शब्द मिलता है: "भले ही किसी व्यक्ति के सौ बच्चे हों और वह कई साल तक जीवित रहे... फिर भी अगर वह ऐसी समृद्धि से संतुष्ट नहीं है..." (आयत 3); "भले ही वह दो बार हज़ार साल तक जीवित रहे लेकिन समृद्धि न देख पाए..." (आयत 6)। इन आयतों में, "खुशी" शब्द का अनुवाद "समृद्धि" के रूप में किया गया है, जो खास तौर पर परमेश्वर द्वारा दी गई धन-दौलत और संपत्ति की ओर इशारा करता है (आयत 2)। दूसरे शब्दों में, धन-दौलत और संपत्ति का आशीर्वाद जो परमेश्वर हमें देता है, वही खुशी है। जब हमें परमेश्वर से धन-दौलत और संपत्ति का आशीर्वाद मिलता है, तो हम सचमुच खुश लोग होते हैं। हालाँकि, हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि धन-दौलत और संपत्ति के आशीर्वाद से भी ज़्यादा ज़रूरी कुछ है: उस धन का असल में आनंद लेने और उसका अनुभव करने का आशीर्वाद। आज के वचन, उपदेशक 5:19 को देखें: "इसके अलावा, जब परमेश्वर किसी को धन-दौलत और संपत्ति देता है, और उनका आनंद लेने की क्षमता देता है, ताकि वे अपनी किस्मत को स्वीकार कर सकें और अपनी मेहनत में खुश रह सकें—तो यह परमेश्वर का उपहार है।" इस आयत में, राजा सुलैमान, जो उपदेशक भी थे, कई बातों पर ज़ोर देते हैं: (1) परमेश्वर धन-दौलत और संपत्ति का आशीर्वाद देता है; (2) परमेश्वर हमारी मेहनत के ज़रिए यह आशीर्वाद देता है; (3) परमेश्वर हमें इस आशीर्वाद का आनंद लेने के काबिल बनाता है; और (4) इस आशीर्वाद का आनंद लेने की क्षमता ही परमेश्वर की ओर से एक उपहार है। हालाँकि, अगले अध्याय, उपदेशक 6 में, राजा सुलैमान एक "दुर्भाग्य" (6:1) के बारे में बताते हैं—एक ऐसी बात जो "इंसानों पर भारी पड़ती है" (आयत 1)। वह दुर्भाग्य है अपनी खुशी न देख पाना या संतुष्टि न पा पाना। वह कौन सा व्यक्ति है जो अपनी खुशी नहीं देख पाता या संतुष्टि नहीं पा पाता? वह व्यक्ति जिसे परमेश्वर से धन-दौलत और संपत्ति का आशीर्वाद तो मिला है, लेकिन उसका आनंद लेने की क्षमता नहीं मिली है (आयत 2)। भले ही कोई व्यक्ति सौ बच्चों का पिता बने और दो हज़ार साल तक जीवित रहे (आयतें 3, 6), फिर भी उसे खुश कैसे कहा जा सकता है अगर वह परमेश्वर द्वारा दी गई धन-दौलत और संपत्ति का आनंद नहीं ले सकता? ऐसा व्यक्ति दुखी होता है। इसलिए, धन-दौलत के आशीर्वाद से कहीं ज़्यादा महत्वपूर्ण है उसका आनंद लेने की क्षमता का आशीर्वाद।

दिल पर भारी बोझ

[उपदेशक 6:1-6]

इन दिनों आपके दिल पर क्या बोझ है? आपकी आत्मा पर क्या दबाव है? कल—मंगलवार को—मैं अपने बच्चों को उनकी एकेडमी ले गया। जब डायलन और येरी अपनी क्लास में थे, तो मैं फ़ोन करने के लिए बाहर निकला। फ़ोन करने के बाद, येयून, जो मेरे पीछे-पीछे बाहर आई थी, ने कहा कि हम कहीं बैठें, इसलिए हम एक पेड़ के नीचे जाकर बैठ गए। उसके सामने खड़े होकर मैंने पूछा, "तुम्हारी ज़िंदगी कैसी चल रही है?" उसने जवाब दिया, "अच्छी।" लेकिन जब मैंने पूछा कि उसमें क्या अच्छा है, तो उसने माना, "असल में, मैं थक गई हूँ।" ऐसा लगता है कि छह साल के बच्चे को भी ज़िंदगी थका देने वाली लगती है। आपका क्या हाल है? क्या आप शरीर और मन से थके हुए हैं? क्या आप पर कोई भारी भावनात्मक बोझ है? अगर हाँ, तो मुझे उम्मीद है कि आप यीशु के उस निमंत्रण को स्वीकार करेंगे जो मत्ती 11:28-30 में दिया गया है: "हे सब परिश्रम करने वालों और बोझ से दबे लोगों, मेरे पास आओ; मैं तुम्हें विश्राम दूँगा। मेरा जूआ अपने ऊपर ले लो और मुझसे सीखो, क्योंकि मैं कोमल और मन का दीन हूँ, और तुम अपनी आत्माओं के लिए विश्राम पाओगे। क्योंकि मेरा जूआ सहज है और मेरा बोझ हल्का है।" आज के वचन, उपदेशक 6:1 में, राजा सुलैमान, जो उपदेशक भी थे, कहते हैं: "मैंने सूरज के नीचे एक बुराई देखी है, और वह इंसानों पर भारी बोझ की तरह है।" हम पहले ही उस बड़ी बुराई पर विचार कर चुके हैं जिसे सुलैमान ने उपदेशक 5:13-20 में देखा था। वह बड़ी बुराई थी "धन का संचय करना जिससे मालिक को ही नुकसान हो" (पद 13)। इसके अलावा, इसमें अपने ही नुकसान की कीमत पर धन की रक्षा करना शामिल था, ताकि किसी आपदा में सब कुछ खो जाए और बेटे को देने के लिए कुछ भी न बचे। आखिरकार, जैसे इंसान माँ के गर्भ से नंगा आता है, वैसे ही उसे वापस जाना पड़ता है; मेहनत से कमाया हुआ कुछ भी अपने साथ नहीं ले जाया जा सकता (पद 15)—और यह भी एक बुराई है (पद 16)। खुद को नुकसान पहुँचाने की हद तक उस सारे धन की रक्षा करने का क्या मतलब है? अगर कोई आपदा आ जाए और सब कुछ खो जाए, और बच्चों के लिए कोई विरासत न बचे, तो उसका क्या फ़ायदा हुआ? एक ऐसी ज़िंदगी जो खाली हाथ

शुरू होती है और खाली हाथ खत्म हो जाती है—यह सच में एक बहुत बड़ी बुराई है। फिर भी, राजा सुलैमान ने इस दुनिया में एक और बुराई देखी—एक ऐसी चीज़ जो इंसानों पर भारी बोझ की तरह है (6:1)। तो, यह भारी बोझ क्या है? उपदेशक 6:2 देखिए: “परमेश्वर कुछ लोगों को धन-दौलत और सम्मान देता है, ताकि उनकी आत्मा को किसी चीज़ की कमी न रहे, फिर भी वह उन्हें इनका आनंद लेने की क्षमता नहीं देता; इसके बजाय, कोई अजनबी इनका आनंद लेता है। यह व्यर्थता और एक गंभीर बुराई है।” लोगों पर जो बुराई भारी बोझ की तरह है, वह यह है: परमेश्वर से धन-दौलत और सम्मान पाना—दिल की हर इच्छा पूरी होना—फिर भी असल में उनका आनंद लेने की क्षमता न होना। इसके बजाय, परमेश्वर उन सभी चीज़ों का आनंद किसी और को देता है। तो, वह कौन है जिसे परमेश्वर उस धन-दौलत और सम्मान का आनंद लेने देता है? उपदेशक 2:26 देखिए: “जो व्यक्ति उसे प्रसन्न करता है, उसे परमेश्वर बुद्धि, ज्ञान और खुशी देता है, लेकिन पापी को वह धन इकट्ठा करने और जमा करने का काम देता है ताकि उसे उस व्यक्ति को सौंप सके जो परमेश्वर को प्रसन्न करता है...”। इसका मतलब है कि परमेश्वर पापियों से मेहनत करवाता है और धन इकट्ठा करवाता है, ताकि आखिर में वह धन—जो पापी ने जमा किया है—उसे दे दे जो उसे प्रसन्न करता है, ताकि वह उसका आनंद ले सके। यह भी व्यर्थता और एक “गंभीर बुराई” है—यानी, एक ऐसी बुराई जो दुख देती है (आयत 2)।

इसके अलावा, राजा सुलैमान ने जो दुखद बात देखी, वह यह है: भले ही किसी आदमी के पास वह सारा धन-दौलत और सम्मान हो, और उसके सौ बच्चे हों और वह लंबी ज़िंदगी जिए, फिर भी हो सकता है कि वह अपनी लंबी ज़िंदगी में उन सभी आशीषों का आनंद न ले पाए (आयत 3)। ज़रा सोचिए: धन-दौलत, सम्मान, बच्चे और लंबी उम्र की आशीषें पाना, फिर भी उस बहुतायत का आनंद न ले पाना या अपनी आत्मा में खुशी न पा पाना, कितनी दर्दनाक बुराई है? और तो और, अगर—इन आशीषों का आनंद न ले पाने के अलावा—मरने पर उसे ठीक से दफ़नाया भी न जाए, तो यह किसी व्यक्ति के लिए कितनी बड़ी तकलीफ़ (एक “गंभीर बुराई”) की बात है! उस समय पूरब में, ठीक से न दफ़नाया जाना सबसे बड़ा अपमान माना जाता था। इसलिए, राजा सुलैमान कहते हैं कि मरा हुआ बच्चा उस व्यक्ति से बेहतर स्थिति में है जो इतनी सारी खुशियों का आनंद नहीं ले पाता और मरने पर उसे दफ़नाया भी नहीं जाता (पद 3)। गर्भ में ही खत्म हो जाने वाला बच्चा उस व्यक्ति से बेहतर स्थिति में कैसे हो सकता है जो खुशियों का आनंद नहीं ले पाता और मरने पर उसे दफ़नाया भी नहीं जाता? आज

के हिस्से, उपदेशक 6:4-5 पर विचार करें: “क्योंकि वह व्यर्थ में आता है और अंधेरे में चला जाता है, और उसका नाम अंधेरे में छिप जाता है; भले ही उसने न तो सूरज देखा और न ही कुछ जाना, फिर भी उसे दूसरे व्यक्ति की तुलना में अधिक आराम मिलता है।” उन दिनों, अगर कोई व्यक्ति लंबी ज़िंदगी जीता था और उसके कई बच्चे होते थे, लेकिन अगर वह बिना किसी के शोक मनाए और बिना सम्मान के मर जाता था, तो उसे गर्भ में ही खत्म हो जाने वाले बच्चे से भी बदतर स्थिति में माना जाता था (मैकआर्थर)। गर्भ में ही खत्म हो जाने वाला जीवन कभी इस दुनिया की धूप नहीं देखता और कुछ नहीं जानता—व्यर्थ में आता है और अंधेरे में मर जाता है—फिर भी वह उस व्यक्ति से बेहतर स्थिति में है जो परमेश्वर द्वारा दी गई आशीषों (धन, समृद्धि, सम्मान, बच्चे और लंबी उम्र) का सही मायने में आनंद नहीं ले पाता और मरने पर उसे दफ़नाया भी नहीं जाता; इसका कारण यह है कि गर्भ में ही खत्म हो जाने वाले बच्चे को शांति मिलती है। दूसरे शब्दों में, गर्भ में ही खत्म हो जाने वाला बच्चा उस व्यक्ति से बेहतर स्थिति में है जो उन आशीषों से वंचित रह जाता है और जिसे ठीक से दफ़नाया नहीं जाता, क्योंकि वह बच्चा कभी भी दुनिया में होने वाली बुराई को नहीं देखता (4:3)। चाहे कोई इस दुनिया में कितना भी लंबा जीवन जिए, अगर वह धन और समृद्धि का आनंद नहीं ले पाता—बल्कि मेहनत, दुख और पीड़ा के बीच जीता है और धरती पर होने वाली बुराई को देखता है, और अंत में बिना ठीक से दफ़नाए मर जाता है—तो गर्भ में ही खत्म हो जाने वाला बच्चा वास्तव में बेहतर स्थिति में है; क्योंकि गर्भ में ही खत्म हो जाने के बावजूद, वह बच्चा दुनिया की चिंताओं, दर्द, मेहनत और पीड़ा से आज़ाद रहता है और शांति पाता है। ऐसा कहते हुए, राजा सुलैमान एक निष्कर्ष निकालते हैं: “भले ही वह दो बार हज़ार साल जिए, फिर भी किसी अच्छाई का आनंद न ले पाए—क्या वे दोनों एक ही जगह नहीं जाते?” (6:6)। आखिरकार, चाहे वह मरा हुआ बच्चा हो या कोई ऐसा व्यक्ति जो हर तरह का धन, दौलत और सम्मान हासिल करता है और दो हज़ार साल तक जीता है—एक हज़ार साल की अवधि से दोगुना—अगर वे बिना किसी खुशी का आनंद लिए मर जाते हैं, तो क्या वे दोनों एक ही जगह नहीं लौटते: मिट्टी में? इसलिए, राजा सुलैमान की नज़र में, यह भी एक बहुत बड़ी बुराई और इंसानियत पर एक भारी बोझ है।

मुझे चर्च का एक मौका याद है जब हमने भजन 337 (पहले 363) गाया था, “ऑल माय ट्रायल्स एंड हेवी बर्डन्स” (मेरी सारी मुश्किलें और भारी बोझ); मंडली के एक सदस्य ने कहा कि इसे गाकर उन्हें थोड़ा उदास महसूस

हुआ। असल में, इस भजन को गाने की एक वजह यह भी है कि जब मेरा दिल थका हुआ और भारी होता है, तो मैं सब कुछ प्रभु यीशु के सामने रखना चाहता हूँ। और इसलिए, हम अक्सर इस तरह की स्तुति गाते हैं:

(पद 1) जब मैं अपनी सारी मुश्किलें और भारी बोझ प्रभु यीशु के सामने रखता हूँ,

वह मेरी चिंता में मुझे देखते हैं और मेरी सारी फिक्र खुद उठा लेते हैं।

(पद 2) जब मैं अपने सारे दुख और मुझ पर आने वाली मुसीबतें प्रभु यीशु के सामने रखता हूँ,

वह खुद मुझे बचाते हैं और मुझ पर अपना असीम प्रेम बरसाते हैं।

(पद 3) जब मेरा बोझ और भारी होता जाता है और मैं उसे प्रभु यीशु के सामने रखता हूँ,

वह खुद मुझे बचाते हैं और मेरी जगह वह बोझ उठा लेते हैं।

(पद 4) जब मैं अपने दिल की मुश्किलें और अपने भयानक पाप प्रभु यीशु के सामने रखता हूँ,

यीशु मेरी ताकत बन जाते हैं और मुझे दुनिया पर जीत पाने की शक्ति देते हैं।

(कोरस) जब मैं अकेले भारी बोझ उठाता हूँ और सह न पाने के कारण गिर जाता हूँ,

तो जो मुझ पर दया करता है और मुझे बचाता है—वह अनुग्रह का प्रभु यीशु ही है।

हालाँकि, कई बार ऐसा भी हुआ जब इस भजन को गाने के बाद भी मेरा दिल भारी रहा। ऐसा इसलिए था क्योंकि उस प्रभु पर भरोसा करके बोझ को हल्का मानने के बजाय, मैं उस बोझ के वज़न पर ही बहुत ज़्यादा ध्यान देता था जिसे मैं उनके सामने रख रहा था। नतीजतन, मैं अक्सर भारी दिल और लड़खड़ाती आवाज़ में गाता था। फिर भी, लगभग तीन साल पहले, मैं चीन गया जहाँ एक सीनियर पादरी रहते थे। सुबह करीब 4:00 बजे, बिस्तर पर लेटे हुए, मैंने सुना कि सीनियर पादरी दिव्यांग लोगों और कोरियाई मूल के एक डीकन के साथ सुबह की प्रार्थना सभा में यह भजन गा रहे थे; मुझे याद है कि उनके गाने में बहुत ताकत थी। यह स्तुति का एक ज़ोरदार गीत था, जिसमें भारीपन का कोई एहसास नहीं था। इतनी ज़बरदस्त स्तुति कैसे संभव थी? अब इस बारे में सोचते हुए, मुझे लगता है कि सीनियर पास्टर को अपनी आत्मा के लिए शांति इसलिए मिली क्योंकि उन्होंने यीशु की बात विनम्रता से मानी—जो थके-हारे और बोझ से दबे लोगों को बुलाते हैं—और अपने सारे बोझ प्रभु को सौंप दिए; इससे उन्हें प्रभु द्वारा दिए गए भारी बोझ को भी हल्का समझने में मदद मिली। मेरी प्रार्थना है कि आज के वचन के ज़रिए, हमें वह संदेश मिले जो परमेश्वर हमें देना चाहते हैं; और जब भी हमें इस दुनिया की ऐसी परेशानियों

का सामना करना पड़े जो हमारे दिलों पर बोझ डालती हैं, तो हम विनम्रता से उन भारी बोझों को प्रभु के सामने रख सकें और अपनी आत्मा के लिए वह शांति पा सकें जो केवल वही देते हैं।

क्या आप ज़िंदगी का मज़ा ले रहे हैं?

“अगर कोई आदमी सौ बच्चों का पिता बने और बहुत सालों तक ज़िंदा रहे—चाहे वह कितने भी लंबे समय तक जिए—अगर वह अपनी दौलत का मज़ा नहीं ले पाता और उसे ठीक से दफ़नाया नहीं जाता, तो मैं कहता हूँ कि उससे बेहतर तो मरा हुआ पैदा हुआ बच्चा है। ... भले ही वह दो बार हज़ार साल तक जिए, लेकिन अपनी दौलत का मज़ा न ले पाए—तो क्या फ़ायदा? क्या दोनों का अंत एक ही जगह नहीं होता?”
(सभोपदेशक 6:3, 6)।

क्या आप खाने-पीने का मज़ा लेते हैं? क्या आपको अपनी कड़ी मेहनत से संतुष्टि मिलती है? बाइबल कहती है कि “हर इंसान के लिए, खाना-पीना और अपनी सारी मेहनत से संतुष्टि पाना—यह परमेश्वर का तोहफ़ा है” (सभोपदेशक 3:13)। बाइबल कहती है कि इंसान के दिल को खुश करने के लिए इससे बेहतर कुछ नहीं है (2:24, 8:15) और इसे अच्छा और सुंदर बताती है (5:18)। इसलिए, जब तक हम कर सकते हैं, हमें परमेश्वर के दिए इस तोहफ़े का मज़ा लेना चाहिए। वजह यह है कि एक समय ऐसा आएगा जब हम खाना-पीना तो चाहेंगे लेकिन नहीं कर पाएँगे, और एक समय ज़रूर ऐसा आएगा जब हम काम करना चाहेंगे लेकिन कर नहीं पाएँगे।

आज के हिस्से में—सभोपदेशक 6:3 और 6—हम एक सचमुच दुखी इंसान से मिलते हैं। इस दुखी इंसान (आयत 1) को परमेश्वर से दौलत, धन-संपत्ति और सम्मान मिला—उसे किसी चीज़ की कमी नहीं थी जिसकी उसने चाहत की थी (आयत 2)। फिर भी, इसके बावजूद, उसे कोई संतुष्टि नहीं मिलती (5:10)। इसके अलावा,

अपनी बहुत सारी संपत्ति की वजह से, वह तरह-तरह की चिंताएँ करता है और सो नहीं पाता (आयत 12)। सचमुच गंभीर समस्या यह है कि वह अपनी दौलत को इस तरह से पकड़कर रखता है कि आखिर में उसे ही नुकसान पहुँचता है (आयत 13)। फिर, मुसीबत आने पर, वह वह दौलत खो देता है और अपने बच्चों को देने के लिए उसके पास कुछ नहीं बचता (आयत 14)। नतीजतन, उसे अपनी पूरी ज़िंदगी अंधेरे, दुख, तकलीफ़, गुस्से और बीमारी में बितानी पड़ती है (आयत 17)। यह सचमुच बहुत बड़ा दुर्भाग्य है (आयत 16)। आखिरकार, इंसान दुनिया में नंगा आता है; चाहे उसने संपत्ति पाने के लिए कितनी भी कड़ी मेहनत की हो, जब वह यह दुनिया छोड़ता है तो अपने साथ कुछ नहीं ले जा सकता (आयत 15)। क्योंकि इंसान इस दुनिया से वैसे ही जाता है जैसे वह आया था, इसलिए हवा को पकड़ने की बेकार कोशिश करना—जिसे पकड़ना नामुमकिन है—एक बहुत बड़ा दुख है (वचन 16)। सच में बहुत बुरा तब होता है जब किसी को भगवान से वह सब कुछ मिल जाता है जिसकी वह चाहत रखता है—धन-दौलत और सम्मान—लेकिन भगवान उसे उसका आनंद लेने का मौका नहीं देते, और कोई अजनबी उसका आनंद उठाता है (6:2)। यह कितनी बेकार और दुखद बात है! (वचन 2) भले ही कोई आदमी सौ बच्चों का पिता बने और लंबी ज़िंदगी जिए—दो हज़ार साल तक—लेकिन अगर वह बिना खुशी पाए मर जाता है, तो उसकी किस्मत कितनी बुरी है! (वचन 3)

दोस्तों, भगवान की दी हुई छोटी सी ज़िंदगी में सबसे अच्छी बात यह है कि हम खाएं-पिएं और अपने काम में संतुष्टि पाएं (5:18)। अगर भगवान हमें धन-दौलत देते हैं, और हमें उनका आनंद लेने और अपनी मेहनत में खुशी पाने का मौका देते हैं, तो यह भगवान की ओर से एक तोहफ़ा है (वचन 19)। क्योंकि भगवान हमारे दिलों को खुशी से भर देते हैं, इसलिए अगर हम भगवान के तोहफ़ों को स्वीकार करें और उनका आनंद लें, तो हम ज़िंदगी के छोटे होने के बारे में ज़्यादा नहीं सोचेंगे (वचन 20)। इसलिए, आइए हम सब भगवान के तोहफ़ों को स्वीकार करें और उनका आनंद लें। भगवान ने हमें मसीह में स्वर्गीय स्थानों में हर आध्यात्मिक आशीष से नवाज़ा है (इफिसियों 1:3)। मैं प्रार्थना करता हूँ कि उन सभी स्वर्गीय आध्यात्मिक आशीषों का आनंद लेने की खुशी आपके दिलों को भर दे।

परछाई की तरह बीता जीवन

[उपदेशक 6:7-12]

कल, मंगलवार को, मैं अपने चर्च के एक डीकन से मिलने अस्पताल गया। उन्हें पिछले शुक्रवार को फेफड़ों की समस्या के कारण भर्ती कराया गया था, और ऐसा लग रहा था कि मेडिकल टीम कारण का पता लगाने और इलाज का तरीका तय करने के लिए लगातार टेस्ट कर रही थी। जब मैं कल सुबह उनसे मिलने गया, तो डीकन ने कहा कि पचासी साल जीने के बाद, वे इस नतीजे पर पहुँचे हैं कि आखिरकार सब कुछ व्यर्थ है। इसीलिए मुझे उपदेशक की किताब में राजा सुलैमान के शब्द याद आए और मैंने उनसे यह वचन साझा किया: “व्यर्थ! व्यर्थ! पूरी तरह व्यर्थ! सब कुछ व्यर्थ है” (1:2)। एक ऐसे बुजुर्ग व्यक्ति की बात सुनकर जिन्होंने भरपूर जीवन जिया था, मैं फिर से सोचने लगा कि मुझे अपना जीवन कैसे जीना चाहिए—एक ऐसा जीवन जो सचमुच बहुत क्षणभंगुर और व्यर्थ है।

आज के अंश, उपदेशक 6:12 में, राजा सुलैमान (जो उपदेशक भी हैं) ऐसे जीवन की बात करते हैं जो “परछाई की तरह” बीतता है। परछाई की तरह जीवन बिताने का असल में क्या मतलब है? ज़रा इसके बारे में सोचिए। जब आप “परछाई” शब्द सुनते हैं तो आपके मन में क्या आता है? मेरे मन में सबसे पहली बात यह आती है कि परछाई को पकड़ा या थामे नहीं रखा जा सकता। एक और बात यह है कि परछाई दिखाई तो देती है पर टिकती नहीं; वह पल भर में गायब हो जाती है। राजा सुलैमान द्वारा जीवन को परछाई बताने के कई अर्थ हो सकते हैं:

(1) पहला, परछाई की तरह बीते जीवन का मतलब है ऐसा जीवन जो तेज़ी से बीत जाता है।

अय्यूब 14:1-2 पर विचार करें: "स्त्री से जन्मा मनुष्य थोड़े दिनों का और दुखों से भरा होता है। वह फूल की तरह खिलता है और मुरझा जाता है; एक क्षणभंगुर परछाई की तरह, वह टिकता नहीं है।" जैसा कि अय्यूब ने देखा, इस दुनिया में इंसान का जीवन छोटा और दुखों से भरा होता है; यह परछाई की तरह तेज़ी से बीत जाता है और टिकता नहीं है। यही सच्चाई भजन संहिता 90:10 में भी दोहराई गई है: "हमारे दिन सत्तर या अस्सी साल के हो सकते हैं, अगर हमारी ताकत बनी रहे; फिर भी उनमें से सबसे अच्छे दिन भी दुख और शोक से भरे होते हैं, क्योंकि वे जल्दी बीत जाते हैं, और हम उड़ जाते हैं।" भजन के लेखक मूसा, सत्तर या अस्सी साल की ज़िंदगी—जो सिर्फ़ मेहनत और दुख से भरी होती है—का वर्णन ऐसे करते हैं जैसे वह बहुत तेज़ी से उड़कर चली जाती है।

(2) दूसरी बात, परछाई की तरह गुज़री ज़िंदगी का मतलब है "किसी व्यक्ति की बेकार ज़िंदगी के सभी दिन।"

दूसरे शब्दों में, परछाई की तरह गुज़री ज़िंदगी का मतलब है इस दुनिया में ज़िंदगी के छोटे और बेकार (बिना किसी मकसद के) दिन। आज के वचन, उपदेशक 6:12 को देखें: "...परछाई की तरह गुज़री ज़िंदगी, उसकी बेकार ज़िंदगी के सभी दिनों में..." उपदेशक की उन बातों को याद करें जिन पर हमने पहले भी सोचा है; राजा सुलैमान बार-बार कहते हैं कि चीज़ें "व्यर्थ" हैं (1:2; 2:15, 19, 21, 23; 3:19; 4:7, 8; 5:10) और "हवा के पीछे भागने" जैसी हैं (1:14, 17; 2:11, 17, 26; 4:4, 16), वे पूछते हैं "क्या फ़ायदा है?" और चीज़ों को "बेफ़ायदा" बताते हैं (1:3; 2:11; 4:8; 5:11, 16)। ऐसी ज़िंदगी बिताना—जो परछाई की तरह तेज़ी से गुज़र जाती है—और उसमें बेफ़ायदा, बेकार काम करना, एक व्यर्थ ज़िंदगी जीना है। बेशक, यह बात उन लोगों पर लागू नहीं होती जो परमेश्वर को खुश करते हैं। कारण यह है कि जो लोग परमेश्वर को खुश करते हैं, उनकी ज़िंदगी परमेश्वर की नज़र में फ़ायदेमंद और अर्थपूर्ण होती है, भले ही धरती पर उनका समय कितना भी छोटा और क्षणभंगुर क्यों न हो। बल्कि, यह वचन पापी (6:1-6) के बारे में है—खासकर, उस पापी के बारे में जिसकी हालत मरे हुए पैदा हुए बच्चे से भी बदतर है। मरे हुए पैदा हुए बच्चे से भी बदतर हालत वाला

यह व्यक्ति कौन है? यह वह व्यक्ति है जिसे परमेश्वर से आशीर्ष तो मिलती हैं—जैसे धन-दौलत, सम्मान, बच्चे और लंबी उम्र—लेकिन न तो उसे उनका आनंद लेने की क्षमता मिलती है और न ही ठीक से दफ़नाया जाता है। ऐसे पापी की ज़िंदगी परछाई की तरह होती है; वे धरती पर अपने दिन बिना किसी असली मकसद के, बेकार हालत में बिताते हैं। तो फिर, परछाई की तरह बीतने वाली ज़िंदगी—इतनी तेज़ी से गुज़र जाने वाली ज़िंदगी—को बेकार क्यों माना जाता है? यह बेमतलब क्यों है? इसका क्या कारण है?

(1) पहला कारण यह है कि परछाई जैसी ज़िंदगी बेकार और बेमतलब होती है क्योंकि इसमें संतुष्टि नहीं होती।

जैसा कि हमने पहले ही देखा है... उपदेशक 1:8 में राजा सुलैमान ने कहा, "सब बातें थका देने वाली हैं; इंसान उन्हें बयान नहीं कर सकता। आँखें देखने से नहीं भरती और न ही कान सुनने से तृप्त होते हैं।" इसका क्या मतलब है? इसका मतलब है कि आँखें और कान कभी संतुष्ट नहीं होते, चाहे वे कितना भी देख लें या सुन लें। दूसरे शब्दों में, इंसान के लालच की कोई सीमा नहीं होती। इसलिए, राजा सुलैमान इस दुनिया को बेकार बताते हैं क्योंकि इंसान का लालच कभी संतुष्ट नहीं हो सकता। वे आज के वचन, उपदेशक 6:7 में भी ऐसी ही बात कहते हैं: "इंसान की सारी मेहनत उसके पेट के लिए होती है, फिर भी उसकी भूख नहीं मिटती।" यहाँ सुलैमान जिस "इंसान" की बात कर रहे हैं, वह वही व्यक्ति है जिसका ज़िक्र आयत 3 में किया गया है— एक ऐसा व्यक्ति जिसे मरे हुए पैदा हुए बच्चे से भी ज़्यादा बदकिस्मत माना जाता है क्योंकि वह अपनी आत्मा के लिए संतुष्टि नहीं पा पाता (पार्क युन-सन)। यह व्यक्ति अपने पेट के लिए चाहे कितनी भी मेहनत क्यों न करे, उसकी भूख अधूरी ही रहती है; संक्षेप में, उसे अपनी आत्मा के लिए कोई तृप्ति नहीं मिलती। वह अपनी आत्मा को संतुष्ट क्यों नहीं कर पाता? कारण यह है कि जहाँ हमारी आत्माओं को सच्ची संतुष्टि केवल परमेश्वर से ही मिल सकती है, वहीं वह परमेश्वर से अलग हटकर अपनी भूख मिटाने की कोशिश करता है। जिस व्यक्ति की आत्मा में ऐसी संतुष्टि नहीं होती, उसे जीवन में कोई सच्चा आनंद नहीं मिलता; इसके बजाय, वह बस मेहनत करता रहता है और अंततः मौत का सामना करने से पहले एक बेकार और बेमतलब की ज़िंदगी जीता है।

(2) दूसरा कारण यह है कि परछाई की तरह बीतने वाली ज़िंदगी बेकार और बेमतलब होती है क्योंकि इंसान उद्धार के रास्ते पर नहीं चल पाता।

आज के वचन, उपदेशक 6:8 को देखिए: "क्योंकि बुद्धिमान व्यक्ति को मूर्ख पर क्या लाभ है? उस गरीब व्यक्ति के पास क्या है जो जीवित लोगों के बीच सही ढंग से व्यवहार करना जानता है?" राजा सुलैमान यहाँ यह कह रहे हैं कि दुनिया के मामलों में, बुद्धिमान और मूर्ख व्यक्ति के बीच कोई अंतर नहीं है अगर उन्हें अपनी आत्माओं का उद्धार नहीं मिला है (पार्क युन-सन)। भले ही कोई व्यक्ति विनम्र हो और दुनिया के कामों को समझदारी से करे, फिर भी मुख्य बात यह है: परमेश्वर को जाने बिना और आत्मा की मुक्ति के बिना, ऐसे व्यक्ति को कोई सच्चा लाभ नहीं मिलता। उपदेशक 2:12-17 में, जिस पर हमने पहले भी मनन किया है, राजा सुलैमान ने बुद्धिमान और मूर्ख लोगों के बारे में बात की है; वहाँ मुख्य सीख यह थी: "बुद्धिमान और मूर्ख, दोनों को ही लंबे समय तक याद नहीं रखा जाएगा; आने वाले दिनों में, दोनों भुला दिए जाएँगे। अफ़सोस, बुद्धिमान भी मूर्ख की तरह ही मर जाता है! इसलिए मुझे जीवन से नफ़रत हो गई, क्योंकि इस दुनिया में जो काम किए जाते हैं, वे मुझे दुख देने वाले लगे। सब कुछ व्यर्थ है, हवा के पीछे भागने जैसा है" (पद 16-17)। बुद्धिमान और मूर्ख दोनों को ही मौत के रास्ते पर चलना पड़ता है; असली बात यह है कि मौत के *बाद* क्या होता है। मायने यह रखता है कि आत्मा को अनंत जीवन मिलता है या वह हमेशा के विनाश का सामना करती है। कोई व्यक्ति धरती पर चाहे कितनी भी समझदारी और विनम्रता से काम करे, अगर आत्मा मुक्ति के रास्ते पर नहीं चल रही है, तो मौत के बाद उसका क्या होगा? परछाई की तरह तेज़ी से बीत जाने वाले जीवन का कोई मतलब नहीं है अगर कोई यीशु पर विश्वास नहीं करता और मुक्ति के रास्ते पर नहीं चलता।

तो, हमें कैसे जीना चाहिए ताकि हमारा कुछ समय का, परछाई जैसा जीवन परमेश्वर की नज़र में सार्थक और फायदेमंद बन सके? दूसरे शब्दों में, धरती पर हमारे थोड़े से समय में ऐसा जीवन कैसा होता है जो परमेश्वर के लिए सचमुच फायदेमंद और सार्थक हो?

सबसे पहले, परमेश्वर की नज़र में फायदेमंद और सार्थक जीवन—भले ही वह कुछ समय का हो—वही है जो केवल प्रभु में ही संतुष्टि पाता है।

जीवन का सच्चा लाभ और अर्थ केवल... इसका मतलब है यीशु पर विश्वास के ज़रिए मुक्ति के रास्ते पर चलना और केवल उसी में संतुष्ट जीवन जीना। हमें लालच को छोड़ देना चाहिए और संतोष के साथ जीना चाहिए, और केवल यीशु में ही तृप्ति पानी चाहिए। जब हम कुछ समय के जीवन—जो परछाई की तरह बीत जाता है—का सफ़र तय करते हैं, तो यीशु ही एकमात्र ऐसे हैं जो हमारी आत्माओं को संतुष्ट कर सकते हैं। केवल यीशु ही हमारी आत्मा की गहरी ज़रूरतों को सचमुच पूरा कर सकते हैं; क्योंकि हमारी आत्माएँ अनंत जीवन के लिए तरसती हैं, इसलिए केवल अनंत यीशु ही उन्हें संतुष्ट कर सकते हैं। प्रेरित पौलुस की तरह, हमें हर हालात में संतोषी रहना सीखना चाहिए—चाहे हमारे पास सब कुछ हो या कमी हो (फिलिप्पियों 4:11)। इसलिए, हमें सिर्फ़ यीशु में ही संतुष्ट रहना चाहिए, उनके वचन का पालन करना चाहिए और उन चीज़ों पर ध्यान देना चाहिए जो हमेशा रहने वाली हैं। यही वह तरीका है जिससे हम अपनी इस छोटी-सी दुनियावी ज़िंदगी को सच में सार्थक और परमेश्वर को भाने वाला बना सकते हैं।

दूसरी बात, परछाई की तरह तेज़ी से गुज़रने वाली ज़िंदगी में, परमेश्वर की नज़र में वही ज़िंदगी फ़ायदेमंद और सार्थक होती है जिसमें हम प्रभु का काम विनम्रता और समझदारी से करते हैं।

आज के वचन, उपदेशक 6:8 पर गौर करें: "बुद्धिमान व्यक्ति को मूर्ख की तुलना में क्या फ़ायदा है? जीवित लोगों के बीच कैसा व्यवहार करना है, यह जानने से ग़रीब व्यक्ति को क्या लाभ होता है?" हालाँकि यह वचन उन लोगों के बारे में है जिन्हें अपनी आत्मा के लिए उद्धार नहीं मिला है, लेकिन अगर हम इसके सिद्धांत को उन लोगों पर लागू करें जिन्हें उद्धार *मिल चुका* है, तो इसका मतलब यह है कि धरती पर अपने थोड़े से समय में परमेश्वर के लिए फ़ायदेमंद और सार्थक ज़िंदगी जीने के लिए, हमें प्रभु का काम विनम्रता और समझदारी से करना चाहिए।

कल सुबह की प्रार्थना सभा के दौरान, मैंने 1 शमूएल 15:17 पर विचार किया—खासकर शाऊल के व्यक्तित्व पर। शाऊल, जो कभी खुद को छोटा और विनम्र मानता था, आखिरकार घमंड का शिकार हो गया; उसने अपने लिए एक स्मारक बनवाया और दूसरों से सम्मान पाना चाहा, जबकि उसने परमेश्वर के वचन की अवज्ञा करके पाप किया था। मैंने उस ऐतिहासिक व्यक्ति की तुलना अपने जीवन से की—उस समय की तुलना जब

मैं भी खुद को छोटा समझता था, और अपनी वर्तमान आदत की तुलना जिसमें मैं खुद को बड़ा दिखाना चाहता हूँ। ऐसा करते समय, पवित्र आत्मा ने मुझे अपने पाप पर दुख करने और उसे स्वीकार करके पश्चाताप करने के लिए प्रेरित किया। मैं दुख से भर गया। पवित्र आत्मा ने मुझे अपनी घमंड भरी इच्छा—खुद को बड़ा दिखाने की चाहत—को क्रूस के चरणों में छोड़ने के लिए प्रेरित किया—ताकि मैं सचमुच उस चीज़ को छोड़ सकूँ जिसे सौंपने की ज़रूरत थी। उन्होंने मुझे ऐसी कृपा क्यों दी? इसलिए क्योंकि प्रभु चाहते हैं कि मैं विनम्रता के साथ उनकी देह—यानी कलीसिया—की सेवा करूँ। वे चाहते हैं कि मैं अपनी समझ पर भरोसा करने के बजाय, उनकी विनम्रता का अनुकरण करके और उनकी दी हुई समझदारी पर निर्भर रहकर सेवा करूँ। आपके बारे में क्या? हमें प्रभु की सेवा विनम्रता और उस समझदारी के साथ करनी चाहिए जो उनसे मिलती है। विनम्र और समझदारी भरी सेवा वाला जीवन ही परमेश्वर की नज़र में फ़ायदेमंद और सार्थक जीवन है।

तीसरी बात, परछाई की तरह गुज़रने वाली ज़िंदगी में, परमेश्वर की नज़र में वही ज़िंदगी फ़ायदेमंद और सार्थक होती है जो वर्तमान की अच्छी चीज़ों का आनंद लेती है। आज के वचन, उपदेशक 6:9 को देखें: “आँखों से देखना, मन की भटकन से बेहतर है; यह भी व्यर्थ है और हवा को पकड़ने जैसा है।” एक विद्वान ने इस आयत का अनुवाद इस प्रकार किया है: “दूसरी अच्छी चीज़ों के बारे में सोचने के बजाय वर्तमान की अच्छी चीज़ों का आनंद लेना बेहतर है।” दूसरे शब्दों में, राजा सुलैमान हमें वर्तमान का आनंद लेने और परमेश्वर का धन्यवाद करने के लिए कह रहे हैं (पार्क युन-सन)। राजा सुलैमान ने इस दुनिया में जो दुखद बात देखी, वह यह थी कि एक व्यक्ति को परमेश्वर से भौतिक आशीषें, बच्चों की आशीष और लंबी उम्र की आशीष मिल सकती है, फिर भी वह वास्तव में उनका आनंद लेने में असफल रहता है (आयतें 1-6)। ऐसे व्यक्ति को अपनी आत्मा में कोई सच्ची संतुष्टि या खुशी नहीं मिलती। आपके साथ कैसा है? क्या आपको अपनी आत्मा में संतुष्टि मिलती है जब आप उन सभी आत्मिक आशीषों का आनंद लेते हैं जो परमेश्वर ने आपको यीशु मसीह में दी हैं? हमें अपने वर्तमान जीवन में उन आशीषों का आनंद लेना चाहिए जो परमेश्वर ने पहले ही यीशु मसीह के माध्यम से हम पर कृपापूर्वक दी हैं। उदाहरण के लिए, परमेश्वर की संतान के रूप में अपनाए जाने की आत्मिक आशीष पर विचार करें; हमें वर्तमान में विनम्रता और बुद्धिमानी से इस आशीष का आनंद लेना चाहिए, और अपनी आत्मा को सच्ची खुशी का अनुभव करने देना चाहिए। ऐसा करने

के लिए, हमें परमेश्वर पिता की खोज करनी चाहिए। हमें प्रार्थना करनी चाहिए और परमेश्वर पिता को “अब्बा, पिता” कहकर पुकारना चाहिए। ऐसा करते हुए, हमें परमेश्वर पिता की आवाज़ सुननी चाहिए और उनकी आज्ञा का पालन करना चाहिए। इस प्रकार, हमें परमेश्वर पिता के हृदय को जानना चाहिए। जब हम ऐसा करते हैं—यानी प्रभु द्वारा दी गई खुशी और आनंद का आनंद लेते हुए अपने क्षणभंगुर, परछाईं जैसे जीवन को जीते हैं—तो ऐसा जीवन परमेश्वर की दृष्टि में फायदेमंद और अर्थपूर्ण बन जाता है।

चौथा, परमेश्वर की दृष्टि में फायदेमंद और अर्थपूर्ण जीवन—हमारे अस्तित्व के क्षणभंगुर स्वभाव के बावजूद—वह है जो सच्चाई के प्रति आज्ञाकारिता में और परमेश्वर के भय में जिया जाता है।

आज के अंश, उपदेशक 6:10 पर विचार करें: “जो कुछ भी मौजूद है उसका नाम पहले ही रखा जा चुका है, और यह ज्ञात है कि मनुष्य क्या है; वह उससे मुकाबला नहीं कर सकता जो उससे अधिक शक्तिशाली है।” इस आयत का अर्थ है कि चूंकि परमेश्वर के सामने मनुष्य की स्थिति और सीमाएँ पहले से ही तय हैं, इसलिए उसकी भूमिका केवल परमेश्वर से डरना और अपने दैनिक जीवन में कदम-दर-कदम सच्चाई का पालन करना है (पार्क युन-सन)। जो लोग व्यर्थ और अर्थहीन जीवन जीते हैं, वे परमेश्वर से नहीं डरते। नतीजतन, वे परमेश्वर से बहस करते हैं और अपनी तय सीमाओं से बाहर जाकर काम करते हैं। वे उस परमेश्वर की अनदेखी करते हैं जिसने उनका अस्तित्व और स्थान तय किया है, और बेपरवाही से वह सब बनने की कोशिश करते हैं जो वे चाहते हैं (पार्क युन-सन)। यह सब व्यर्थ है (पद 11)। सच तो यह है कि परमेश्वर के बिना, इंसान की परछाईं जैसी ज़िंदगी पूरी तरह व्यर्थ है (पद 12) (पार्क युन-सन)। इसके उलट, परमेश्वर की नज़र में वही ज़िंदगी फायदेमंद और सार्थक है जो परमेश्वर का डर मानती है; यानी, जो परमेश्वर के वचन को मानकर जी जाती है। यही ‘सभोपदेशक’ (Ecclesiastes) की किताब का निचोड़ है। सभोपदेशक 12:13 इस किताब के संदेश को इस तरह बताता है: “अब सब कुछ सुना जा चुका है; बात का निचोड़ यह है: परमेश्वर का डर मानो और उसकी आज्ञाओं का पालन करो, क्योंकि सभी इंसानों का यही कर्तव्य है।” जब मैंने आज के हिस्से—सभोपदेशक 6:7-12—पर मनन किया, तो मैंने खुद से यह सवाल पूछा: “मैं अपनी बाकी ज़िंदगी कैसे बिताऊँ, जो एक पल में गायब हो जाने वाली परछाईं की तरह बीत रही है?” समय परछाईं की तरह बहुत तेज़ी से निकल जाता है, फिर भी मेरी इच्छा है कि मैं ऐसी ज़िंदगी जीऊँ जो सच में परमेश्वर की नज़र

में फायदेमंद और सार्थक हो। मैं सिर्फ़ प्रभु में संतुष्ट रहकर जीना चाहता हूँ। मैं उस काम को नम्रता और समझदारी से करना चाहता हूँ जो उसने मुझे सौंपा है। साथ ही, अपनी मौजूदा हालात में, मैं उन आत्मिक आशीषों की कद्र करना और उनका आनंद लेना चाहता हूँ जो परमेश्वर ने मुझे यीशु मसीह में पहले ही दी हैं। ऐसा करते हुए, मैं परमेश्वर के वचन को मानकर जीना चाहता हूँ—उसका डर मानते हुए, ठीक वैसे ही जैसा राजा सुलैमान ने 'सभोपदेशक' की किताब में कहा था। मेरी प्रार्थना है कि यही संकल्प आज आपकी और मेरी प्रार्थना बन जाए।

“जीवित लोग इसे दिल से लेंगे”

[उपदेशक 7:1-4]

मुझे याद है कि कुछ समय पहले कोरिया के YTN चैनल पर रात 11 बजे के प्रसारण में मैंने एक दिलचस्प समाचार रिपोर्ट देखी थी। यह रिपोर्ट कोरिया के ग्योंगगी-डो (Gyeonggi-do) में बने एक "डेथ एक्सपीरियंस सेंटर" (मृत्यु का अनुभव कराने वाले केंद्र) के बारे में थी, जहाँ लोग मरने का अनुभव कर सकते थे। इसमें भाग लेने वाले लोग अपनी अंतिम संस्कार वाली तस्वीरें खिंचवाते, अपनी वसीयत लिखते और पढ़ते, और यहाँ तक कि अपनी तस्वीरें लेकर मुर्दाघर (मॉर्चरी) में जाते और ज़ोर-ज़ोर से अपनी वसीयत पढ़ते थे। मैंने इनमें से कई लोगों को रोते हुए देखा, खासकर जब वे अपनी वसीयत पढ़ रहे थे। वसीयत पढ़ने के अलावा, वे सचमुच ताबूत के अंदर लेटते थे। फिर, कोई दूसरा व्यक्ति धीरे-धीरे ताबूत के ढक्कन पर मिट्टी डालता था। मिट्टी के गिरने की आवाज़—जिसमें एक खास तरह का अंतराल होता था—को सुनकर मैंने कल्पना की कि ताबूत के अंदर लेटे हुए उस आवाज़ को सुनने से जीवित लोगों को मृत्यु का अनुभव कितना वास्तविक लगता होगा। जिन लोगों ने यह अनुभव किया, उन्होंने अक्सर कहा कि इससे उन्हें और अधिक जीने की इच्छा हुई, और इस प्रक्रिया के दौरान उन्हें सबसे ज़्यादा अपने परिवार की याद आई। एक साक्षात्कार में, केंद्र के निदेशक ने बताया कि उन्होंने यह कार्यक्रम इसलिए शुरू किया ताकि लोग "अच्छी मौत" के लिए तैयारी कर सकें, खासकर ऐसे दौर में जब लोग "अच्छी सेहत" (well-being) को लेकर इतने जुनूनी हैं। हालाँकि कुछ लोग सोच सकते हैं, "आजकल लोग कुछ भी नया ले आते हैं," लेकिन मुझे व्यक्तिगत रूप से यह एक बहुत अच्छा विचार लगा। मेरा मानना है कि अगर ऐसे अनुभव लोगों को मृत्यु की सच्चाई को सही मायने में समझने और उसके लिए तैयारी करने में मदद करते हैं, तो यह फायदेमंद है।

आज के वचन, उपदेशक 7:2 में, राजा सुलैमान—जो उपदेशक भी थे—कहते हैं, "जीवित लोग इसे दिल से लेंगे।" तो फिर, "यह" क्या है? यह सच्चाई कि हर किसी का अंतिम अंत मृत्यु ही है। आज के वचन, उपदेशक 7:2 को देखें: "दावत वाले घर में जाने के बजाय शोक वाले घर में जाना बेहतर है, क्योंकि यही सभी मनुष्यों का अंत है..." हमें अपनी मृत्यु पर गहराई से विचार करने की ज़रूरत है। हमें गंभीरता से इस बात पर सोचना चाहिए कि किसी दिन हम भी इस ट्रेन से उतरेंगे और अपनी अंतिम मंज़िल तक पहुँचेंगे। मृत्यु के नज़रिए से, हमें हर पल गंभीरता से सोचना चाहिए कि हमें कैसे जीना चाहिए। इसे हासिल करने के लिए हमें क्या करना चाहिए? राजा सुलैमान उपदेशक 7:2 में हमें एक बेहतरीन तरीका बताते हैं। वह तरीका क्या है? बस "मातम वाले घर जाना" (आयत 2)। दूसरे शब्दों में, किसी के अंतिम संस्कार में शामिल होना मौत के बारे में सोचने का एक असरदार तरीका है। शायद अपनी मौत के बारे में गहराई से सोचने का इससे बेहतर कोई तरीका नहीं है कि हम किसी के अंतिम संस्कार में जाएँ। जब हम मरने वाले के लिए शोक मनाते हैं, तो हम जो इस दुनिया में बचे हैं, उन्हें यह सोचने का मौका मिलता है कि हमारी अपनी मौत कैसी होगी। व्यक्तिगत रूप से, जब भी मैं किसी अंतिम संस्कार में जाता हूँ और मौत की सच्चाई को गहराई से महसूस करता हूँ, तो मेरे मन में अक्सर एक खास बात आती है: अच्छी मौत के लिए, मुझे अच्छी ज़िंदगी जीनी होगी। आखिरकार, अंतिम संस्कार में मौत का जो एहसास होता है, वह मुझे एक अच्छी ज़िंदगी जीने के बारे में सोचने का मौका देता है।

अच्छी मौत के लिए हमें अच्छी ज़िंदगी जीनी चाहिए। लेकिन अच्छी ज़िंदगी जीने का क्या मतलब है? हम कैसे जान सकते हैं कि हम अच्छी ज़िंदगी जी रहे हैं या नहीं? ऐसा लगता है कि किसी ने अच्छी ज़िंदगी जी है या नहीं, इसका सही मूल्यांकन मौत के बाद ही हो सकता है। तो फिर, हम कैसे जान सकते हैं? हम अपने नाम के बारे में सोचकर इसका जवाब पा सकते हैं। दूसरे शब्दों में, हम यह अंदाज़ा लगा सकते हैं कि हमने कैसी ज़िंदगी जी है, यह सोचकर कि जब लोग हमारे अंतिम संस्कार में हमारे नाम के बारे में सोचेंगे, तो वे हमारे बारे में अच्छा बोलेंगे या नहीं। एक पुरानी कहावत है कि हर इंसान के तीन नाम होते हैं: ① वह नाम जो माता-पिता देते हैं, ② वह नाम जिससे दूसरे हमें बुलाते हैं, और ③ वह नाम जो हम खुद कमाते हैं। हम कैसा नाम कमा रहे हैं? यीशु में विश्वास रखने वालों के तौर पर, हमें इस बात पर सोचना चाहिए कि क्या हमारे नाम तारीफ़ के लायक हैं—न सिर्फ़ परमेश्वर की नज़र में बल्कि लोगों की नज़र में भी—क्योंकि हमने नेक ज़िंदगी

जी है। नीतिवचन 10:7 कहता है, "नेक लोगों की याद एक आशीष है, लेकिन बुरे लोगों का नाम सड़ जाएगा।" इसका मतलब है कि नेक लोगों का नाम मौत के बाद भी सम्मान और तारीफ़ पाता है; यह एक आशीष वाला नाम है। सभोपदेशक 7:1 में आज के पाठ के शब्दों में कहें तो, यह एक "अच्छा नाम" है। बाइबल हमें बताती है कि यह अच्छा नाम "कीमती इत्र" से भी बेहतर है। दुनिया की दौलत से ज़्यादा कीमती एक अच्छा नाम है।

लेकिन समस्या क्या है? इंसान की फितरत होती है कि वह मातम वाले घर के बजाय दावत वाले घर को पसंद करता है। हम दुख के बजाय हँसी-खुशी को पसंद करते हैं (आयत 3)। लोग मरने वाले के परिवार से मिलने के बजाय शारीरिक सुख-सुविधाओं में मग्न रहना ज़्यादा पसंद करते हैं (पार्क युन-सन)। फिर भी, शारीरिक सुख व्यर्थ है (2:11)। दुनियावी सुखों का मज़ा लेने के लिए दावत में जाने का परमेश्वर की नज़र में कोई फ़ायदा नहीं है। इसके बजाय, परमेश्वर की नज़र में फ़ायदेमंद बात है शोक मनाने वाले घर जाना और दुख महसूस करना। हंसी से बेहतर दुख क्यों है? इसका कारण यह है कि "चेहरे की उदासी दिल को बेहतर बनाती है" (वचन 3)। इसका क्या मतलब है? इसका मतलब है कि मौत के बारे में सोचने और दुख महसूस करने से हमारा दिल नरम हो जाता है (पार्क युन-सन)। और जब दिल नरम हो जाता है, तो हम अपनी ज़िंदगी बेकार के दुनियावी सुखों के पीछे भागने में बर्बाद नहीं करते। इसके उलट, जब दिल नरम हो जाता है, तो इंसान विनम्रता से परमेश्वर की बात मानता है और ऐसी ज़िंदगी जीता है जो उसे पसंद हो। इसीलिए राजा सुलैमान हमसे कहते हैं: "समझदार का दिल शोक मनाने वाले घर में होता है, लेकिन मूर्खों का दिल मौज-मस्ती वाले घर में होता है" (7:4)।

हमारे दिल मौज-मस्ती वाले घर में नहीं होने चाहिए—यानी दावत वाली जगहों पर जहाँ लोग शारीरिक सुखों में डूबे रहते हैं। इसके बजाय, हमारे दिल शोक मनाने वाले घर में होने चाहिए। हमें अंतिम संस्कार में शामिल होना पसंद करना चाहिए; वहाँ, मरने वाले की मौजूदगी में, हमें अपनी मौत के बारे में सोचना चाहिए। क्योंकि जब प्रभु बुलाते हैं, तो हमें भी जाना ही होता है, क्योंकि मौत हम सबकी आखिरी मंज़िल है (वचन 2)। इसलिए, अपनी मौत के बारे में सोचते हुए, हमें यह सोचना चाहिए कि आज का दिन कैसे जिँएँ जो परमेश्वर की नज़र में सुंदर हो। हमें इस दुनिया में एक "सुंदर नाम" छोड़ना चाहिए—एक ऐसा सुंदर नाम जो हमारे बच्चों और आने वाली पीढ़ियों के दिलों में बसा हो। सबसे सुंदर नाम कौन सा है? वह है "यीशु"। उन्हें मानने वाले और उनके पीछे चलने वाले लोगों के तौर पर, हमें उनकी तरह ज़िंदगी जीनी चाहिए, और अपने बच्चों और

पड़ोसियों के दिलों में यीशु की यादें छोड़नी चाहिए, जो एक दिन हमारे अंतिम संस्कार में शामिल होंगे। इस तरह, जब हमारे बच्चे, आने वाली पीढ़ियाँ या पड़ोसी भी हमारे नामों के बारे में सोचें, तो उनके मन में सच्ची तारीफ़ का भाव आए। इसके अलावा, जब लोग हमारे गुज़र जाने पर शोक मनाएँ, तो उनकी आवाज़ें परमेश्वर का धन्यवाद और तारीफ़ करने के लिए उठनी चाहिए।

आइए मौत के नज़रिए को अपनाएँ।

“दावत वाले घर में जाने से शोक वाले घर में जाना बेहतर है, क्योंकि यह सभी इंसानों का अंत है, और जो जीवित हैं, वे इस बात पर गंभीरता से विचार करेंगे” (सभोपदेशक 7:2)।

नए साल की शुरुआत से ही, मैं दो अंतिम संस्कार में शामिल हो चुका हूँ—और ये दोनों ही एक हफ़्ते के अंदर हुए। इन कार्यक्रमों में शामिल होने से मुझे सभोपदेशक 7:2 पर फिर से सोचने का मौका मिला। जब मैंने इस बात पर विचार किया कि मौत ही सभी लोगों का अंतिम अंजाम है, और एक जीवित व्यक्ति के तौर पर इस सच्चाई को गहराई से महसूस किया, तो मैंने खुद से फिर पूछा: “तो फिर, मुझे कैसे जीना चाहिए?” आज जब मुझे अपने प्यारे तीसरे चाचा, पादरी किम चांग-ह्युक के बारे में खबर मिली, तो यह सोच और भी गहरी हो गई; डॉक्टरों ने कहा है कि उनके पास जीने के लिए बस दो या तीन हफ़्ते बचे हैं। उस आयत पर फिर से मनन करते हुए, मुझे इस सच्चाई को गंभीरता से लेने का पक्का एहसास हुआ। इन विचारों के बीच, मुझे मौत के नज़रिए को ध्यान में रखकर जीने की चुनौती महसूस हुई।

हमें मौत के नज़रिए से क्यों जीना चाहिए? क्योंकि ऐसा करने से हमें बहुत फ़ायदा होता है। वह फ़ायदा क्या है? वैसे तो कई फ़ायदे हैं, लेकिन मैं तीन मुख्य बातें बताना चाहूँगा।

पहली बात, जब हम मौत के नज़रिए से जीते हैं, तो हम इंसानों की कमज़ोरी और बेबसी को स्वीकार करते हैं, जिससे हम पूरी तरह से परमेश्वर पर निर्भर होने लगते हैं।

उन दो अंतिम संस्कारों में शामिल होने से मुझे फिर से एहसास हुआ कि हम इंसान मिट्टी से बने हैं और आखिर में मिट्टी में ही मिल जाते हैं। मुझे याद आया कि बाइबल के अनुसार, हम उस धुंध की तरह हैं जो थोड़ी देर के लिए दिखाई देती है और फिर गायब हो जाती है (याकूब 4:14)। मौत के सामने, इंसान अपनी कमज़ोरी और बेबसी को महसूस किए बिना नहीं रह सकता। चाहे कोई कितना भी ताकतवर योद्धा हो, या कितना भी मशहूर या अमीर, मौत का सामना करते समय हर इंसान को अपनी सीमाओं और बेबसी का सामना करना ही पड़ता है। मेरा मानना है कि मुझ जैसे युवाओं को अंतिम संस्कार में शामिल होने की खास कोशिश करनी चाहिए। वहीं पर हम इंसानों की बेबसी और कमज़ोरी को पूरी तरह समझ सकते हैं। हमें यह कोशिश क्यों करनी चाहिए? इसका मतलब है अपनी ताकत को छोड़ देना—यानी खुद पर निर्भर रहने की आदत को छोड़ना ताकि हम परमेश्वर की शक्ति और सामर्थ्य पर निर्भर हो सकें।

हमें खुद को विनम्र बनाना होगा—सिर्फ दूसरों की नज़र में ही नहीं, बल्कि सचमुच और पूरी तरह से परमेश्वर के सामने। मौत के करीब आने की सच्चाई को देखते हुए, हमें अपनी ताकत को एक तरफ़ रखकर परमेश्वर के सामने झुकना होगा और उनकी शक्ति पर भरोसा करना होगा। अंतिम संस्कार के ज़रिए, हमें यह सीखना चाहिए कि परमेश्वर ही जीवन, मृत्यु और हमारी सभी किस्मतों को अपनी मर्जी से चलाने वाले हैं। दूसरे शब्दों में, हमें परमेश्वर की सर्वोच्च सत्ता को मानना सीखना होगा। हमें यह सच स्वीकार करना होगा कि हमारा जीवन पूरी तरह से प्रभु पर निर्भर है। ऐसा करने के लिए, हमें मौत के नज़रिए से खुद को देखना होगा।

व्यक्तिगत रूप से, मुझे अक्सर भजन 543 (पहले 342), "व्हेन ट्रायल्स कम" (या "आई विल ट्रस्ट इन जीसस") गाना अच्छा लगता है। पहले पद और कोरस के बोल कुछ इस तरह हैं: (पद 1) "जब मुश्किलें आती हैं और मेरा विश्वास कमज़ोर होता है, तो मैं उस प्रभु पर और ज़्यादा सहारा लेता हूँ जिस पर मेरा भरोसा है"; (कोरस) "जैसे-जैसे साल बीतते हैं, सहारा लेने के लिए मेरे पास बस वही हैं; चाहे कुछ भी हो, मेरा भरोसा यीशु पर है।" मेरे अपनों को जिन मुश्किलों का सामना करना पड़ रहा है, उनके ज़रिए परमेश्वर मुझे यह एहसास दिला रहे हैं कि मेरा अपना विश्वास कितना कमज़ोर है। नतीजतन, प्रभु मुझे पूरी तरह से उन पर निर्भर रहने की ओर ले जा रहे हैं। जब मैं इंसानी ज़िंदगी की सच्चाई देखता हूँ—उम्र का बढ़ना और आखिरकार बीमारी का शिकार होना—तो मैं इंसान की कमज़ोरी और परमेश्वर की महान शक्ति के बारे में सीखता हूँ। इसीलिए मेरी इच्छा है कि मैं पहले

से कहीं ज़्यादा मौत के नज़रिए से अपनी ज़िंदगी को देखूँ। दूसरी बात, जब हम मौत के नज़रिए से जीते हैं, तो हम क्षणभंगुर चीज़ों के बजाय हमेशा रहने वाली चीज़ों की ओर बढ़ते हैं।

हम अक्सर कहते हैं कि हम इस दुनिया में खाली हाथ आते हैं और खाली हाथ ही चले जाते हैं। फिर भी, यह सच जानने के बावजूद, हम व्यस्त ज़िंदगी जीते हैं और अपने हाथों को चीज़ों से भरने की कोशिश करते रहते हैं। अक्सर जब हम किसी प्रियजन के अंतिम संस्कार में जाते हैं, तो हमें सोचने पर मजबूर होना पड़ता है—चाहे कुछ ही पल के लिए—कि हमें कैसे और किस मकसद के लिए जीना चाहिए। फिर भी, हम जल्द ही अंतिम संस्कार में किए गए संकल्पों को भूल जाते हैं और एक बार फिर अपने हाथों को भरने की कोशिश में लगी कभी न खत्म होने वाली, भागदौड़ भरी ज़िंदगी में लौट आते हैं। तो, बिना असली आराम पाए इतनी कड़ी मेहनत करने का क्या नतीजा होता है? आखिर में, हम खाली हाथ ही कब्र में जाते हैं।

लेकिन जो लोग सच में यीशु पर विश्वास करते हैं, उनके लिए अंतिम संस्कार का मौका ज़िंदगी को मौत के नज़रिए से देखने और यह सोचने का होता है कि धरती पर भगवान ने हमें जो बाकी दिन दिए हैं, उन्हें कैसे जिया जाए। ऐसा करते हुए, हम अपना ध्यान दुनिया की चीज़ों से हटाकर ऊपर की चीज़ों पर लगाते हैं, और पल भर की चीज़ों के बजाय हमेशा रहने वाली चीज़ों को चुनते हैं। हमें एहसास होता है कि यह दुनिया हमारा घर नहीं है; बाइबल में विश्वास के नायकों की तरह, हम एक बेहतर देश और स्वर्ग की यात्रा की चाहत रखते हैं (इब्रानियों 11)। ऐसा क्यों है? क्योंकि मौत के नज़रिए से ज़िंदगी को देखने पर हम राजा सुलैमान की इस बात से सहमत होते हैं कि जिन दुनियावी चीज़ों के पीछे हम भागते हैं, वे पूरी तरह बेकार हैं। यह एहसास होने पर कि इस दुनिया के खत्म होने के बाद सिर्फ़ वही चीज़ें बचती हैं जो हमेशा रहने वाली हैं, हम उन पल भर की चीज़ों को छोड़ना सीखते हैं जिनकी हम कभी चाहत रखते थे—उन्हें ज़्यादा अहमियत नहीं देते—और एक बार फिर उस चीज़ को महत्व देने और उसके लिए जीने का संकल्प लेते हैं जो सच में हमेशा रहने वाली है। मैं एक बार फिर हमेशा रहने वाले प्रभु के लिए जीने का संकल्प लेता हूँ—हमेशा रहने वाले प्यार और हमेशा रहने वाले वचन के अनुसार हमेशा रहने वाली आत्माओं को सुसमाचार सुनाते हुए।

तीसरी बात, जब हम मौत को ध्यान में रखकर जीते हैं, तो हम अपने समय का सबसे अच्छा इस्तेमाल कर सकते हैं।

जो लोग मौत को ध्यान में रखकर जीते हैं, वे समझदार होते हैं, और समझदार लोग हमेशा रहने वाली चीज़ों की तलाश करते हैं। ऐसा करते हुए, समझदार व्यक्ति "बहुत सावधानी से जीता है—नासमझ की तरह नहीं, बल्कि समझदार की तरह" (इफिसियों 5:15)। उदाहरण के लिए, एक समझदार व्यक्ति नशे में धुत होकर गलत काम नहीं करता (वचन 18), क्योंकि वह जानता है कि ऐसा जीवन मूर्खतापूर्ण है (वचन 17)। यह जानते हुए कि दिन बुरे हैं, वे अपने समय का सही इस्तेमाल करते हैं (वचन 16)। वे प्रभु की इच्छा को समझते हैं और उसे पूरा करने की कोशिश करते हैं (वचन 17)। नतीजतन, वे पवित्र आत्मा से भरे हुए जीते हैं और अपने दिलों से परमेश्वर की स्तुति और आराधना करते हैं (वचन 19)। इसके अलावा, वे "हमेशा हमारे प्रभु यीशु मसीह के नाम से हर चीज़ के लिए पिता परमेश्वर का धन्यवाद करते हुए" जीते हैं (वचन 20)।

यह जीवन की एक सच्चाई है कि जैसे-जैसे हमारी उम्र बढ़ती है, हमें एहसास होता है कि समय कितनी तेज़ी से बीतता है—हालाँकि, कुछ लोग इस सच्चाई को नज़रअंदाज़ करते हैं और अपना समय बर्बाद करते हैं। तो फिर, हम तेज़ी से बीतते इस समय का सबसे अच्छा इस्तेमाल कैसे कर सकते हैं? मेरा मानना है कि किसी के अंतिम संस्कार में शामिल होना और अपनी खुद की मौत के बारे में सोचना इसका एक तरीका है। भले ही हम अक्सर ऐसे व्यस्त जीवन जीते हैं जैसे कि हम हमेशा जीवित रहेंगे, लेकिन किसी प्रियजन के अंतिम संस्कार में शामिल होने से हमें कम से कम एक पल तो मिलता है जब हम अपने जीवन पर नज़र डाल सकें और अपनी अंतिम मंज़िल के बारे में सोच सकें। हमें सोचना चाहिए कि हमें अपना जीवन कैसे जीना चाहिए और उसे कैसे समाप्त करना चाहिए। कारण यह है कि मेरा अपना अंतिम संस्कार भी बहुत दूर नहीं है; समय का अंतर न के बराबर है—जैसे ओक के बीजों की ऊँचाई की तुलना करना। मैं अब पचास साल की उम्र के करीब पहुँच रहा हूँ; अगर औसत उम्र सत्तर या अस्सी साल है, तो मैंने अपनी ज़िंदगी का आधे से ज़्यादा हिस्सा जी लिया है। बेशक, मुझे नहीं पता कि परमेश्वर मुझे कब अपने पास बुलाएँगे। आजकल, मैं अक्सर हर दिन को वैसे ही जीने के महत्व के बारे में सोचता हूँ जैसा वह आता है, क्योंकि कोई नहीं जानता कि कल क्या होगा। क्योंकि परमेश्वर ने मुझे यह दिन दिया है, इसलिए मैं बस उनकी महिमा के लिए पूरी तरह से जीने की कोशिश करता हूँ; जहाँ तक कल की बात है, अगर उनकी मर्ज़ी हुई, तो मुझे विश्वास है कि मैं उसी सोच के साथ जी सकूँगा। मैं न तो अतीत के बारे में सोचकर परेशान होना चाहता हूँ और न ही भविष्य की तैयारी के नाम पर उसकी चिंता करना चाहता हूँ। मैं बस प्रभु के साथ चलने वाले जीवन को पसंद करता हूँ—एक ऐसा जीवन जो खुशी, आनंद और कृतज्ञता से भरा हो।

मेरा मानना है कि अगर मैं इस तरह से जीऊँ, तो अगर आज रात मेरी मृत्यु भी हो जाए, तो भी मैं एक आभारी हृदय के साथ प्रभु के सामने खड़ा हो सकूँगा। आखिर, जो साल बीत चुके हैं, उनके बारे में क्या किया जा सकता है? मुझे नहीं पता कि परमेश्वर ने मेरे लिए इस धरती पर कितना समय रखा है—और न ही मुझे लगता है कि मुझे यह जानने की ज़रूरत है—लेकिन मैं बस हर दिन प्रभु पर भरोसा करते हुए उन चीज़ों को पाना चाहता हूँ जो अनंत हैं। मेरी इच्छा है कि मैं प्रभु के साथ चलूँ, उस सेवाकार्य को पूरा करूँ जो उन्होंने मुझे सौंपा है, और उनकी महिमा के लिए जीऊँ।

प्रिय पादरी किम चांग-ह्युक अभी शारीरिक रूप से बहुत कमज़ोर हैं। मुझे याद है कि उन्हें सोफ़े से खुद उठने के लिए भी संघर्ष करते देखा था। फिर भी, उस कमज़ोरी के बीच, मुझे याद है कि कैसे वे पूरी तरह से परमेश्वर पर भरोसा करते हुए भजन 40 का कोरस ज़ोरदार ढंग से गाते थे—“मेरी आत्मा प्रभु की महानता और महिमा की स्तुति करती है”। हालाँकि उनका शरीर बहुत कमज़ोर है, लेकिन उनकी आत्मा स्वर्ग की ओर बाज़ की तरह ऊँची उड़ान भरती है। उनकी आत्मा, परमेश्वर की महानता और महिमा की स्तुति करते हुए, पूरी तरह से अनंत परमेश्वर पर टिकी हुई है। पादरी की उस सच्ची प्रार्थना में शामिल होते हुए—चाहे कितनी भी अपूर्णता के साथ क्यों न हो—कि केवल परमेश्वर की महिमा प्रकट हो, मैं परमेश्वर और आप सभी के सामने यह स्वीकार करता हूँ: “जब तक मैं जीवित हूँ, मैं एक मरे हुए व्यक्ति की तरह जीना चाहता हूँ।” मैं मृत्यु के नज़रिए से जीना चाहता हूँ। इसके लिए, मैं बुद्धिमानों की सलाह मानना चाहता हूँ और अंतिम संस्कार में शामिल होना चाहता हूँ। उन अंतिम संस्कारों में, एक जीवित व्यक्ति के रूप में, मैं मृत्यु—इस दुनिया में जीवन के अंत—पर विचार करना चाहता हूँ। मैं इसे गहराई से महसूस करना चाहता हूँ; मैं इसे बार-बार अपने दिल में गहराई से उतारना चाहता हूँ। और मृत्यु के उस नज़रिए के साथ, मैं अपने बाकी दिन जीना चाहता हूँ—प्रभु पर और अधिक भरोसा करते हुए और उन चीज़ों को पाने की कोशिश करते हुए जो अनंत हैं। मेरा मानना है कि ऐसा करने से, मरने के बाद भी मैं हमेशा जीवित रहूँगा। आमीन।

जब मैं अपनों के शरीरों को देखता हूँ—जो मिट्टी से बने थे और मिट्टी में ही मिल जाते हैं—या उनमें रखे ताबूतों को देखता हूँ, तो मैं अपनी मौत और अंतिम संस्कार के बारे में सोचने लगता हूँ। मैं उपदेशक 7:1 के शब्दों के अर्थ पर विचार करता हूँ: "जन्म के दिन से मौत का दिन [बेहतर] है।" बुद्धिमान राजा सुलैमान ने कहा था कि "कीमती इत्र से अच्छा नाम बेहतर है" (पद 1); मैं सोचता हूँ कि मेरे गुज़रने के बाद, क्या "जेम्स किम" नाम उन लोगों के दिलों में प्यार से याद किया जाएगा जिन्हें भगवान ने मेरी ज़िंदगी में रखा है। मैं कल्पना करता हूँ कि कितने लोग मेरा नाम याद करेंगे और कहेंगे, "जेम्स किम ने हमेशा रहने वाली चीज़ों को चाहा और अब वह उस हमेशा रहने वाले लोक में चले गए हैं जिसकी उन्हें बहुत गहरी चाहत थी।" इस दुनिया में आने वाली दुनिया के इंसान के तौर पर जीने के लिए, हमें ज़िंदगी को मौत के नज़रिए से देखना होगा। दूसरे शब्दों में, हमें हमेशा रहने वाले नज़रिए के साथ जीना होगा, और इस दुनिया में रहते हुए हमेशा रहने वाली चीज़ों को पाना होगा।

बुद्धिमान की फटकार

[सभोपदेशक 7:5-7]

क्या आपने कभी "पास्टर की बीमारी" (pastor's disease) शब्द सुना है? मैंने पहली बार यह शब्द लगभग एक-दो हफ्ते पहले एक साथी पास्टर से सुना था। वे कह रहे थे कि हम पास्टरों को एक खास बीमारी होती है— "पास्टर की बीमारी"—जिसमें दूसरों को सिखाने की ज़बरदस्त इच्छा होती है। ऐसा लगा कि वे खास तौर पर मुझे जैसे सीनियर पास्टरों की बात कर रहे थे। दूसरे शब्दों में, उनका मतलब था कि जहाँ एक सीनियर पास्टर की "बीमारी" दूसरों को सिखाने की इच्छा है, वहीं जब दूसरे *उसे* सिखाने की कोशिश करते हैं, तो वह अक्सर ठीक से सुन नहीं पाता। सच कहूँ तो, मेरे पास जवाब में कहने के लिए कुछ नहीं था; मैं उनसे पूरी तरह सहमत था। मुझे खुद में भी इस बीमारी के लक्षण दिखाई दिए। यह महसूस करना कि मुझे यह बीमारी हो गई है, एक भारी और गंभीर एहसास है, खासकर तब जब मैं इससे बहुत बुरी तरह बचना चाहता था। यह बात और भी निराशाजनक है क्योंकि मैं "वीरान जगह की सेवा" (wilderness ministry) में लगा हुआ था—खुद को प्रभु की आवाज़ सुनने और उनके वचन पर मनन करने के लिए तैयार कर रहा था—और फिर भी पाया कि मैं इस बीमारी का शिकार हो गया हूँ। समस्या की जड़ पर सोचते हुए, मुझे नए नियम (New Testament) के फरीसियों की याद आई। मुझे एहसास हुआ कि जब मैं दूसरों को सिखाने में व्यस्त था, तो मैं *खुद* को सिखाने में लापरवाही कर रहा था। और इसका नतीजा क्या हुआ? घमंड। और जब घमंड हावी हो जाता है, तो इंसान न सिर्फ़ परमेश्वर की आवाज़ सुनना बंद कर देता है, बल्कि प्यारे भाई-बहनों की बातें भी नहीं सुन पाता।

कुछ समय पहले, सुबह की प्रार्थना सभा के दौरान, मैंने "तुम ही वह व्यक्ति हो" (You Are the Man) शीर्षक के तहत 2 शमूएल 12:7 पर मनन किया। बाइबल की यह जानी-पहचानी घटना बताती है कि कैसे भविष्यद्वक्ता

नाथन ने राजा दाऊद को उनके पाप के लिए फटकार लगाई थी। बतशेबा—जो ऊरिय्याह की पत्नी थी—के साथ संबंध बनाने और उसके गर्भवती होने का पता चलने के बाद, राजा दाऊद ने अपने पाप को छिपाने की कोशिश की और आखिरकार अपने वफादार सैनिक ऊरिय्याह की हत्या करवा दी। चूँकि "दाऊद का किया हुआ काम प्रभु को बुरा लगा" (पद 27), इसलिए परमेश्वर ने भविष्यद्वक्ता नाथन को दाऊद को ऊरिय्याह की पत्नी को लेने के लिए फटकारने के लिए भेजा; इसके लिए उन्होंने उसी शहर के एक अमीर और एक गरीब आदमी की कहानी (दृष्टांत) का इस्तेमाल किया (12:1-4)। गुस्से में आकर डेविड ने नाथन से कहा, "प्रभु की कसम, जिस आदमी ने ऐसा किया है, वह मौत के लायक है" (वचन 5)। शायद इसलिए कि उसने अपने पाप को छिपाने की इतनी कोशिश की थी कि उसने अपनी अंतरात्मा की आवाज़ को दबा दिया था, डेविड यह समझ नहीं पाया कि असल में "मौत के लायक" तो *वही* था। तभी नाथन ने सीधे उसे फटकारते हुए कहा, "वह आदमी तुम ही हो!" (वचन 7)। यह कितनी चौकाने वाली फटकार थी। डेविड ने कभी नहीं सोचा था कि वह "मौत के लायक" है, इसलिए जब नाथन ने उसकी ओर उंगली उठाई, तो वह पूरी तरह हैरान रह गया होगा। जब हम अपने पापों को पहचान नहीं पाते, और पवित्र परमेश्वर हमारे कामों को उनकी असलियत में हमारे सामने लाता है, तो क्या इससे हमारी अंतरात्मा को झटका नहीं लगता?

आज के वचन, उपदेशक 7:5 में, राजा सुलैमान हमसे कहते हैं: "मूर्खों के गीत सुनने से बेहतर है कि बुद्धिमान की फटकार सुनी जाए।" हमने पहले परमेश्वर के वचन पर मनन किया है—खासकर उपदेशक 7:1-4 पर—जिसका विषय था, "जीवित लोग इसे दिल से लेंगे।" हमने सीखा है कि हम जीवित लोगों को इस बात पर गहराई से सोचना चाहिए कि मौत ही हम सबकी आखिरी मंज़िल है। हमने यह भी सीखा है कि ऐसी गहरी सोच-विचार के लिए, दावत वाले घर (जहाँ लोग शारीरिक सुख-भोग में डूबे रहते हैं) के बजाय शोक वाले घर जाना बेहतर है। इसलिए, राजा सुलैमान उपदेशक 7:4 में हमसे कहते हैं: "बुद्धिमान का मन शोक वाले घर में होता है, लेकिन मूर्खों का मन मौज-मस्ती वाले घर में होता है।" बुद्धिमान का मन मौज-मस्ती वाले घर में—जो व्यर्थता और बेकार की चीज़ों की जगह है—नहीं रहता, बल्कि शोक वाले घर में रहता है, जहाँ इंसान मौत की सच्चाई पर गंभीरता से और गहराई से सोचता है, जो हर किसी का आखिरी अंत है। राजा सुलैमान आज के वचन, उपदेशक 7:5-7 में बुद्धिमान लोगों के बारे में और बातें बताते हैं। जहाँ वचन 1-4 में "बुद्धिमान के मन" पर ध्यान दिया गया था, वहीं वचन 5-7 में "बुद्धिमान की फटकार" पर ध्यान दिया गया है। इस वचन के ज़रिए परमेश्वर हमें यह संदेश

देते हैं: "बुद्धिमान की फटकार सुनो।" आखिरकार, डांट-फटकार सुनना किसे पसंद है? हमारे पापी और कमज़ोर स्वभाव को दूसरों से तारीफ़ पाना अच्छा लगता है और हम बिल्कुल भी डांट नहीं सुनना चाहते। व्यक्तिगत रूप से, मेरे मन में मेरे माता-पिता की पीढ़ी में प्रचलित बच्चों की परवरिश के पारंपरिक कोरियाई तरीके को लेकर एक सवाल है—खासकर *मागाप्योन* (जो घोड़ा पहले से ही अच्छी तरह दौड़ रहा हो, उसे चाबुक मारना) की अवधारणा। मुझे कभी पूरी तरह समझ नहीं आया कि जो घोड़ा पहले से ही तेज़ी से दौड़ रहा हो, उसे चाबुक मारने की क्या ज़रूरत है। मैं बच्चों की परवरिश के अमेरिकी तरीके से ज़्यादा परिचित हूँ। इससे मेरा मतलब खास तौर पर माता-पिता द्वारा अपने बच्चों की तारीफ़ करने और उनका हौसला बढ़ाने के तरीके से है। मुझे टेलीविज़न पर देखा गया बच्चों का सॉकर मैच याद है; उस प्रसारण का एक खास पल मुझे अभी भी थोड़ा-बहुत याद है। मैंने देखा कि एक छोटे बच्चे ने गोल के सामने गेंद को किक मारी लेकिन चूक गया। चूकने के बावजूद, एक वयस्क—जो बच्चे का पिता लग रहा था—साइडलाइन पर खड़ा होकर तालियाँ बजा रहा था और चिल्ला रहा था, "बहुत बढ़िया! बहुत बढ़िया!" इसके विपरीत, एक आम कोरियाई पिता शायद कुछ ऐसा कहता, "अरे, तुम वह गोल भी नहीं कर पाए? कितनी निराशा की बात है।" अपने बेटे डायलन के सॉकर मैच में कुछ बार जाने के बाद, मैंने देखा है कि आजकल अक्सर माताएँ—न कि सिर्फ़ पिता—सबसे ज़्यादा उत्साहित होती हैं; वे और भी ज़्यादा जोश के साथ चीयर करती और चिल्लाती हैं। बेशक, इसका मतलब यह नहीं है कि मैं बच्चों की परवरिश के अमेरिकी तरीके को पूरी तरह से मानता हूँ। व्यक्तिगत रूप से, मेरा मानना है कि बच्चों की परवरिश के लिए दोनों तरीकों में संतुलन की ज़रूरत होती है: तारीफ़—या हौसला बढ़ाना—और सख्ती, या "चाबुक"। जैसे अच्छी तरह दौड़ने वाले घोड़े को चाबुक की ज़रूरत होती है, लेकिन उसे सहलाने और शांत करने की भी ज़रूरत होती है, वैसे ही मेरा मानना है कि बच्चों को दोनों की ज़रूरत होती है। इस नज़रिए से देखें तो, राजा सुलैमान हमें उपदेशक 7:5 में यह सीख देते हैं कि किसी मूर्ख की तारीफ़ (या हौसला बढ़ाने वाली बात) सुनने से बेहतर है किसी बुद्धिमान व्यक्ति की डांट सुनना। आयत 5 को देखें: "किसी मूर्ख का गीत सुनने से बेहतर है किसी बुद्धिमान व्यक्ति की डांट सुनना।" तो फिर, सुलैमान जिस "मूर्ख के गीत" की बात करते हैं, वह क्या है? इसका मतलब है "बुरे लोगों से मिलने वाला झूठा दिलासा" (पार्क युन-सन)। वह हमें बुरे लोगों से मिलने वाले झूठे दिलासे से सावधान रहने की चेतावनी दे रहे हैं। हमें ऐसे झूठे दिलासे से क्यों बचना चाहिए? राजा सुलैमान आज के हिस्से की छठी आयत में इसका कारण बताते हैं: "क्योंकि जैसे बर्तन के नीचे कांटों के चटकने की आवाज़ होती है, वैसे ही मूर्ख की हंसी होती है; यह भी बेकार है।" संक्षेप में, हमें मूर्ख के गीत—यानी बुरे

लोगों से मिलने वाले झूठे दिलासे—से इसलिए बचना चाहिए क्योंकि ऐसा दिलासा बेकार होता है। इस बेकारपन की तुलना "कांटों के चटकने" से की गई है। इसका क्या मतलब है? जब आप कांटों को जलते हुए सोचते हैं, तो क्या ख्याल आता है? वे ज़ोर से चटकने की आवाज़ करते हैं, है ना? फिर भी, वे बर्तन में पानी उबालने के लिए ज़रूरी गर्मी पैदा नहीं कर पाते। चूँकि पवित्र शास्त्र में "कांटे" अक्सर बुरे लोगों का प्रतीक होते हैं (2 शमूएल 23:6; नहूम 1:10), इसलिए सुलैमान यह समझा रहे हैं कि बुरे लोगों से मिलने वाला झूठा दिलासा—जो अक्सर उनके शारीरिक सुखों की चाहत के बीच मिलता है—शायद कुछ पल के लिए सुकून देने वाला लगे, लेकिन वह जल्दी ही गायब हो जाता है। वे कोई सच्चा सुकून नहीं देते। असल में, बुरे लोगों का दिलासा बेकार होता है। इसलिए, हमें मूर्ख के गीत पर नहीं, बल्कि बुद्धिमान की फटकार पर ध्यान देना चाहिए।

नीतिवचन 17:10 में, नीतिवचन के लेखक हमसे कहते हैं: "समझदार व्यक्ति पर डांट का असर उतना ही गहरा होता है, जितना मूर्ख को सौ बार मारने पर भी नहीं होता।" मूर्ख व्यक्ति बात नहीं सुनता, चाहे उसे कितना भी डांटा जाए; असल में, अगर आप किसी मूर्ख को डांटते हैं, तो वह आपसे नफ़रत करने लगेगा (नीतिवचन 9:8)। इसीलिए नीतिवचन के लेखक हमें समझदार लोगों को डांटने की सलाह देते हैं। क्यों? क्योंकि समझदार व्यक्ति (प्यार से) डांटे जाने पर आपसे प्यार करेगा (आयत 8)। हमें समझदार लोगों को प्यार से डांटना चाहिए क्योंकि ऐसा करने से वे और भी समझदार बनते हैं। नीतिवचन 9:9 देखिए: "समझदार व्यक्ति को शिक्षा दो, और वह और भी समझदार हो जाएगा; नेक इंसान को सिखाओ, और उसका ज्ञान बढ़ेगा।" साथ ही, नीतिवचन 25:12 पर भी गौर करें: "सुनने वाले कान के लिए समझदारी भरी डांट सोने की अंगूठी या शुद्ध सोने के गहने जैसी होती है।" "सुनने वाला कान" कितना कीमती है? जो कान परमेश्वर की आवाज़ सुन सकता है, वह सचमुच कीमती है। जब हम परमेश्वर की आवाज़—खासकर उनकी आज्ञाओं—को सुनते हैं, तो हमें उनकी डांट वाली आवाज़ पर भी ध्यान देना चाहिए। ऐसा इसलिए है क्योंकि परमेश्वर की डांट हमारी आत्मा के लिए फायदेमंद होती है (2 तीमुथियुस 3:16)। परमेश्वर की डांट को स्वीकार करके, हम पछतावा करते हैं और पाप के रास्ते से हटकर सही रास्ते पर लौट आते हैं। इस डांट और पछतावे के ज़रिए, हम नेकी के रास्ते पर चलने लगते हैं (2 तीमुथियुस 3:16)। इसलिए, नीतिवचन के लेखक कहते हैं, "छिपे हुए प्यार से खुली डांट बेहतर है" (नीतिवचन 27:5)। अगर हम सचमुच किसी भाई से प्यार करते हैं, तो जब वह गलत रास्ते पर भटक जाए, तो हमें उसे प्यार से डांटना चाहिए। अगर परमेश्वर उसे समझदारी दें, तो वह हमारी डांट पर ध्यान देगा, पछतावा करेगा और सही

रास्ते पर लौट आएगा। हालाँकि, खतरा तब पैदा होता है जब समझदार व्यक्ति—जो यह प्यार भरी डांट देता है—खुद सही रास्ते पर नहीं चल पाता। दूसरे शब्दों में, अगर कोई समझदार व्यक्ति खुद को अनुशासित नहीं करता, तो उसे "मूर्खों के गीत" के लालच में फंसने का बड़ा खतरा होता है। राजा सुलैमान उपदेशक 7:7 में इस खतरे के बारे में बताते हैं: "जबरन वसूली समझदार व्यक्ति को मूर्ख बना देती है, और रिश्तत दिल को भ्रष्ट कर देती है।" इस आयत का मतलब है कि जो दिल सांसारिक लाभ का लालची होता है, वह अंधा हो जाता है, जिससे इंसान सही और गलत के बीच फ़र्क नहीं कर पाता (जेमिसन)। आखिर में, अगर हम दूसरों को सुधारने में तो माहिर हैं लेकिन खुद को सही रास्ते पर चलाने में नाकाम रहते हैं, तो रिश्तत का लालच हमारे अंदर लोभ जगा सकता है, जिससे हमारी सही-गलत को पहचानने की समझ खत्म हो सकती है। नीतिवचन लिखने वाले की कही इस सच्चाई पर गौर करें: "दुष्ट आदमी न्याय को बिगाड़ने के लिए कपड़े की तह से रिश्तत लेता है" (नीतिवचन 17:23)। इसलिए, व्यवस्थाविवरण 16:19-20 हमें सिखाता है: "न्याय को न बिगाड़ो और न ही पक्षपात करो। रिश्तत न लो, क्योंकि रिश्तत बुद्धिमानों की आँखों को अंधा कर देती है और नेक लोगों की बातों को टेढ़ा कर देती है। सिर्फ़ न्याय का पालन करो, ताकि तुम जीवित रहो और उस ज़मीन के मालिक बनो जो तुम्हारा परमेश्वर तुम्हें दे रहा है।"

हमें बुद्धिमानों की डांट को नम्रता से सुनना चाहिए। आज के ज़माने में, ऐसे कान मिलना मुश्किल है जो "सुनें और मानें"—यानी ऐसे कान जो परमेश्वर को अच्छे लगे। खासकर, भले ही पवित्र आत्मा परमेश्वर के पवित्र वचन के ज़रिए हमें डांटता है, फिर भी हम उस डांट को मानने से इनकार करते रहते हैं। नतीजतन, हमें ऐसे उपदेश पसंद नहीं आते जो हमारे पापों को उजागर करते हैं। मुझे 2 तीमुथियुस 4:3-4 याद आता है: "क्योंकि एक ऐसा समय आएगा जब लोग सही शिक्षा को बर्दाश्त नहीं करेंगे। इसके बजाय, अपनी इच्छाओं के अनुसार, वे ऐसे बहुत सारे शिक्षकों को इकट्ठा करेंगे जो वही कहेंगे जो उनके खुजलाते कानों को सुनना अच्छा लगता है। वे सच्चाई से कान मोड़ लेंगे और मनगढ़ंत कहानियों की ओर मुड़ जाएँगे।" हमें भजनकार जैसा नज़रिया रखने की ज़रूरत है। भजन संहिता 141:5 को देखें: "कोई नेक इंसान मुझे मारे—तो यह एक भलाई है; वह मुझे डांटे—तो यह मेरे सिर पर तेल लगाने जैसा है। मेरा सिर इसे मना नहीं करेगा, क्योंकि मेरी प्रार्थना हमेशा बुरे काम करने वालों के कामों के खिलाफ़ होगी।" हमें बुद्धिमानों की प्यार भरी डांट को ऐसे संजोकर रखना चाहिए जैसे वह "मेरे सिर पर तेल" हो। हालाँकि ऐसी डांट सुनना उस समय मुश्किल और दर्दनाक हो सकता है, फिर भी हमें इसे खुद पर शांति से सोचने के मौके के तौर पर देखना चाहिए, खासकर तब जब हमारा ज़मीर हमें कचोट रहा

हो। अगर हम उस डांट में परमेश्वर की आवाज़ सुन सकें—अपनी गलती मानकर, उसे स्वीकार करके, पछतावा करके और सही रास्ते पर लौटकर—तो हमें सही और गलत के बीच फ़र्क करने की समझ मिलेगी और हम नेकी के रास्ते पर चल पाएँगे। क्या आपको सच में लगता है कि हम मसीहियों में सही समझ है, हम सही और गलत के बीच फ़र्क कर पाते हैं और नेकी के रास्ते पर चलते हैं? क्या आपको सच में लगता है कि हमारी कलीसिया उस प्रभु की बात मानकर नेकी के रास्ते पर चल रही है, जो कलीसिया का मुखिया है?

आज मैं एक पास्टर से मिला जो सेमिनरी में मेरे सीनियर थे; साथ में लंच करने के बाद, हमने खुलकर बातचीत की। उस बातचीत के ज़रिए, परमेश्वर ने मुझे बहुत अच्छी सीख दी, और प्रभु में हमारी संगति से मुझे सुकून भी मिला। एक सीनियर पास्टर के साथ बातचीत के दौरान परमेश्वर ने प्यार से मुझे डाँटा। जब मुझे वह डांट मिली, तो मुझे एक खास व्यक्ति की याद आई। इसलिए, पास्टर से अलग होने के बाद और कलीसिया लौटते समय, मैंने उस व्यक्ति को माफ़ी माँगने के लिए फ़ोन किया। मैंने उनके लिए अपना प्यार भी ज़ाहिर किया। माफ़ी माँगने और फ़ोन रखने से पहले "आई लव यू" कहने के बाद, मैं बहुत भावुक हो गया। आज मैं सोच रहा हूँ कि प्रभु हमारी कलीसिया से प्यार भरी डांट के रूप में क्या कह रहे होंगे। यह जानने के लिए, मैंने प्रकाशितवाक्य के अध्याय 2 और 3 को देखा, जहाँ प्रभु सात कलीसियाओं से बात करते हैं। मैंने देखा कि उन सात में से, सिर्फ़ स्मरणा और फिलाडेल्फिया की कलीसियाओं की तारीफ़ हुई; बाकी पाँचों को प्रभु से तारीफ़ और डांट, दोनों मिलीं। आइए प्रभु की डांट वाली बातों पर गौर करें: (1) इफिसुस की कलीसिया: "फिर भी मुझे तुमसे एक शिकायत है: तुमने वह प्यार छोड़ दिया है जो तुम्हें शुरू में था" (प्रकाशितवाक्य 2:4)। (2) परगमुन की कलीसिया: "फिर भी, मुझे तुमसे कुछ शिकायतें हैं: तुममें से कुछ लोग बिलाम की शिक्षा को मानते हैं, जिसने बालाक को सिखाया था कि वह इस्राएलियों को पाप करने के लिए उकसाए, ताकि वे मूर्तियों पर चढ़ाया गया खाना खाएँ और अनैतिक काम करें। इसी तरह, तुममें ऐसे लोग भी हैं जो निकुलइयों की शिक्षा को मानते हैं" (प्रकाशितवाक्य 2:14-15)। (3) थ्यातीरा की कलीसिया: "फिर भी, मुझे तुमसे कुछ शिकायतें हैं: तुम उस औरत ईज़बेल को बर्दाश्त करते हो, जो खुद को नबिया कहती है। अपनी शिक्षाओं से वह मेरे सेवकों को गलत रास्ते पर ले जाती है, जिससे वे अनैतिक काम करते हैं और मूर्तियों पर चढ़ाया हुआ खाना खाते हैं। मैंने उसे अपनी अनैतिकता से तौबा करने का समय दिया, लेकिन वह तैयार नहीं है" (प्रकाशितवाक्य 2:20-21)। (4) सारदीस की कलीसिया: "सारदीस की कलीसिया के दूत को लिखो: ये शब्द उसके हैं जिसके पास परमेश्वर की सातों आत्माएँ और सातों तारे हैं। मैं तुम्हारे कामों को जानता हूँ; तुम्हारी पहचान ज़िंदा होने की है, लेकिन तुम मरे हुए हो। जागो! जो कुछ

बचा है और मरने वाला है, उसे मज़बूत करो, क्योंकि मुझे तुम्हारे काम मेरे परमेश्वर की नज़र में पूरे नहीं मिले। इसलिए याद करो कि तुम्हें क्या मिला है और तुमने क्या सुना है; उसे मानो और तौबा करो” (प्रकाशितवाक्य 3:1-3a)। (5) लाओदीकिया की कलीसिया: “मैं तुम्हारे कामों को जानता हूँ, कि तुम न तो ठंडे हो और न ही गर्म। काश तुम या तो एक होते या दूसरा! इसलिए, क्योंकि तुम गुनगुने हो—न गर्म न ठंडे—मैं तुम्हें अपने मुँह से उगलने वाला हूँ। तुम कहते हो, ‘मैं अमीर हूँ; मैंने दौलत जमा की है और मुझे किसी चीज़ की ज़रूरत नहीं है।’ लेकिन तुम्हें एहसास नहीं है कि तुम दुखी, दयनीय, गरीब, अंधे और नंगे हो” (प्रकाशितवाक्य 3:15-17)। इन पाँच कलीसियाओं के लिए प्रभु की डांट-फटकार तुम्हें कैसी लगती है? तुम्हें क्या लगता है कि कौन सी डांट-फटकार हमारी कलीसिया पर लागू होती है? “जिसके कान हों, वह सुने कि आत्मा कलीसियाओं से क्या कहती है” (प्रकाशितवाक्य 2:7, 11, 17, 29; 3:6, 13, 22)।

लोग शादी के बाहर संबंध क्यों बनाते हैं?

“ज़बरदस्ती वसूली बुद्धिमान को भी मूर्ख बना देती है, और रिश्तत दिल को भ्रष्ट कर देती है” (उपदेशक 7:7)।

आज मैंने किसी से एक बात सुनी। एक देश में, 99% नर्सों विदेश में काम करना चाहती हैं; लेकिन कहा जाता है कि उन नर्सों में से, जो शादीशुदा हैं, उनमें से लगभग 98% विदेश जाने के बाद किसी और के साथ संबंध बना लेती हैं। जब मैंने यह सुना, तो मैंने सोचा, "क्या सच में ऐसा है?" हालाँकि मुझे पता था कि आजकल शादी के बाहर संबंध बनाना आम बात है, लेकिन मुझे अंदाज़ा नहीं था कि यह इतना ज़्यादा होता है। यह सच में एक गंभीर समस्या है। इतने सारे लोग ऐसे संबंध क्यों बनाते हैं? पहले, मैंने नीतिवचन 5:8 को देखकर इसके कारणों का पता लगाया था। कारण यह है कि लोग उनसे दूरी नहीं बना पाते जिनसे उन्हें दूर रहना चाहिए, और उनसे दूर हो जाते हैं जिनके करीब उन्हें रहना चाहिए। दूसरे शब्दों में, जो लोग ऐसे संबंध बनाते हैं, वे अपनी पत्नियों से—जिनकी उन्हें कद्र करनी चाहिए—दूरी बना लेते हैं और इसके बजाय दूसरी महिलाओं के करीब चले जाते हैं जिनसे उन्हें दूर रहना चाहिए। वे ऐसे संबंध इसलिए बनाते हैं क्योंकि वे अपनी पत्नियों से वफ़ादारी से प्यार नहीं करते (वचन 15) या उनमें खुशी नहीं पाते (वचन 18)। इसके अलावा, क्योंकि उन्हें अपनी पत्नियों के आलिंगन में लगातार संतुष्टि नहीं मिलती या उनके प्यार में लगातार खुशी नहीं मिलती (वचन 19), इसलिए वे अपना प्यार दूसरी महिलाओं पर लुटाते हैं और किसी और की पत्नी को गले लगाते हैं, यहाँ तक कि उसके साथ बच्चे भी पैदा करते हैं (वचन 16, 20)।

आज, मैं उपदेशक 7:7 के आधार पर शादी के बाहर संबंध बनाने के एक और कारण पर विचार करना चाहता हूँ। वह कारण है "लालच"। बाइबल में निर्गमन 20:17 में मूसा को दिए गए दस आज्ञाओं में से दसवीं आज्ञा लिखी

है: “तू अपने पड़ोसी के घर का लालच न करना; तू अपने पड़ोसी की पत्नी, या उसके नौकर, या उसकी नौकरानी, या उसके बैल, या उसके गधे, या अपने पड़ोसी की किसी भी चीज़ का लालच न करना।” परमेश्वर ने स्पष्ट रूप से हमें आज्ञा दी है कि हम अपने पड़ोसी की पत्नी का लालच न करें, फिर भी हम ऐसा क्यों करते हैं? इसकी जड़ हमारे अंदर मौजूद लालच में है। जब हमारे अंदर लालच होता है, तो हम अपनी पत्नियों के साथ संतुष्ट नहीं रह पाते (नीतिवचन 5:19)। इसके अलावा, लालच हमें दूसरी महिलाओं के प्रति गलत इच्छा रखने के लिए उकसाता है। आँखों की वासना में बहकर, हम अपनी पत्नियों के अलावा दूसरी महिलाओं को देखते हैं और उनकी बातें सुनते हैं। फिर भी, हम चाहे कितनी भी महिलाओं को देख लें या उनके बारे में सुन लें, हमारी आँखें कभी संतुष्ट नहीं होतीं (सभोपदेशक 1:8)। इस तरह, शैतान हमें अशुद्धता और शारीरिक वासनाओं का लालच देकर पाप की ओर ले जाता है (2 पतरस 2:18)—खासकर, किसी दूसरी महिला के प्रति गलत इच्छा रखने का पाप।

दोस्तों, व्यभिचारपूर्ण रिश्तों की जड़ लालच है। लालच की कोई सीमा नहीं होती और यह कभी संतुष्ट नहीं होता (यशायाह 56:11)। यह हमें अपनी पत्नियों के साथ संतुष्ट रहने से रोकता है (नीतिवचन 5:19) और हमें अपने पड़ोसी की पत्नी के प्रति गलत इच्छा रखने के लिए उकसाता है (निर्गमन 20:17)। इसलिए, हमें अपने दिलों को लालच की ओर नहीं मुड़ने देना चाहिए (भजन संहिता 119:36)। बाइबल कहती है कि लालच मूर्तिपूजा है (कुलुस्सियों 3:5)। इसलिए, हमें हर तरह के लालच को त्याग देना चाहिए (लूका 12:15) और अपने अंदर मौजूद शारीरिक इच्छाओं को खत्म कर देना चाहिए (कुलुस्सियों 3:5)। हमें “यौन अनैतिकता, अशुद्धता, वासना, बुरी इच्छाओं और लालच” को दूर कर देना चाहिए (पद 5)। इसका कारण यह है कि हमने क्रूस पर अपने शरीर को उसकी वासनाओं और इच्छाओं के साथ क्रूस पर चढ़ा दिया है (गलातियों 5:24)। हम—आप और मैं—पड़ोसी की पत्नी के प्रति गलत इच्छा रखने से बचें (निर्गमन 20:17) और इसके बजाय हमेशा अपनी पत्नियों के साथ संतुष्ट रहें (नीतिवचन 5:19)।

“लेकिन तुम्हारे बीच यौन अनैतिकता, किसी भी तरह की अशुद्धता या लालच की थोड़ी सी भी झलक नहीं होनी चाहिए, क्योंकि ये बातें परमेश्वर के पवित्र लोगों के लिए उचित नहीं हैं” (इफिसियों 5:3)।

बुद्धिमानों की सेवा

[सभोपदेशक 7:8-10]

आज सुबह खाना खाने के बाद, मैंने हमारे चर्च के एक-दो सदस्यों को फ़ोन किया। उन्होंने मेरे लिए कुछ खास व्यंजन बनाए थे, और उन्हें चखने के बाद मैं उनका शुक्रिया अदा करना चाहता था। जब मैंने उनमें से एक का शुक्रिया अदा करने के लिए फ़ोन किया, तो उन्होंने हमारे चर्च के बारे में बहुत प्यार से बात की और कहा कि वे मरने के दिन तक इसमें शामिल होती रहेंगी। उनकी यह बात सुनकर मेरा दिल भर आया; इतने लंबे समय से हमारे चर्च में आने-जाने के कारण, उनके मन में एक ऐसा जुड़ाव बन गया था जिसमें हमारे साझा जीवन के दुख-सुख, दोनों शामिल थे। आखिर तक हमारे चर्च के साथ बने रहने का उनका पक्का इरादा... चर्च समुदाय के भीतर एक-दूसरे की और प्रभु की सेवा करना सचमुच बहुत सुंदर है। जब हम एक-दूसरे के जीवन में इस सुंदर सेवा की झलक देखते हैं, तो हमें एक-दूसरे में "छोटा यीशु" दिखाई देता है। और मेरा मानना है कि ऐसे "छोटे यीशु" लोगों का समूह ही यीशु का सच्चा समुदाय बनाता है। मेरी प्रार्थना है कि हमारा चर्च भी सेवा का ऐसा ही समुदाय बने। इससे हमारे मन में यह सवाल उठता है: तो फिर, मुझे—या हमें—किस तरह सेवा करनी चाहिए?

जब हमने सभोपदेशक अध्याय 7 पर मनन करना शुरू किया, तो हमने आयत 1-4 में "बुद्धिमान के हृदय" और आयत 5-7 में "बुद्धिमान की डांट" के बारे में सीखा। अब, आज के भाग—सभोपदेशक 7:8-10—में परमेश्वर हमें "बुद्धिमानों की सेवा" के बारे में बहुमूल्य शिक्षाएँ देते हैं। इन आयतों पर ध्यान केंद्रित करते हुए, मैं तीन ऐसी शिक्षाओं पर बात करना चाहता हूँ कि बुद्धिमान लोग प्रभु का काम कैसे करते हैं:

पहली बात, बुद्धिमान लोग किसी काम को आखिर तक पूरा करते हैं और उसका फल पाते हैं।

सभोपदेशक 7:8 के पहले हिस्से को देखिए: "किसी काम का अंत उसकी शुरुआत से बेहतर होता है..." राजा सुलैमान ने कहा था, "हर चीज़ का एक मौसम होता है, स्वर्ग के नीचे हर मकसद के लिए एक समय होता है," और बताया कि "जन्म लेने का समय और मरने का समय" होता है (3:1-2)। उन्होंने मौत को हम सबके लिए आखिरी मंज़िल भी बताया (7:2)। बाइबल हमें बताती है कि मौत इस दुनिया में हमारे जीवन का अंत है। यह आगे कहती है कि किसी काम का अंत उसकी शुरुआत से बेहतर होता है (आयत 8)। इसका क्या मतलब है? यहाँ, "किसी काम का अंत" का मतलब है उस काम के बारे में व्यक्ति का पक्का इरादा। इसे "शुरुआत से बेहतर" कहने का मतलब है कि सिर्फ़ काम शुरू करके उसे पूरा न करने से कहीं बेहतर है उसे पूरा करना (पार्क युन-सन)।

अगर हम अपनी रोज़मर्रा की ज़िंदगी को ध्यान से देखें, तो हमें ऐसे कई उदाहरण मिलेंगे जहाँ हम काम तो शुरू करते हैं लेकिन उन्हें पूरा नहीं कर पाते। उदाहरण के लिए, मैं अक्सर कोई किताब खोलकर पढ़ना शुरू करता हूँ, लेकिन उसे पूरा करने से पहले ही रोक देता हूँ और अगले दिन या बाद के लिए टाल देता हूँ। पढ़ने के अलावा, ऐसे कई और काम हैं जिन्हें मैं शुरू तो करता हूँ लेकिन अधूरा छोड़ देता हूँ, और उन्हें टालता रहता हूँ। ऐसा होने पर भी, हम कभी-कभी खुद को यह सोचकर तसल्ली देते हैं कि "शुरुआत करना ही आधी जीत है," भले ही हम काम को पूरा न कर पाएँ। हालाँकि, बाइबल हमें सिर्फ़ शुरुआत करने के लिए नहीं, बल्कि काम को पूरा करने और फल लाने के लिए प्रेरित करती है। मैंने व्यक्तिगत रूप से सभोपदेशक 3:1-2, 7:2 और 7:8 के पहले हिस्से—जो आज हमारे सामने है—पर एक साथ विचार किया है। जब राजा सुलैमान ने मकसद पूरा करने और मौत के पल के बारे में बात की, तो उन्होंने मुझे इस बात पर सोचने के लिए प्रेरित किया कि धरती पर रहते हुए परमेश्वर द्वारा दिए गए मकसद को पूरा करने से क्या फल मिलता है—ऐसा फल जो मौत का सामना करते समय पेश किया जा सके। मैंने खुद से पूछा: "अब तक प्रभु का काम करते हुए मैंने सचमुच क्या फल पाया है? मैं अभी उनके लिए जो काम कर रहा हूँ, उससे क्या फल मिलने की उम्मीद करता हूँ? जब मैं मरूँगा और हिसाब देने के लिए प्रभु के सामने खड़ा होऊँगा, तो क्या मेरे पास पेश करने के लिए कोई फल होगा?" इस सोच के साथ कि "मुझे फलहीन अंजीर का पेड़ नहीं बनना चाहिए," मुझे यह एहसास हुआ कि परमेश्वर मुझसे एक और तरह के फल की उम्मीद करते हैं। आखिरकार, मेरा मानना है कि ज़िंदगी एक दौड़ है जिसे आखिर तक दौड़ना चाहिए। चाहे शुरुआत कितनी भी शानदार क्यों न हो, अंत निराशाजनक नहीं होना चाहिए; इसके विपरीत, भले ही शुरुआत साधारण रही हो, एक शानदार अंत सुंदर होता है। बेशक, ऐसा कोई सख्त नियम नहीं है कि अंत

शानदार *होना ही* चाहिए। मायने यह रखता है कि जब हम प्रभु का काम करते हुए विश्वास की दौड़ दौड़ते हैं, तो हमें रास्ते में कभी भी पीछे नहीं हटना चाहिए। हमें विश्वास की दौड़ को आखिर तक दौड़ना चाहिए। हमें मंज़िल को ध्यान में रखकर दौड़ना चाहिए, आखिर तक दौड़ना चाहिए और अच्छे फल देने चाहिए। हमारी जिंदगी से ऐसी फ़सल मिलनी चाहिए जो परमेश्वर की तारीफ़ के लायक हो।

दूसरी बात, एक समझदार इंसान सब्र के साथ काम करता है।

आज के वचन में 'सभोपदेशक' (Ecclesiastes) 7:8 का दूसरा हिस्सा देखिए: "...घमंडी स्वभाव से सब्र वाला स्वभाव बेहतर है।" पिछले हफ़्ते एक सीनियर पादरी के साथ खुलकर बातचीत करते हुए, परमेश्वर ने उनके ज़रिए मुझे एक बार फिर यही संदेश दिया: "सब्र रखो।" खास तौर पर, मुझे बताया गया कि प्रभु का काम करने के लिए न सिर्फ़ नम्रता, बल्कि बहुत ज़्यादा सब्र की भी ज़रूरत होती है। यह सलाह मेरे अपने दिल के लिए एक सीख है, क्योंकि मैं खुद में बेसब्र होने की आदत को पहचानता हूँ। हालाँकि मेरा स्वभाव स्वाभाविक रूप से जल्दबाज़ी वाला है, लेकिन प्रभु का काम करते समय मैं अक्सर बहुत ज़्यादा बेसब्र हो जाता हूँ और मुझमें सहनशक्ति की कमी होती है। ऐसी बेसब्र आदतें पक्का तौर पर बातचीत और व्यवहार में गलतियों का कारण बनती हैं। इससे भी बड़ा खतरा यह है कि मैं परमेश्वर के काम को बिगाड़ सकता हूँ। ऐसा कैसे होता है? ऐसा इसलिए होता है क्योंकि मैं परमेश्वर से आगे भागता हूँ। आखिर में, जब मैं सोचता हूँ कि मैं बेसब्र क्यों हूँ, तो मुझे एहसास होता है कि इसकी असली वजह घमंडी दिल है (वचन 8)। घमंडी दिल में सब्र की कमी होती है; इसके बजाय, उसमें बेसब्रपन होता है। नतीजतन, मैं न सिर्फ़ अपने कामों और बातों में, बल्कि अपने विचारों में भी प्रभु से आगे भागने लगता हूँ। इसलिए, हममें से जो लोग बेसब्र होने के आदी हैं, उन्हें 'नीतिवचन' (Proverbs) 21:5 और 29:20 में लेखक की बातों पर ध्यान देना चाहिए: "मेहनती लोगों की योजनाएँ पक्का तौर पर भरपूर फल देती हैं, लेकिन जो जल्दबाज़ी करते हैं, वे सिर्फ़ गरीबी का शिकार होते हैं" (नीतिवचन 21:5); "क्या तुमने किसी ऐसे आदमी को देखा है जो अपनी बातों में जल्दबाज़ी करता है? उससे ज़्यादा उम्मीद एक मूर्ख से की जा सकती है" (नीतिवचन 29:20)। पवित्र शास्त्र हमें बताता है कि बेसब्र इंसान के लिए कोई उम्मीद नहीं है और ऐसी जल्दबाज़ी गरीबी की ओर ले जाती है। राजा सुलैमान भी कहते हैं, "गुस्सा करने में जल्दबाज़ी न करो, क्योंकि गुस्सा मूर्खों के दिल में बसता है" (सभोपदेशक 7:9)। प्रभु का काम आखिर तक करते हुए, हमें कई मुश्किलों और ऐसी स्थितियों का सामना करना पड़ सकता है जो गुस्सा दिलाती हैं। अगर हम सब्र नहीं रखते और—किसी

बेवकूफ की तरह—जल्दबाजी में गुस्से में आकर कुछ कह देते हैं, तो हम प्रभु के काम को बिगाड़ सकते हैं। इसीलिए नीतिवचन का लेखक कहता है: “इंसान की समझदारी उसे सब्र करना सिखाती है; किसी की गलती को नज़रअंदाज़ करना उसकी बड़ाई की बात है” (नीतिवचन 19:11)। इसके बजाय, जब ऐसी स्थिति आए जिससे गुस्सा आए, तो हमें सब्र से काम लेना चाहिए ताकि हम उस व्यक्ति को समझा सकें जिसने हमें नाराज़ किया है। नीतिवचन 25:15 पर गौर करें: “सब्र से किसी शासक को भी मनाया जा सकता है, और नरम ज़बान हड्डी को भी तोड़ सकती है।” कितना अच्छा होगा अगर गुस्से के पलों में हम सब्र रखें और नरम ज़बान से बात करें—इस तरह हम दूसरे व्यक्ति का दिल जीत सकेंगे और प्रभु के काम के लिए मिलकर काम कर पाएँगे।

हमें डटे रहना होगा—हमें बार-बार सहन करना होगा। प्रभु का काम पूरी निष्ठा से आखिर तक करने के लिए, हमें धैर्य और सहनशीलता दिखानी होगी। हमें याकूब 5:10-11 की बातों पर ध्यान देना चाहिए: “भाइयों और बहनों, दुख सहने में धैर्य रखने के उदाहरण के तौर पर उन नबियों को देखें जिन्होंने प्रभु के नाम से बात की। जैसा कि आप जानते हैं, हम उन्हें धन्य मानते हैं जिन्होंने धैर्य बनाए रखा। आपने अय्यूब के धैर्य के बारे में सुना है और देखा है कि प्रभु ने आखिर में क्या किया। प्रभु दया और करुणा से भरे हैं।” जब हम प्रभु पर पूरा भरोसा रखते हैं और धैर्य के साथ इंतज़ार करते हैं, तो हम उनके द्वारा दिए गए अच्छे परिणाम को देखेंगे।

तीसरी बात, एक समझदार व्यक्ति प्रभु का काम करते हुए वर्तमान सच्चाई के प्रति वफादार रहता है।

आज के वचन, उपदेशक 7:10 को देखें: “यह न कहें, ‘पुराने दिन इन दिनों से बेहतर क्यों थे?’ क्योंकि ऐसे सवाल पूछना समझदारी नहीं है।” कई बार प्रभु का काम करना मुश्किल और कठिन हो जाता है। ऐसे पलों में, हमें विनम्र मन से काम पूरा करना चाहिए। हमें मिशन की भावना से प्रेरित होकर प्रभु का काम पूरी निष्ठा से आखिर तक करना चाहिए और उनके लिए फल लाना चाहिए। हालाँकि, अगर हमें बार-बार मुश्किलों का सामना करना पड़े और बिना पता चले हमारे मन में घमंड आ जाए, तो हम काम करना छोड़ सकते हैं। हम काम को पूरा नहीं कर पाते और बीच में ही हार मान लेते हैं। हो सकता है कि हमने बड़े इरादों के साथ शुरुआत की हो, फिर भी हम काम पूरा करने में असफल रहते हैं। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि घमंड के कारण हम धैर्य खो देते हैं और जल्दबाजी में बिना सोचे-समझे फैसले ले लेते हैं। इसके अलावा, हम अपनी भावनाओं पर काबू नहीं रख पाते

और मुश्किलों का सामना करते समय गुस्सा हो जाते हैं—अपना गुस्सा हालात पर, अपने आस-पास के लोगों पर, या खुद पर भी निकालते हैं। बाइबल ऐसे व्यक्ति को मूर्ख कहती है—यानी ऐसा व्यक्ति जिसमें समझदारी की कमी हो (वचन 9b)। ऐसा मूर्ख व्यक्ति वर्तमान मुश्किलों और परेशानियों का सामना करने के बजाय बीते हुए अच्छे दिनों की चाहत रखता है (वचन 10)। यह एक मूर्ख की सोच है कि वह किसी काम की अच्छी शुरुआत की तो चाहत रखे, लेकिन काम आगे बढ़ने पर आने वाली चुनौतियों से निराश हो जाए। नतीजतन, काम पूरा करने की ज़िम्मेदारी के कारण सच्चाई का सामना करने और वर्तमान के प्रति वफादार रहने के बजाय, मूर्ख व्यक्ति अपने मौजूदा जीवन को नज़रअंदाज़ कर देता है और हमेशा अतीत की मीठी, पुरानी यादों में खोया रहता है। इस तरह, मूर्ख व्यक्ति बार-बार सच्चाई को नकारने की कोशिश करता है; वह चीज़ों को वैसा स्वीकार नहीं कर पाता जैसी वे हैं। इसके विपरीत, बुद्धिमान व्यक्ति सच्चाई को वैसा ही स्वीकार करता है जैसी वह है। हालात चाहे कैसे भी हों, बुद्धिमान व्यक्ति सच्चाई को अपनाता है और उसमें वफादार रहता है। अतीत की चाहत रखने और वहीं अटके रहने के बजाय, वे उस कृपा को याद करते हैं जो परमेश्वर ने अतीत में दी थी और वर्तमान की मुश्किलों के बीच उस कृपा का सम्मान करते हैं। उद्धार के भरोसे को मज़बूती से थामे हुए, वे विश्वास के साथ आगे बढ़ते हैं, यह भरोसा रखते हुए कि परमेश्वर उन्हें उन मुश्किलों और परेशानियों से बचाएगा जिनका वे अभी सामना कर रहे हैं। इसके अलावा, बुद्धिमान व्यक्ति भविष्य की उम्मीद के साथ आगे बढ़ता है; वे अतीत पर अटके रहने के बजाय आगे की ओर देखते हैं। प्रेरित पौलुस के शब्दों में कहें तो, बुद्धिमान व्यक्ति वह है जो लक्ष्य की ओर बढ़ता है। विश्वास की दौड़ में, बुद्धिमान व्यक्ति वह है जो अपनी नज़रें फिनिश लाइन पर टिकाए रखता है। यह जानते हुए कि उस लाइन को पार करने पर इनाम मिलेगा, वे अपनी नज़रें उस इनाम पर टिकाकर दौड़ते हैं। इसलिए, राजा सुलैमान हमें यह न पूछने की सलाह देते हैं, "पुराने दिन इन दिनों से बेहतर क्यों थे?" (पद 10)। असल में, यह सलाह से ज़्यादा एक फटकार है। हमें बुद्धिमान व्यक्ति की इस फटकार पर विनम्रता से ध्यान देना चाहिए।

हाल ही में, जब मैं कलीसिया—मसीह की देह—की सेवा कर रहा हूँ, तो परमेश्वर ने मुझे एक बात का एहसास कराया है: मुझमें बुद्धि की कमी है। इस कमी को पहचानने से मैं एक बात स्वीकार करता हूँ: कि मैं यहाँ तक सिर्फ़ परमेश्वर की कृपा से ही पहुँचा हूँ। यह मानते हुए कि मैं अब तक अपनी कलीसिया की सेवा सिर्फ़ परमेश्वर की कृपा से कर पाया हूँ, मैं इस बात पर भी सोचता हूँ कि क्या मेरी बुद्धि की कमी के कारण कलीसिया के लोगों को कोई परेशानी हुई है। नतीजतन, मुझे प्रार्थना के लिए एक नई बात मिली है: परमेश्वर से बुद्धि माँगना। मैं

याकूब 1:5 के शब्दों को थामे हुए प्रार्थना करता हूँ: "यदि तुममें से किसी में बुद्धि की कमी हो, तो उसे परमेश्वर से माँगना चाहिए, जो बिना किसी दोष के सभी को उदारता से देता है, और वह तुम्हें दी जाएगी।" इस बीच, मैं परमेश्वर का शुक्रगुजार हूँ कि हमें हर हफ़्ते बुधवार की प्रार्थना सभाओं में 'उपदेशक' (Ecclesiastes) की किताब पर मनन करने का मौका मिलता है, क्योंकि इसके ज़रिए वे हमें दिल की समझदारी सिखाते हैं। आज के हिस्से—उपदेशक 7:8-10—पर खास तौर पर ध्यान देते हुए, परमेश्वर आपको और मुझे समझदार लोगों की सेवा के बारे में तीन बातें सिखाते हैं: (1) पहली बात, समझदार इंसान किसी काम को आखिर तक पूरा करता है और उसका अच्छा नतीजा पाता है। (2) दूसरी बात, समझदार इंसान सब्र के साथ काम करता है। (3) आखिर में, समझदार इंसान प्रभु का काम करते हुए मौजूदा सच्चाई के प्रति वफ़ादार रहता है। मेरी प्रार्थना है कि हम सब ऐसे लोग बनें जो ऐसी समझदारी के साथ सेवा करें।

जीवन की दौड़

[सभोपदेशक 7:8-10, 14]

इस हफ्ते, मेरी बातचीत एक ऐसे सीनियर पास्टर से हुई जिनका मैं बहुत सम्मान करता हूँ। वे 48 साल के हैं और उन्होंने बताया कि अगले दो साल उनके लिए बहुत अहम हैं। वे अपनी मिनिस्ट्री (सेवा-कार्य) को इस पक्के इरादे के साथ आगे बढ़ा रहे थे कि 50 साल के होने से पहले चर्च की नींव मज़बूती से जम जानी चाहिए। हमने अक्सर देखा है कि अगर कोई पास्टर 50 साल की उम्र तक पहुँचने पर भी अपनी मिनिस्ट्री को स्थिर नहीं कर पाता, तो आगे का रास्ता बहुत मुश्किल हो जाता है। हमारे आस-पास ऐसे पास्टर भी हैं जो 60 साल की उम्र में भी मिनिस्ट्री के बोझ से जूझते रहते हैं। जब मैं रिटायर हो चुके पास्टर्स से मिलता हूँ, तो मैं भी इन बातों पर सोचता हूँ। मैं अक्सर प्रार्थना करता हूँ और सोचता हूँ कि मुझे अपनी बाकी ज़िंदगी कैसे जीनी चाहिए और अपनी मिनिस्ट्री कैसे चलानी चाहिए। सच कहूँ तो, अपने चर्च के 90, 80, 70, 60 और 50 साल के सदस्यों के साथ मेल-जोल से मैंने ज़िंदगी को 100 मील की दौड़ के तौर पर देखना शुरू किया है। बेशक, कोई 100 साल से ज़्यादा भी जी सकता है या उससे पहले भी गुज़र सकता है, लेकिन इस उदाहरण के लिए, मान लेते हैं कि ज़िंदगी 100 साल की है और इसे 100 मील की दौड़ की तरह देखते हैं। उस नज़रिए से, परमेश्वर की कृपा से मैंने लगभग 40 मील की दौड़ पूरी कर ली है। आज, मैं बाइबल के उस हिस्से से पाँच बातें बताना चाहता हूँ कि ज़िंदगी की इस बाकी दौड़ को कैसे पूरा किया जाए।

पहली बात, हम यह सीखते हैं कि हमें ज़िंदगी की दौड़ को आखिर तक दौड़ना चाहिए।

आज के हिस्से में, सभोपदेशक 7:8 में, राजा सुलैमान कहते हैं कि "किसी काम का अंत उसकी शुरुआत से बेहतर होता है।" अगर कोई दौड़ को पूरा करने के इरादे के बिना दौड़ता है, तो उस दौड़ का क्या नतीजा होता है? हमें बिना हार माने आखिर तक अपनी मंज़िल की ओर दौड़ना चाहिए। साथ ही, हमें सिर्फ़ दौड़ की शुरुआत

में ही तेज़ी से नहीं दौड़ना चाहिए। हमें पूरे रास्ते को पूरा करने के पक्के इरादे के साथ दौड़ना चाहिए, ताकि यह पक्का हो सके कि अंत शुरुआत से भी ज़्यादा शानदार हो। मैं अक्सर ऐसे पास्टर्स के बारे में सुनता हूँ जो सही ढंग से अपनी सेवा खत्म नहीं कर पाते और इससे चर्च के कई लोगों को दुख पहुँचता है। ऐसे पादरियों के बारे में सुनना जिन्होंने तीस या चालीस साल तक ईमानदारी से सेवा की, लेकिन सम्मान के साथ रिटायर नहीं हो पाए, मेरे लिए—जो सेवा के काम में नया हूँ—एक बहुत बड़ा सबक है। यह मुझे याद दिलाता है कि "किसी काम का अंत उसकी शुरुआत से बेहतर होता है।" यह सबक सिर्फ़ हम पादरियों के लिए ही नहीं, बल्कि सभी के लिए है। समझदार लोग परमेश्वर की इस बात पर ध्यान देंगे और पूरी कोशिश करेंगे कि वे अपनी ज़िंदगी का आखिरी अध्याय परमेश्वर और दूसरों की नज़र में खूबसूरती से पूरा करें। मेरी प्रार्थना है कि हम विश्वास की दौड़ इस तरह पूरी करें कि हमारा अंत हमारी शुरुआत से ज़्यादा खूबसूरत हो और हमारे ज़रिए यीशु की खुशबू फैले।

दूसरी बात, हम सीखते हैं कि हमें ज़िंदगी की दौड़ धैर्य और नम्र दिल के साथ दौड़नी चाहिए।

आज के वचन, उपदेशक 7:8 में, राजा सुलैमान कहते हैं, "घमंडी मन वाले की तुलना में धैर्यवान मन वाला बेहतर है।" जब हम ज़िंदगी की दौड़ को आखिर तक दौड़ने की कोशिश करते हैं, तो हमें कई ऐसी स्थितियों का सामना करना पड़ता है जिनमें बहुत धैर्य की ज़रूरत होती है। ज़िंदगी एक मैराथन की तरह है जिसके लिए सहनशक्ति की ज़रूरत होती है। ज़िंदगी की मुश्किलों और परेशानियों के बीच, हमें डटे रहना चाहिए और दौड़ पूरी करनी चाहिए। धैर्य के अलावा, हमें ज़िंदगी की दौड़ नम्रता के साथ भी दौड़नी चाहिए; हमें नम्र दिल से शुरुआत करके घमंड से भरे दिल के साथ खत्म नहीं करना चाहिए। उदाहरण के लिए, राजा शाऊल शुरू में नम्र थे और खुद को मामूली समझते थे, लेकिन बाद में वे अहंकारी हो गए, परमेश्वर की बात नहीं मानी और उनके खिलाफ़ पाप किया। राजा सुलैमान ने शुरू में इज़राइल के लोगों पर अच्छी तरह शासन किया और नम्र दिल से परमेश्वर से बुद्धि मांगी; हालाँकि, उनकी ज़िंदगी का आखिरी अध्याय बिल्कुल भी अच्छा नहीं था, क्योंकि उन्होंने परमेश्वर की बात नहीं मानी। यह सोचना ही मुश्किल है कि प्रभु की सेवा करना और आखिर तक नम्रता के साथ अपना विश्वास बनाए रखना कितना मुश्किल है। कितने ही पादरी अपनी सेवा की शुरुआत बपतिस्मा देने वाले यूहन्ना की तरह "जंगल में पुकारने वाली आवाज़" बनकर करते हैं, लेकिन बाद में घमंड का शिकार हो जाते हैं और राजा दाऊद की तरह शहर के बीचों-बीच, शाही महल में पाप कर बैठते हैं। मुझे सबसे ज़्यादा डर इस बात का है कि घमंड कितनी आसानी से बिना पता चले ही मन में आ सकता है। इस तरह अपने दिल की रक्षा करना वाकई मुश्किल है। फिर भी, जो लोग ज़िंदगी की दौड़ पूरी करने के लिए निकले हैं, उन्हें डटे रहना

चाहिए और आखिर तक नम्र स्वभाव बनाए रखना चाहिए। शुरुआत और अंत, दोनों में ही नम्रता होनी चाहिए। आइए हम सब्र और नम्रता के साथ विश्वास की दौड़ पूरी करें।

तीसरी बात, हम यह सबक सीखते हैं कि हमें ज़िंदगी की दौड़ जल्दबाज़ी या गुस्से में नहीं दौड़नी चाहिए।

आज के वचन, उपदेशक 7:9 में, राजा सुलैमान हमसे कहते हैं, "अपने मन में जल्दी गुस्सा न करो।" मुझे मैराथन के बारे में ज़्यादा जानकारी नहीं है, लेकिन मेरा मानना है कि मैराथन दौड़ने वाला खिलाड़ी दौड़ शुरू होते ही पूरी रफ़्तार से नहीं दौड़ता। अगर कोई बेसब्री से दौड़े, तो वह कभी दौड़ पूरी नहीं कर पाएगा। जो लोग मुझसे ज़्यादा उम्र के हैं, वे ज़रूर इस बात को अच्छी तरह समझते होंगे: कि ज़िंदगी को जल्दबाज़ी में सही ढंग से नहीं जिया जा सकता। बेशक, इसका मतलब यह नहीं है कि हमें आलस में जीना चाहिए; आलस भी एक पाप है। हमें ज़िंदगी की दौड़ मेहनत से दौड़नी चाहिए, लेकिन बेसब्री से नहीं। इसके अलावा, ज़िंदगी की दौड़ दौड़ते समय हमें गुस्सा मन में नहीं रखना चाहिए और न ही उसे निकालना चाहिए। जल्दबाज़ी में अक्सर गुस्सा आ जाता है। एक बार मैं अपने चर्च की एक बुजुर्ग सेविका (डीकनेस) से मिलने नर्सिंग होम गया था और वहाँ दो अन्य बुजुर्ग महिलाओं को चिल्लाते और लड़ते हुए सुना। गुस्से में एक-दूसरे को बुरा-भला कहते हुए सुनकर मुझे बहुत हैरानी हुई। मुझे डर था कि इससे मेरे बच्चों पर बुरा असर पड़ सकता है, इसलिए मैं जल्दी से वहाँ से निकल आया। कितना बुरा नज़ारा था—इतनी लंबी ज़िंदगी जीने के बाद भी लोग अपने गुस्से पर काबू नहीं रख पा रहे थे और चिल्ला-चोट और अपशब्दों का सहारा ले रहे थे। "गुस्सैल इंसान झगड़ा पैदा करता है" (नीतिवचन 15:18)। जैसा कि राष्ट्रपति लिंकन ने एक बार कहा था, अब मैं चालीस साल की उम्र में पहुँच गया हूँ—एक ऐसी उम्र जब मुझे अपने चेहरे के भावों की ज़िम्मेदारी लेनी चाहिए। मुझे ज़िंदगी की दौड़ गुस्से या चिड़चिड़े चेहरे के साथ नहीं दौड़नी चाहिए। इस भागदौड़ भरी दुनिया में, मैं शांत मन से और गुस्से पर काबू रखते हुए ज़िंदगी की दौड़ दौड़ना चाहता हूँ।

चौथी बात, हम यह सबक सीखते हैं कि हमें अतीत की यादों में खोए रहकर ज़िंदगी की दौड़ नहीं दौड़नी चाहिए।

आज के वचन, उपदेशक 7:10 में, राजा सुलैमान हमें सलाह देते हैं कि हम यह न पूछें, "पुराने दिन आज के दिनों से बेहतर क्यों थे?" इसका कारण बस इतना है कि ऐसा सवाल पूछना समझदारी नहीं है। दूसरे शब्दों में,

एक समझदार व्यक्ति अतीत की चाहत में वर्तमान की दौड़ को नज़रअंदाज़ नहीं करता। ज़रा एक मैराथन धावक के बारे में सोचिए जो दौड़ते समय अतीत के बारे में सोचता रहता है—जैसे, "शुरुआत में मैं सबसे तेज़ था..."—और सामने की दौड़ पर ध्यान नहीं देता; तो उसकी दौड़ का क्या होगा? बहुत से लोग पुरानी यादों में खोए रहते हैं, अतीत को याद करते रहते हैं, और नतीजतन, उनके जीवन में कोई प्रगति नहीं होती; वे खुद को बेहतर बनाने से इनकार कर देते हैं। अगर कोई लगातार अपने शानदार दिनों को याद करता रहता है—यह सोचते हुए कि "तब मैं ऐसा था..."—तो वह न तो अपने वर्तमान जीवन के प्रति वफ़ादार रह सकता है और न ही दौड़ पूरी करने की अपनी क्षमता का पूरा इस्तेमाल कर सकता है। समझदार लोग आगे देखते हुए दौड़ते हैं। कोई भी मैराथन धावक पीछे देखते हुए दौड़ नहीं लगाता; वे फिनिश लाइन पर नज़र टिकाकर दौड़ते हैं। हमें भी ऐसा ही करना चाहिए। जीवन की दौड़ पूरी करने के लिए, हमें पीछे नहीं देखना चाहिए। बेशक, हमें उस कृपा को नहीं भूलना चाहिए जो परमेश्वर ने अतीत में हम पर की थी। हालाँकि, हमें कभी भी उस पुरानी कृपा में ही अटके नहीं रहना चाहिए। हमारे परमेश्वर ऐसे परमेश्वर हैं जो अतीत की तुलना में वर्तमान में और भी बड़ी कृपा करते हैं (यशायाह 43:18-19)। इसलिए, हमें विश्वास की दौड़ दौड़ते हुए परमेश्वर के उस काम के लिए प्रार्थना करनी चाहिए, उसकी उम्मीद करनी चाहिए और उसका इंतज़ार करना चाहिए, जो एक नई बात करेंगे। हमें और भी बड़ी कृपा पाने की चाहत के साथ दौड़ना चाहिए। परमेश्वर निश्चित रूप से वह कृपा हम पर भरपूर मात्रा में बरसाएंगे जो उन्होंने हमारे लिए जमा करके रखी है।

आखिरकार, पाँचवाँ सबक जो हम सीखते हैं वह यह है कि हमें विश्वास के साथ जीवन की दौड़ दौड़नी चाहिए, और इस सच्चाई को स्वीकार करना चाहिए कि खुशहाली और मुश्किलों का समय साथ-साथ चलते हैं। आज के वचन, उपदेशक 7:14 में, राजा सुलैमान कहते हैं कि परमेश्वर ने हमारे जीवन में खुशहाली और मुश्किलों, दोनों के साथ-साथ रहने का इंतज़ाम किया है। वे हमें सलाह देते हैं: "खुशहाली के दिन आनंद मनाओ, लेकिन मुश्किल के दिन सोच-विचार करो।" परमेश्वर ने इन दोनों के साथ-साथ चलने का इंतज़ाम क्यों किया है? उनका मकसद यह पक्का करना है कि "इंसान अपने बाद होने वाली किसी भी चीज़ का पता न लगा सके।" भले ही यह जानना अच्छा लग सकता है कि भविष्य में क्या होने वाला है, लेकिन अगर हमें अपना भविष्य पता होता, तो हम निश्चित रूप से परमेश्वर के विरुद्ध और अधिक पाप करते। भविष्य जानने से हम निश्चित रूप से अहंकारी हो जाते और परमेश्वर पर भरोसा करना छोड़ देते। हम अपनी मर्ज़ी से जीने की कोशिश करते, मानो हम अपनी किस्मत के खुद मालिक हों। हम आलसी हो सकते थे, या—अगर हम हार मान लेते—तो बस ज़िंदगी को बिना

किसी मकसद के बहने देते। भविष्य का न जानना ही बेहतर है। जब आपको पहले से ही पता हो कि सॉकर मैच का नतीजा क्या होगा, तो उसे देखने का सारा मज़ा खत्म हो जाता है; हो सकता है कि आप उसे देखना ही न चाहें। हमारे लिए यह ज़रूरी है कि हम न जानें; हमें अपने भविष्य के बारे में अनजान रहना चाहिए। हमें यह जानने की ज़रूरत नहीं है कि हमारे भविष्य में खुशहाली होगी या मुश्किलें। हमें बस खुशहाली के समय में आनंद मनाना चाहिए और मुश्किलों के समय में चिंतन करना चाहिए। आखिरकार, हमारी ज़िंदगी सिर्फ़ खुशहाली से भरी नहीं होनी चाहिए, क्योंकि इससे अहंकार पैदा होगा; न ही यह सिर्फ़ मुश्किलों से भरी होनी चाहिए, क्योंकि इससे हम पाप की ओर बढ़ेंगे। परमेश्वर ने, जो सब कुछ जानते हैं, यह तय किया है कि हमारी ज़िंदगी की दौड़ में आसान रास्ते, चढ़ाईयाँ और घुमावदार रास्ते—सब शामिल हों। जैसे मैराथन में दोनों तरह के रास्ते ज़रूरी होते हैं, वैसे ही हमारी ज़िंदगी की दौड़ में भी वे ज़रूरी हैं। इस तरह, हम विश्वास की इस दौड़ को आखिर तक दौड़ सकते हैं—धन्यवाद, प्रशंसा और प्रार्थना करते हुए, और अपनी नज़रें सिर्फ़ प्रभु पर टिकाकर और उन पर भरोसा करते हुए। जब हम विश्वास की दौड़ के बारे में बात करते हैं, तो हम 2 तीमुथियुस 4:7-8 और प्रेरितों के काम 20:24 में लिखी बातों को नज़रअंदाज़ नहीं कर सकते:

“मैंने अच्छी लड़ाई लड़ी है, मैंने दौड़ पूरी कर ली है, मैंने विश्वास बनाए रखा है।

अब मेरे लिए धार्मिकता का मुकुट रखा है, जो प्रभु,

जो धर्मी न्यायकर्ता है, उस दिन मुझे देगा—और न केवल मुझे,

बल्कि उन सभी को भी जिन्होंने उसके आने की चाहत रखी है” (2 तीमुथियुस 4:7-8)। “लेकिन, मैं अपनी ज़िंदगी को अपने लिए कुछ भी नहीं समझता; मेरा एकमात्र मकसद उस दौड़ को पूरा करना और उस काम को खत्म करना है जो प्रभु यीशु ने मुझे सौंपा है—यानी परमेश्वर की कृपा की खुशखबरी की गवाही देने का काम” (प्रेरितों के काम 20:24)।

आइए हम सब अपनी दौड़ को अच्छी तरह पूरा करें, ठीक वैसे ही जैसे प्रेरित पौलुस ने किया था। आइए हम विश्वास की दौड़ पूरी करें। आइए हम विश्वास की ऐसी दौड़ दौड़ें जिसमें हमारा अंत परमेश्वर की नज़र में हमारी शुरुआत से भी ज़्यादा सुंदर हो। आइए हम धैर्य और विनम्रता के साथ आखिर तक दौड़ें। आइए हम यह दौड़ जल्दबाज़ी या गुस्से में न दौड़ें। चाहे हमारे सामने कैसी भी मुश्किलें क्यों न आएँ, आइए हम प्रभु पर अपनी नज़र

टिकाकर विश्वास की दौड़ पूरी करें, क्योंकि वही सब कुछ भलाई के लिए करता है। हम सब ऐसा जीवन जिएं जिससे परमेश्वर की महिमा हो।

बुद्धिमानी की सुंदरता

[सभोपदेशक 7:11-14]

जब आप जीवन में लिए गए फैसलों को देखते हैं, तो उन फैसलों के लिए आप किस बात को पैमाना मानते हैं? व्यक्तिगत रूप से, मेरा मानना है कि मुख्य सवाल यह है, "क्या यह मेरे लिए फायदेमंद है?" उदाहरण के लिए, अगर हमें विकल्प A और विकल्प B में से चुनना हो—जहाँ A से फायदा होता हो और B से नुकसान—तो हम स्वाभाविक रूप से A को ही चुनेंगे। बेशक, इस पैमाने के आधार पर फैसला करते समय, हमें उस "फायदे" की प्रकृति पर भी ध्यान से विचार करना चाहिए। हमें यह तौलना होगा कि जो रास्ता हम चुनते हैं, क्या वह हमारे विश्वास के जीवन को फायदा पहुँचाता है या सिर्फ हमारे शारीरिक, सांसारिक जीवन को। अगर चुने हुए रास्ते से आध्यात्मिक फायदा मिलता है, तो हमें उसे ही चुनना चाहिए। भले ही उस रास्ते से कोई भौतिक या शारीरिक फायदा न मिले, फिर भी अगर वह हमारे आध्यात्मिक जीवन और विश्वास के लिए फायदेमंद है, तो हमें उसे चुनना चाहिए। ऐसा करने के लिए, हमें परमेश्वर की बुद्धिमानी की ज़रूरत है। बुद्धिमानी हमें सही समझ रखने और सही फैसले लेने में मदद करती है।

जैसे-जैसे हम सभोपदेशक अध्याय 7 पर मनन करते हैं, हम "बुद्धिमानी" के विषय पर विचार कर रहे हैं: आयत 1 से 4 में "बुद्धिमानी के हृदय" पर चर्चा की गई है; आयत 5 से 7 में "बुद्धिमानी की डांट" पर; और आयत 8 से 10 में "बुद्धिमानी की सेवा" पर। इस संदर्भ में, आज के अंश—सभोपदेशक 7:11 और 12—को देखें तो राजा सुलैमान कहते हैं, "बुद्धिमानी विरासत की तरह सुंदर है..." (आयत 11) और "...ज्ञान और भी सुंदर है..." (आयत 12)। संक्षेप में, वे कहते हैं कि बुद्धिमानी सुंदर है; वे "बुद्धिमानी की सुंदरता" के बारे में बात कर रहे हैं। यहाँ, "सुंदर" शब्द का अर्थ "अच्छा" या "फायदेमंद" है। दूसरे शब्दों में, यह कहने का मतलब है कि बुद्धिमानी हमारे

लिए अच्छी है और हमें फायदा पहुँचाती है। तो फिर, बुद्धिमानी हमें क्या-क्या फायदे देती है? बाइबल तीन मुख्य बातों पर ज़ोर देती है।

पहला, बुद्धिमानी से मिलने वाला फायदा यह है कि यह हमें एक अनंत नज़रिया देती है।

आज के अंश, सभोपदेशक 7:11 में, राजा सुलैमान बुद्धिमानी को सुंदर बताते हैं—विरासत की तरह—यानी ऐसी चीज़ जो हमेशा बनी रहती है। संक्षेप में, ज्ञान सुंदर (और हमारे लिए फायदेमंद) है क्योंकि इसका हमारे लिए हमेशा रहने वाला महत्व है (पार्क युन-सन)। जहाँ दुनिया की चीज़ों, जैसे कि भौतिक धन या शक्ति, का महत्व हमेशा नहीं रहता, वहीं ज्ञान सुंदर है क्योंकि विरासत की तरह इसका मूल्य हमेशा बना रहता है। ज्ञान न केवल इसलिए अच्छा और सुंदर है क्योंकि इसका महत्व हमेशा रहता है, बल्कि इसलिए भी कि यह हमारे अंदर हमेशा का नज़रिया पैदा करता है। यह अच्छा, फायदेमंद और सुंदर है क्योंकि यह हमें उन चीज़ों के लिए हमेशा जीने में मदद करता है जो हमेशा रहने वाली हैं। खासकर, परमेश्वर ने हमारे अंदर हमेशा के लिए जीने की चाहत रखी है (सभोपदेशक 3:11), और ज्ञान अच्छा, फायदेमंद और सुंदर है क्योंकि यह उसी चाहत को पूरा करता है। इसलिए, नीतिवचन का लेखक कहता है: “यह भी जान लो कि ज्ञान तुम्हारे लिए शहद जैसा है: अगर तुम्हें यह मिल जाए, तो तुम्हारे लिए भविष्य की उम्मीद है, और तुम्हारी उम्मीद कभी खत्म नहीं होगी” (नीतिवचन 24:14)। जिनके पास ज्ञान है, उनके पास हमेशा की उम्मीद होती है।

दूसरा, ज्ञान से मिलने वाला फ़ायदा सुरक्षा है। आज के वचन, सभोपदेशक 7:12 को देखिए: “ज्ञान एक आश्रय है और पैसा भी एक आश्रय है, लेकिन ज्ञान का फ़ायदा यह है: ज्ञान अपने मालिक की जान बचाता है।” यहाँ “आश्रय” शब्द का असली मतलब “छाया” या “पनाह” है (राडमाचर)। राजा सुलैमान कह रहे हैं कि ज्ञान और पैसा दोनों ही हमारे लिए छाया या पनाह का काम करते हैं। कल्पना कीजिए कि एक दिन सूरज बहुत तेज़ चमक रहा है। बहुत गर्मी होगी, है ना? ऐसी गर्मी में, क्या हम स्वाभाविक रूप से छाया नहीं ढूँढ़ेंगे? राजा सुलैमान कह रहे हैं कि ज्ञान और पैसा हमें ठीक वैसी ही छाया देते हैं। छाया देने का मतलब है कि वे हमें शांति और सुरक्षा का एहसास दिलाते हैं। संक्षेप में, इसका मतलब है कि ज्ञान और पैसा हमारी रक्षा करते हैं। आप क्या सोचते हैं? क्या आपको लगता है कि ज्ञान और पैसा आपको सुरक्षा देते हैं? आप शायद इस बात से सहमत होंगे कि पैसा सुरक्षा देता है, क्योंकि पैसा होने से अक्सर हमें सुरक्षा का एहसास होता है। इसीलिए नीतिवचन का लेखक कहता है:

“किसी व्यक्ति की दौलत उसकी जान बचा सकती है, लेकिन गरीब को कोई खतरा महसूस नहीं होता” (नीतिवचन 13:8)। उदाहरण के लिए, अगर किसी बच्चे का अपहरण हो जाए और फिरौती मांगी जाए, तो पैसे होने पर हम पैसे देकर बच्चे को छुड़ा सकते हैं। लेकिन अगर हमारे पास पैसे न हों, तो ऐसी स्थिति में हम क्या कर सकते हैं? फिर भी, राजा सुलैमान कहते हैं कि बुद्धि पैसे से कहीं ज़्यादा बेहतर है—यानी हमारी सुरक्षा के मामले में बुद्धि पैसे से ज़्यादा फायदेमंद है। क्या आप भी मानते हैं कि हमारी सुरक्षा के लिए बुद्धि पैसे से ज़्यादा फायदेमंद है? नीतिवचन 31:10-31 के जाने-माने हिस्से में, लेखक एक नेक औरत के बारे में बात करता है। खासकर आयत 10 में कहा गया है: “नेक औरत कौन पा सकता है? क्योंकि उसकी कीमत मोतियों से कहीं ज़्यादा है।” मोती या पैसे जैसी भौतिक चीज़ें हमेशा नहीं रहतीं; दूसरे शब्दों में, पैसे में स्थायित्व नहीं होता। लेकिन बुद्धि ऐसी चीज़ नहीं है जो बस आती-जाती रहती है (सभोपदेशक 7:11); इसका हमारे लिए हमेशा रहने वाला मूल्य है। इसीलिए राजा सुलैमान कहते हैं कि बुद्धि पैसे से ज़्यादा फायदेमंद है। हालाँकि पैसा हमारी शारीरिक जान बचा सकता है, लेकिन यह हमारी आत्मा को नहीं बचा सकता। दूसरी ओर, बुद्धि न केवल हमारी शारीरिक जान बचाती है बल्कि हमारी आत्मा की भी रक्षा करती है, जिससे यह पैसे से कहीं ज़्यादा मूल्यवान हो जाती है। इसलिए, नीतिवचन का लेखक लिखता है: “धन्य है वह व्यक्ति जिसे बुद्धि मिलती है और जो समझ हासिल करता है, क्योंकि वह चाँदी से ज़्यादा फायदेमंद है और शुद्ध सोने से बेहतर प्रतिफल देती है” (नीतिवचन 3:13-14)। हमें बुद्धि को छोड़ना नहीं चाहिए बल्कि उससे प्रेम करना चाहिए, क्योंकि बुद्धि हमारी रक्षा और हिफ़ाज़त करेगी (नीतिवचन 4:6)।

आखिर में, बुद्धि का तीसरा फ़ायदा यह है कि यह हमें परमेश्वर की कृपा का अनुभव करने में मदद करती है—वह कृपा जो ज़रूरत के समय मदद देती है।

परमेश्वर की वह कृपा क्या है जो ज़रूरत के समय हमारी मदद करती है? बाइबल एक या दो मुख्य पहलुओं पर ज़ोर देती है:

(1) पहला, परमेश्वर की जिस कृपा का हम अनुभव करते हैं, उसमें परमेश्वर की सर्वोच्च सत्ता को स्वीकार करना शामिल है।

आज के वचन, सभोपदेशक 7:13 पर विचार करें: “परमेश्वर के काम पर ध्यान दें; क्योंकि जिसे उसने टेढ़ा बनाया है, उसे कौन सीधा कर सकता है?” इस वचन का मतलब है कि इंसान परमेश्वर के कामों को बदल या ठीक नहीं कर सकता। इसलिए, यह वचन परमेश्वर की पूर्ण सर्वोच्च सत्ता की ओर इशारा करता है (पार्क युन-सन)। जब हम खुशहाल होते हैं, तो परमेश्वर की पूरी सत्ता को मानना शायद आसान होता है। लेकिन, मुश्किल समय में इसे मानना बिना विश्वास के नामुमकिन है। बेशक, खुशहाली के समय में भी हम विश्वास के ज़रिए ही परमेश्वर की सत्ता को मान सकते हैं; फिर भी, किसी वजह से, मुश्किल समय की तुलना में ऐसा करना आसान लगता है। हम स्वाभाविक रूप से पूछ सकते हैं, “अगर परमेश्वर हमसे प्यार करते हैं, तो वे सिर्फ़ खुशहाली का आशीर्वाद देने के बजाय मुश्किल हालात क्यों आने देते हैं?” यह परमेश्वर की सर्वोच्च इच्छा का काम है जो हमारी इंसानी समझ से परे है। तो फिर, परमेश्वर की इच्छा क्या है? उपदेशक 7:14 के बाद वाले हिस्से को देखिए: “...परमेश्वर ने एक को दूसरे के साथ बनाया है, ताकि इंसान अपने बाद होने वाली किसी भी चीज़ का पता न लगा सके।” परमेश्वर अपनी सर्वोच्च इच्छा के तहत जो खुशहाली या मुश्किल हालात आने देते हैं, वे हमें भविष्य को समझने से रोकते हैं। यह हमारे लिए फ़ायदेमंद है क्योंकि यह हमें पूरी तरह से परमेश्वर पर भरोसा करने के लिए प्रेरित करता है (पार्क युन-सन)। आज के हिस्से में राजा सुलैमान जो संदेश देते हैं, वह यह है कि समझदारी इसी में है कि हम परमेश्वर की पूरी सत्ता को मानें, चाहे हम खुशहाली का अनुभव कर रहे हों या मुश्किल हालात का। इस तरह, समझदार व्यक्ति विश्वास के साथ जीता है और अच्छे और बुरे, दोनों समय में परमेश्वर की सत्ता को पहचानता है।

(2) दूसरी बात, परमेश्वर की कृपा—जो सही समय पर हमारी मदद के लिए आती है और बुद्धि के ज़रिए हमें पता चलती है—हमें अच्छे समय में खुश रहने और मुश्किल समय में सोचने-समझने का मौका देती है।

आज के वचन में ‘उपदेशक 7:14’ का पहला हिस्सा देखिए: “अच्छे दिन में खुश रहो, लेकिन मुश्किल दिन में सोच-विचार करो...” बुद्धिमान व्यक्ति जानता है कि परमेश्वर ही हमारे जीवन में अच्छा और बुरा, दोनों तरह का समय लाता है। वे यह भी समझते हैं कि परमेश्वर, जो ये दोनों चीज़ें तय करता है, उसने यह पक्का किया है कि हम भविष्य को पूरी तरह से समझ या देख न सकें। बुद्धिमान व्यक्ति सिर्फ़ तब खुश नहीं होता जब सब कुछ अच्छा चल रहा हो; बल्कि, वह मुश्किल समय में परमेश्वर से मिलने वाली कृपा को अपनाता है। वह कृपा क्या है? यह वह कृपा है जिसके ज़रिए बुद्धि हमें मुश्किल समय में ऐसी चीज़ें देखने देती है जो हमने पहले नहीं देखी

थीं। तो फिर, मुश्किल समय में बुद्धि हमें क्या दिखाती है जिससे हम परमेश्वर की कृपा का अनुभव कर पाते हैं?
(पार्क युन-सन)

(a) यह हमें यह सच्चाई दिखाती है कि हम पापी हैं। दूसरे शब्दों में, बुद्धि हमें मुश्किल समय में अपने पाप को देखने में मदद करती है, जिससे हम परमेश्वर के सामने विनम्र हो जाते हैं। यह कितनी बड़ी आशीष है! यह एहसास होना कि मैं परमेश्वर के सामने एक पापी हूँ, एक बड़ी आशीष है। ऐसा इसलिए है क्योंकि इस सच्चाई को समझने पर, हम यीशु के क्रूस पर मिली माफ़ी की कृपा की गहराई को समझ सकते हैं। अगर हम मुश्किल समय में इस कृपा को समझ सकें, तो वह मुश्किल समय ही एक आशीष बन जाता है। बुद्धि फ़ायदेमंद है क्योंकि यह हमें इस सच्चाई को समझने में मदद करती है।

(b) यह हमें दूसरों को देखने में मदद करती है। जब हम सफलता की लहर पर सवार होते हैं, तो अक्सर हम अपने आस-पास के लोगों पर ध्यान नहीं देते—या हम उन्हें पूरी तरह नज़रअंदाज़ भी कर सकते हैं। हालाँकि, जब हम मुश्किलों का सामना करते हैं, तभी हम अपने आस-पास के लोगों पर ध्यान देना शुरू करते हैं। जैसे-जैसे दूसरों को नीचा समझने की आदत कम होती है, हम उन्हें पहचानते हैं और उनका सम्मान करते हैं।

(3) यह परमेश्वर के न्याय का सामना करना है। जब सब कुछ अच्छा चल रहा हो और हम तरक्की कर रहे हों, तो कौन परमेश्वर के न्याय के बारे में सोचेगा? फिर भी, मुश्किल समय में, हम उस धर्मी परमेश्वर का सामना करते हैं जो पाप का न्याय करता है। नतीजतन, हमारे अंदर परमेश्वर के प्रति आदर का भाव पैदा होता है। यही वह कृपा है जो परमेश्वर हमें मुश्किल समय में देता है। (d) यह हमें प्रभु के साथ हमेशा रहने की उम्मीद देता है। समझदारी न केवल हमें हमेशा रहने वाली चीज़ों की चाहत रखने के लिए प्रेरित करती है, बल्कि हमें एक ऐसा नज़रिया भी देती है जो हमेशा के लिए होता है; इस तरह, खासकर मुश्किल समय में, यह हमें परमेश्वर के हमेशा रहने वाले राज्य की ओर भी गहराई से चाहत रखने के लिए प्रेरित करती है। इसके अलावा, समझदारी हमें उस राज्य में प्रभु के साथ हमेशा रहने की उम्मीद देती है। यह वह कृपा है जो परमेश्वर हमें हमारी मुश्किलों के समय देता है। परमेश्वर से मिलने वाली समझदारी हमें इसी कृपा का अनुभव करने में मदद करती है। यही समझदारी का फ़ायदा है; यही समझदारी की ख़ूबसूरती है।

समझदारी खूबसूरत है। समझदारी आपके और मेरे लिए फ़ायदेमंद है। यह फ़ायदेमंद है क्योंकि यह हमें हमेशा रहने वाला नज़रिया देती है। यह फ़ायदेमंद है क्योंकि यह हमारी रक्षा करती है। साथ ही, यह फ़ायदेमंद है क्योंकि यह हमें परमेश्वर की कृपा का अनुभव करने देती है—वह मदद जो ठीक उसी समय मिलती है जब हमें उसकी ज़रूरत होती है। इसीलिए नीतिवचन का लेखक हमें सलाह देता है: "समझदारी सबसे ज़रूरी है; इसलिए समझदारी हासिल करो। भले ही इसके लिए तुम्हें अपना सब कुछ देना पड़े, समझ हासिल करो" (नीतिवचन 4:7)। मैं प्रार्थना करता हूँ कि आप और मैं परमेश्वर से समझदारी माँगें, जो बिना किसी कमी को निकाले सभी को उदारता से देता है (याकूब 1:5)। इसलिए, मुझे उम्मीद है कि आप और मैं दोनों ही समझदारी की खूबसूरती का अनुभव करेंगे।

बुद्धिमानी की नींव

[सभोपदेशक 7:15–18]

आज सुबह की प्रार्थना सभा में, मैंने एक आशीष पाए परिवार, आशीष पाए कलीसिया और आशीष पाए राष्ट्र के विषयों पर मनन किया। मैंने 2 इतिहास 9:7 पर ध्यान केंद्रित किया: "धन्य हैं तेरे लोग! धन्य हैं तेरे ये सेवक, जो लगातार तेरे सामने खड़े रहते हैं और तेरी बुद्धिमानी की बातें सुनते हैं!" इस वचन पर विचार करते हुए, मैंने सोचा कि एक बुद्धिमान नेता का मिलना कितनी बड़ी आशीष है। ऐसा इसलिए है क्योंकि इज़राइल राष्ट्र को आशीष इसलिए मिली क्योंकि उसका राजा, सुलैमान, बुद्धिमान था। न्याय और धार्मिकता को बनाए रखकर, बुद्धिमान राजा सुलैमान ने राष्ट्र को मजबूत किया (वचन 8); इस प्रकार, जैसा कि शेबा की रानी ने देखा, इज़राइल के लोग वास्तव में आशीष पाए हुए लोग थे। हमारे परिवारों को आशीष मिले, इसके लिए परिवार के मुखिया—पति या पिता—का बुद्धिमान होना ज़रूरी है। हमारी कंपनियों को आशीष मिले, इसके लिए प्रेसिडेंट का बुद्धिमान होना ज़रूरी है। हमारी कलीसियाओं को आशीष मिले, इसके लिए पास्टर का बुद्धिमान होना ज़रूरी है। हमारे राष्ट्र को आशीष मिले, इसके लिए प्रेसिडेंट का बुद्धिमान होना ज़रूरी है। इसीलिए हमने आज सुबह की प्रार्थना सभा में इन नेताओं के लिए प्रार्थना की। हमने प्रार्थना की कि परमेश्वर हमारे परिवारों, कंपनियों, कलीसियाओं और राष्ट्र के नेताओं को बुद्धिमानी दे।

हाल ही में, हम अपनी साप्ताहिक बुधवार की प्रार्थना सभाओं में सभोपदेशक अध्याय 7 पर मनन कर रहे हैं। हमने "बुद्धिमानी का हृदय" (वचन 1–4), "बुद्धिमानी की डांट" (वचन 5–7), "बुद्धिमानी की सेवा" (वचन 8–10), और "बुद्धिमानी की सुंदरता" (वचन 11–14) पर विचार किया है। इसी संदर्भ में, आज का अंश—सभोपदेशक 7:18—बुद्धिमान राजा सुलैमान को उन लोगों के बारे में बात करते हुए दिखाता है जो परमेश्वर का भय मानते हैं। सभोपदेशक 7:15–18 पर मनन करते समय, मुझे नीतिवचन 1:7 याद आया: "यहोवा का

भय ज्ञान का आरंभ है, लेकिन मूर्ख बुद्धिमानी और शिक्षा को तुच्छ समझते हैं।" इसलिए, "बुद्धिमानी का आरंभ" शीर्षक के तहत, मैं यह सीखना चाहता हूँ कि जो लोग परमेश्वर—जो बुद्धिमानी का स्रोत है—का भय मानते हैं, उन्हें कैसा जीवन जीना चाहिए। कृपया उपदेशक 7:18 देखें: "एक बात को पकड़े रहना और दूसरी को न छोड़ना अच्छा है; क्योंकि जो परमेश्वर का भय मानता है, वह उन सब से बच निकलेगा।" राजा सुलैमान कहते हैं कि जो लोग परमेश्वर का भय मानते हैं—जो बुद्धि का स्रोत है—वे दोनों अतिवादी स्थितियों से बचते हैं। व्यक्तिगत रूप से, मेरा मानना है कि विश्वास के जीवन में "संतुलन" बहुत ज़रूरी है। ऐसा इसलिए है क्योंकि मुझे लगता है कि कई ईसाई ऐसा विश्वास का जीवन जीते हैं जिसमें संतुलन की कमी होती है। उदाहरण के लिए—और जैसा कि हमने पहले उपदेशक 7:14 पर मनन किया था—ईसाई अक्सर "समृद्धि के दिनों" को पसंद करते हैं लेकिन "मुसीबत के दिनों" को नापसंद करते हैं। दूसरे शब्दों में, हालाँकि हमें यह विश्वास करना चाहिए कि परमेश्वर सही समय पर हमारी मदद करने के लिए अनुग्रह देता है—चाहे समृद्धि हो या मुसीबत—और उस अनुग्रह का पूरा आनंद लेना चाहिए, फिर भी हम अक्सर मुश्किल समय में ऐसा करने में विफल रहते हैं, जबकि समृद्धि के समय में हम उसका आनंद ले रहे होते हैं। आपके बारे में क्या? क्या आप सचमुच मुसीबत के दिनों में परमेश्वर के सही समय पर मिलने वाले अनुग्रह का आनंद लेते हैं? क्या आप मुश्किल समय में ऐसी चीजें देखते हैं जिन्हें आप समृद्धि के समय में नहीं देख पाए थे? क्या आप देखते हैं कि मुसीबत के समय में, हम खुद को पापी मानते हैं और अपने आस-पास के उन लोगों पर ध्यान देते हैं जिन्हें हमने अच्छे दिनों में नज़रअंदाज़ कर दिया था? क्या आप देखते हैं कि हम उस धर्मी परमेश्वर का आदर करने लगते हैं जो पाप का न्याय करता है, और हम प्रभु के साथ हमेशा रहने की आशा करते हैं? यह देखकर कि परमेश्वर न केवल समृद्धि के दिन बल्कि मुसीबत के दिन भी तय करता है—दोनों को आपस में मिलाता है—मुझे विश्वास के जीवन में संतुलन की आवश्यकता और भी अधिक महसूस होती है। हमें निश्चित रूप से समृद्धि के दिनों की आवश्यकता है, लेकिन हमें मुसीबत के दिनों की भी आवश्यकता है। परमेश्वर हमारे जीवन में इन दोनों अनुभवों को इसलिए मिलाता है क्योंकि भविष्य को हमारी पूरी समझ से छिपाकर (पद 14), वह चाहता है कि हम केवल उस पर विश्वास करके जिएं। इसलिए, केवल समृद्धि का जीवन हमारे लिए पर्याप्त नहीं है; हमें दुख की भी आवश्यकता है। फिर भी, ऐसा लगता है कि आज कई

ईसाई समृद्धि के आशीर्वाद से तो अच्छी तरह परिचित हैं, लेकिन वे दुख में मिलने वाले आशीर्वाद को समझने में विफल रहते हैं। विश्वास के ऐसे जीवन में संतुलन की कमी होती है।

केवल भविष्य ही हमारी समझ से परे नहीं है (पद 14)। हम यह समझने में भी विफल रहते हैं कि धर्मी लोगों को दुख क्यों सहना पड़ता है जबकि दुष्ट लोग समृद्ध होते हैं। दूसरे शब्दों में, परमेश्वर ने न केवल अच्छे और बुरे दिनों को मिला दिया है ताकि भविष्य हमारी समझ से बाहर रहे, बल्कि अपनी पूरी सत्ता के तहत, उन्होंने हमें यह समझने से भी रोका है कि नेक लोग क्यों दुख उठाते हैं और बुरे लोग क्यों फलते-फूलते हैं। आइए, आज के हमारे पाठ, उपदेशक 7:15 पर गौर करें: "अपनी इस व्यर्थ ज़िंदगी में मैंने ये दोनों बातें देखी हैं: एक नेक आदमी अपनी नेकी के बावजूद नष्ट हो जाता है, और एक बुरा आदमी अपनी बुराई के बावजूद लंबी ज़िंदगी जीता है।" राजा सुलैमान यह समझने में अपनी असमर्थता ज़ाहिर कर रहे हैं कि नेक लोग क्यों नष्ट हो जाते हैं जबकि बुरे लोग लंबी ज़िंदगी जीते हैं। क्या आप इसे समझते हैं? क्या यीशु पर विश्वास करने वाले नेक लोगों को लंबी उम्र का आशीर्वाद नहीं मिलना चाहिए? बुरे लोगों को ऐसा आशीर्वाद कैसे मिल सकता है? यह निश्चित रूप से परमेश्वर के उस सर्वोच्च काम का उदाहरण है जो हमारी इंसानी समझ से परे है। इसलिए, हमारे पास परमेश्वर की पूरी सत्ता को मानने के अलावा कोई चारा नहीं है। हमें विश्वास के साथ आगे बढ़ना चाहिए, परमेश्वर पर सर्वोच्च शासक के रूप में भरोसा करना चाहिए, और उनके दिए गए वचन का पालन करते हुए आगे बढ़ना चाहिए। उस वचन का एक पहलू अति (extremes) से बचने का निर्देश है। जो लोग विश्वास का संतुलित जीवन जीते हैं—समझदारी से काम लेते हैं और परमेश्वर का भय मानते हैं—वे अति से दूर रहते हैं। तो फिर, राजा सुलैमान किन अति की बात कर रहे हैं? आयत 18 में "इस" और "उस" की बात की गई है, जो बहुत ज़्यादा नेक होने और बहुत ज़्यादा बुरा होने की अति की ओर इशारा करते हैं। दूसरे शब्दों में, जिनके पास ज्ञान की नींव है—यानी, जो परमेश्वर का भय मानते हैं—वे बहुत ज़्यादा नेक या बहुत ज़्यादा बुरा होने की अति से बचते हैं।

सबसे पहले, राजा सुलैमान हमें बहुत ज़्यादा धर्मी न बनने की सलाह देते हैं।

यहाँ जिस "धर्मी व्यक्ति" की बात हो रही है, वह यीशु मसीह पर विश्वास के ज़रिए धर्मी ठहराया गया व्यक्ति नहीं है, बल्कि एक ढोंगी है जो खुद को धर्मी होने का दावा करता है (पार्क युन-सन)। ये ढोंगी कौन हैं?

फरीसियों की तरह, ये वे लोग हैं जो परमेश्वर के नियम का पालन करके और उस पर चलकर उद्धार पाना चाहते हैं। दूसरे शब्दों में, वे अपने कामों से उद्धार पाने की कोशिश करते हैं। परमेश्वर की धार्मिकता को खुद पर लागू होने देने के बजाय, वे इसे अपनी कोशिशों और गुणों से हासिल करना चाहते हैं। उनकी धार्मिकता ऐसी थी जो उनकी अपनी कोशिशों और गुणों को सही ठहराती थी और उन्हें ऊँचा दिखाती थी। आखिरकार, ऐसी धार्मिकता से घमंड पैदा होता है। नतीजतन, ये ढोंगी खुद को बुद्धिमान समझते थे। फिर भी, उनकी बुद्धि किसी भी तरह से ऊपर से आने वाली बुद्धि नहीं थी (याकूब 1:15)। हम यह इसलिए जानते हैं क्योंकि ऊपर से आने वाली बुद्धि की पहचान नम्रता है—यानी दीनता—जबकि ढोंगियों ने खुद को ऊँचा दिखाने का घमंड दिखाया। इसलिए, उपदेशक 7:16 में, राजा सुलैमान कहते हैं: "बहुत ज़्यादा धर्मी न बनो, और न ही खुद को बहुत ज़्यादा बुद्धिमान समझो; तुम खुद को क्यों बर्बाद करोगे?" राजा सुलैमान की बातें सुनकर मुझे नीतिवचन 16:18 याद आया, जिसमें कहा गया है कि विनाश से पहले घमंड आता है। बर्बादी से बचने के लिए, हमें बहुत ज़्यादा धर्मी नहीं बनना चाहिए।

दूसरी बात, राजा सुलैमान हमें बहुत ज़्यादा दुष्ट न बनने की सलाह देते हैं। आज के वचन, उपदेशक 7:17 को देखें: "बहुत ज़्यादा दुष्ट न बनो, और न ही मूर्ख बनो: तुम समय से पहले क्यों मरो?" इस वचन का मतलब यह नहीं है कि कुछ हद तक दुष्ट होना ठीक है; बल्कि, यह बहुत ज़्यादा दुष्टता के खिलाफ एक चेतावनी है। राजा सुलैमान हमें बहुत ज़्यादा दुष्ट न बनने की सलाह देते हैं। तो, हमारे लिए बहुत ज़्यादा दुष्ट बनने का क्या मतलब है? इसका मतलब है परमेश्वर का डर न मानना और अपनी मूर्खता में उसकी बात न मानना। दूसरे शब्दों में, एक मूर्ख जो बहुत ज़्यादा दुष्टता करता है, वह अपनी मनमर्जी से जीता है और परमेश्वर की बात नहीं मानता क्योंकि वह उसके अस्तित्व को नहीं मानता। उदाहरण के लिए, जो व्यक्ति बहुत ज़्यादा दुष्ट होता है, वह बहुत बड़ा मूर्ख होता है। मूर्ख का मन मौज-मस्ती के घर में रहता है (वचन 4)। इसके अलावा, मूर्ख का दिल लालच और रिश्तत लेने की चाहत से भरा होता है (वचन 7)। मूर्ख घमंडी होता है (वचन 8) और उसे जल्दी गुस्सा आता है (वचन 9)। ऐसे व्यक्ति से हम क्या उम्मीद कर सकते हैं? बाइबल ऐसे बहुत बुरे व्यक्ति के अंजाम के बारे में क्या कहती है? राजा सुलैमान कहते हैं कि बहुत बुरे लोग समय से पहले मर जाते हैं (वचन 17)। हालाँकि, जब वचन 15 के बाद वाले हिस्से के साथ देखा जाए, तो वचन 17 विरोधाभासी लगता है। वचन 15 में, सुलैमान ने कहा कि ऐसे बुरे लोग भी हैं जो अपनी बुराई के बावजूद लंबी ज़िंदगी जीते हैं, फिर भी वचन 17 में वे कहते हैं कि बुरे लोग समय से पहले मर सकते हैं। तो फिर, हमें इन दो बातों का क्या मतलब निकालना चाहिए? उपदेशक 8:12-13 की बातों पर गौर करें: "भले ही कोई पापी सौ बार बुराई करे

और उसकी उम्र लंबी हो जाए, फिर भी मैं पक्का जानता हूँ कि जो लोग परमेश्वर का डर मानते हैं, उनके साथ अच्छा होगा। लेकिन बुरे लोगों के साथ अच्छा नहीं होगा, और न ही उनकी उम्र लंबी होगी, जो परछाई की तरह होती है, क्योंकि वे परमेश्वर का डर नहीं मानते।” भले ही हमें ऐसा लगे कि ऐसे बुरे लोग हैं जो अपने बुरे कामों के बावजूद लंबी ज़िंदगी जीते हैं (वचन 15), बाइबल साफ कहती है कि बुरे लोगों का भला नहीं होगा और उनकी उम्र लंबी नहीं होगी (8:13)। इसका कारण क्या है? इसका कारण यह है कि बुरे लोग परमेश्वर का डर नहीं मानते। बाइबल साफ-साफ कहती है कि जो लोग परमेश्वर का डर नहीं मानते, उन्हें लंबी ज़िंदगी नहीं मिलेगी।

जो लोग परमेश्वर का डर मानते हैं, वे अतिवादी जीवन नहीं जीते। दूसरे शब्दों में, जो बुद्धिमान व्यक्ति परमेश्वर का डर मानता है, वह “अति” में जीवन नहीं जीता (वचन 16, 17)। जो परमेश्वर का डर मानता है—जो बुद्धि का स्रोत है—वह न तो बहुत ज़्यादा धर्मी बनता है और न ही बहुत ज़्यादा बुरा। ऐसा इसलिए है क्योंकि वे समझते हैं कि बहुत ज़्यादा धर्मी बनने से खुद का विनाश होता है, जबकि बहुत ज़्यादा बुरा बनने से समय से पहले मौत होती है। इसके बजाय, वे इन अतिवादी बातों से बचते हैं और विश्वास का संतुलित जीवन जीते हैं। इस संतुलित जीवन का मतलब है कि यीशु मसीह में विश्वास के ज़रिए धर्मी ठहराए जाने के बाद, वे केवल विश्वास से जीते हैं और ऐसा जीवन जीते हैं जो बुराई से नफ़रत करता है। वे बुराई से नफ़रत करते हैं क्योंकि वे परमेश्वर का डर मानते हैं (नीतिवचन 8:13), और इसी वजह से वे नेकी से प्यार करते हैं। इसलिए, जो परमेश्वर का डर मानता है—जो बुद्धि का स्रोत है—वह बुराई से नफ़रत करता है, नेकी से प्यार करता है और नेकी के रास्ते पर चलता है। साथ ही, जो लोग नेकी के रास्ते पर चलते हैं और परमेश्वर का डर मानते हैं, वे न तो बाईं ओर और न ही दाईं ओर भटकते हैं। मैं प्रार्थना करता हूँ कि आप और मैं ऐसे लोग बनें जो परमेश्वर का डर मानते हों, जो सारी बुद्धि का स्रोत है।

समझदारी जो इंसान को बुद्धिमान बनाती है

[सभोपदेशक 7:19-22]

हाल ही में, जब मैं अपने आस-पास बुजुर्ग और बीमार लोगों से मिलता हूँ, तो मुझे सभोपदेशक 7:2 की सच्चाई का एहसास होता है—कि मौत ही हम सबकी आखिरी मंज़िल है। मैं इंसानी ज़िंदगी की इस आखिरी मंज़िल के बारे में गहराई से सोचता हूँ। मैं देखता हूँ कि जैसे-जैसे हमारी उम्र बढ़ती है, हमारा शरीर—मांस का यह "डैरा"—लाज़मी तौर पर कमज़ोर होता जाता है। मैं लोगों को अलग-अलग बीमारियों से जूझते हुए देखता हूँ क्योंकि उनकी शारीरिक ताकत कम हो जाती है। जैसे कमज़ोर शरीर की रोग-प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है और वह बीमारियों की चपेट में आ जाता है, वैसे ही अगर हमारी आत्मा में ताकत न हो, तो वह आसानी से लालच और पाप का शिकार हो जाती है। इसीलिए हमें आध्यात्मिक ताकत की ज़रूरत है। तो, हम यह आध्यात्मिक ताकत कैसे पाएँ? हमें परमेश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए। बेशक, परमेश्वर से की जाने वाली प्रार्थनाएँ उनके वचन पर आधारित होनी चाहिए। शायद इसीलिए कुछ लोग आध्यात्मिक ताकत को प्रार्थना की ताकत के बराबर मानते हैं। प्रार्थना की ताकत की बात करें तो, मुझे ग्योंगसांग इलाके के एक व्यक्ति के साथ हुई बातचीत याद आती है। उन्होंने कहा था कि जब हम प्रार्थना करते हैं, तो हमें "प्पाकसिगे" (पूरे जोश और मेहनत से) प्रार्थना करनी चाहिए। ऐसा लगता है कि उस इलाके के लोग बहुत जोश और मेहनत से की जाने वाली प्रार्थना के लिए इस शब्द का इस्तेमाल करते हैं। व्यक्तिगत रूप से, कुछ साल पहले, एक बुजुर्ग ने मुझसे—एक युवा पादरी से—कहा था कि मुझमें आध्यात्मिक ताकत की कमी है। उस समय, मुझे ठीक से समझ नहीं आया कि "आध्यात्मिक ताकत" का क्या मतलब है, इसलिए मुझे समझ नहीं आया कि क्या जवाब दूँ। हालाँकि, तब से, जब मैं खुद को देखता हूँ, तो मुझे एहसास होता है कि मुझमें न सिर्फ़

आध्यात्मिक ताकत की कमी है, बल्कि बौद्धिक क्षमता, काबिलियत, काम को अंजाम देने की क्षमता, शारीरिक सहनशक्ति और भी बहुत कुछ कम है। सिर्फ़ कमी महसूस करने के अलावा, कई बार मुझे पूरी तरह बेबस महसूस हुआ। तो फिर, मुझे क्या करना चाहिए? मुझे उन क्षेत्रों को मज़बूत करने की ज़रूरत महसूस होती है जहाँ मुझमें कमी है—चाहे वह आध्यात्मिक ताकत हो, बौद्धिक क्षमता, काबिलियत, काम करने की क्षमता या शारीरिक सहनशक्ति। हम कैसे मज़बूत हो सकते हैं? खासकर, हम अपनी आध्यात्मिक ताकत को कैसे मज़बूत कर सकते हैं?

आज के वचन, सभोपदेशक 7:19 में, राजा सुलैमान कहते हैं: "बुद्धिमान बुद्धिमान व्यक्ति को शहर के दस शासकों से भी ज़्यादा ताकतवर बनाती है।" इसका क्या मतलब है? इसका मतलब है कि बुद्धि समझदार व्यक्ति को ताकत देती है—उन्हें और ज़्यादा मज़बूत और काबिल बनाती है—उस शहर पर राज करने वाले दस शासकों से भी ज़्यादा। संक्षेप में, बुद्धि समझदार लोगों को शक्ति देती है। तो फिर, बुद्धि समझदार लोगों को कैसे सशक्त बनाती है? आइए आज के पाठ से तीन बातें सीखें।

पहली बात, बुद्धि समझदार लोगों को यह सच्चाई सिखाकर सशक्त बनाती है कि धरती पर ऐसा कोई भी नेक इंसान नहीं है जो कभी पाप न करे।

आज के पाठ में उपदेशक 7:20 को देखें: "धरती पर ऐसा कोई नेक इंसान नहीं है जो हमेशा सही काम करे और कभी पाप न करे।" राजा सुलैमान कहते हैं कि इस दुनिया में कोई भी नेक इंसान नहीं है जो भलाई करे और कोई पाप न करे। इसका क्या मतलब है? इसका मतलब है कि ऐसा कोई भी व्यक्ति नहीं है जिसे उसके अपने अच्छे कामों से सही ठहराया जा सके—यानी नेक घोषित किया जा सके। दूसरे शब्दों में, कोई भी इंसान कानून का पालन करने की अपनी कोशिशों से परमेश्वर के सामने नेकी हासिल नहीं कर सकता (रोमियों 3:20)। इसीलिए प्रेरित पौलुस कहते हैं, "कोई भी नेक नहीं है, एक भी नहीं" (पद 10)। बुद्धि समझदार लोगों को यह सच्चाई बताकर सशक्त बनाती है कि इस दुनिया में कोई भी अच्छे कामों से उद्धार नहीं पा सकता। बुद्धि समझदार लोगों को कैसे सशक्त बनाती है? यह उन्हें उद्धार देने वाले परमेश्वर की ओर देखने के लिए प्रेरित करती है। बुद्धि हमें दो बुनियादी सच्चाइयाँ सिखाकर सशक्त बनाती है: कि धरती पर ऐसा कोई नेक इंसान नहीं है जो भलाई करे और कभी पाप न करे, और यह कि कोई भी व्यक्ति अपने अच्छे

कामों से उद्धार नहीं पा सकता। यह बात बताकर, बुद्धि हमारा ध्यान उद्धार देने वाले परमेश्वर की ओर ले जाती है जो पापी को सही ठहराते हैं। और खास तौर पर, बुद्धि हमें यीशु मसीह पर विश्वास के साथ देखने के लिए प्रेरित करके सशक्त बनाती है—जो सच्चे नेक व्यक्ति थे और जिन्होंने धरती पर रहते हुए भलाई की और कोई पाप नहीं किया। इसलिए, हमें इस बुद्धि की सच्ची चाहत रखनी चाहिए—सोने, चाँदी या कीमती खजानों से भी ज़्यादा। हममें से जो लोग यीशु मसीह पर विश्वास के द्वारा पहले ही सही ठहराए जा चुके हैं, उनके लिए बुद्धि हमें यह एहसास दिलाकर सशक्त बनाती है कि हमारा सही ठहराया जाना पूरी तरह से परमेश्वर की असीम कृपा से होता है। संक्षेप में, बुद्धि जो शक्ति देती है, वह कृपा की शक्ति है; बुद्धि हमें कृपा की ताकत से सशक्त बनाती है।

दूसरी बात, बुद्धि समझदार लोगों को सही-गलत को समझने वाला कान देकर सशक्त बनाती है। आज के वचन, उपदेशक 7:21 पर गौर करें: "लोग जो कुछ भी कहें, उस पर ध्यान न दें, वरना हो सकता है कि आप अपने नौकर को आपको कोसते हुए सुन लें।" मेरा मानना है कि दूसरों की बात सचमुच सुनने की क्षमता एक दुर्लभ और अनमोल तोहफ़ा है, क्योंकि ऐसी ध्यानपूर्वक सुनने की आदत आसानी से नहीं मिलती। इसके अलावा, ज़िंदगी की मुश्किलों और संघर्षों के बीच, दुख झेल रहे लोगों की बात ध्यान से सुनना उन्हें दिलासा देने का एक बहुत ही कीमती काम है। बेशक, यह कोई आसान काम नहीं है, क्योंकि दूसरों की बात अच्छी तरह सुनने के लिए खुद पर काबू रखने की ज़रूरत होती है। संयम बरतना—खासकर प्रेरित याकूब की सलाह के अनुसार "बोलने में धीमे" रहना—दूसरों की बात ध्यान से सुनने के लिए मेहनत और लगन की मांग करता है। साथ ही, याकूब की इस सलाह को कि "सुनने में तत्पर" रहें, अपनी ज़िंदगी में उतारने के लिए हमें परमेश्वर से बुद्धि मांगनी चाहिए (याकूब 3:19)। यह क्यों ज़रूरी है? क्योंकि जब परमेश्वर हमें बुद्धि देते हैं, तो हम न केवल नम्रता से दूसरों की बात सुन पाते हैं, बल्कि समझदारी के साथ भी सुन पाते हैं। एक सचमुच बुद्धिमान व्यक्ति बिना सोचे-समझे हर बात नहीं सुनता; बल्कि वह समझदारी से सुनता है। संक्षेप में, बुद्धिमान लोगों में सही-गलत को परखने की सुनने की क्षमता होती है। वे वही सुनते हैं जो सुनना चाहिए और जो सुनने की ज़रूरत नहीं है, उसे नज़रअंदाज़ कर देते हैं। अगर नादानी में हममें ऐसी समझदारी से सुनने की क्षमता नहीं है, तो हम शायद हर किसी की बात पर ध्यान देने लगें। हो सकता है कि हम उन लोगों की फुसफुसाहट भी सुन लें और दिल पर ले लें जो हमारे बारे में बुरा-भला कहते हैं। अगर हम हर किसी की बात सुनते हैं और उस पर सोचते रहते हैं, तो हो सकता है कि हम "अपने नौकर को आपको कोसते हुए" भी सुन लें

(उपदेशक 7:21)। अगर हम हर किसी की कही हर बात पर बहुत ज़्यादा ध्यान देते हैं, तो हमें निश्चित रूप से ऐसी आवाज़ें सुनाई देंगी जो हमें कोस रही हों। और जब ऐसा होगा, तो हमारे दिल की क्या हालत होगी?

कहा जाता है कि पादरी चार्ल्स स्पर्जन ने एक बार अपने धर्म-शिक्षा लेने वाले छात्रों से कहा था, "एक पादरी को एक आँख से अंधा और एक कान से बहरा होना चाहिए," और फिर उन्होंने आगे कहा: "आप लोगों की ज़बान नहीं रोक सकते। इसलिए, सबसे अच्छी बात जो आप कर सकते हैं, वह है अपने कान बंद कर लेना—यानी दूसरों की बातों पर ध्यान न देना" (वियर्सबे)। हमें परमेश्वर से बुद्धि माँगनी चाहिए; खासकर, हमें उनसे ऐसे कान माँगने चाहिए जो सही-गलत को पहचान सकें। ऐसे कानों से हम यह पहचान सकते हैं कि क्या सुनना चाहिए और किसे नज़रअंदाज़ करना चाहिए, और केवल वही सुन सकते हैं जो हमारे लिए फ़ायदेमंद हो। जिन बातों को हमें सुनना चाहिए, उनमें से एक है बुद्धिमान व्यक्ति की डांट-फटकार। उपदेशक 7:5 को देखें: "मूर्खों का गीत सुनने से बेहतर है कि बुद्धिमान व्यक्ति की डांट-फटकार पर ध्यान दिया जाए।" भला किसे ऐसी आवाज़ सुनना अच्छा लगेगा जो उन्हें डांटती हो? फिर भी, बुद्धि बुद्धिमान लोगों को ऐसी डांट-फटकार पर ध्यान देने के लिए प्रेरित करती है। इसके अलावा, बुद्धि हमें परमेश्वर की आवाज़ सुनने के काबिल बनाती है। इसीलिए हमें परमेश्वर से बुद्धि और सही-गलत को पहचानने वाले कान माँगने चाहिए। परमेश्वर द्वारा दिए गए ऐसे कानों से, हमें दुनिया की आवाज़ और प्रभु की आवाज़ के बीच फ़र्क करना चाहिए और प्रभु की आवाज़ सुनने में खुशी महसूस करनी चाहिए। संक्षेप में, बुद्धि हमें जो शक्ति देती है, वह वचन की शक्ति है; बुद्धि परमेश्वर के वचन के ज़रिए हमें सशक्त बनाती है।

तीसरी बात, बुद्धि बुद्धिमान लोगों को पाप पहचानने के काबिल बनाकर उन्हें सशक्त बनाती है।

आज के वचन, उपदेशक 7:22 को देखें: "क्योंकि तुम्हारा दिल जानता है कि तुमने भी अक्सर दूसरों को बुरा-भला कहा है।" जब बुद्धि बुद्धिमान लोगों को दुनिया की आवाज़ और प्रभु की आवाज़ के बीच फ़र्क करने—और प्रभु की आवाज़ सुनने—के काबिल बनाती है, तो हम उस ईश्वरीय आवाज़ के ज़रिए अपने पापों को पहचान पाते हैं। जहाँ दुनिया की आवाज़ हमें पाप को नज़रअंदाज़ करने और उन्हीं गलतियों को दोहराने के लिए उकसाती है, वहीं परमेश्वर की आवाज़ हमें पाप को उसके असली रूप में देखने में मदद करती है। इसका एक मुख्य उदाहरण है हमारे दिलों में छिपे पाप को पहचानना (वचन 22)—खासकर, मन ही मन दूसरों को बुरा-भला

कहना (वचन 22)। अगर हम बिना सही समझ के दूसरों की बातें सुनते हैं, तो हो सकता है कि हमें बुरा-भला कहने वाले शब्द सुनाई दें; लेकिन, सही समझ के बिना, हम शायद अपने ही दिल की उस आवाज़ को न सुन पाएँ—या न पहचान पाएँ—जो दूसरों को बुरा-भला कहती है। बुद्धिमानी समझदार लोगों को उन अंदरूनी आवाज़ों को सुनने और पहचानने की शक्ति देती है। बुद्धिमानी समझदार लोगों को कैसे सशक्त बनाती है? यह उन्हें यह एहसास कराती है कि वे खुद से पाप पर जीत नहीं पा सकते, और साथ ही उन्हें यीशु के उस लहू पर भरोसा करने के लिए प्रेरित करती है जो उन्होंने क्रूस पर बहाया था। दूसरे शब्दों में, सच्ची बुद्धिमानी न केवल हमारे दिलों में छिपे पाप को उजागर करती है, बल्कि हमें विश्वास के साथ यीशु की ओर देखने के लिए भी प्रेरित करती है—जिन्होंने उसी पाप को क्षमा करने के लिए क्रूस (शाप का पेड़) पर हमारी जगह अपनी जान दी—और इस तरह हमें पाप से मुक्ति दिलाती है। क्या आप पाप से मुक्ति नहीं चाहते? बुद्धिमानी समझदार लोगों को पाप से मुक्त करके सशक्त बनाती है। यह उन्हें क्रूस पर बहाए गए यीशु के लहू की शक्ति पर भरोसा करने और उसका अनुभव करने में सक्षम बनाती है। संक्षेप में, बुद्धिमानी हमें जो शक्ति देती है, वह उस बहुमूल्य लहू की ही शक्ति है... यह शक्ति का स्रोत है। बुद्धिमानी हमें क्रूस पर यीशु द्वारा बहाए गए बहुमूल्य लहू के माध्यम से सशक्त बनाती है।

बुद्धिमानी समझदार लोगों को सशक्त बनाती है; यह हमें शक्ति देती है। बुद्धिमानी हमें कैसे सशक्त बनाती है? हमें यह सच्चाई सिखाकर कि पृथ्वी पर कोई भी ऐसा धर्मी व्यक्ति नहीं है जो पाप न करता हो, बुद्धिमानी हमें विश्वास के साथ यीशु मसीह की ओर देखने के लिए प्रेरित करती है—जिन्होंने केवल भलाई की ओर कोई पाप नहीं किया। परिणामस्वरूप, बुद्धिमानी हमें अनुग्रह की शक्ति के माध्यम से सशक्त बनाती है। इस अनुग्रह के माध्यम से हमें सशक्त बनाकर, बुद्धिमानी हमारे दिलों को कृतज्ञता से भर देती है। बुद्धिमानी हमें परखने वाले कान देकर भी सशक्त बनाती है। यह हमें परमेश्वर की आवाज़ और दुनिया की आवाज़ के बीच अंतर करने में सक्षम बनाती है; दुनिया की आवाज़ को अलग करके और परमेश्वर की आवाज़ को सुनने में हमारी मदद करके, यह हमें सशक्त बनाती है। दूसरे शब्दों में, बुद्धिमानी हमें वचन की शक्ति के माध्यम से सशक्त बनाती है। वचन के माध्यम से हमें सशक्त बनाकर, बुद्धिमानी हमें आज्ञाकारिता के मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करती है। बुद्धिमानी हमें पाप को पहचानने में मदद करके सशक्त बनाती है; विशेष रूप से, यह हमारे दिलों में दूसरों को कोसने या बुरा-भला कहने के पाप को उजागर करती है, और हमें यीशु की ओर देखने के लिए प्रेरित करती है, जो उस पाप को क्षमा कर सकते हैं। बुद्धिमानी हमें बहुमूल्य लहू की शक्ति के माध्यम से सशक्त बनाती है,

जिससे हम स्वतंत्रता के आनंद का अनुभव कर सकें। मैं प्रार्थना करता हूँ कि हम सभी पर ऐसी आशीर्षें बनी रहें।

“हे प्रभु यीशु, मेरी आत्मा पर भरपूर अनुग्रह बरसा;

केवल प्रभु यीशु ही मेरी शक्ति और मेरी संतुष्टि हैं।” (भजन 486 का कोरस)

“मैंने यह पाया है”

[सभोपदेशक 7:23-29]

दूसरों के साथ अपने रिश्तों में होने वाले झगड़ों या तनाव को आप कैसे संभालते हैं? बेशक, हर रिश्ते में झगड़े नहीं होते, लेकिन कोई ऐसा खास व्यक्ति हो सकता है जिसके साथ रिश्ता इतना तनावपूर्ण हो कि आपको बहुत परेशानी हो। हमें क्या करना चाहिए, खासकर तब जब वह व्यक्ति—जो हमें तनाव देता है और ज़िंदगी मुश्किल बना देता है—हममें सबसे बुरी बातें बाहर ले आता है? व्यक्तिगत रूप से, जब मैं ऐसे व्यक्ति से मिलता हूँ, तो मैं उनसे दूर रहने की कोशिश करता हूँ क्योंकि मैं झगड़ों से बचना चाहता हूँ। मेरी उनसे सामना करने या बात करने की कोई इच्छा नहीं होती, इसलिए मैं बस दूर रहता हूँ। मैं अक्सर खुद से पूछता हूँ कि क्या यह सच में प्रभु की इच्छा है, लेकिन मुझे पूरा यकीन नहीं है। मुझे पक्का नहीं पता कि क्या मैं अपने रिश्तों को वैसे निभा रहा हूँ जैसा प्रभु चाहते हैं। फिर भी, मैंने एक बार अपनी पत्नी से कहा था: “अगर कोई ऐसा है जो तुम्हारे लिए ज़िंदगी मुश्किल बनाता है और तुममें सबसे बुरी बातें बाहर लाता है, तो शायद परमेश्वर उस व्यक्ति का इस्तेमाल तुम्हें तुम्हारे अपने पाप को पहचानने में मदद करने के लिए कर रहे हैं।” क्या यह अजीब बात नहीं है? हो सकता है कि परमेश्वर उसी व्यक्ति का इस्तेमाल कर रहे हों जिससे मैं बचना चाहता हूँ, ताकि *मुझे* अपने पाप का एहसास हो सके, फिर भी मैं यह नहीं देख पाया—इसके बजाय, मैंने सोचा कि शायद परमेश्वर *उसे* ऐसा एहसास दिला रहे हैं।

हाल ही में, मुझे एहसास हुआ है कि अपने पाप को पहचानना एक बहुत बड़ा आशीर्वाद है। पहले, मैं इसे इस तरह नहीं देखता था; पाप का एहसास दर्दनाक होता था और अपराध-बोध के कारण मुझे निराशा में डुबो देता था। हालाँकि, जैसे-जैसे मैं पवित्र शास्त्र पर मनन करता हूँ, संत ऑगस्टीन द्वारा कही गई प्रसिद्ध बात “ओह, धन्य पाप!” अक्सर मेरे दिल में गूँजती है। परमेश्वर धीरे-धीरे मुझे अपनी ज़िंदगी के संदर्भ में उन शब्दों का अर्थ

समझने में मदद कर रहे हैं। इस नज़रिए को ध्यान में रखते हुए, जब मैं आज के अंश—सभोपदेशक 7:23–29—पर विचार करता हूँ, तो मेरा मानना है कि "एहसास" एक बहुत बड़ा आशीर्वाद है जो परमेश्वर हमें देते हैं।

आज के अंश में, राजा सुलैमान ने "एहसास हुआ" शब्द का इस्तेमाल तीन बार किया है: "मुझे एहसास हुआ..." (पद 26), "...मुझे यह एहसास हुआ" (पद 27), और "मैंने यह एहसास किया" (पद 29)। इस बार-बार आने वाले शब्द पर सोचने के बाद मैंने खुद से पूछा, "आखिर राजा सुलैमान को क्या समझ आया था?" उस हिस्से के आधार पर, मैंने उनकी समझ को चार बातों में बताया है:

पहली बात, राजा सुलैमान को समझ आया कि कोई इंसान खुद को बस ऐसे ही बुद्धिमान नहीं बना सकता।

सभोपदेशक 7:23 देखिए: "मैंने बुद्धिमानी से इन सब बातों को परखा और कहा, 'मैं बुद्धिमान बनूँगा,' लेकिन बुद्धिमानी मुझसे बहुत दूर थी।" जैसा कि हम जानते हैं, राजा सुलैमान एक बुद्धिमान राजा थे। बाइबल कहती है कि उनकी बुद्धिमानी धरती के बाकी सभी राजाओं से कहीं ज़्यादा थी (2 इतिहास 9:22)। उन्हें खुद पता था कि उन्होंने बहुत बुद्धिमानी हासिल की है—ऐसी बुद्धिमानी जो उनसे पहले यरूशलेम पर राज करने वाले किसी भी व्यक्ति से ज़्यादा थी (सभोपदेशक 1:16)। फिर भी, उन्होंने और ज़्यादा बुद्धिमान बनने की कोशिश की। सभोपदेशक 1:17 देखिए: "मैंने अपना मन बुद्धिमानी को जानने और पागलपन व मूर्खता को समझने में लगाया, लेकिन मुझे समझ आया कि यह भी हवा के पीछे भागने जैसा था।" थोड़ी हैरानी की बात यह है कि यह कहने के बाद (1:17 में) कि बुद्धिमानी की उनकी खोज हवा के पीछे भागने जैसी थी, फिर भी—जैसा कि आज के हिस्से, सभोपदेशक 7:23 में दिखता है—उन्होंने बुद्धिमानी को परखना और और ज़्यादा बुद्धिमान बनने की कोशिश करना जारी रखा। फिर भी, वे इस नतीजे पर पहुँचे कि "बुद्धिमानी मुझसे बहुत दूर थी" (वचन 23)। हालाँकि राजा सुलैमान ने बुद्धिमान बनने के लिए बहुत कोशिश की, लेकिन आखिर में उन्हें यह मानना पड़ा कि वे खुद को बुद्धिमान नहीं बना सकते थे।

इससे हमें क्या समझना चाहिए? यही कि हम खुद से बुद्धिमान नहीं बन सकते; सिर्फ परमेश्वर ही हमें बुद्धिमान बना सकते हैं। दूसरे शब्दों में, हमें यह समझना होगा कि हम तभी बुद्धिमान बन सकते हैं जब परमेश्वर हमें बुद्धिमानी दें। क्या राजा सुलैमान अपनी कोशिशों से बुद्धिमान बने थे? बिल्कुल नहीं। जब उन्होंने एक हज़ार

होमबलि चढ़ाई (2 इतिहास 1:6) और रात में परमेश्वर उनके सामने प्रकट हुए और पूछा, "माँगा! मैं तुझे क्या दूँ?" (वचन 7), तो क्या उन्होंने "बुद्धि और ज्ञान" नहीं माँगा था? (वचन 10)। परमेश्वर ही हैं जो हमें बुद्धिमानी देते हैं। हम बस परमेश्वर से बुद्धिमानी माँग सकते हैं, ठीक वैसे ही जैसे राजा सुलैमान ने किया था। और जब हम मांगते हैं, तो हमें विश्वास के साथ मांगना चाहिए, उस परमेश्वर से जो बिना किसी दोष के सभी को उदारता से देता है (याकूब 1:5)।

दूसरी बात, राजा सुलैमान को एहसास हुआ कि बुद्धि को पूरी तरह समझना मुमकिन नहीं है।

आज के वचन, उपदेशक 7:24 को देखें: "जो बहुत दूर और बहुत गहरा है, उसे कौन खोज सकता है?" यहाँ इस्तेमाल किए गए शब्द "मास्टर करना" (या "पूरी तरह समझना") का डिक्शनरी में मतलब है "किसी खास क्षेत्र में ज्ञान या कौशल की स्पष्ट और बिना रुकावट वाली समझ होना," जबकि मूल ग्रीक शब्द का मतलब है "जाँचना" या "खोजना" (इंटरनेट)। राजा सुलैमान ने मानव समाज में छिपी बुद्धि को खोजने की कोशिश की, फिर भी आखिर में उन्हें इसे समझने की मुश्किल पर अफ़सोस हुआ (पार्क युन-सन)। इसे खुद पर लागू करें तो इसका मतलब है कि हम बुद्धि पाने की कितनी भी कोशिश कर लें, हमारी कोशिशें बेकार हैं जब तक परमेश्वर उसे न दे; इसलिए, हमारे पास अफ़सोस करने के अलावा कोई चारा नहीं बचता। हम, जो खुद बुद्धिमान नहीं बन सकते, भला बुद्धि में महारत कैसे हासिल कर सकते हैं?

हमें यहाँ क्या समझना चाहिए? यह कि हम बुद्धि में महारत तभी हासिल कर सकते हैं जब पवित्र आत्मा हमें ऐसा करने के काबिल बनाए। इसीलिए प्रेरित पौलुस कहते हैं: "लेकिन परमेश्वर ने इसे अपनी आत्मा के ज़रिए हम पर ज़ाहिर किया है। आत्मा सब कुछ जाँचती है, यहाँ तक कि परमेश्वर की गहरी बातों को भी" (1 कुरिन्थियों 2:10)। क्या यह थोड़ा अजीब नहीं है? चूँकि पवित्र आत्मा परमेश्वर है, तो ज़ाहिर है कि उन्हें परमेश्वर की गहरी बातों को खोजने की ज़रूरत नहीं है? तो फिर, पौलुस क्यों कहते हैं कि पवित्र आत्मा परमेश्वर की गहरी बातों को "जाँचती है"—यानी खोजती है? वजह यह है कि पौलुस ने यह पत्र यीशु में विश्वास करने वालों के नज़रिए से लिखा था, न कि परमेश्वर के अपने नज़रिए से। दूसरे शब्दों में, हालाँकि पवित्र आत्मा—परमेश्वर होने के नाते—को खुद के लिए परमेश्वर की गहरी बातों को खोजने की ज़रूरत नहीं है, फिर भी वह हम विश्वासियों के अंदर रहती है और हमें उन गहरी बातों को खोजने के लिए प्रेरित करती है; इसलिए, पौलुस आत्मा के परमेश्वर की गहरी बातों

को खोजने की बात करते हैं। असल में, ऐसा ही है। इस पल भी, परमेश्वर पवित्र आत्मा हमारे अंदर रहती है, हमें परमेश्वर के वचन को खोजने के लिए प्रेरित करती है और उसे समझने के काबिल बनाती है। इसके अलावा, पवित्र आत्मा जो हमारे अंदर रहती है, वह हमें परमेश्वर की इच्छा—उनके विचारों—के बारे में बताती है और हमें उस इच्छा का पालन करने की शक्ति देती है। वह हमारी कमज़ोरी में हमारी मदद करती है; क्योंकि हम नहीं जानते कि हमें कैसे प्रार्थना करनी चाहिए, इसलिए वह खुद हमारे लिए ऐसी आहों के साथ विनती करती है जिन्हें शब्दों में बयां नहीं किया जा सकता (रोमियों 8:26)। आमीन। वह परमेश्वर की इच्छा के अनुसार हमारे लिए विनती करती है (वचन 27)। हमें इस सच्चाई को समझना चाहिए और पवित्र आत्मा की अगुवाई में अपना जीवन जीना चाहिए।

तीसरी बात, राजा सुलैमान को एहसास हुआ कि जीवन की सभी समस्याओं का समाधान केवल परमेश्वर के पास है।

राजा सुलैमान ने जीवन की समस्याओं को सुलझाने के लिए और बुद्धिमान बनने की पूरी कोशिश की। आज के हिस्से में उपदेशक 7:25 को देखें: "मैंने अपना मन बुद्धि और चीज़ों की योजना को समझने, उनकी जाँच-पड़ताल करने और उन्हें खोजने में लगाया—और दुष्टता की मूर्खता और नादानी के पागलपन को समझने में।" बुद्धिमान बनने की इतनी कोशिशों के बाद उन्हें क्या एहसास हुआ? उन्हें एहसास हुआ कि जीवन की सभी समस्याओं का समाधान हमारे अंदर नहीं है। समाधान हमारे अंदर क्यों नहीं मिलता? ऐसा इसलिए है क्योंकि हमारे दिल फंदे और जाल की तरह हैं। वचन 26 को देखें: "मुझे मौत से भी ज़्यादा कड़वी वह औरत लगी जो एक फंदा है, जिसका दिल एक जाल है और जिसके हाथ बेड़ियाँ हैं। जो आदमी परमेश्वर को खुश करता है वह उससे बच जाएगा, लेकिन पापी उसके जाल में फँस जाएगा।" यहाँ यह कहने का क्या मतलब है कि हमारे दिल फंदे और जाल की तरह हैं? इस हिस्से का मतलब है कि इंसान का दिल मौत से भी ज़्यादा धोखेबाज़ होता है, जो हमें उस औरत के बहकावे में आने के लिए कमज़ोर बना देता है जिसका दिल फंदे और जाल जैसा है, और जिसके हाथ बाँधने वाली रस्सियों जैसे हैं। इसलिए, नीतिवचन का लेखक हमें व्यभिचारिणी के रास्ते पर न भटकने की सलाह देता है (नीतिवचन 2:16-19; 5:1-14; 6:24-29; 7:1-27) (मैकआर्थर)। अगर हम बुद्धि के करीब आते हैं, तो यह हमें उस चालाक व्यभिचारिणी का शिकार बनने से बचाएगी जो अपनी बातों से बहकाती है (नीतिवचन 7:5)। लेकिन, मूर्ख व्यक्ति "उस बैल की तरह है जो कटने के लिए जा रहा हो" और "उस मूर्ख की

तरह है जो सज़ा पाने के लिए जाल में कदम रख रहा हो" (पद 22)। यह "उस पक्षी की तरह है जो जाल में तेज़ी से घुस जाता है, यह जाने बिना कि इसकी कीमत उसे अपनी जान देकर चुकानी पड़ेगी" (पद 23)। राजा सुलैमान, जिन्होंने ज़्यादा बुद्धि पाने की कोशिश की थी, आखिरकार इंसानी मूर्खता की असलियत समझ गए। उन्हें समझ आया कि ऐसी मूर्खता—जो अपनी ही कब्र खोदने जैसी है—लोगों को दुनियावी लालच (जिसे व्यभिचारिणी औरत के रूप में दिखाया गया है) में फँसा देती है, जिससे वे जाल में फँसकर अपनी जान गँवा बैठते हैं। फिर भी, उन्होंने यह भी माना कि बुद्धिमान लोग परमेश्वर के वचन को मानकर और उन्हें खुश करके, इन दुनियावी लालचों से बचते हैं और उन जालों से निकल जाते हैं जिनमें वे वरना फँस जाते।

राजा सुलैमान को यह एहसास हुआ कि जीवन की हर समस्या का समाधान केवल परमेश्वर के पास है (पार्क युन-सन)। आप क्या सोचते हैं? क्या आप मानते हैं कि जीवन की सभी समस्याओं का समाधान केवल परमेश्वर के पास है? या क्या आप अभी भी मानते हैं कि समाधान आपके अपने अंदर है? यदि आप यह मानते हुए जीते हैं कि जीवन की समस्याओं का उत्तर आपके अंदर ही है, तो संभावना है कि आप जाल और फंदों में फँस जाएंगे और पाप के गुलाम बनकर रहेंगे। हालाँकि, यदि आप यह मानते हुए जीते हैं कि जीवन की समस्याओं का समाधान केवल परमेश्वर के पास है, तो आप उन जाल और फंदों से मुक्त हो जाएंगे और पाप से आज़ादी का आनंद लेंगे।

चौथा, राजा सुलैमान को एहसास हुआ कि हालाँकि परमेश्वर ने मनुष्य को सीधा-सादा बनाया था, लेकिन लोगों ने कई तरह की चालें और योजनाएँ बना ली हैं।

आज के वचन, उपदेशक 7:29 को देखें: "मैंने केवल यह पाया है: परमेश्वर ने मनुष्य को सीधा-सादा बनाया, लेकिन वे कई तरह की चालें खोजने लगे।" यह एहसास होने के बाद कि जीवन की सभी समस्याओं का समाधान परमेश्वर के पास है, राजा सुलैमान आयत 27-28 में अफ़सोस जताते हैं कि बहुत कम लोग ही उन समस्याओं को सुलझाने के लिए ज़रूरी ईश्वरीय ज्ञान को समझ पाते हैं: "...मैंने निष्कर्ष तक पहुँचने के लिए एक-एक करके चीज़ों की जाँच की—कुछ ऐसा जिसे मेरी आत्मा अभी भी खोज रही है लेकिन पा नहीं सकी है: मैंने हज़ारों में एक सीधा-सादा आदमी तो पाया, लेकिन उन सबमें एक भी सीधी-सादी औरत नहीं मिली।" राजा सुलैमान बताते हैं कि बहुत कम लोग—और खासकर महिलाओं में तो और भी कम—उस ज्ञान को समझ पाते हैं जिसके ज़रिए

परमेश्वर हमारे जीवन की समस्याओं को सुलझाते हैं। हम परमेश्वर के ज्ञान को कैसे समझ सकते हैं? हम उस ज्ञान को पूरी तरह से कैसे समझ सकते हैं जिसके साथ परमेश्वर हमारी हर समस्या को सुलझाते हैं? ऐसा क्यों है कि राजा सुलैमान की तरह, हम चाहे कितनी भी कोशिश कर लें, परमेश्वर का ज्ञान हासिल नहीं कर पाते? हमारे लिए परमेश्वर के सत्य को समझना इतना मुश्किल क्यों हो गया है? इसका मूल कारण क्या है? कारण परमेश्वर में नहीं, बल्कि हमारे अंदर—खुद मानवता के अंदर है (पार्क युन-सन)। दूसरे शब्दों में, परमेश्वर के सत्य को समझने में हमें जो संघर्ष करना पड़ता है, उसका कारण हमारी अपनी ईमानदारी की कमी है। हालाँकि परमेश्वर ने मानवता को सीधा-सादा बनाया था, लेकिन हमने कई तरह की चालें और योजनाएँ बना लीं (आयत 29), जिससे हम जीवन की समस्याओं को सुलझाने के लिए ज़रूरी ईश्वरीय ज्ञान को समझने में असमर्थ हो गए। आखिरकार, अपनी ही चालाकी के जाल में फँसकर और परमेश्वर के वचन को न मानकर, हमने उनकी बुद्धि और सच्चाई को समझने की क्षमता खो दी।

फिर भी, ऐसे पापियों से प्यार के कारण, परमेश्वर ने अपने निष्पाप और इकलौते बेटे, यीशु को क्रूस पर मरने के लिए भेजा, ताकि हमें फिर से नेक इंसान बना सकें। इसके अलावा, यीशु—जो खुद सच्चाई हैं—पर विश्वास करने और उनके वचन को मानने की क्षमता देकर, परमेश्वर ने हमें उनकी बुद्धि को समझने की समझ दी है। इस तरह, अब हम परमेश्वर के वचन पर विश्वास और आज्ञाकारिता के साथ आगे बढ़ने का आनंद लेते हैं, और साथ ही उनकी बुद्धि को पाने की सच्ची कोशिश भी करते हैं। तो फिर, परमेश्वर की वह कौन सी बुद्धि है जिसे आप इन दिनों अपनी ज़िंदगी में महसूस कर रहे हैं?

हमें यह बात समझनी होगी। हमें यह एहसास करना होगा कि हम खुद से बुद्धिमान नहीं बन सकते। हमें यह भी समझना होगा कि हम अकेले बुद्धि में पूरी तरह माहिर नहीं हो सकते। हमें यह समझना होगा कि ज़िंदगी की हर समस्या का समाधान हमारे अंदर नहीं, बल्कि सिर्फ परमेश्वर के पास है। हमें यह मानना होगा कि हालाँकि परमेश्वर ने इंसान को नेक बनाया था, लेकिन लोगों ने कई तरह की चालें और योजनाएँ बना ली हैं। यह समझ परमेश्वर से ही मिलती है। परमेश्वर ने हमें यह समझने के काबिल बनाया है कि यीशु मसीह ही सच्ची बुद्धि का स्वरूप हैं। इसलिए, हमारे अंदर रहने वाली पवित्र आत्मा के काम के ज़रिए, हमें यीशु की बात माननी चाहिए, जो सच्ची बुद्धि हैं। उनकी आज्ञा मानते हुए, हमें परमेश्वर की बुद्धि को समझने की कृपा का आनंद लेना चाहिए, क्योंकि वे हमारी ज़िंदगी की सभी समस्याओं को सुलझाते हैं। भले ही हमारी समझ अधूरी हो, हमें यीशु मसीह

पर विश्वास रखकर आगे बढ़ना चाहिए और हमारे पास जितनी भी थोड़ी-बहुत समझ है, उसी के अनुसार काम करना चाहिए।

“इंसानी समझदारी”

[सभोपदेशक 8:1-8]

कोरियाई भाषा में एक कहावत है जो किसी व्यक्ति के खुद को मुश्किल में डालने के बारे में बताती है: “अपनी कब्र खुद खोदना।” पिछले हफ्ते सभोपदेशक 7:23-29 पर मनन करने के बाद मुझे अक्सर यह कहावत याद आती रही। शायद ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि उस हिस्से में इंसानी दिल की तुलना फंदे या जाल से की गई है (आयत 26)। अगर हमारे पास परमेश्वर की दी हुई समझदारी हो और हम उसके वचन को मानें, तो हम ऐसे फंदों में फँसने और अपनी कब्र खुद खोदने से बच सकते हैं; लेकिन अगर हम नासमझ हैं और परमेश्वर के वचन को नहीं मानते, तो असल में हम अपनी कब्र खुद खोदते हैं। ऐसा लगता है कि मसीहियों का अपनी कब्र खुद खोदना बहुत आम बात है। दूसरे शब्दों में, हम मसीही अक्सर बहुत नासमझी दिखाते हैं। नतीजतन, अपनी नासमझी में हम अक्सर परमेश्वर के वचन को नहीं मानते, अपने ही बनाए फंदों और जालों में फँस जाते हैं, और मुसीबत और परेशानी झेलते हैं। मैं अक्सर खुद को ऐसा करते हुए पाता हूँ। अपनी नासमझी की वजह से—अपने विचारों और अपनी बातों पर काबू न रख पाने के कारण—मैं अक्सर मुश्किल में फँस जाता हूँ। बाद में चाहे मैं कितना भी पछताऊँ, शब्द तो कहे जा चुके होते हैं—जैसे गिरा हुआ पानी जिसे वापस इकट्ठा नहीं किया जा सकता—और मैंने खुद को मुश्किल में डाल लिया होता है। इसका एक बड़ा उदाहरण हाल ही में हुई एक प्रेस्बिटरि मीटिंग के दौरान देखने को मिला; मुझे अंदाज़ा भी नहीं था कि एक एल्डर से कही गई मेरी एक बात मुझे इतनी बड़ी मुश्किल में डाल देगी। हो सकता है कि दूसरे लोग इसे गंभीर संकट न मानें, लेकिन मेरे लिए इसने ऐसी स्थिति पैदा कर दी जिससे मुझे बहुत तनाव और बेचैनी हुई। असल में, अब भी, कभी-कभी मैं उस घटना को लेकर चिंता और परेशानी से जूझता रहता हूँ। आपके साथ कैसा है? क्या आपने कभी अपनी नासमझी में—बिल्कुल मेरी तरह—खुद को मुश्किल में डाला है?

इसी बात को ध्यान में रखते हुए, आज मैं सभोपदेशक 8:1-8 के हिस्से पर ध्यान देते हुए इंसानी समझदारी के बारे में सोचना चाहता हूँ। मैं इसे दो नज़रियों से समझना चाहता हूँ: पहला, इंसानी समझदारी असल में क्या है; और दूसरा, इससे हमें क्या फ़ायदे मिलते हैं। मेरी उम्मीद है कि परमेश्वर की दी हुई सीखों पर ध्यान देकर और समझदारी भरा जीवन जीकर, हम उसकी दी हुई आशीषों का आनंद ले सकें।

पहला, इंसानी समझदारी क्या है? संक्षेप में, इंसानी समझदारी परमेश्वर के वचन को मानना है। आज के वचन में उपदेशक 8:2 को देखें: "मैं कहता हूँ: राजा की आज्ञा मानो क्योंकि तुमने परमेश्वर के सामने शपथ खाई है।" यहाँ "राजा" का मतलब धरती का कोई शासक नहीं, बल्कि स्वर्ग का राजा—स्वयं परमेश्वर है (पार्क युन-सन)। राजा सुलैमान इस्राएल के लोगों से स्वर्ग के राजा, परमेश्वर की आज्ञा मानने का आग्रह कर रहे हैं। क्यों? क्योंकि इस्राएल के लोगों ने परमेश्वर के सामने शपथ खाई थी और खुद को उनकी प्रजा माना था (वचन 2) (पार्क युन-सन)। हमें अपने राजा, परमेश्वर के वचन का पालन करना चाहिए; इसी में हमारी समझदारी है। ऐसा करने के लिए, हमें सबसे पहले विनम्रतापूर्वक परमेश्वर की सर्वोच्च सत्ता—परमेश्वर के रूप में उनके स्वभाव—को स्वीकार करना होगा। वचन 3 के आखिरी हिस्से से लेकर वचन 4 तक इस स्वभाव का वर्णन किया गया है: "...राजा वही करता है जो उसे अच्छा लगता है। चूँकि राजा का वचन अधिकारपूर्ण होता है, इसलिए उससे कौन कह सकता है, 'आप क्या कर रहे हैं?'" इसका क्या अर्थ है? इसका अर्थ है कि परमेश्वर ही सर्वोच्च शासक हैं। इसलिए, परमेश्वर अपनी सर्वोच्च सत्ता के अनुसार वही करते हैं जो वे चाहते हैं। परमेश्वर की सर्वोच्च सत्ता के बारे में यह शिक्षा रोमियों 9:20-21 में भी मिलती है: "लेकिन हे मनुष्य, तू कौन है जो परमेश्वर से बहस करता है? क्या बनाई हुई चीज़ बनाने वाले से यह कह सकती है, 'तूने मुझे ऐसा क्यों बनाया?' क्या कुम्हार को यह अधिकार नहीं है कि वह मिट्टी के एक ही लोदे से कुछ बर्तन खास कामों के लिए और कुछ आम इस्तेमाल के लिए बनाए?" तो फिर, हमें क्या करना चाहिए? सर्वोच्च परमेश्वर के प्रति हमें कैसा रवैया अपनाना चाहिए? हमें अपने राजा, परमेश्वर से यह नहीं पूछना चाहिए, "आप क्या कर रहे हैं?" सृष्टि होने के नाते, हमें अपने सृष्टिकर्ता, परमेश्वर की सर्वोच्च सत्ता पर सवाल नहीं उठाना चाहिए। हमें बस विनम्रतापूर्वक परमेश्वर के शक्तिशाली वचन का पालन करना है। दूसरे शब्दों में, हमें परमेश्वर के शक्तिशाली वचन को मानना चाहिए (वचन 4)। असल में यही मनुष्य की समझदारी है। सच में समझदार व्यक्ति परमेश्वर की सर्वोच्च सत्ता को स्वीकार करता है और विनम्रतापूर्वक उनके सर्वोच्च वचन का पालन करता है। दूसरे शब्दों में कहें तो, समझदार व्यक्ति सर्वोच्च परमेश्वर की आज्ञाओं

का पालन करता है। इसके विपरीत, मूर्ख व्यक्ति परमेश्वर की सर्वोच्च इच्छा के खिलाफ बगावत करता है और उनके शक्तिशाली वचन को नहीं मानता। इसके अलावा, मूर्ख व्यक्ति बुराई करता है और परमेश्वर के विरुद्ध पाप करता है (वचन 3)। राजा सुलैमान हमें ऐसे मूर्ख न बनने की सलाह देते हैं; बल्कि, वे हमें बुद्धिमान बनने के लिए कहते हैं। वे हमें बुद्धिमान बनने के लिए क्यों कहते हैं? क्योंकि इंसानी बुद्धि से हमें कुछ फ़ायदे मिलते हैं।

दूसरी बात, इंसानी बुद्धि से क्या फ़ायदे मिलते हैं? राजा सुलैमान आज के हिस्से में हमें ऐसे दो फ़ायदों के बारे में सिखाते हैं।

(1) इंसानी बुद्धि हमें नुकसान से बचाती है। आज का वचन देखिए, उपदेशक 8:5: “जो कोई आज्ञा का पालन करता है, उसे कोई नुकसान नहीं होगा, और बुद्धिमान हृदय सही समय और सही तरीका जान जाएगा।” यह हमारे लिए कितना कीमती सबक है! यह बात कि बुद्धि हमें नुकसान से बचाती है, इसका उल्टा मतलब यह भी है कि बुद्धि की कमी—यानी मूर्खता—नुकसान का कारण बनती है।

तो फिर, मूर्ख कौन है? मूर्ख वह है जो परमेश्वर के वचन को नहीं मानता; नतीजतन, इस आज्ञा न मानने की वजह से उसे नुकसान उठाना पड़ता है। इसके विपरीत, जो बुद्धिमान व्यक्ति परमेश्वर के वचन को मानता है, वह ऐसे नुकसान से बच जाता है। बुद्धि हमें नुकसान से बचने में कैसे मदद करती है? यह हमें सही समय और सही काम करने का तरीका समझने में मदद करती है। दूसरे शब्दों में, बुद्धि हमें यह पहचानने में मदद करती है कि हम किस समय में जी रहे हैं। उदाहरण के लिए, बुद्धि हमें बाइबल के अनुसार यह समझने की समझ देती है कि अभी का समय कैसा है। अभी कौन सा समय है? बाइबल हमें बताती है कि हम आखिरी दिनों—यानी अंत के समय—में जी रहे हैं। इसके अलावा, बाइबल बताती है कि यह उद्धार का समय है। बुद्धि हमें सही फैसला लेने की क्षमता भी देती है। उपदेशक 8:7 कहता है कि हम भविष्य के बारे में नहीं जान सकते। यह उन कई चीज़ों की ओर भी इशारा करता है जो हमारे बस में नहीं हैं—जैसे कि अपनी ज़िंदगी या अपनी मौत के दिन पर हमारा कोई अधिकार नहीं है (वचन 8)। यह सच्चाई हमें एक ज़रूरी बात समझने में मदद करती है: हम बेबस हैं, जबकि परमेश्वर सर्वशक्तिमान है और इन सभी मामलों पर उसका अधिकार है। बुद्धि ही हमें यह समझ देती है। ऐसी समझ के साथ, हम इस बात पर सोच-विचार कर सकते हैं कि परमेश्वर ने हमें यह क्यों नहीं बताया कि

भविष्य में क्या होने वाला है। इसका कारण यह है कि उन्होंने हमें पूरी तरह से परमेश्वर पर निर्भर रहने के लिए बनाया है (7:14)। इसलिए, हम यह नहीं जान सकते कि कल, परसों या भविष्य में हमारे साथ क्या घटनाएँ घटेंगी। हम यह तो जानते हैं कि खुशहाली के दिनों के साथ-साथ मुश्किलों के दिन भी ज़रूर आएंगे (पद 14)। समझदारी हमें भविष्य की इन अनिश्चित घटनाओं के बारे में सही फैसला लेने में मदद करती है; जैसे, यह हमें खुशहाली के दिनों में खुश रहने और मुश्किलों के दिनों में सोच-विचार करने के काबिल बनाती है (पद 14)।

(2) इंसानी समझदारी हमारे चेहरों को चमकाती है।

आज के वचन, उपदेशक 8:1 को देखिए: “बुद्धिमान के समान कौन है? और कौन किसी बात का अर्थ जानता है? मनुष्य की बुद्धि उसके चेहरे को चमकाती है, और उसके चेहरे की कठोरता बदल जाती है।” राजा सुलैमान कहते हैं कि इंसानी समझदारी हमारे चेहरों को चमकाती है और कठोर चेहरे को बदल देती है। इसके उलट, यह कहा जा सकता है कि इंसानी मूर्खता कठोर या रूखे भाव के रूप में दिखाई देती है। यीशु पर विश्वास करने वाले ईसाइयों का कठोर चेहरे के साथ घूमना एक बुरा उदाहरण पेश करता है। अगर गैर-विश्वासी हमारे कठोर भावों को देखें तो वे क्या सोचेंगे? कहा जाता है कि राष्ट्रपति लिंकन ने कहा था, “चालीस साल की उम्र के बाद इंसान अपने चेहरे के लिए खुद जिम्मेदार होता है।” मैं भी उस उम्र से आगे निकल चुका हूँ जहाँ मुझे अपने चेहरे की जिम्मेदारी खुद लेनी है। आज के वचन पर विचार करते हुए, मैं खुद से पूछता हूँ कि क्या मेरे चेहरे के भाव में कोई कठोरता है। आपके बारे में क्या? क्या यीशु पर विश्वास करने के बाद आपके चेहरों में कोई बदलाव आया है? भले ही वे शानदार चमक न बिखेरते हों, क्या कठोरता खत्म हो गई है? सचमुच बुद्धिमान ईसाई न केवल अपने चेहरे की कठोरता को दूर करते हैं, बल्कि एक सच्ची चमक भी बिखेरते हैं। दूसरे शब्दों में, सचमुच बुद्धिमान व्यक्ति का चेहरा सच्ची शांति से भरा होता है (पार्क युन-सन)। ठीक वैसे ही जैसे स्तिफनुस—जो सचमुच परमेश्वर की इच्छा को जानता था और उसका पालन करता था—का चेहरा उसकी मृत्यु के समय चमक रहा था, सचमुच बुद्धिमान व्यक्ति का चेहरा मृत्यु का सामना करते समय भी सच्ची शांति से भरा होता है। इस प्रकार, समझदारी उन लोगों को लाभ पहुँचाती है जो परमेश्वर के वचन का पालन करते हैं।

सच्ची इंसानी समझदारी परमेश्वर के वचन का पालन करने में है। जब हम परमेश्वर के वचन का पालन करते हैं, तो समझदारी हमें नुकसान से बचाती है। इसके अलावा, ऐसी समझदारी हमारे चेहरों को बदल देती है, जिससे वे चमकने लगते हैं। मैं प्रार्थना करता हूँ कि यह आशीष आप पर और मुझ पर बनी रहे।

“इस दुनिया में होने वाली सभी बातें”

[सभोपदेशक 8:9-13]

जब आप इस दुनिया में अपनी रोज़मर्रा की ज़िंदगी जीते हैं, तो आप क्या देखते और महसूस करते हैं? और जब आप जो देखते और अनुभव करते हैं, उस पर गहराई से सोचते हैं, तो आप किस नतीजे पर पहुँचते हैं? व्यक्तिगत रूप से, मुझे एक साफ़ सच्चाई नज़र आती है कि इस दुनिया का घमंड मेहनत और दुख के अलावा कुछ नहीं है (भजन संहिता 90:10)। मैं इस दुनिया को चिंताओं, मुश्किलों, पाप और मौत के बोझ तले दबी हुई जगह के तौर पर भी देखता हूँ (भजन 486)। मेरा यह नज़रिया इसलिए है क्योंकि यह उस सच्चाई को दिखाता है जिसे मैं हर दिन देखता, सुनता और महसूस करता हूँ। नतीजतन, मैंने इन अनुभवों से अपना निष्कर्ष निकाला है: इस वीरान दुनिया में रहते हुए, प्रभु ही एकमात्र ऐसे हैं जिन पर मैं अपनी नज़र टिका सकता हूँ और भरोसा कर सकता हूँ। इस तरह, मैं प्रभु को अपनी उम्मीद बनाने और आने वाली दुनिया की तैयारी में जीने का अपना संकल्प दोहराता हूँ। अपनी ज़िंदगी जीते हुए आपकी सोच क्या होती है? इस दुनिया में जो चीज़ें आप देखते, सुनते और अनुभव करते हैं, उन पर गहराई से सोचने के बाद आप किस नतीजे पर पहुँचते हैं?

आज के वचन, सभोपदेशक 8:9 में, हम राजा सुलैमान को इस दुनिया में होने वाली हर चीज़ की पूरे दिल से जाँच करते हुए देखते हैं। इस प्रक्रिया के ज़रिए, हम उन्हें अपनी देखी हुई चीज़ों के बारे में एक नतीजा निकालते हुए देखते हैं—जिसमें उन्हें परमेश्वर से मिली बुद्धि का मार्गदर्शन मिलता है। संक्षेप में, वह नतीजा यह है: जो लोग परमेश्वर का डर मानते हैं, उनका भला होता है। आज के वचन, सभोपदेशक 8:12 को देखें: “भले ही कोई पापी सौ बार बुराई करे और उसकी उम्र लंबी हो जाए, फिर भी मैं पक्के तौर पर जानता हूँ कि जो लोग परमेश्वर का डर मानते हैं, जो उसके सामने डरते हैं, उनका भला होगा।” इस दुनिया में होने वाली हर चीज़ की पूरे दिल

से जाँच करने के बाद (वचन 9), राजा सुलैमान ने यह नतीजा निकाला कि बुरे लोगों का भला नहीं होता (वचन 13), जबकि जो लोग परमेश्वर का डर मानते हैं, उनका भला होता है (वचन 12)। वचन 13 को देखें: “लेकिन बुरे लोगों का भला नहीं होगा; न ही उनकी उम्र लंबी होगी, जो परछाई की तरह होती है, क्योंकि वे परमेश्वर का डर नहीं मानते।” वह साफ़ तौर पर कहते हैं कि बुरे लोगों का भला नहीं होता। भले ही हमें ऐसा लगे कि कोई बुरा इंसान (पापी) सौ बार बुराई करने के बावजूद लंबी ज़िंदगी जीता है (पद 12), लेकिन बुरे लोग निश्चित रूप से फलते-फूलते नहीं हैं और न ही लंबी ज़िंदगी जीते हैं; उनके दिन परछाई की तरह होते हैं (पद 13)। इसका क्या कारण है? इसका कारण यह है कि बुरे लोग परमेश्वर से नहीं डरते (पद 13)। क्योंकि बुरे काम की सज़ा तुरंत नहीं दी जाती, इसलिए बुरे लोगों के दिल—जो परमेश्वर से नहीं डरते—बुराई करने के लिए और भी निडर हो जाते हैं (पद 11)। ये शब्द कितने सच और समझदारी भरे हैं—कि सज़ा तुरंत न मिलने के कारण दिल बुराई करने में निडर हो जाते हैं। अगर पाप करने के बाद, बिना पछतावा किए हमें परमेश्वर से तुरंत सज़ा मिलती, तो हम डर जाते और दोबारा पाप करने की जल्दी न करते। लेकिन, क्योंकि परमेश्वर धीरज रखने वाले और देर से क्रोध करने वाले हैं, और हमारे पापों को मानने, पछतावा करने और उनकी ओर लौटने का इंतज़ार करते हैं, इसलिए हम पाप करने से डरते नहीं हैं; बल्कि, हम निडर होकर पाप करते हैं।

आज के भाग में जिस बुरे इंसान का वर्णन किया गया है—जो बुराई करने में निडर है—वह खास तौर पर एक ऐसे बुरे राजा की ओर इशारा करता है जो लोगों पर राज करता है (पार्क युन-सन)। हम इसे पद 9 को देखकर समझ सकते हैं, जहाँ लेखक बताता है कि कैसे, पूरे दिल से धरती पर किए गए सभी कामों की जाँच करने के बाद, उसने एक ऐसी स्थिति देखी जहाँ एक व्यक्ति दूसरों पर अधिकार जमाता था—लेकिन अंत में खुद को ही नुकसान पहुँचाता था। बहुत से लोगों पर अधिकार जमाने वाला “एक व्यक्ति” देश के लोगों पर राज करने वाले राजा की ओर इशारा करता है। फिर भी, यह राजा उन पर राज करते हुए खुद को ही नुकसान पहुँचाता हुआ दिखता है। इसका क्या कारण है? आज के भाग का पद 10 देखिए: “तब मैंने बुरे लोगों को दफ़नाए जाते देखा—वे लोग जो पवित्र स्थान में आते-जाते थे—और उन्हें उस शहर में भुला दिया गया जहाँ उन्होंने ऐसे काम किए थे। यह भी व्यर्थ है।” इसका कारण यह है कि बुरा राजा भी आखिरकार मर जाएगा (पार्क युन-सन)। इसके अलावा, क्योंकि जिन लोगों पर उसने कभी राज किया था, वे ही उसे भुला देंगे, इसलिए राजा सुलैमान कहता है, “यह भी व्यर्थ है।”

तो फिर, हमें कैसे जीना चाहिए? बाइबल की आयतों में से एक जिसे हम अच्छी तरह जानते हैं और अक्सर एक-दूसरे को आशीर्वाद देते समय उद्धृत करते हैं, वह है 3 यूहन्ना 1:2: "प्रिय मित्र, मैं प्रार्थना करता हूँ कि आप अच्छी सेहत का आनंद लें और आपके साथ सब कुछ अच्छा हो, ठीक वैसे ही जैसे आपकी आत्मा अच्छी स्थिति में है।" हम यह आशीर्वाद कैसे प्राप्त कर सकते हैं? हमारी आत्माएँ कैसे समृद्ध हो सकती हैं? इसका रहस्य परमेश्वर का भय मानने के अलावा और कुछ नहीं है (सभोपदेशक 8:12-13)। सभी मानवीय प्रयासों की जाँच करने के बाद, राजा सुलैमान ने निष्कर्ष निकाला कि यद्यपि दुष्ट लोग—जो परमेश्वर का भय माने बिना निडर होकर पाप करते हैं—लंबे जीवन का आनंद लेते हुए दिखाई दे सकते हैं, लेकिन अंततः वे न तो लंबे समय तक जीवित रहेंगे और न ही समृद्ध होंगे, और उनका जीवन एक क्षणभंगुर छाया के समान होगा; इसके विपरीत, जो लोग परमेश्वर का भय मानते हैं, वे वास्तव में समृद्ध होंगे। हमारी आत्माओं के समृद्ध होने के लिए, हमें परमेश्वर का भय मानना चाहिए। जैसा कि सभोपदेशक 12:13 में कहा गया है—जो पुस्तक का निष्कर्ष है—हमारी आत्माओं के सभी मामलों में समृद्ध होने के लिए, हमें परमेश्वर का भय मानना चाहिए और उसकी आज्ञाओं का पालन करना चाहिए। मेरी प्रार्थना है कि हम सभी परमेश्वर का भय मानें और उसके वचन का पालन करें, जिससे हम सभी मामलों में अपनी आत्माओं के समृद्ध होने के आशीर्वाद का आनंद ले सकें।

परमेश्वर की ओर से सज़ा में देरी

"क्योंकि बुरे काम की सज़ा तुरंत नहीं मिलती, इसलिए लोगों के मन में बुराई करने का हौसला बढ़ जाता है" (सभोपदेशक 8:11)।

राजा सुलैमान, जो उपदेशक भी थे, कहते हैं कि बुरे कामों की सज़ा तुरंत न मिलने के कारण लोग बुराई करने के लिए निडर हो जाते हैं। यह परमेश्वर के वचन का एक ऐसा सच है जिससे कोई इनकार नहीं कर सकता। अगर किसी बुरे काम के तुरंत बाद परमेश्वर की सज़ा मिलती, तो लोग दोबारा बुराई करने से हिचकिचाते, भले ही वे सिर्फ़ डर के कारण ही ऐसा करते। लेकिन, क्योंकि सज़ा तुरंत नहीं मिलती, इसलिए लोग बिना किसी हिचकिचाहट के बुराई करते हैं। फिर भी, ऐसा करते समय उन्हें कोई डर नहीं लगता। उन्हें पाप करने से डर नहीं लगता क्योंकि उन्हें लगता है कि परमेश्वर उन्हें नहीं देख रहे हैं। इस तरह, भले ही "कोई पापी सौ बार बुराई करे" (वचन 12), उनके मन निडर बने रहते हैं। वे जितनी ज़्यादा बुराई करते हैं, उतने ही ज़्यादा निडर होते जाते हैं। बार-बार पाप करने से उनके दिल और भी कठोर हो जाते हैं। क्योंकि वे परमेश्वर से नहीं डरते, इसलिए वे कठोर दिलों के साथ बुराई करते हैं।

तो फिर परमेश्वर की सज़ा में देरी क्यों होती है? रोमियों 2:4 कहता है: "या क्या तुम उसकी भलाई, सहनशीलता और धीरज की दौलत को तुच्छ समझते हो, और यह नहीं जानते कि परमेश्वर की भलाई तुम्हें पश्चाताप की ओर ले जाती है?" जब हम पाप करते हैं तो परमेश्वर तुरंत सज़ा इसलिए नहीं देते क्योंकि वे चाहते हैं कि हम पश्चाताप करें। दूसरे शब्दों में, जब हम पाप करते हैं तो परमेश्वर हमें तुरंत सज़ा नहीं देते क्योंकि वे हमें पश्चाताप करने का समय—एक मौका—दे रहे होते हैं। फिर भी, हम अक्सर परमेश्वर की इस दया को हल्के में लेते हैं। नतीजतन, परमेश्वर के विरुद्ध पाप करके हम अक्सर उनके धीरज की परीक्षा लेते हैं। अपने पापों के लिए पश्चाताप करने

के लिए परमेश्वर के पास तुरंत लौटने के बजाय, हम बुराई की ओर मुड़ जाते हैं। उस कुत्ते की तरह जो अपनी ही उल्टी को चाटने के लिए वापस लौटता है, हम बार-बार वही मूर्खतापूर्ण काम करते हैं (नीतिवचन 26:11)।

जो लोग परमेश्वर से डरते हैं, वे बुराई करने से डरते हैं, क्योंकि उन्होंने अपने गलत कामों के नतीजों को चखा है; अपने पापों के लिए परमेश्वर से अनुशासन पाने के बाद, वे बुराई करने से डरते हैं। वे परमेश्वर के अनुशासन को कभी हल्के में नहीं लेते। नतीजतन, जो लोग परमेश्वर से डरते हैं, न तो उनके मन में बुराई करने की इच्छा होती है और न ही वे ऐसा करने में सक्षम होते हैं। क्योंकि परमेश्वर की प्यार भरी सीख से उनके दिल नरम हो गए हैं, इसलिए वे हिम्मत करके बुराई नहीं कर पाते। जो लोग परमेश्वर का डर मानते हैं, उनका मन साफ़ होता है; इसलिए, जब उनका मन उन्हें टोकता है, तो वे लालच को ठुकरा देते हैं, पाप का सामना करते हैं और उस पर जीत हासिल करते हैं। वे कभी भी ऐसे काम करने की जल्दबाजी नहीं करते जिनसे उनके मन को बेचैनी हो। साफ़ मन से परमेश्वर से प्यार और उसकी सेवा करते हुए, वे परमेश्वर और दूसरों के सामने दोषी महसूस नहीं करते; वे परमेश्वर के सामने तो हिम्मत वाले होते हैं, लेकिन पाप करने में हिम्मत नहीं दिखाते। जो लोग परमेश्वर का डर मानते हैं, वे बुराई से नफ़रत करते हैं क्योंकि परमेश्वर खुद बुराई से नफ़रत करते हैं। इसके अलावा, क्योंकि परमेश्वर पवित्र हैं, इसलिए जो लोग उनसे डरते हैं, वे भी उनकी पवित्रता को अपनाते हैं।

परमेश्वर के समझ से परे काम

[सभोपदेशक 8:14 – 9:1]

इस दुनिया में रहते हुए आपने क्या महसूस किया है? हाल ही में, मुझे पहले से कहीं ज़्यादा यह एहसास हो रहा है कि ज़िंदगी छोटी है और उस थोड़े से समय में हम जो बहुत सी चीज़ें करते हैं, वे असल में बेकार और बेमतलब की होती हैं। इसी बीच, जब मैं बुधवार की हमारी साप्ताहिक प्रार्थना सभाओं में 'सभोपदेशक' की किताब पर मनन करता हूँ, तो मेरे मन में अक्सर एक सवाल उठता है: "परमेश्वर बुरे लोगों को फलने-फूलने क्यों देता है?" जैसा कि हमने पिछले हफ़्ते सीखा था, बुरे लोग बुराई करने के लिए और भी हिम्मत जुटा लेते हैं क्योंकि उनके कामों की सज़ा तुरंत नहीं मिलती; इससे हमारे मन में यह सवाल आता है, "परमेश्वर उन्हें तुरंत सज़ा क्यों नहीं देता?" क्या आपको इस सवाल का जवाब पता है?

हम पहले ही जान चुके हैं कि राजा सुलैमान ने धरती पर किए गए सभी कामों को पूरी लगन से परखने के बाद क्या नतीजा निकाला था—यह नतीजा 'सभोपदेशक' 8:9–13 में मिलता है। वह नतीजा बस यही था कि "जो लोग परमेश्वर का भय मानते हैं, उनका भला होगा।" दूसरे शब्दों में, सुलैमान ने तय किया कि जो लोग परमेश्वर का भय नहीं मानते और बुराई करते हैं, वे कभी सच में सफल नहीं होंगे (वचन 13), जबकि सिर्फ़ वे ही लोग सफल होंगे जो परमेश्वर का भय मानते हैं (वचन 12)। फिर, 'सभोपदेशक' 8:17 पर पहुँचकर—जो आज का हमारा विषय है—परमेश्वर के सभी कामों को परखने के बाद वह यह नतीजा निकालता है: "जब मैंने ज्ञान पाने और धरती पर होने वाले कामों को समझने के लिए अपना मन लगाया... तो मैंने परमेश्वर के सभी कामों को देखा, और पाया कि इंसान धरती पर किए गए कामों को पूरी तरह समझ नहीं सकता। क्योंकि

भले ही कोई इंसान उन्हें खोजने की कितनी भी मेहनत करे, वह उन्हें नहीं ढूँढ़ पाएगा; और यहाँ तक कि अगर कोई बुद्धिमान व्यक्ति उन्हें जानने की कोशिश करे, तो भी वह उन्हें नहीं जान पाएगा।" हालाँकि उसने धरती पर परमेश्वर के किए गए सभी कामों को बहुत ध्यान से परखा और उन पर सोचा-विचारा, लेकिन उसका नतीजा बस यही था कि परमेश्वर के काम इंसानी समझ से परे हैं। राजा सुलैमान के इस नतीजे पर ध्यान देते हुए, मैं "परमेश्वर के समझ से परे काम" विषय के तहत दो बातों पर चर्चा करना चाहता हूँ। मेरी प्रार्थना है कि इस प्रक्रिया के ज़रिए, हम सभी परमेश्वर की दी हुई सीख को स्वीकार करें, उसका पालन करें और इस दुनिया में समझदारी से जीवन बिताएँ। सबसे पहली बात जिस पर ध्यान देना है, वह यह है: "परमेश्वर के वे कौन से काम थे जिन्हें राजा सुलैमान समझ नहीं पाए?" हमारे सामने जो लेख है, उसमें दो पहलुओं पर ज़ोर दिया गया है।

(1) परमेश्वर के कामों में से एक काम जिसे राजा सुलैमान समझ नहीं पाए, वह यह सच्चाई है कि कुछ नेक लोग ऐसे होते हैं जिन्हें बुरे लोगों की तरह मुसीबत का सामना करना पड़ता है, जबकि कुछ बुरे लोग ऐसे होते हैं जो नेक लोगों की तरह फलते-फूलते हैं।

सभोपदेशक 8:14 को देखिए: "पृथ्वी पर एक व्यर्थ बात होती है: नेक लोगों के साथ वैसा ही होता है जैसा बुरे लोगों के कामों का फल होता है; और बुरे लोगों के साथ वैसा ही होता है जैसा नेक लोगों के कामों का फल होता है। मैंने कहा कि यह भी व्यर्थ है।" इस दुनिया में परमेश्वर का जो काम राजा सुलैमान समझ नहीं पाए, वह यह था कि नेक लोगों की हालत कभी-कभी बुरे लोगों जैसी खराब हो जाती है, जबकि बुरे लोग कभी-कभी नेक लोगों की तरह फलते-फूलते हैं (पार्क युन-सन)। दूसरे शब्दों में कहें तो, वे परमेश्वर के कामों को समझने में अपनी असमर्थता स्वीकार करते हैं: यह अच्छी तरह जानते हुए भी कि परमेश्वर न्याय करने वाले परमेश्वर हैं, वे हैरान हैं कि नेक लोगों को बुरे लोगों की तरह सज़ा क्यों मिलती है, जबकि बुरे लोगों को नेक लोगों की तरह इनाम मिलता है (मैकडोनाल्ड)। क्या आप इसे समझते हैं? क्या आप जानते हैं कि एक नेक परमेश्वर नेक लोगों को बुरे लोगों की तरह सज़ा कैसे दे सकते हैं और बुरे लोगों को नेक लोगों की तरह इनाम कैसे दे सकते हैं? मेरा मानना है कि यह सवाल नेक लोगों के दुख और बुरे लोगों की खुशहाली से जुड़ा है। पिछले हफ़्ते बाइबल पढ़ते समय, मेरी नज़र यिर्मयाह 12:1 पर पड़ी। मैंने पहले सोचा था कि सिर्फ़ आसाफ़—भजन संहिता 73 के लेखक—ने ही नेक लोगों के दुख और बुरे लोगों की खुशहाली के मुद्दे पर संघर्ष किया

था; लेकिन मुझे पता चला कि भविष्यद्वक्ता यिर्मयाह ने भी इसी सवाल पर संघर्ष किया था। यिर्मयाह 12:1 को देखिए: "हे प्रभु, जब मैं आपके सामने अपना मामला रखता हूँ तो आप नेक होते हैं; फिर भी मुझे आपके फैसलों के बारे में आपसे बात करने दें: बुरे लोगों का रास्ता क्यों फलता-फूलता है? जो लोग धोखा देते हैं, वे आराम से क्यों रहते हैं?" भविष्यद्वक्ता यिर्मयाह परमेश्वर के न्याय के बारे में सवाल कर रहे हैं: "बुरे लोग क्यों फलते-फूलते हैं और आराम से रहते हैं?" सच कहूँ तो, क्या यह ऐसा सवाल नहीं है जो आप और मैं भी कभी-कभी अपने दिल में परमेश्वर से पूछते हैं? हमारे सवाल का मुख्य हिस्सा परमेश्वर के न्याय से जुड़ा है: "परमेश्वर साफ़ तौर पर एक धर्मी परमेश्वर है, तो फिर वह बुरे लोगों को फलने-फूलने क्यों देता है जबकि धर्मी लोग दुख उठाते हैं?"

(2) परमेश्वर के कामों में से एक काम जिसे राजा सुलैमान समझ नहीं पाए, वह यह है कि कोई नहीं जान सकता कि धर्मी या बुद्धिमान लोगों के साथ होने वाली घटनाएँ परमेश्वर के प्रेम की निशानी हैं या उसकी नफ़रत की। आज के वचन, उपदेशक 9:1 को देखें: "इसलिए मैंने इन सब बातों पर विचार किया और इस नतीजे पर पहुँचा कि धर्मी और बुद्धिमान लोग और उनके काम परमेश्वर के हाथों में हैं, लेकिन कोई नहीं जानता कि उनके लिए प्रेम है या नफ़रत—यह सब भविष्य में है।" परमेश्वर के कामों में से एक और काम जिसे राजा सुलैमान इस दुनिया में समझ नहीं पाए, वह यह है कि इंसान यह नहीं समझ सकते कि धर्मी या बुद्धिमान लोगों के साथ होने वाली घटनाएँ परमेश्वर के प्रेम की निशानी हैं या उसकी नफ़रत की (मैकडोनाल्ड)। हालाँकि यह पक्का है कि धर्मी, बुद्धिमान और उनके काम सब परमेश्वर के हाथों में हैं, लेकिन जो बात साफ़ नहीं है, वह यह है कि परमेश्वर धर्मी लोगों को इस दुनिया में हमेशा भौतिक समृद्धि क्यों नहीं देता (पार्क युन-सन)—या क्या ऐसी परिस्थितियाँ प्रेम को दिखाती हैं या नफ़रत को। हम परमेश्वर की योजना का अंदाज़ा कैसे लगा सकते हैं? धर्मी लोगों को दुख उठाने देने के पीछे प्रभु के महान मकसद को हम पूरी तरह कैसे समझ सकते हैं? अक्सर, घटनाएँ बीत जाने के बाद ही हमें परमेश्वर की योजना की थोड़ी-बहुत झलक मिल सकती है, फिर भी हम उसकी विशाल और अंतिम इच्छा को कभी पूरी तरह नहीं समझ सकते। चाहे हम परमेश्वर की इच्छा को समझने की कितनी भी कोशिश करें, हम यह नहीं जान सकते कि वह धर्मी लोगों को इस दुनिया में हमेशा भौतिक समृद्धि क्यों नहीं देता। हालाँकि हम मानते हैं और कहते हैं कि परमेश्वर हमें दुख और दर्द सहने देता है क्योंकि वह हमसे प्रेम करता है, फिर भी कई बार हम पूछते हैं, "क्या परमेश्वर सच में हमसे प्रेम करता है?" या "अगर वह हमसे प्रेम करता है, तो वह हमें इस तरह दुख क्यों उठाने देता है?" ऐसे पलों में, हम न केवल परमेश्वर के प्रेम पर शक करते हैं, बल्कि यहाँ तक सोचने लगते हैं कि

क्या वह हमसे नफ़रत के कारण ऐसा कर रहा है। मिस्र से निकलने के दौरान इस्राएलियों को भी ऐसा ही महसूस हुआ था। व्यवस्थाविवरण 1:27 देखिए: "और तुम अपने डेरों में बड़बड़ाए और कहा, 'क्योंकि प्रभु हमसे नफ़रत करते थे, इसलिए वे हमें मिस्र देश से बाहर लाए ताकि हमें एमोरियों के हाथों में सौंप दें और हमें नष्ट कर दें।'" मिस्र से निकलने के दौरान, इस्राएल के लोगों ने परमेश्वर के खिलाफ़ शिकायत की। उनकी शिकायत यह थी कि "परमेश्वर हमसे नफ़रत करते हैं" (पद 27)। नतीजतन, उनका कहना था कि परमेश्वर उन्हें मिस्र से बाहर इसलिए लाए थे ताकि उन्हें एमोरियों के हाथों नष्ट होने के लिए सौंप सकें। सच तो यह है कि वे परमेश्वर के बारे में बिल्कुल बेतुकी बातें कर रहे थे। अगर परमेश्वर उनसे नफ़रत करते, तो वे शुरू में ही इस्राएलियों को मिस्र से क्यों बचाते? परमेश्वर ने साफ़ तौर पर उन्हें प्यार की वजह से बचाया था, फिर भी इस्राएलियों का मानना था कि वे उनसे नफ़रत करते हैं। क्या वह दुख-तकलीफ़ जो परमेश्वर आपके और मेरे लिए होने देते हैं, प्यार की निशानी है या नफ़रत की? राजा सुलैमान का निष्कर्ष यह है कि हम इसका जवाब नहीं जान सकते।

दूसरी बात जिस पर मैं विचार करना चाहता हूँ, वह यह है: "जब हम परमेश्वर के कामों को समझ नहीं पाते, तो हमें क्या करना चाहिए?" मैं इस पर दो नज़रियों से बात करना चाहूँगा।

(1) जब हम यह समझ नहीं पाते कि परमेश्वर इस दुनिया में क्या कर रहा है, तो जो बातें समझ से बाहर हैं, उन्हें सुलझाने की कोशिश करने के बजाय, हमें यह मानना चाहिए कि ये मुश्किल मामले परमेश्वर के हाथों में हैं (9:1) और हमें सिर्फ़ उसी की ओर देखना चाहिए (8:16-17) (पार्क यू-सन)।

इस दुनिया में रहते हुए हमें कितनी मुश्किल चुनौतियों का सामना करना पड़ता है? सचमुच, हमारा जीवन कितनी उलझन भरी समस्याओं से भरा होता है! क्या आप सच में उन सभी मुश्किल मुद्दों को समझ सकते हैं? क्या आप समझते हैं कि आपके जीवन में ऐसी समस्याएँ क्यों आती हैं? क्या हम परमेश्वर की इच्छा को पूरी तरह समझ सकते हैं? राजा सुलैमान ने न केवल जीवन की मुश्किलों के कारणों को समझने की कोशिश की, बल्कि उन उलझन भरी समस्याओं को सुलझाने का भी प्रयास किया। फिर भी, उनका निष्कर्ष हमें बताता है कि जो बातें हम समझ नहीं सकते, उन्हें सुलझाने की कोशिश करने के बजाय, हमें यह विश्वास करना चाहिए कि ये मामले परमेश्वर के हाथों में हैं और हमें सिर्फ़ उसी की ओर देखना चाहिए। हालाँकि इस दुनिया में ऐसी बहुत सी

बातें होती हैं जिन्हें हम समझ नहीं सकते, फिर भी एक सच्चाई है जिस पर आपको और मुझे पूरे भरोसे के साथ विश्वास करना चाहिए: वह यह कि जीवन में हमारे सामने आने वाली हर मुश्किल समस्या परमेश्वर के हाथों में है। इसके अलावा, हमें यह भी विश्वास करना चाहिए कि हमारा अनजान भविष्य भी परमेश्वर के अधिकार में है। भले ही हममें से कोई नहीं जानता कि भविष्य में हमारे लिए क्या है या किन घटनाओं का हमें सामना करना पड़ेगा, फिर भी हमें यह विश्वास करना चाहिए कि परमेश्वर इन मुश्किलों और हमारे भविष्य के बारे में सब कुछ जानता है। हमें यह भी विश्वास करना चाहिए कि परमेश्वर हमारे जीवन की चुनौतियों के ज़रिए अपनी सर्वोच्च इच्छा पूरी करता है, और वह अपनी इच्छा के अनुसार हमारे भविष्य को नियंत्रित करता है। जब हम परमेश्वर के इस अधिकार पर विश्वास करते हैं, तो हम विश्वास के ज़रिए उन दुखों और मुश्किलों पर भी काबू पा सकते हैं जो हमारे सामने आ सकती हैं।

(2) जब हम पूरी तरह से यह नहीं समझ पाते कि परमेश्वर इस दुनिया में क्या कर रहा है, तो हमें जीवन के उस हिस्से में संतोष और खुशी ढूँढ़नी चाहिए जो उसने हमें दिया है।

आज के वचन पर विचार करें, उपदेशक 8:15: "इसलिए मैं जीवन का आनंद लेने की सलाह देता हूँ, क्योंकि इंसान के लिए इस दुनिया में खाने-पीने और खुश रहने से बेहतर कुछ नहीं है। तब परमेश्वर द्वारा दिए गए जीवन के सभी दिनों में उनकी मेहनत के साथ खुशी भी बनी रहेगी।" इस धरती पर रहते हुए हमें कई ऐसी उलझन भरी समस्याओं का सामना करना पड़ता है जो हमारी समझ या उन्हें सुलझाने की हमारी क्षमता से बाहर होती हैं; ऐसे में हमें भरोसा रखना चाहिए कि ये सभी बातें प्रभु के हाथों में हैं। सब कुछ उन्हें सौंपने के बाद, हमें उस हिस्से में खुशी और संतोष खोजना चाहिए जो परमेश्वर हमें हर दिन देते हैं। बेशक, जब राजा सुलैमान खाने-पीने और खुश रहने को हमारा तय हिस्सा बताते हैं, तो उनका मतलब बिल्कुल भी सिर्फ शारीरिक सुख-सुविधाओं वाली ज़िंदगी जीने से नहीं है। हम यह इसलिए जानते हैं क्योंकि उन्होंने खुद एक प्रयोग के तौर पर शारीरिक सुखों को आजमाया था, और आखिर में यही नतीजा निकाला कि वे सब "बेमतलब" थे। उनका कहना यह है कि भले ही हम इस दुनिया में परमेश्वर के कामों को पूरी तरह न समझ पाएं, फिर भी हमें भरोसा रखना चाहिए कि सब कुछ उनके अधिकार में है और हमें उन आशीषों का आनंद लेना चाहिए जो वे हमें हर दिन देते हैं। हमें उपदेशक 2:24 की इन बातों पर ध्यान देना चाहिए: "इंसान के लिए इससे बेहतर कुछ नहीं है कि वह खाए-पीए और अपनी मेहनत से संतुष्टि पाए। मैंने देखा कि यह भी परमेश्वर की ओर से ही है।" हमें परमेश्वर से मिली आशीषों को पहचानना और उनकी कद्र करनी चाहिए। प्रभु में मिली आशीषों का आनंद लेते हुए हर दिन जीने के लिए, हमें

उन आशीषों को याद करना चाहिए जो परमेश्वर ने हमें दी हैं। हमें यीशु मसीह के ज़रिए परमेश्वर से मिली आध्यात्मिक आशीषों का खुशी-खुशी आनंद लेना चाहिए। अपनी समझ से बाहर के मुश्किल मुद्दों को खुद सुलझाने की कोशिश में अपना समय और ऊर्जा बर्बाद करने के बजाय, हमें इस अन्यायपूर्ण दुनिया में आने वाली मुश्किलों को परमेश्वर को सौंप देना चाहिए और उनके बीच भी, परमेश्वर द्वारा दी गई आशीषों का खुशी-खुशी आनंद लेना चाहिए।

आज चर्च जाते समय मैंने रेडियो पर एक दिलचस्प कहानी सुनी। यह कहानी गोरियो राजवंश के कमल के एक बीज के बारे में थी, जिसे ग्योंगनाम प्रांत के हामन-गुन में बोया गया था और जो आखिरकार 700 साल बाद कमल के फूल के रूप में खिला। मुझे नहीं पता कि उन्होंने यह कैसे पता लगाया कि बीज 700 साल पुराना था, लेकिन इतने लंबे समय तक जीवित रहने वाले फूल को देखना वाकई हैरान करने वाला था—खासकर यह सोचते हुए कि इंसान की ज़िंदगी तो सिर्फ़ सत्तर या अस्सी साल की होती है। इस बारे में सोचते हुए, मैं परमेश्वर की अद्भुत योजना पर हैरान रह गया और मुझे एहसास हुआ कि जो परमेश्वर इस दुनिया के सभी कामों को नियंत्रित करते हैं, वही एक फूल की ज़िंदगी को भी इस तरह नियंत्रित करते हैं। दोस्तों, भले ही हम—राजा सुलेमान की तरह—इस दुनिया में परमेश्वर के कामों को समझने की कोशिश करें, फिर भी हम उन्हें पूरी तरह नहीं समझ सकते। अगर हम 700 साल बाद खिलने वाले कमल के बीज के रहस्य को भी नहीं समझ सकते, तो पूरी कायनात को चलाने में परमेश्वर के कामों के इतिहास को कैसे समझ सकते हैं? ऐसा क्यों लगता है कि एक नेक परमेश्वर नेक लोगों को ऐसे सज़ा देता है जैसे वे बुरे हों, जबकि बुरे लोगों को ऐसे इनाम देता है जैसे वे नेक हों? क्या आप और मैं सच में परमेश्वर के कामों को समझ सकते हैं? क्या हम जानते हैं कि परमेश्वर उन लोगों को इस दुनिया में हमेशा भौतिक समृद्धि क्यों नहीं देते जिन्हें वह नेक मानता है? क्या हम बता सकते हैं कि ऐसे नतीजे उसके प्यार की निशानी हैं या उसकी नफ़रत की? तो फिर, हम क्या कर सकते हैं? अपनी समझ से परे मामलों को सुलझाने की कोशिश करने के बजाय, हमें यह भरोसा रखना चाहिए कि सभी मुश्किल चुनौतियाँ परमेश्वर के हाथों में हैं। ऐसा करते हुए, हमें सिर्फ़ परमेश्वर की ओर देखना चाहिए और उसने हमें जो आशीषें दी हैं, उनमें हर दिन खुशी और संतोष पाना चाहिए। मैं प्रार्थना करता हूँ कि हम सबमें ऐसी समझ हो।

हर किसी का आखिरी अंजाम एक ही होता है।

[सभोपदेशक 9:2-6]

क्या आपने कभी "पॉल सिंड्रोम" के बारे में सुना है? यह शब्द उस घटना के लिए इस्तेमाल किया जाता है जो दक्षिण अफ्रीका वर्ल्ड कप के दौरान "पॉल द सूथसेयर ऑक्टोपस" (भविष्य बताने वाला ऑक्टोपस) की वजह से चर्चा में आई थी। जर्मनी के ओबरहाउज़ेन में 'सी लाइफ सेंटर' में रहने वाले पॉल नाम के ऑक्टोपस ने वर्ल्ड कप मैचों के नतीजों की भविष्यवाणी करने में 100% सटीकता हासिल की थी। उसने आठ मैचों—जिनमें फाइनल और जर्मनी के सात मैच शामिल थे—के नतीजों की एकदम सही भविष्यवाणी की थी। मैंने टीवी और इंटरनेट पर इस ऑक्टोपस के बारे में खबरें देखीं, और मुझे यह सब बहुत अजीब लगा। यह बात बेतुकी इसलिए लगी क्योंकि उस ऑक्टोपस के बाद, कई तरह के दूसरे "भविष्य बताने वाले" जानवर—जैसे कि भविष्य बताने वाला मगरमच्छ—सामने आने लगे। ज़ाहिर है, कुछ सट्टेबाज़ी कंपनियों ने पॉल की वजह से बहुत मुनाफा कमाया। मैं तब भी हैरान रह गया जब स्पेन के फाइनल जीतने के बाद, जीतने वाला गोल करने वाले खिलाड़ी ने कहा, "पॉल अमर रहे।"

आपको क्या लगता है, लोग अपना भविष्य जानने के लिए भविष्य बताने वालों के पास क्यों जाते हैं? क्या इसलिए नहीं कि वे भविष्य जानना चाहते हैं? फिर भी, बाइबल इस मामले में साफ-साफ कहती है। सभोपदेशक 7:14 और 8:7 में—जिन पर हमने पहले भी मनन किया है—राजा सुलैमान कहते हैं कि हम भविष्य ("जो होने वाला है") को समझ या जान नहीं सकते। सिर्फ सर्वज्ञानी परमेश्वर, जो अतीत, वर्तमान और भविष्य को नियंत्रित करते हैं, वही जानते हैं कि हमारे लिए आगे क्या है। हालाँकि, भविष्य के बारे में एक बात

ऐसी है जिसे आप और मैं पूरी निश्चितता के साथ जान सकते हैं। वह क्या है? वह यह सच है कि हर इंसान का आखिरी अंजाम मौत है। ऐसा कोई नहीं है जो इस सच से अनजान हो। और न ही कोई ऐसा है जो इस सच्चाई से इनकार करेगा कि मौत ही सभी लोगों का आखिरी अंजाम है। फिर भी, जबकि हम सभी इस निश्चित भविष्य के बारे में जानते हैं, इस पर लोगों की प्रतिक्रियाएँ अलग-अलग होती हैं। तो फिर, आप अपने आखिरी अंजाम—मौत—को ध्यान में रखते हुए कैसे जी रहे हैं?

आज के हिस्से, सभोपदेशक 9:2-3 में, राजा सुलैमान "एक ही अंजाम" (या "एक ही बात") वाक्यांश का चार बार इस्तेमाल करते हैं। वह किस आम अंजाम की बात बार-बार कर रहे हैं? वह है मौत—हम सभी का आखिरी अंजाम। दूसरे शब्दों में, राजा सुलैमान कह रहे हैं, "हम सबका आखिरी अंजाम एक ही है, और वह है मौत।" उपदेशक 9:2 को देखें: "सबका अंजाम एक ही होता है—चाहे नेक हो या बुरा, अच्छा हो या खराब, पवित्र हो या अपवित्र, बलि चढ़ाने वाला हो या न चढ़ाने वाला। जैसा अच्छे इंसान के साथ होता है, वैसा ही पापी के साथ भी; जैसा कसम खाने वाले के साथ होता है, वैसा ही कसम खाने से डरने वाले के साथ भी।" वे कहते हैं कि चाहे कोई नेक हो या बुरा, अच्छा हो या पापी, पवित्र हो या अपवित्र, पूजा करने वाला हो या न करने वाला, आखिर में हर कोई मरता है। इस दुनिया में ऐसा कोई इंसान नहीं है जो इस सच्चाई से इनकार करे। धरती पर हर कोई जानता है कि मौत ही आखिरी नतीजा है। यीशु को मानने वाले ईसाई और न मानने वाले गैर-ईसाई, दोनों ही इस बात पर सहमत हैं कि इंसानियत का आखिरी अंजाम मौत है। हालाँकि, एक बात ऐसी है जिस पर हम ईसाई गैर-ईसाइयों से अलग सोचते हैं: मौत के बाद क्या होता है। दूसरे शब्दों में, जहाँ ईसाई और गैर-ईसाई दोनों इस बात पर सहमत हैं कि *इस युग* में ज़िंदगी का आखिरी अंजाम मौत है, वहीं वे *आने वाले युग*—यानी मौत के बाद के युग—के नतीजे पर सहमत नहीं हैं। हम ईसाई आने वाले युग में विश्वास करते हैं; हम अनंत जीवन में विश्वास करते हैं। हम भविष्य के अस्तित्व में विश्वास करते हैं—चाहे वह स्वर्ग में अनंत जीवन हो या नरक में अनंत अस्तित्व। लेकिन गैर-ईसाई बाइबल में बताए गए अनंत जीवन, स्वर्ग या नरक में विश्वास नहीं करते। यही ईसाई और गैर-ईसाई के बीच बुनियादी फ़र्क है।

तो फिर, हमें क्या करना चाहिए? हम—जो गैर-ईसाइयों के उलट आने वाले युग में विश्वास करते हैं—अपनी ज़िंदगी कैसे जीएँ? हमें उपदेशक 7:2 की बातों पर ध्यान देना चाहिए: "दावत वाले घर में जाने से बेहतर है

मातम वाले घर में जाना, क्योंकि मौत हर इंसान का अंजाम है; ज़िंदा लोगों को यह बात दिल में बिठा लेनी चाहिए।" आज जो लोग ज़िंदा हैं और साँस ले रहे हैं, उन्हें यह बात दिल में बिठा लेनी चाहिए कि मौत ही इस धरती पर हर किसी का आखिरी अंजाम है। इसे ध्यान में रखते हुए, हमें अपनी बची हुई ज़िंदगी यहाँ अच्छी तरह से जीनी चाहिए और उसे मौत के नज़रिए से देखना चाहिए। तो फिर, ऐसे नज़रिए के साथ हमें इस दुनिया में कैसे जीना चाहिए? आज, मैं उपदेशक (Ecclesiastes) 9:2-6 के हिस्से से दो बातों पर ध्यान देते हुए इस पर विचार करना चाहता हूँ।

पहली बात, हमें मौत के नज़रिए से जीना चाहिए और अपने दिलों में भरे पापों के लिए पछतावा करना चाहिए।

आज के हिस्से में उपदेशक 9:3 को देखें: "सूरज के नीचे होने वाली हर चीज़ में यह बुराई है: सबका अंजाम एक ही होता है। इसके अलावा, लोगों के दिल बुराई से भरे होते हैं और जब तक वे जीवित रहते हैं, उनके दिलों में पागलपन होता है, और बाद में वे मरे हुएों में शामिल हो जाते हैं।" चूँकि इस दुनिया में होने वाली घटनाओं के मामले में नेक और बुरे लोगों के बीच आखिरकार कोई फ़र्क नहीं होता, इसलिए जो लोग इस दुनिया के हैं, वे इसे बहाना बनाकर अपनी पूरी ज़िंदगी को पाप करने का मौका बना लेते हैं (पार्क युन-सन)। उदाहरण के लिए, जब बुरे लोग नेक लोगों को—जो यीशु पर विश्वास करते हैं—ठीक वैसे ही दुख झेलते हुए देखते हैं जैसे वे खुद झेलते हैं, तो वे यह नतीजा निकालते हैं कि यीशु पर विश्वास करने और न करने में कोई फ़र्क नहीं है; नतीजतन, वे इस दुनिया में और भी ज़्यादा पाप करते हैं। इसके अलावा, बुरे लोग इतनी हिम्मत से पाप इसलिए करते हैं क्योंकि उनके बुरे कामों के लिए परमेश्वर की सज़ा तुरंत नहीं दी जाती (8:11)। इस तरह, मौत का सामना करते हुए, बुरे लोग न केवल अपने पापों के लिए पछतावा करने में नाकाम रहते हैं, बल्कि ऐसा करने में असमर्थ भी होते हैं। इसके बजाय, वे मौत के सामने भी हिम्मत के साथ पाप करते रहते हैं।

अगर आपको पता चले कि आपकी मौत जल्द ही होने वाली है, तो आप कैसी प्रतिक्रिया देंगे? उदाहरण के लिए, अगर कोई डॉक्टर आपसे कहे, "आपके पास जीने के लिए सिर्फ़ छह महीने—या ज़्यादा से ज़्यादा एक साल—बचा है," तो आप क्या करेंगे? मेरा मानना है कि दो तरह की प्रतिक्रियाएँ हो सकती हैं। वे हैं: (1) समय खत्म हो रहा है, इसलिए जो भी मन में हो उसे पूरी तरह से करने की कोशिश करना, या (2) मौत के सामने

अपनी ज़िंदगी पर विचार करना और परमेश्वर के खिलाफ़ किए गए पापों के लिए पछतावा करना। मेरी राय में, दूसरी प्रतिक्रिया की तुलना में पहली प्रतिक्रिया ज़्यादा आम है। ऐसा इसलिए है क्योंकि जो लोग यीशु पर विश्वास नहीं करते, वे मौत का सामना करते समय सचमुच खुद पर विचार करने और परमेश्वर के सामने सच्चा पछतावा करने में असमर्थ होते हैं। इसलिए, अगर हम नास्तिकों और उन आस्तिकों—जो नास्तिकों की तरह ही मौत के करीब आने पर पछतावा करने के बजाय अपनी इच्छाओं को पूरा करना चुनते हैं—दोनों को शामिल करें, तो निश्चित रूप से पहले समूह के लोगों की संख्या दूसरे समूह से ज़्यादा होगी। मिस्र से निकलने के दौरान इस्राएलियों को देखकर हमें इसका बाइबिल-आधारित प्रमाण मिल सकता है; भले ही वे परमेश्वर में विश्वास करते थे, फिर भी हम देखते हैं कि वे कितने ज़िद्दी और अड़ियल थे; परमेश्वर के क्रोध और अनुशासन के बावजूद उन्होंने पछतावा करने से इनकार कर दिया। मेरा मानना है कि हम भी उनसे अलग नहीं हैं। हम ऐसे लोग हैं जो मौत के सामने भी अपने पापों को पहचानने और पछतावा करने में देर करते हैं। नतीजतन, मुझे लगता है कि ऐसे लोगों की संख्या कहीं ज़्यादा है जो—जब बहुत कम समय बचा हो—अपनी मर्ज़ी से जीना चुनते हैं, बजाय उन लोगों के जो अपने जीवन पर विचार करते हैं और परमेश्वर के विरुद्ध किए गए पापों के लिए पछतावा करते हैं। अगर हम मौत के पल तक अपनी इच्छाओं के अनुसार जीते हैं, तो इसका मतलब बस इतना ही है कि "मरने से पहले हमारे दिलों में पागलपन भरा हुआ है" (पद 3)। हमें मौत का सामना इस तरह नहीं करना चाहिए; इसके बजाय, मौत का सामना करने से पहले, हमें अपने दिलों में भरे पापों के लिए परमेश्वर से पछतावा करना चाहिए।

पास्टर वियर्सबे ने एक बार कहा था कि मौत में एक्स-रे जैसी ताकत होती है। इसका क्या मतलब है? जैसे हम मेडिकल चेकअप के दौरान अपने शरीर के अंदर देखने के लिए एक्स-रे करवाते हैं, वैसे ही मौत एक एक्स-रे की तरह काम करती है जो हमारे दिलों में छिपी बातों को उजागर करती है। यह हमारे अंदर छिपे गहरे पापों को सामने लाती है और हमें परमेश्वर के सामने पछतावा करने का मौका देती है। दूसरे शब्दों में, परमेश्वर मौत का इस्तेमाल एक साधन के तौर पर करते हैं ताकि हमारे दिलों में भरे पाप सामने आ सकें, हमें पछतावे की ओर ले जा सकें और हमें उनके पवित्र लोगों के रूप में स्थापित कर सकें। इसलिए, इस दुनिया में रहते हुए, हमें मौत के नज़रिए से ज़िंदगी को देखना चाहिए और अपने दिलों में भरे पापों के लिए पछतावा करना चाहिए। हमें अपनी मौत को क्रूस पर यीशु की मौत से जोड़ना चाहिए और अपनी बाकी ज़िंदगी जीते हुए बार-बार अपने पापों को क्रूस के चरणों में सौंपना चाहिए। हमें पूरी लगन से अपने पापों को क्रूस पर सौंपना चाहिए। वहाँ बहाए गए यीशु

के कीमती लहू की शक्ति पर भरोसा करते हुए, हमें लगातार अपने पापों को उन्हें सौंपते रहना चाहिए। भले ही हमें मौत का सामना करना पड़े, हमें धरती पर अपना बचा हुआ समय अपने अंदर के पापों के लिए पछतावा करते हुए बिताना चाहिए। ऐसा करने से, हम परमेश्वर को पसंद आने वाले तरीके से, उनके पवित्र लोगों के रूप में मौत का सामना कर सकेंगे।

दूसरी और आखिरी बात, हमें मौत के नज़रिए से ज़िंदगी को देखते हुए अपने दिलों में उम्मीद के साथ जीना चाहिए।

आज के वचन, उपदेशक 9:4 को देखिए: "जो कोई जीवित है, उसके पास उम्मीद है—यहाँ तक कि एक ज़िंदा कुत्ता मरे हुए शेर से बेहतर है!" आपको "ज़िंदा कुत्ता मरे हुए शेर से बेहतर है" वाली बात कैसी लगती है? यहूदी लोगों के लिए, कुत्ता सबसे घृणित जानवर माना जाता था। और शेर, जैसा कि हम जानते हैं, जानवरों की दुनिया का राजा है, है ना? फिर भी, राजा सुलैमान कहते हैं कि एक ज़िंदा कुत्ता मरे हुए शेर से बेहतर है। इसका क्या मतलब है? इसका मतलब है कि मरने से बेहतर है ज़िंदा रहना। ज़िंदगी मौत से बेहतर क्यों है? इसलिए क्योंकि एक बार जब कोई मर जाता है, तो सही ढंग से जीने का कोई मौका नहीं रहता; लेकिन, ज़िंदा रहते हुए, पछतावा करने और चीज़ों को ठीक करने की उम्मीद बनी रहती है। इसलिए, एक ज़िंदा कुत्ता सचमुच मरे हुए शेर से बेहतर है। इसलिए, आज हम जो ज़िंदा हैं, उनकी हालत उन लोगों से बेहतर है जो मर चुके हैं—चाहे वे कितने भी मशहूर, अमीर या ताकतवर क्यों न रहे हों।

तो फिर, हम—जो आज ज़िंदा हैं और साँस ले रहे हैं—कैसे जिंँएँ? हमें इस बात का एहसास रखते हुए जीना चाहिए कि हम मर जाएँगे। आज के वचन, उपदेशक 9:5 को देखिए: "क्योंकि जीवित लोग जानते हैं कि वे मर जाएँगे, लेकिन मरे हुए लोग कुछ नहीं जानते, और उन्हें कोई इनाम नहीं मिलता, क्योंकि उनकी याद भी मिट जाती है।" देखिए, मरे हुए लोग कुछ नहीं जानते। मरे हुए लोगों के लिए न तो प्यार होता है, न नफ़रत, और न ही जलन (वचन 6)। मरने के बाद, दुनिया में होने वाली किसी भी चीज़ में उनका कोई हिस्सा नहीं रहता—हमेशा के लिए (वचन 6)। संक्षेप में, मरे हुए लोगों के पास कोई उम्मीद नहीं होती। मरे हुए लोगों में इनाम पाने की सोच के साथ काम करने की समझ नहीं होती। उनके पास कोई उम्मीद नहीं होती, और उनके नाम भुला दिए जाते हैं। लेकिन जीवित लोगों के पास उम्मीद होती है। कैसी उम्मीद? क्योंकि जीवित लोग जानते हैं कि वे मर जाएँगे,

इसलिए उन्हें नए संकल्प और सतर्क भावना के साथ जीने की उम्मीद होती है। क्या सच में हमारे पास यह उम्मीद है? क्या हमें सच में एहसास है कि हम मर जाएँगे? और क्योंकि हम जानते हैं कि हम मर जाएँगे, क्या हम सतर्क भावना और नए संकल्प के साथ जी रहे हैं? जब तक मौका है, हमें पश्चाताप करना चाहिए; पश्चाताप का मौका हमेशा नहीं मिलता। यह जानते हुए कि एक दिन हम मर जाएँगे, हमें जीवित रहते हुए ही पाप से मुँह मोड़ना चाहिए और परमेश्वर के साथ सही रिश्ते में रहते हुए सही रास्ते पर चलना चाहिए। मैं प्रार्थना करता हूँ कि हम परमेश्वर द्वारा दिए गए पश्चाताप के मौके को कभी न गँवाएँ, ताकि बाद में बहुत देर हो जाने पर पछताना न पड़े। आइए हम तब तक इंतज़ार न करें जब तक पश्चाताप करना बेकार न हो जाए। एक बार मरने के बाद, पश्चाताप या पछतावे की कोई गुंजाइश नहीं रहती। पश्चाताप करने का समय अभी है।

सभी लोगों का अंतिम अंजाम एक ही है; चाहे कोई धर्मी हो या दुष्ट, सबका अंत मौत ही है। यह जानते हुए, हमें इस दुनिया में मिले समय में अपना जीवन कैसे जीना चाहिए? हमें अपनी नश्वरता (मौत निश्चित होने) का एहसास रखते हुए जीना चाहिए और अपने दिलों में भरे पापों के लिए पश्चाताप करना चाहिए। मृत्यु पर गहराई से विचार करके—जो एक एक्स-रे की तरह हमारे दिल की बातों को उजागर करती है—और मृत्यु के नज़रिए से जीवन को देखकर, हमें रोज़ पवित्र परमेश्वर के सामने पश्चाताप करना चाहिए और यीशु के क्रूस के कीमती लहू की शक्ति पर भरोसा रखना चाहिए। इसके अलावा, मृत्यु की सच्चाई को ध्यान में रखते हुए भी हमें अपने दिलों में उम्मीद के साथ जीना चाहिए। जीवित होने के नाते, हम उम्मीद रखने वाले लोग हैं जो सतर्क रह सकते हैं और नए संकल्प के साथ जी सकते हैं। इस उम्मीद के सहारे, हमें पश्चाताप करना चाहिए और उस सही रास्ते पर चलना चाहिए जिसे प्रभु चाहते हैं। जब हम प्रभु के रास्ते पर चलते हैं, तो हम भविष्य के लिए उम्मीद रखते हैं। आइए हम इन शब्दों को याद रखें: "एक जीवित कुत्ता मरे हुए शेर से बेहतर है।"

वह व्यक्ति जिसे परमेश्वर खुशी-खुशी स्वीकार करेंगे

[सभोपदेशक 9:7-10]

इन दिनों जीवन में आपको किस चीज़ से खुशी मिलती है? अपनी रोज़मर्रा की ज़िंदगी जीते हुए आप किस तरह की खुशी महसूस करते हैं? हालाँकि हम दुख से भरी दुनिया में रहते हैं, फिर भी बाइबल हमें "हमेशा आनंदित रहने" का आदेश देती है। क्या हम सचमुच लगातार खुशी के साथ जी रहे हैं? लगातार खुशी का जीवन जीने के लिए हमें क्या करना चाहिए? हमें परमेश्वर की आज्ञाओं का पालन करना चाहिए। दूसरे शब्दों में, जब हम परमेश्वर के वचन के अनुसार जीते हैं, तो हम खुशी का अनुभव कर सकते हैं। इसके अलावा, जब हम उनके वचन का पालन करते हुए जीते हैं, तो परमेश्वर हमें खुशी-खुशी स्वीकार करेंगे।

सभोपदेशक 9:7 के दूसरे भाग में, राजा सुलैमान कहते हैं: "...क्योंकि परमेश्वर ने पहले ही तुम्हारे कामों को स्वीकार कर लिया है।" जब मैंने इस आयत पर मनन किया, तो मैंने खुद से पूछा, "वह कौन सा व्यक्ति है जिसे परमेश्वर खुशी-खुशी स्वीकार करेंगे?" इसका जवाब है, वे लोग जो परमेश्वर के वचन के अनुसार जीते हैं (पार्क युन-सन)। जो लोग परमेश्वर के वचन के अनुसार जीते हैं, वे खुशी से जीते हैं। मैं आज के वचन पर ध्यान केंद्रित करते हुए उन चार तरीकों के बारे में जानना चाहता हूँ जिनसे ऐसे लोग—जिन्हें परमेश्वर खुशी-खुशी स्वीकार करते हैं—खुशी से जीते हैं, और उनकी दी हुई कृपा को प्राप्त करना चाहता हूँ।

पहला, जिन्हें परमेश्वर खुशी-खुशी स्वीकार करते हैं, वे खुशी के साथ खाते-पीते हैं।

सभोपदेशक 9:7 के पहले भाग को देखें: "जाओ, खुशी से अपनी रोटी खाओ, और प्रसन्न मन से अपनी दाखमधु पियो..." क्योंकि जिन्हें परमेश्वर खुशी-खुशी स्वीकार करते हैं, वे उनके वचन का पालन करते हुए जीते हैं, इसलिए वे उन पर आशीष बरसाते हैं। वे किस तरह की आशीष देते हैं? सभोपदेशक 2:24 को देखें: "मनुष्य के लिए इससे बेहतर कुछ नहीं है कि वह खाए-पीए और अपनी मेहनत में आनंद पाए। मैंने यह भी देखा कि यह परमेश्वर की ओर से है।" जो लोग परमेश्वर के वचन का पालन करते हैं, उन्हें परमेश्वर यह आशीष देते हैं कि वे खा-पी सकें और अपनी आत्मा में सच्चा आनंद पा सकें। क्या आप और मैं सचमुच परमेश्वर की इस आशीष का अनुभव कर रहे हैं? क्या खाते-पीते समय आपको परमेश्वर द्वारा दी गई खुशी मिलती है? जब मैं सभोपदेशक 2:24 और आज के वचन, सभोपदेशक 9:7 में खाने-पीने के दृश्य पर विचार करता हूँ, तो मुझे एक "दावत" की याद आती है। और जब मैं किसी दावत या भोज के बारे में सोचता हूँ, तो मुझे यूहन्ना अध्याय 2 में काना की शादी याद आती है। इससे मुझे पादरी टिम केलर का वह प्रवचन याद आता है जो मैंने कुछ समय पहले काना की शादी के बारे में सुना था। मैं इस संदेश से बहुत प्रभावित हुआ था कि "परमेश्वर का राज्य एक दावत है।" अगर ऐसा है, तो मेरा मानना है कि हममें से जो लोग यीशु में विश्वास करते हैं, उनके लिए हमारी रोज़मर्रा की ज़िंदगी एक दावत होनी चाहिए। इसका कारण यह है कि परमेश्वर के राज्य के राजा, यीशु, पवित्र आत्मा के द्वारा हमारे भीतर वास करते हैं। यही बात कलीसिया पर भी लागू होती है; जब हम विश्वास करने वाले इकट्ठा होते हैं, तो हमें दावत की खुशी के साथ खाना-पीना और आनंद मनाना चाहिए। इस नज़रिए से, मेरा मानना है कि जब हम रोटी और प्याला—जो यीशु के शरीर और लहू के प्रतीक हैं—ग्रहण करते हैं और क्रूस पर उनकी मृत्यु को याद करते हैं, तो हमें आनंद के साथ ऐसा करना चाहिए। हम इसलिए आनंद मनाते हैं क्योंकि क्रूस पर यीशु की मृत्यु के द्वारा न केवल हमारे सभी पाप क्षमा हो गए हैं, बल्कि हमें यह भरोसा भी है कि जिस दिन प्रभु वापस आएँगे, हम स्वर्ग में प्रवेश करेंगे और मेमने के विवाह-भोज में शामिल होंगे। जिन लोगों को परमेश्वर स्वीकार करके प्रसन्न होते हैं, उनके लिए जीवन एक रोज़ की दावत है—खुशी के साथ खाना और आनंदित हृदय के साथ पीना।

दूसरी बात, जो लोग परमेश्वर को प्रसन्न करते हैं, वे पवित्रता और आनंद का जीवन जीते हैं।

आज के वचन, उपदेशक 9:8 को देखें: "तुम्हारे वस्त्र हमेशा सफेद रहें, और तुम्हारे सिर पर तेल की कमी न हो।" यहाँ, "तुम्हारे वस्त्र हमेशा सफेद रहें" का निर्देश यह बताता है कि हमारा जीवन हमेशा पवित्र होना चाहिए। और "तुम्हारे सिर पर तेल की कमी न हो" की आज्ञा का अर्थ है कि हमारे जीवन में हमेशा आनंद बना रहना

चाहिए (एरिड मेट्चर)। राजा सुलैमान कह रहे हैं कि परमेश्वर को प्रसन्न करने वाला जीवन पवित्रता और आनंद, दोनों का जीवन है। जब मैंने इस वचन पर मनन किया, तो मुझे एहसास हुआ कि पवित्रता और आनंद के बीच एक संबंध है। दूसरे शब्दों में, जो लोग पवित्र जीवन जीते हैं, उनके पास आनंद होता है; इसके विपरीत, जो लोग पवित्रता से नहीं जीते, उनके लिए सच्चा आनंद अनुभव करना असंभव है। ऐसा क्यों है? क्योंकि पाप हमें कभी आनंद नहीं दे सकता। अंततः, जो लोग परमेश्वर को प्रसन्न करते हैं, वे पवित्रता का जीवन जीते हैं—उनकी आज्ञा का पालन करते हैं और पाप से मिली स्वतंत्रता का आनंद लेते हैं। अगर हम ऐसे लोग बनना चाहते हैं जो परमेश्वर को खुश करें, तो हमें पवित्रता का जीवन जीना होगा। और अगर हम परमेश्वर से मिलने वाली खुशी का आनंद लेना चाहते हैं, तो हमें दिल की पवित्रता अपनानी होगी। क्यों? क्योंकि परमेश्वर हमारे दिलों को देखता है। हो सकता है कि हम बाहर से दूसरों को पवित्र लगें, जबकि हमारे अंदर कई तरह के पाप छिपे हों, लेकिन हम उस सर्वज्ञ परमेश्वर को धोखा नहीं दे सकते जो सब कुछ जानता है। इसलिए, हमें पवित्र परमेश्वर के सामने दिल की पवित्रता वाला जीवन जीना चाहिए। ऐसा करने के लिए, हमें क्रूस पर बहाए गए यीशु के कीमती लहू पर भरोसा करना होगा और रोज़ाना अपने पापों को मानकर उनसे तौबा करनी होगी। हमें अपने दिल के पापों को क्रूस के चरणों में रखना होगा। जब हम ऐसा करेंगे, तो हम पाप से आज्ञादी का आनंद ले पाएँगे—वह खुशी जो उन लोगों को मिलती है जिनका दिल सचमुच पवित्र होता है।

तीसरी बात, जिन्हें परमेश्वर खुशी से अपनाता है, वे अपने प्यारे जीवनसाथी के साथ खुशी-खुशी रहते हैं।

आज का वचन देखिए, उपदेशक 9:9: “अपनी उस पत्नी के साथ खुशी से रहो जिससे तुम प्यार करते हो, अपनी उस व्यर्थ ज़िंदगी के सभी दिनों में जो उसने तुम्हें सूरज के नीचे दी है, अपनी व्यर्थता के सभी दिनों में; क्योंकि जीवन में और सूरज के नीचे की गई मेहनत में यही तुम्हारा हिस्सा है।” राजा सुलैमान कहते हैं कि इस क्षणभंगुर और अर्थहीन दुनिया में, हमारी मेहनत का इनाम यह है कि हम उस प्यारी पत्नी के साथ खुशी से रहें जो परमेश्वर ने हमें दी है। वह सिखाते हैं कि परमेश्वर को खुश करने के लिए, हमें खाने-पीने की दावत में खुश होना चाहिए (वचन 7), पवित्रता के जीवन में आनंद लेना चाहिए (वचन 8), और अपनी प्यारी पत्नियों में खुशी ढूँढनी चाहिए (वचन 9)। सुनिए राजा सुलैमान नीतिवचन में क्या कहते हैं: “जिसे पत्नी मिलती है, उसे अच्छी चीज़ मिलती है, और प्रभु की कृपा प्राप्त होती है” (नीतिवचन 18:22), और “घर और धन-दौलत तो पिता से विरासत में मिलते

हैं, लेकिन समझदार पत्नी प्रभु की ओर से मिलती है" (नीतिवचन 19:14)। जो लोग परमेश्वर को खुश करते हैं, उनके जीवन की पहचान यह होती है कि वे परमेश्वर द्वारा दी गई पत्नी के आशीर्वाद का विनम्रता से आनंद लेते हैं। परमेश्वर के वचन के अनुसार, वे अपनी पत्नियों से वैसे ही प्यार करते हैं जैसे यीशु कलीसिया से प्यार करते हैं। जो लोग परमेश्वर को खुश करते हैं—ठीक वैसे ही प्यार करते हुए जैसे यीशु कलीसिया पर खुश होते हैं—वे अपनी पत्नियों में आनंद लेते हैं और खुश होते हैं। क्या हम सच में अपने जीवनसाथी के साथ खुश रहते हैं और आनंद लेते हैं? क्या आप सच में अपने प्यारे जीवनसाथी के साथ खुशी-खुशी जीवन जी रहे हैं?

पिछले सोमवार को, जब मैं YMCA में कसरत कर रहा था, तो मैंने लॉकर रूम में एक 80 साल के अमेरिकी बुजुर्ग को दूसरे बुजुर्ग से बात करते हुए सुना। उन्होंने बताया कि जल्द ही उनकी शादी की 60वीं सालगिरह आने वाली है। दूसरे बुजुर्ग ने पूछा, "आजकल लोग शादी करते हैं, तलाक लेते हैं और फिर से शादी कर लेते हैं—आप अपनी पत्नी के साथ 60 साल तक कैसे रह पाए?" 80 साल के बुजुर्ग ने जवाब दिया, "मेरी पत्नी ने मेरे साथ बहुत सब्र से काम लिया।" फिर उन्होंने कहा, "हममें बहुत सी बातें एक जैसी हैं और हम एक-दूसरे पर भरोसा करते हैं..." उस बुजुर्ग की बातें सुनकर मेरा दिल भर आया। उन्हें अपनी पत्नी के सब्र को अपनी 60 साल की साथ-साथ जिंदगी का श्रेय देते हुए—और उनके बारे में इस तरह बात करते हुए सुनकर—मुझे उनके लिए उनके प्यार की झलक मिली। जैसा कि दूसरे बुजुर्ग ने कहा, आज बहुत से लोग शादी, तलाक और दोबारा शादी के दौर से गुजरते हैं। ऐसे सामाजिक चलन के बीच, एक ऐसे आदमी को देखना जो अपनी पत्नी के साथ 60 साल से रह रहा है और अब भी उससे प्यार करता है, मुझे सोचने पर मजबूर करता है: हमें अपने जीवनसाथी से *कैसे* प्यार करना चाहिए? मुझे नीतिवचन 5:18-19 के शब्द याद आते हैं: "तेरा स्रोत धन्य हो, और तू अपनी जवानी की पत्नी के साथ आनंद मना। एक प्यारी हिरणी, एक सुंदर हिरणी—उसका प्रेम तुझे हमेशा संतुष्ट करे, तू हमेशा उसके प्यार में खोया रहे।" हमें हमेशा अपने जीवनसाथी की बाहों में संतोष पाना चाहिए। अगर हम ऐसा नहीं करते हैं, तो हमारी नज़रें दूसरी महिलाओं की ओर भटकेंगी, जिससे हम उन्हें चाहने लगेंगे और आखिरकार बेवफाई और व्यभिचार में पड़ जाएंगे।

आखिर में, चौथा बिंदु: जो लोग परमेश्वर को पसंद आते हैं, वे पूरी लगन और ताकत से काम करते हैं। आज के वचन, उपदेशक 9:10 को देखिए: "जो कुछ भी करने के लिए तेरा हाथ पाए, उसे अपनी पूरी ताकत से कर,

क्योंकि मृतकों के लोक में, जहाँ तू जा रहा है, न तो कोई काम होता है, न कोई योजना बनती है, न कोई ज्ञान होता है और न ही कोई समझदारी।" पादरी वियर्सबे के अनुसार, यहूदी लोग काम को श्राप नहीं, बल्कि परमेश्वर द्वारा सौंपी गई एक ज़िम्मेदारी मानते थे। दूसरे शब्दों में, वे अपने काम को ईश्वरीय बुलाहट की भावना से करते थे। परमेश्वर के सेवकों के रूप में, उन्होंने ईमानदारी से उन कामों को पूरा किया जो परमेश्वर ने उन्हें सौंपे थे। इस नज़रिए से देखें तो राजा सुलैमान हमें सलाह देते हैं: "काम ढूँढ़ो और उसे पूरी लगन से करो," और "जब तक तुम काम कर सकते हो, तब तक अपना सबसे अच्छा काम करो।" राजा सुलैमान हमें कड़ी मेहनत करने के लिए क्यों कहते हैं? क्योंकि वह रात जल्द ही आएगी जब हम और काम नहीं कर पाएँगे। जब तक हम इस दुनिया में हैं और प्रभु का काम कर रहे हैं, हमें खुशी-खुशी काम का आनंद लेना सीखना चाहिए। अगर हम काम करते समय—चाहे अपनी नौकरी में हों या चर्च में—लगातार शिकायतें और बड़बड़ाहट करते रहें, तो यह कितना दुखद होगा! खासकर, बिना किसी स्पष्ट बुलाहट के—यानी काम को परमेश्वर की दी हुई ज़िम्मेदारी न मानकर (जैसा कि यहूदी लोग मानते थे)—पूरी लगन से काम करना मुश्किल होगा और काम का आनंद लेना तो नामुमकिन ही होगा। हमें प्रेरित पौलुस की तरह ही ज़िम्मेदारी का एहसास होना चाहिए, जैसा कि नए नियम में बताया गया है। चाहे हम अपनी नौकरी में काम कर रहे हों या चर्च—मसीह की देह—की सेवा कर रहे हों, हमें परमेश्वर से मिली ज़िम्मेदारी वाली सोच रखनी चाहिए। अगर हमें ज़िम्मेदारी और बुलाहट का स्पष्ट एहसास हो, तो हम अपने काम पूरी लगन और खुशी के साथ कर पाएँगे। ऐसे ही लोगों के काम को परमेश्वर खुशी-खुशी स्वीकार करते हैं। मुझे उम्मीद है कि हम—आप और मैं—ऐसे लोग बनेंगे जो ज़िम्मेदारी की भावना के साथ, जब तक हमारे पास ताकत है, तब तक हमें सौंपे गए कामों को पूरी लगन से करेंगे।

हमें किस तरह के लोग बनना चाहिए? हमें ऐसे लोग बनना चाहिए जिन्हें परमेश्वर खुशी-खुशी स्वीकार करें। इसके लिए, हमें परमेश्वर का भय मानना चाहिए और उनके वचन का पालन करना चाहिए। उनका वचन हमें खुशी और आनंद के साथ खाने-पीने के लिए कहता है (वचन 7)। यह हमें पवित्रता और खुशी का जीवन जीने का निर्देश भी देता है (वचन 8)। इसके अलावा, हमें अपने प्रिय जीवनसाथी के साथ खुशी से रहना चाहिए (वचन 9)। जब तक हम काम कर सकते हैं, हमें पूरी ताकत और लगन से काम करना चाहिए (वचन 10)। आइए हम सब ऐसे लोग बनें जो परमेश्वर को प्रसन्न करें।

सही समय और मौका

[सभोपदेशक 9:11-12]

पिछले हफ्ते, मुझे CNN की वेबसाइट पर एक दिलचस्प लेख मिला। इसमें बताया गया था कि हार्वर्ड यूनिवर्सिटी कैम्पस के एक अपार्टमेंट में रहने वाले 35 साल के मिशेल हेइसमैन नाम के व्यक्ति ने शनिवार, 18 सितंबर—जो यहूदियों का प्रायश्चित का दिन 'योम किप्पुर' था—को सुबह करीब 11:00 बजे आत्महत्या कर ली। अपनी जान देने से पहले, उसने 1,905 पत्रों का एक सुसाइड नोट लिखा। बताया जाता है कि उस नोट में सुकरात, न्यूटन और आइंस्टीन जैसी हस्तियों का जिक्र था और आज़ादी, शून्यवाद (nihilism), ईश्वर, यहूदी धर्म, यहूदी प्रतीकों, यहूदी IQ और एंग्लो-सैक्सन के इतिहास जैसे विषयों पर चर्चा की गई थी। हालाँकि मैंने पूरा लेख नहीं पढ़ा, लेकिन ज़िंदगी के बारे में उसकी एक बात ने मुझे गहराई से प्रभावित किया, और मैं उसे आपके साथ साझा करना चाहता हूँ: "ज़िंदगी बेमतलब है।" न्यूज़ आर्टिकल में यह पढ़कर मुझे तुरंत सभोपदेशक 1:2 के शब्द याद आ गए: "बेमतलब! बेमतलब! पूरी तरह बेमतलब! सब कुछ बेमतलब है।" मुझे उस व्यक्ति के बारे में पढ़कर दुख हुआ जिसने—अपनी जान लेने के काम के दौरान ही—ऐसे शब्द लिखे जो पहले से ही बाइबल में लिखे हुए थे। मेरे दुख का कारण यह था कि, भले ही उसे ज़िंदगी की निरर्थकता का एहसास हो गया हो, लेकिन उसने यीशु में उसका असली मतलब जाने बिना ही अपनी ज़िंदगी खत्म कर ली। अगर उसे यीशु में वह मतलब मिल जाता, तो मुझे यकीन है कि वह आत्महत्या नहीं करता; इसके बजाय, वह अपनी मिली हुई ज़िंदगी का भरपूर इस्तेमाल करता और प्रभु के लिए जीता। मैं यह भी सोचता हूँ कि अगर उसे मरने से पहले यीशु में ज़िंदगी का मतलब समझ आ जाता और वह प्रभु के लिए एक सार्थक ज़िंदगी जीता, तो उसकी मौत निश्चित रूप से बेकार

नहीं जाती। बल्कि, वह प्रभु में एक संत की मौत का अनुभव कर सकता था—एक ऐसी मौत जो परमेश्वर की नज़र में अनमोल होती है।

हाल ही में, मैं "सही समय" (timing) के विचार पर सोच-विचार कर रहा हूँ। खास तौर पर, मैं इस बात पर सोच रहा हूँ कि किसी पीड़ित प्रियजन को बचाने की कोशिश कब रोक देनी चाहिए और इसके बजाय उन्हें शांति से इस दुनिया से विदा होने देना चाहिए। ऐसा मेरे प्यारे ससुरजी की वजह से है। उनके इलाज करने वाले डॉक्टर ने संकेत दिया है कि अब अंत की तैयारी करने का समय आ गया है। मेडिकल नज़रिए से, सलाह यही है कि यह मान लिया जाए कि अब और कुछ नहीं किया जा सकता और उन्हें हॉस्पिस प्रोग्राम में भेज दिया जाए, जहाँ वे अपने आखिरी दिनों तक आराम से रह सकें। फिर भी, मेरी प्यारी सास अपनी तरफ़ से हर मुमकिन कोशिश कर रही हैं। इस स्थिति ने मुझे सही समय के बारे में सोचने पर मजबूर किया है। बेशक, कोई भी उस समय का बिल्कुल सही-सही अंदाज़ा नहीं लगा सकता। यहाँ तक कि जब डॉक्टर हार मान लेने और आखिरी समय की तैयारी करने की सलाह देते हैं, तब भी हममें से जो लोग यीशु पर विश्वास करते हैं, वे चंगा करने वाले परमेश्वर पर भरोसा रखते हुए प्रार्थना करना जारी रख सकते हैं। हम इस तरह प्रार्थना करते हैं क्योंकि हमेशा यह संभावना रहती है कि परमेश्वर उनकी जान बचाने का फैसला कर सकते हैं। इसका एक बड़ा उदाहरण तब मिलता है जब दाऊद ने उपवास किया और प्रार्थना की, जबकि बतशेबा के साथ व्यभिचार से पैदा हुआ उसका पहला बच्चा बीमार था। हालाँकि दाऊद को नबी नाथन के ज़रिए परमेश्वर का संदेश साफ़-साफ़ मिल चुका था— "क्योंकि ऐसा करके तुमने प्रभु के दुश्मनों को उसका घोर अपमान करने का मौका दिया है, इसलिए तुमसे पैदा हुआ बेटा ज़रूर मरेगा" (2 शमूएल 12:14)—फिर भी उसने उपवास किया और बच्चे के लिए परमेश्वर से गिड़गिड़ाकर विनती की (पद 16)। उसने इस तरह विनती क्यों की? दाऊद 2 शमूएल 12:22 में इसका कारण बताता है: "उसने कहा, 'जब तक बच्चा ज़िंदा था, मैंने उपवास किया और रोया, क्योंकि मैंने सोचा, 'कौन जाने? शायद प्रभु मुझ पर दया करे और बच्चे को जीने दे।''"

सभोपदेशक 9:11 के आखिरी हिस्से में—जो आज हमारा मुख्य वचन है—राजा सुलैमान कहते हैं, "क्योंकि समय और संयोग सभी के साथ होते हैं।" इस बात का असली मतलब क्या है? इसका मतलब समझने से पहले, हमें यह जानना होगा कि यहाँ "संयोग" (chance) शब्द का कोरियाई अनुवाद असल में गलत है (पार्क युन-सन के अनुसार)। हम ईसाइयों के लिए, जो परमेश्वर की सर्वोच्च सत्ता पर विश्वास करते हैं, "संयोग" या "इत्तेफ़ाक़"

जैसी कोई चीज़ नहीं होती। सब कुछ परमेश्वर की सर्वोच्च सत्ता और उसकी देखरेख में होता है; कुछ भी महज़ इत्तेफ़ाक से नहीं होता। हमारा मानना है कि सब कुछ परमेश्वर की सर्वोच्च इच्छा के अनुसार होता है। इसीलिए मैं व्यक्तिगत रूप से "गुड लक" (अच्छी किस्मत) जैसे वाक्यांश को नहीं मानता। अगर आप कोरिया में 'हपडोंग' (Hapdong) ग्रुप द्वारा इस्तेमाल किए जाने वाले 'रिवाइज़्ड न्यू कोरियन स्टैंडर्ड वर्ज़न' (RNKSV) को देखें, तो उपदेशक 9:11 में लिखा है: "...क्योंकि समय और *मौका* सभी के साथ होता है।" RNKSV में इस शब्द का अनुवाद "संयोग" (coincidence) के तौर पर नहीं, बल्कि "मौके" (opportunity) के तौर पर किया गया है। मेरा मानना है कि यह अनुवाद ज़्यादा सही है। तो, राजा सुलैमान यहाँ किस "मौके" (या "चांस") की बात कर रहे हैं? नेवर (Naver) के कोरियन शब्दकोश के अनुसार, "मौके" का मतलब है "कुछ करने के लिए सही समय या अवसर।" इसी तरह, नेवर का हंजा (चीनी अक्षर) शब्दकोश इसे "उम्मीद किया गया पल—काम करने का सही समय" बताता है। जब हम मिले मौकों का फ़ायदा उठाते हैं और काम करते हैं, तो हम क्या हासिल करना चाहते हैं? क्या वह सफलता नहीं है? तो, ऐसे मौके का इंतज़ार करते समय किसी को क्या करना चाहिए? तैयारी करनी चाहिए। आने वाले मौके का पूरा फ़ायदा उठाने और सफलता पाने के लिए, इंसान को तैयारी के तौर पर अपनी काबिलियत को सक्रिय रूप से बढ़ाना चाहिए।

आज के हिस्से, उपदेशक 9:11 में, राजा सुलैमान पाँच तरह के लोगों की बात करते हैं जो तैयार या काबिल हैं। हम उन्हें ऐसे लोगों के तौर पर बता सकते हैं जो अपनी काबिलियत को निखारकर ज़िंदगी के मौकों के लिए खुद को तैयार करते हैं:

(1) पहले हैं "तेज़ दौड़ने वाले।" तेज़ दौड़ने वाले क्या चाहते हैं? ज़ाहिर है, वे दौड़ में सबसे पहले आना चाहते हैं। ऐसा करने के लिए, उन्हें और तेज़ी से दौड़ने की ट्रेनिंग करनी होगी—किसी भी दूसरे से ज़्यादा तेज़ी से। जब दौड़ने का मौका आता है, तो उन्हें अपना सब कुछ झोंक देना चाहिए और फ़िनिश लाइन की तरफ़ तेज़ी से दौड़ना चाहिए। क्यों? ताकि वे लाइन को सबसे पहले पार कर सकें और जीत हासिल कर सकें।

(2) दूसरे हैं "योद्धा।" योद्धा क्या चाहते हैं? ज़ाहिर है, वे लड़ाई में जीत चाहते हैं। युद्ध जीतने के लिए, सैनिकों को सच में बहादुर होना चाहिए; ऐसा करने के लिए बहुत ज़्यादा ट्रेनिंग की ज़रूरत होती है।

(3) तीसरे हैं "समझदार लोग।" समझदार लोगों को अपने पास मौजूद ज्ञान को असल ज़िंदगी में सही ढंग से इस्तेमाल करना चाहिए, ताकि वे अपनी आजीविका और भलाई को बेहतर बना सकें। कोई भी सच में समझदार इंसान ऐसी ज़िंदगी नहीं जीना चाहेगा जिसमें वह ठीक से गुज़ारा भी न कर सके और उसके पास बेकार ज्ञान के अलावा कुछ न हो।

(4) चौथे हैं "परख रखने वाले" (discerning)। वे भी अपनी तेज़ बुद्धि का इस्तेमाल करके कड़ी मेहनत करने, पैसे कमाने और अमीर बनने की कोशिश करेंगे।

(5) पाँचवें नंबर पर "बुद्धिजीवी" आते हैं। वे अपनी कड़ी पढ़ाई से हासिल किए गए ज्ञान का इस्तेमाल करके बहुत से लोगों से पहचान और समर्थन पाने की कोशिश करेंगे।

लेकिन समस्या यह है कि जब ये पाँच तरह के तैयार और काबिल लोग मौके का फ़ायदा उठाते हैं और सफलता की उम्मीद में पूरी कोशिश करते हैं, तब भी नतीजे की कोई गारंटी नहीं होती। राजा सुलैमान ने उपदेशक 9:11 में कहा है: "मैंने फिर देखा कि इस दुनिया में—दौड़ में हमेशा तेज़ दौड़ने वाला ही नहीं जीतता, न ही लड़ाई में हमेशा ताकतवर की जीत होती है, न ही बुद्धिमान को हमेशा रोटी मिलती है, न ही समझदार को हमेशा दौलत मिलती है, और न ही हुनरमंद को हमेशा कामयाबी मिलती है; बल्कि समय और संयोग सभी के साथ होता है।" इन शब्दों का मतलब—कि सबसे तेज़ दौड़ने वाले ज़रूरी नहीं कि दौड़ जीतें और सबसे ताकतवर योद्धा ज़रूरी नहीं कि युद्ध में जीतें—यह है कि ये बातें इंसान की समझ और व्याख्या से परे हैं। दूसरे शब्दों में, ये घटनाएँ परमेश्वर के दखल से होती हैं, और इंसान पूरी तरह से इनकी व्याख्या या कारण नहीं बता सकता (पार्क युन-सन)। इसलिए, भले ही किसी व्यक्ति ने लक्ष्य पाने के लिए सभी ज़रूरी शर्तें पूरी कर ली हों, उसे घमंडी नहीं होना चाहिए, जैसे कि वह सिर्फ़ अपनी कोशिशों से सफलता पा सकता है। इंसान को हमेशा प्रभु की ओर देखना चाहिए (पार्क युन-सन)।

यह इंसान की फितरत है कि वह इस बात का घमंड करे कि उसने अपनी ताकत से सफलता हासिल की है। इसका एक बड़ा उदाहरण वह गर्व है जो हम अपनी ताकत और काबिलियत से बहुत सारी दौलत जमा करने पर महसूस करते हैं। इसीलिए व्यवस्थाविवरण 8:17-18 हमें बताता है: "तब तुम अपने मन में कहोगे, 'मेरी

ताकत और मेरे हाथों के ज़ोर ने मुझे यह दौलत दिलाई है।' और तुम अपने परमेश्वर यहोवा को याद रखोगे, क्योंकि वही तुम्हें दौलत कमाने की ताकत देता है, ताकि वह उस वाचा को कायम रख सके जिसकी उसने तुम्हारे पूर्वजों से कसम खाई थी, जैसा कि आज हो रहा है।" हम अपनी काबिलियत या हुनर की वजह से बहुत दौलत नहीं कमाते; बल्कि हम इसे इसलिए पाते हैं क्योंकि परमेश्वर उस वाचा को पूरा करता है जिसकी उसने इस्राएल के पूर्वजों से कसम खाई थी। दूसरे शब्दों में, हम दौलत तभी पा सकते हैं जब परमेश्वर हमें ऐसा करने की ताकत दे। इसीलिए प्रेरित याकूब कहते हैं, "असल में, तुम अपनी घमंडी योजनाओं पर डींगें मारते हो। ऐसी सारी डींगें मारना बुरा है" (याकूब 4:16)। हमें ऐसी घमंडी डींगें मारने से क्यों बचना चाहिए? इसलिए क्योंकि मुसीबत का एक दिन—जो पूरी तरह से अचानक और बिना सोचे-समझे आ सकता है—अचानक हमारे जीवन पर आ सकता है। आज के वचन, उपदेशक 9:12 को देखिए: "इसके अलावा, कोई नहीं जानता कि उसका समय कब आएगा: जैसे मछलियाँ बेरहम जाल में फँस जाती हैं, या पक्षी फंदे में आ जाते हैं, वैसे ही लोग बुरे समय में फँस जाते हैं जो अचानक उन पर आ पड़ता है।" इसका क्या मतलब है? इसका मतलब है कि भले ही हम पूरी लगन से तैयारी करें, कड़ी मेहनत करें, मौकों का फायदा उठाएँ और अपना सर्वश्रेष्ठ दें, फिर भी ऐसी घटनाएँ हो सकती हैं जिनकी हमने बिल्कुल भी उम्मीद नहीं की थी। यह अप्रत्याशित घटना क्या है? यह मुसीबत के दिन का अचानक आ पड़ना है। जैसे मछलियाँ मुसीबत के जाल में और पक्षी फंदे में फँस जाते हैं, वैसे ही मुसीबत का दिन—जिसका हमें अंदाज़ा नहीं होता और जो हमारे नियंत्रण से बाहर होता है—अचानक हम पर आ सकता है। तो फिर, हमें क्या करना चाहिए?

हमें याद रखना चाहिए। हमें याद रखना चाहिए कि हर चीज़ का एक समय होता है और धरती पर हर काम का एक मौसम होता है (उपदेशक 3:1-8)। हमें यह भी याद रखना चाहिए कि हर मामले का एक सही समय और तरीका होता है (8:6)। सबसे बढ़कर, जब मुसीबत का दिन अचानक आ पड़े, तब भी हमें यह सच नहीं भूलना चाहिए कि परमेश्वर हर चीज़ को उसके सही समय पर सुंदर बनाता है (3:11) (वियर्सबे)। भले ही हमारी ज़िंदगी में होने वाली घटनाएँ वैसी न हों जैसी हमने उम्मीद की थी—और इसके बजाय इतनी दर्दनाक और मुश्किल हों कि वे किसी मुसीबत जैसी लगें—फिर भी हमें प्रभु पर रखी अपनी उम्मीद नहीं छोड़नी चाहिए। हमें विश्वास करना चाहिए कि हमारी ज़िंदगी में जो कुछ भी हो रहा है, वह परमेश्वर के अधिकार में हो रहा है। इसके अलावा, हमें भरोसा रखना चाहिए कि परमेश्वर आखिरकार इन घटनाओं के ज़रिए सब कुछ सुंदर बना देगा। जब कोई

अचानक आई मुसीबत—इंसानी नज़रिए से—पूरी तरह अंधेरी और सुंदरता से रहित लगे, तब भी हमें विश्वास करना चाहिए कि जो परमेश्वर हमसे प्यार करता है, वह ऐसी मुसीबतों के ज़रिए भी भलाई करेगा और अपनी नज़र में चीज़ों को सुंदर बनाएगा। जब हम ऐसा करते हैं, तो हम परमेश्वर की महिमा देखेंगे, जो स्वयं ज्योति है।

बाइबल में, यीशु ने अक्सर कहा, "मेरा समय अभी नहीं आया है" (यूहन्ना 2:4; 7:6, 8, 30; 8:20; 12:4, 23, 27; 13:1; 17:1)। यीशु का "मेरा समय" कहने से क्या मतलब था? उस समय का मतलब है वह पल जब उन्होंने आपको और मुझे बचाने के लिए क्रूस पर अपनी जान दी। दूसरे शब्दों में, यीशु के उस समय का मतलब है वह पल जब वे परमेश्वर के पुत्र के रूप में अपनी महिमा प्रकट करेंगे। बाइबल वादा करती है कि यीशु मरे, फिर जी उठे, स्वर्ग गए और निश्चित रूप से वापस आएंगे। उस घटना का समय केवल परमेश्वर ही जानते हैं (मत्ती 24:36)। उस समय, परमेश्वर पूरी तरह से उद्धार करेंगे और आपकी, मेरी और इस अंधेरी दुनिया में रहने वाले परमेश्वर के सभी लोगों की ज़िंदगी को सुंदर बनाएं। मैं प्रार्थना करता हूँ कि हम सब उस दिन की उम्मीद और तैयारी के साथ जीएं।

“गरीब लेकिन बुद्धिमान”

[उपदेशक 9:13-18]

अगर आपसे ‘धन’ और ‘बुद्धि’ में से किसी एक को चुनने के लिए कहा जाए, तो आप किसे चुनेंगे? अगर आपको दोनों में से सिर्फ एक को चुनना हो, तो आप क्या चुनेंगे: ‘अमीर बनना’ या ‘गरीब रहकर बुद्धि पाना’? जब मैंने खुद से यह सवाल पूछा, तो मुझे पुराने नियम की 1 शमूएल के 25वें अध्याय में नबाल और अबीगैल की कहानी याद आई। जैसा कि आप जानते हैं, नबाल बहुत अमीर था। वह एक अमीर आदमी था जिसके पास तीन हज़ार भेड़ें और एक हज़ार बकरियाँ थीं (पद 2)। हालाँकि, वह न सिर्फ़ ज़िद्दी और बुरे कामों वाला था (पद 3), बल्कि एक बुरा (पद 17) और मूर्ख आदमी भी था (पद 25)। यहाँ तक कि उसकी पत्नी अबीगैल भी उसकी मूर्खता के बारे में जानती थी। इसलिए अबीगैल दाऊद के पास गई और कहा: “...हे मेरे प्रभु, इस बुरे आदमी नबाल पर ध्यान न दें। उसका नाम उसके लिए बिल्कुल सही है; उसका नाम नबाल है, और वह एक मूर्ख है...” (पद 25)। इसके उलट, उसकी पत्नी अबीगैल बुद्धिमान और सुंदर थी (पद 3)। जब उसने यह खबर सुनी कि दाऊद ने नबाल और उसके पूरे परिवार को नुकसान पहुँचाने का फैसला किया है क्योंकि उसके मूर्ख पति नबाल ने दाऊद की भलाई का बदला बुराई से दिया था (पद 21) (पद 17), तो उसने जल्दी से गधों पर रोटी, दाख-रस, भेड़ें और अनाज लादा (पद 18) और दाऊद के पास गई (पद 20) ताकि दाऊद को खून-खराबा करने और खुद बदला लेने से रोक सके (पद 33)। उस समय, दाऊद ने अबीगैल से कहा: “इस्राएल के परमेश्वर यहोवा की स्तुति हो, जिसने आज तुम्हें मुझसे मिलने के लिए भेजा है। तुम्हारी अच्छी समझ के लिए तुम्हें आशीष मिले...” (पद 32-33)। एक और हिस्सा जिस पर हम विचार कर सकते हैं, वह है उपदेशक 4:13-16। इस हिस्से में, राजा सुलैमान एक गरीब लेकिन बुद्धिमान नौजवान की तुलना एक अमीर लेकिन बूढ़े और मूर्ख राजा से करता है। उसका कहना है कि गरीबी या अमीरी, जवानी या बुढ़ापा—चाहे कोई लड़का हो या राजा—इससे कोई फ़र्क नहीं पड़ता;

असल में जो मायने रखता है, वह है बुद्धि। बाइबल के इन दो हिस्सों पर सोच-विचार करने पर, हमारे सामने चुनाव धन का नहीं, बल्कि बुद्धि का है। फिर भी, यहाँ एक सवाल है जो हमें खुद से पूछना चाहिए: “अगर बुद्धि चुनने के बावजूद, आप अमीर बनने के बजाय गरीब रह जाते हैं, और पहचाने जाने और तारीफ़ पाने के बजाय दूसरों द्वारा ठुकरा दिए जाते हैं, तो आप क्या करेंगे? क्या आप तब भी धन के बजाय बुद्धि को ही चुनेंगे?”

आज के पाठ, उपदेशक 9:13 में, राजा सुलैमान कहते हैं: “मैंने सूरज के नीचे बुद्धि का यह उदाहरण भी देखा जिसने मुझे बहुत प्रभावित किया।” बुद्धि का वह कौन-सा उदाहरण है जिसे सुलैमान ने देखा और जिसे इतना महत्व दिया? यह एक छोटे, कम आबादी वाले शहर की कहानी है जिसे एक शक्तिशाली राजा ने घेर लिया था और उसके खिलाफ़ घेराबंदी की बड़ी तैयारियाँ की थीं (पद 14); शहर के अंदर एक “गरीब बुद्धिमान व्यक्ति” ने अपनी बुद्धि से उसे बचा लिया। राजा चाहे कितना भी महान क्यों न हो—भले ही वह एक छोटे शहर पर हमला करने के लिए घेराबंदी की भारी तैयारियाँ करे—कोई भी नतीजे की गारंटी नहीं दे सकता (9:11-12)। हालाँकि आम समझ यह कहती है कि एक शक्तिशाली राजा स्वाभाविक रूप से एक छोटे शहर को जीत लेगा और युद्ध में विजयी होगा, लेकिन राजा सुलैमान बताते हैं कि एक छोटा शहर—जिसमें बहुत कम लोग रहते हैं—असल में जीत सकता है। यह कैसे संभव है? यह एक “गरीब बुद्धिमान व्यक्ति” की वजह से होता है। उपदेशक 9:15 को देखें: “अब उसमें एक गरीब बुद्धिमान व्यक्ति मिला, और उसने अपनी बुद्धि से शहर को बचा लिया...” राजा सुलैमान ने “सूरज के नीचे” देखा कि एक अमीर और शक्तिशाली राजा को भी एक गरीब बुद्धिमान व्यक्ति हरा सकता है। इसका एक मुख्य उदाहरण 2 शमूएल 20:14-22 में मिलता है। जब इस्राएल के शहर आबेल को योआब की सेना ने घेर लिया, तो शहर की एक बुद्धिमान महिला ने योआब से समझदारी से बात की और शहर को बचा लिया। तो फिर, राजा सुलैमान—जो खुद एक बुद्धिमान व्यक्ति थे—इस उदाहरण के माध्यम से क्या मुख्य संदेश देना चाहते हैं? उपदेशक 9:16 का पहला भाग देखें: “इसलिए मैंने कहा, ‘बुद्धि ताकत से बेहतर है...” बात बस इतनी है कि बुद्धि ताकत से श्रेष्ठ है। पद 18 देखें: “बुद्धि युद्ध के हथियारों से बेहतर है...” राजा सुलैमान कहते हैं कि बुद्धि हथियारों से कहीं बढ़कर है। हालाँकि युद्ध में ताकत और हथियार बहुत ज़रूरी हैं, लेकिन समझदारी के बिना जीत नहीं मिल सकती, चाहे ताकत कितनी भी ज़्यादा हो या हथियार कितने भी बेहतरीन हों। समझदारी, ताकत और हथियारों से कहीं ज़्यादा ज़रूरी है। इसलिए, नीतिवचन (Proverbs) का लेखक कहता है: “समझदारी सबसे ज़रूरी है; इसलिए समझदारी हासिल करो। भले ही इसके लिए तुम्हें अपना

सब कुछ दांव पर लगाना पड़े, समझ हासिल करो” (नीतिवचन 4:7)। राजा सुलैमान भी कहते हैं: “मूर्खों के शासक की चिल्लाहट से कहीं ज़्यादा समझदार लोगों की शांत बातों पर ध्यान देना चाहिए” (सभोपदेशक 9:17)। हमें मूर्खों के नेता की चिल्लाहट के बजाय समझदार लोगों की शांत बातें सुननी चाहिए।

लेकिन, समस्या क्या है? हालांकि समझदारी ताकत और हथियारों से बेहतर है, राजा सुलैमान ने ऐसी चीज़ें देखीं जिन्हें समझना या जिनकी उम्मीद करना मुश्किल था। ऐसी दो हैरान करने वाली बातें हैं:

पहली बात, आज के पाठ में आयत 16 का बाद वाला हिस्सा देखिए: “...गरीब की समझदारी को तुच्छ समझा जाता है, और उसकी बातों पर कोई ध्यान नहीं देता।”

राजा सुलैमान ने जो देखा—जिसे न तो वे समझ पाए और न ही समझा पाए—वह यह था कि जब कोई गरीब समझदार व्यक्ति कोई महान काम करता है, जैसे किसी शहर को बचाना, तो अक्सर उसे उचित सम्मान नहीं मिलता और इसके बजाय उसे ठुकरा दिया जाता है (आयत 16) (वियर्सबे)। आपको क्या लगता है, ऐसा क्यों होता है? ऐसा क्यों है कि एक गरीब समझदार व्यक्ति, किसी शहर को बचाने का शानदार काम करने के बाद, न केवल लोगों से सम्मान पाने में नाकाम रहता है, बल्कि उसे दरकिनार भी कर दिया जाता है? मैंने नीतिवचन की किताब में इसका कारण ढूंढा: “गरीबों से तो उनके पड़ोसी भी दूर रहते हैं, लेकिन अमीरों के बहुत सारे दोस्त होते हैं” (14:20); “दौलत से बहुत सारे दोस्त बनते हैं, लेकिन गरीब का दोस्त उसे छोड़ देता है” (19:4)। लोग उस गरीब समझदार व्यक्ति का सम्मान करने के बजाय उसे क्यों ठुकरा देते हैं जिसने उन्हें और उनके शहर को बचाया था? इसका सीधा सा कारण यह है कि वह गरीब है। अगर वह समझदार व्यक्ति अमीर होता, तो शायद बहुत से लोग उससे दोस्ती करना चाहते, उसकी तारीफ़ करते और उसकी बातों पर ध्यान देते; वे निश्चित रूप से उसका अनादर या उसे ठुकराते नहीं। राजा सुलैमान ने कहा कि हालाँकि बुद्धि, ताकत और हथियारों से कहीं बेहतर है, फिर भी इस दुनिया में एक और ऐसी बात है जिसे समझना या जिसकी उम्मीद करना मुश्किल है—जिसका ज़िक्र आयत 18 के दूसरे हिस्से में किया गया है: “...लेकिन एक पापी बहुत-सी अच्छाई को बर्बाद कर देता है।”

इसका क्या मतलब है? उपदेशक 10:1 में कुछ जानकारी मिलती है: "मरी हुई मक्खियाँ इत्र बनाने वाले के मरहम में बदबू पैदा कर देती हैं; ठीक वैसे ही, थोड़ी सी मूर्खता बुद्धिमानी और सम्मान पर भारी पड़ जाती है।" इसका मतलब है कि बुद्धिमानी को आसानी से खत्म किया जा सकता है, जैसे एक छोटी सी गलती मूर्खता की बदबू को बुद्धिमानी की खुशबू पर हावी कर सकती है (10:1) (कार्सन)। दूसरे शब्दों में, मूर्खता के एक ही काम से बुद्धिमानी की बड़ी कीमत खत्म हो सकती है (वाल्वोल्ट)। इसका एक बड़ा उदाहरण उत्पत्ति की किताब में मिलता है: पहला इंसान, आदम। जब हम देखते हैं कि कैसे एक आदमी, आदम, की नाफरमानी (उल्लंघन) के कारण दुनिया में पाप आया—और पाप के ज़रिए मौत—तो हमें एहसास होता है कि एक पापी सचमुच बहुत सारी अच्छाई को खत्म कर सकता है (रोमियों 5:12)। हमें यहोशू के समय में आकान की कहानी में एक और उदाहरण मिलता है; आकान की नाफरमानी के एक काम की वजह से पूरे इज़राइल देश को 'आई' की लड़ाई में हार का सामना करना पड़ा (यहोशू 7)। यहाँ तक कि राजा दाऊद की नाफरमानी भी इज़राइल के लोगों पर मुसीबत ले आई (2 शमूएल 24), और उसके बेटे अबशालोम ने तख्तापलट कर दिया जिससे देश गृहयुद्ध में फँस गया (2 शमूएल 15 आदि) (वियर्सबे)।

इस तरह, एक व्यक्ति के मूर्खतापूर्ण कामों—खासकर नाफरमानी—के भयानक नतीजे हुए; आदम के मामले में, उसकी नाफरमानी पाप और उसके परिणामस्वरूप पूरी इंसानियत पर मौत ले आई। फिर भी, इस सबके बीच, परमेश्वर ने कुछ ऐसा किया जो इंसानी समझ से परे था: उसने अपने इकलौते बेटे, यीशु मसीह को दुनिया में भेजा ताकि वह क्रूस पर मरे और इस तरह आपको और मुझे बचाए। जैसे एक गरीब, बुद्धिमान आदमी ने कभी एक ताकतवर राजा से एक छोटे से शहर को बचाया था, वैसे ही यीशु—जो सच्ची बुद्धिमानी का रूप हैं—ने हमें मौत, शैतान और उसकी ताकतों से बचाया है। फिर भी, और भी हैरान करने वाली बात यह है कि, जैसे लोग उस गरीब, बुद्धिमान आदमी को भूल गए, वैसे ही वे यीशु मसीह, सच्ची बुद्धिमानी (नीतिवचन 8), को भूल रहे हैं। इसके अलावा, जैसे लोगों ने उस गरीब आदमी की बुद्धिमानी को तुच्छ समझा और उसकी बातों पर ध्यान देने से इनकार कर दिया, वैसे ही आज बहुत से लोग यीशु की बुद्धिमानी को तुच्छ समझते हैं और उनकी शिक्षाओं को सुनने से इनकार करते हैं। क्या आप इसे समझ सकते हैं? यीशु इस दुनिया में बहुत से लोगों को पाप से छुटकारा दिलाने आए थे, फिर भी उनके अपने लोगों ने उन्हें स्वीकार नहीं किया (यूहन्ना 1:12)। आज, परमेश्वर हमसे कहते हैं: "शिक्षा सुनो और बुद्धिमान बनो, और इसे नज़रअंदाज़ मत करो। धन्य है वह जो मेरी बात सुनता है, रोज़ मेरे दरवाज़ों पर नज़र रखता है और मेरे दरवाज़े के पास इंतज़ार करता है। क्योंकि जो मुझे

पाता है, वह जीवन पाता है और प्रभु की कृपा प्राप्त करता है; लेकिन जो मुझे नहीं पाता, वह अपनी ही आत्मा को नुकसान पहुँचाता है; जो मुझसे नफ़रत करते हैं, वे मौत से प्यार करते हैं" (नीतिवचन 8:33-36)। हमें यीशु को अपनाना चाहिए, जो सच्ची बुद्धि हैं। जब हम ऐसा करते हैं, तो हमें न केवल अनंत जीवन मिलेगा, बल्कि परमेश्वर की कृपा भी प्राप्त होगी। मैं प्रार्थना करता हूँ कि यह अनमोल कृपा हम सब पर बनी रहे।

आइए हम खुद को मूर्ख साबित न करें।

[सभोपदेशक 10:1-4]

आपको क्या लगता है कि इंसानी मूर्खता किस हद तक जा सकती है? दूसरे शब्दों में, आप इंसानी मूर्खता की चरम सीमा किसे मानते हैं? जब मैंने इस सवाल पर सोचा, तो नीतिवचन 26:11 के शब्द याद आए: "जैसे कुत्ता अपनी ही उल्टी को फिर से खा लेता है, वैसे ही मूर्ख अपनी मूर्खता को दोहराता है।" हो सकता है कि हमने किसी कुत्ते को अपनी उल्टी खाते न देखा हो, लेकिन हमने शायद कुत्ते को मल खाते देखा होगा। जब आप ऐसा देखते हैं तो क्या सोचते हैं? क्या आप उसे सचमुच मूर्ख कुत्ता नहीं मानते? इसी तरह, जब हम इंसान बार-बार वही मूर्खतापूर्ण काम करते हैं, तो परमेश्वर की नज़र में यह कितना मूर्खतापूर्ण लगता होगा! पुराने नियम की निर्गमन और न्यायियों की किताबों में इस्राएलियों का उदाहरण मिलता है; उन्होंने बार-बार शिकायत करने और परमेश्वर की बात न मानने का पाप किया। परमेश्वर को यह कितना मूर्खतापूर्ण लगा होगा! फिर भी, क्या आपको नहीं लगता कि यह हमारे अपने स्वभाव को दर्शाता है? हालाँकि, मेरा मानना नहीं है कि यह इंसानी मूर्खता की चरम सीमा है। मेरी नज़र में, मूर्खता की असली चरम सीमा भजन संहिता 14:1 में बताई गई है: "मूर्ख अपने मन में कहता है, 'कोई परमेश्वर नहीं है'..." मेरा मानना है कि सबसे बड़ी मूर्खता वह दिल है जो परमेश्वर के अस्तित्व पर विश्वास नहीं करता। जो दिल परमेश्वर को नहीं मानता, वह भ्रष्ट हो जाता है, और भ्रष्ट दिल से निकलने वाले काम घृणित होते हैं (पद 1)। आखिरकार, जो लोग कहते हैं कि कोई परमेश्वर नहीं है, वे इतने मूर्ख होते हैं कि न तो वे अच्छा काम करते हैं और न ही ऐसा करने में सक्षम होते हैं। मेरा मानना है कि आज हम जिस अंधेरी दुनिया में जी रहे हैं, वह सचमुच इसी तरह की चरम मूर्खता से भरी हुई है। लोग भ्रष्टाचार और घृणित कामों में लगे हुए हैं, और परमेश्वर के अस्तित्व या परम सत्य पर विश्वास करने के बजाय अपनी मनमानी कर रहे हैं। बहुतों ने समझदारी छोड़ दी है और मूर्खता के रास्ते पर

चल रहे हैं; ऐसा करके वे अपनी मूर्खता ही दिखा रहे हैं। दूसरे शब्दों में, यह मानकर कि कोई परमेश्वर नहीं है और उसी विश्वास के आधार पर जीकर, वे साबित कर रहे हैं कि वे कितने मूर्ख हैं।

आज के अंश, सभोपदेशक 10:3 में, राजा सुलैमान हमसे कहते हैं: "जब मूर्ख रास्ते पर चलते हैं, तो उनमें समझ की कमी होती है और वे सबको दिखाते हैं कि वे कितने मूर्ख हैं।" उनका कहना है कि मूर्ख अपनी ही मूर्खता की बातें करता है—यानी मूर्ख व्यक्ति अपनी मूर्खता खुद ही ज़ाहिर करता है। इस बात के बारे में आप क्या सोचते हैं? मैं इससे सहमत हूँ, क्योंकि जब मैं खुद को देखता हूँ, तो मुझे एहसास होता है कि कई बार मैं भी अपनी मूर्खता ज़ाहिर कर देता हूँ। इसका एक उदाहरण—जैसा कि नीतिवचन (Proverbs) के लेखक अक्सर बताते हैं—यह है कि मैं अक्सर अपनी बातों से ही अपनी मूर्खता ज़ाहिर कर देता हूँ। उदाहरण के लिए, नीतिवचन 10:19 में कहा गया है, "बहुत बातें करने से पाप से बचा नहीं जा सकता, लेकिन समझदार अपनी ज़बान पर काबू रखते हैं"; फिर भी, अपनी ज़बान पर काबू न रख पाने और बहुत ज़्यादा बोलने के कारण, मैं अक्सर परमेश्वर और दूसरों के सामने पाप कर बैठता हूँ और इस तरह अपनी मूर्खता ज़ाहिर कर देता हूँ। एक और उदाहरण नीतिवचन 14:29 में मिलता है: "जो धीरज रखता है वह बहुत समझदार होता है, लेकिन जो जल्दी गुस्सा हो जाता है, वह मूर्खता दिखाता है।" जब मैं इस शिक्षा पर सोचता हूँ, तो मुझे एहसास होता है कि मुझे जल्दी गुस्सा नहीं करना चाहिए; फिर भी, कई बार बे-सब्री मुझ पर हावी हो जाती है और मैं अपने गुस्से पर काबू नहीं रख पाता। परमेश्वर और दूसरों के खिलाफ पाप करके, मैं अक्सर साबित कर देता हूँ कि मैं कितना मूर्ख हूँ। नतीजतन, नीतिवचन 12:23 के सामने मेरे पास कहने के लिए कुछ नहीं होता: "समझदार इंसान ज्ञान को छिपाकर रखता है, लेकिन मूर्खों का दिल मूर्खता को ज़ाहिर करता है।"

आज, उपदेशक (Ecclesiastes) 10:1–4 के अंश पर ध्यान केंद्रित करते हुए, मैं उस सबक को समझना चाहता हूँ जो परमेश्वर हमें इस शीर्षक के तहत देते हैं: "आइए हम खुद को मूर्ख साबित न करें।" मेरी प्रार्थना है कि हम विनम्रता से इस सबक को स्वीकार करें, परमेश्वर के वचन का पालन करें, और एक मूर्ख के जीवन से—जो लगातार अपनी मूर्खता ज़ाहिर करता है—आगे बढ़कर समझदारी का जीवन जिएँ।

आज के अंश में परमेश्वर हमें क्या सबक देना चाहते हैं? कम से कम दो बातें हैं।

पहली बात, हमें इस अंश से यह सीखना चाहिए कि अपनी मूर्खता के किन पहलुओं को हमें ज़ाहिर या प्रदर्शित नहीं करना चाहिए। इसे दो तरह से संक्षेप में बताया जा सकता है:

(1) हमें ज़रा सी भी मूर्खता ज़ाहिर नहीं करनी चाहिए।

उपदेशक 10:1 को देखें: "मरी हुई मक्खियाँ इत्र बनाने वाले के मरहम से बदबू पैदा करती हैं; ठीक वैसे ही, थोड़ी सी मूर्खता समझदारी और सम्मान पर भारी पड़ जाती है।" हमारी एक भी मूर्खतापूर्ण हरकत, बुद्धिमानी की खुशबू पर मूर्खता की बदबू को हावी कर देती है (9:18; 10:1)। इसका एक बड़ा उदाहरण पहला इंसान, आदम है। एक आदमी, आदम की नाफ़रमानी से दुनिया में पाप आया, और उस पाप के कारण पूरी इंसानियत पर मौत आ गई। बुराई का ज़रा सा भी अंश इंसानियत को बहुत नुकसान पहुँचाता है (पार्क युन-सुन)। इसलिए, हमें बुराई या मूर्खता का कोई छोटा सा काम भी नहीं करना चाहिए। हमें मूर्खता की छोटी सी बात को भी हल्के में नहीं लेना चाहिए।

(2) हमें अपने शासक के खिलाफ़ बगावत नहीं करनी चाहिए।

आज का वचन, उपदेशक 10:4 देखें: "अगर शासक का गुस्सा तुम पर भड़क उठे, तो अपनी जगह न छोड़ो; क्योंकि शांति बड़ी-बड़ी गलतियों को शांत कर देती है।" राजा सुलैमान हमें सिखाते हैं कि जब कोई बुरा शासक हम पर गुस्सा करे, तब भी हमें अपनी जगह पर बने रहना चाहिए। दूसरे शब्दों में, अगर कोई बुरा शासक हमारे साथ अन्यायपूर्ण व्यवहार करे, तब भी हमें उस शासक के खिलाफ़ बगावत नहीं करनी चाहिए (पार्क युन-सुन)। हमें ऐसा क्यों करना चाहिए? कारण यह है कि "शांति बड़ी-बड़ी गलतियों को शांत कर देती है" (वचन 4)। इसका क्या मतलब है? यहाँ, "शांति" (या "नम्रता/धैर्य") के तौर पर अनुवादित शब्द का मूल हिब्रू अर्थ स्वास्थ्य—बीमारी या कमजोरी से मुक्ति—और "रिकवरी" (सुधार) दोनों को शामिल करता है। इसका मतलब है कि अगर कोई बुरा शासक गुस्सा करे और हमारे साथ अन्यायपूर्ण व्यवहार करे, और हम मन और शरीर से स्वस्थ रहें—बगावत न करें और धैर्य से सहें—तो हम उन कई पापों को करने से बच जाते हैं जो हम शायद कर बैठते (पार्क युन-सुन)। हमें आध्यात्मिक और शारीरिक स्वास्थ्य बनाए रखना चाहिए और अपने काम की जगह पर वरिष्ठ अधिकारियों के खिलाफ़ बगावत नहीं करनी चाहिए; हमें धैर्य और

सहनशीलता दिखानी चाहिए। चाहे कोई वरिष्ठ अधिकारी कितना भी अन्यायपूर्ण क्यों न हो, या हम पर कितना भी गुस्सा क्यों न करे और गलत व्यवहार क्यों न करे, हमें बदला नहीं लेना चाहिए। इस तरह, हमें खुद को बड़े और ज़्यादा पाप करने से रोकना चाहिए।

दूसरी और आखिरी बात, हमें आज के पाठ से उस सबक पर गौर करना चाहिए कि ऐसी मूर्खता को ज़ाहिर करने या दिखाने से कैसे बचा जाए।

सभोपदेशक 10:2 को देखिए: "बुद्धिमान का मन दाहिनी ओर झुकता है, लेकिन मूर्ख का मन बाईं ओर।" इसका क्या मतलब है? यह हमें सिखाता है कि हमारा मन बुद्धिमान होना चाहिए, और बुद्धिमान व्यक्ति का मन दाहिनी ओर झुकता है। दूसरे शब्दों में, हमारे पास एक बुद्धिमान व्यक्ति का मन होना चाहिए—ऐसा मन जो दाहिनी ओर झुका हो। पादरी वियर्सबे के अनुसार, प्राचीन दुनिया में, दाहिना हाथ ताकत और सम्मान का प्रतीक था, जबकि बायां हाथ कमजोरी और अस्वीकृति से जुड़ा था (मत्ती 25:33, 41)। इसलिए, यह बात कि बुद्धिमान व्यक्ति का मन दाहिनी ओर होता है, इसका मतलब है कि बुद्धिमान व्यक्ति सावधानी और ताकत के साथ अपने मन की रक्षा करता है। इसके विपरीत, यह बात कि मूर्ख का मन बाईं ओर होता है, इसका मतलब है कि जब अपने मन को नियंत्रित करने की बात आती है तो वे बाएं हाथ की तरह ही कमजोर होते हैं (पार्क युन-सन)। संक्षेप में, आज हमारे लिए सबक यह है कि हमें अपने मन की मजबूती से रक्षा करनी चाहिए, ठीक वैसे ही जैसे बुद्धिमान लोग करते हैं। इसीलिए नीतिवचन के लेखक कहते हैं: "सबसे बढ़कर, अपने मन की रक्षा करो, क्योंकि तुम जो कुछ भी करते हो, वह उसी से निकलता है" (नीतिवचन 4:23)। तो फिर, हम अपने मन की मजबूती से रक्षा कैसे कर सकते हैं?

(1) हमें सतर्क रहना चाहिए।

दोस्तों, अगर किसी शहर की दुश्मन के हमले से रक्षा करने वाला पहरेदार सो जाए तो उस शहर का क्या होगा? उस पर निश्चित रूप से कब्जा हो जाएगा। इसलिए, पहरेदार को जागते रहना चाहिए। इसी तरह, हमें आध्यात्मिक रूप से सतर्क रहना चाहिए। हमें जागते रहना चाहिए, संयमित रहना चाहिए और परमेश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए। और अपनी प्रार्थनाओं में, हमें परमेश्वर की सुरक्षा मांगनी चाहिए। हमें परमेश्वर की

बुद्धि भी मांगनी चाहिए। ऐसा इसलिए है क्योंकि जब परमेश्वर हमें बुद्धि देते हैं, तो हम आध्यात्मिक लड़ाई के बीच अपने मन की रक्षा करने में सक्षम हो जाते हैं।

(2) अपने मन की प्रभावी ढंग से रक्षा करने के लिए, हमें परमेश्वर के वचन का उपयोग करके अपनी आत्मा (मन) को चेतावनी देनी चाहिए।

शहर की रक्षा करने वाले पहरदार की भूमिका यह होती है कि जब दुश्मन हमला करे तो वह तुरही बजाए या निवासियों को चेतावनी देने के लिए कोई अन्य संकेत दे। इसी तरह, दिल—जो जीवन का स्रोत है—की रक्षा करने वाले पहरदारों के तौर पर, जब शैतान हमला करे तो हमें अपनी आत्मा को सावधान करना चाहिए। हमें यह चेतावनी कैसे देनी चाहिए? हमें परमेश्वर के वचन से अपनी आत्मा को सावधान करना चाहिए। जैसे भजनकार ने अपनी आत्मा से कहा था, "हे मेरी आत्मा, तू क्यों उदास है? तू मेरे भीतर क्यों परेशान है? परमेश्वर पर भरोसा रख, क्योंकि मैं अब भी उसकी स्तुति करूँगा, जो मेरा उद्धारकर्ता और मेरा परमेश्वर है" (भजन संहिता 42:5, 11; 43:5), वैसे ही जब हमारा दिल बेचैन या निराश हो, तो हमें भी खुद से ऐसी बातें कहनी चाहिए और परमेश्वर की ओर मुड़ना चाहिए। ऐसा करके, हम अपने दिल की अच्छी तरह से रक्षा कर पाएँगे।

हमें समझदार बनना चाहिए। समझदार लोग मूर्खता के करीब नहीं जाते; वे उससे दूर रहते हैं (वियर्सबे)। हमें अपनी नज़र में ज़रा सी भी मूर्खता से दूर रहना चाहिए, क्योंकि मूर्खता के ऐसे छोटे-छोटे काम हमें ऐसे पाप करने के लिए उकसा सकते हैं जो परमेश्वर की महान महिमा को धुंधला कर देते हैं। इसके अलावा, हमें अपनी तय की गई जगह पर अडिग रहना चाहिए। हमारा शासक चाहे कितना भी अन्यायपूर्ण क्यों न हो—भले ही वे हमें गुस्सा दिलाएँ या हमारे साथ गलत व्यवहार करें—हमें उनके खिलाफ़ नहीं उठना चाहिए। इस रवैये को बनाए रखने के लिए, हमें मज़बूती से अपने दिल की रक्षा करनी चाहिए। हमें सतर्क और संयमित रहना चाहिए, परमेश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए और उसके वचन से खुद को समझाना चाहिए। इसलिए, हमें खुद को मूर्ख साबित नहीं करना चाहिए, बल्कि यह दिखाना चाहिए कि हम समझदार हैं।

शांत रहें!

"अगर शासक का गुस्सा आप पर भड़क जाए, तो अपनी जगह न छोड़ें; शांति बड़ी-बड़ी गलतियों को भी शांत कर देती है" (उपदेशक 10:4)।

कल मैंने Yahoo News पर एक लेख पढ़ा जिसका शीर्षक था "Pastor Facing Maximum Sentence After Summary Indictment" (आरोप तय होने के बाद पादरी को अधिकतम सज़ा का सामना)। जियोंग (63) नाम के एक पूर्व पादरी पर उस चर्च में पूजा-पाठ में बाधा डालने का आरोप लगाया गया था जिसने उन्हें पहले निकाल दिया था; उन्होंने खाली बोतल से कुर्सी पर पीटा था और माइक्रोफ़ोन पर भजन गाए थे। यह विवाद सितंबर 2001 में उन्हें निकाले जाने से शुरू हुआ था—जब उन्होंने चर्च के बड़े अधिकारियों की मंजूरी के बिना एक एल्डर (बुजुर्ग सदस्य) को निकाल दिया था—जिसके बाद उन्होंने उस चर्च समूह को छोड़कर एक नया चर्च बनाया। चर्च के मालिकाना हक को लेकर तनाव तब और बढ़ गया जब उस समूह ने नए चर्च में एक दूसरा पादरी भेजा, जिससे यह घटना हुई। अदालत ने जियोंग को तीन साल की जेल की सज़ा सुनाई और उन्हें तुरंत हिरासत में लेने का आदेश दिया, यह कहते हुए कि, "पादरी होने और बाइबल की शिक्षा 'अपने दुश्मनों से भी प्यार करो' के बावजूद, मिस्टर जियोंग ने कोई पछतावा नहीं दिखाया।" अदालत ने आगे कहा, "उन्होंने केवल सांसारिक हितों को देखा, और एक पादरी—जिसे लोगों को सही रास्ता दिखाना चाहिए—ने ही आपराधिक कामों की अगुवाई की, इसलिए उन्हें कड़ी सज़ा मिलनी चाहिए।" (एक सहायक पादरी और चर्च के आठ सदस्यों को भी एक या दो साल की जेल की सज़ा सुनाई गई और हिरासत में ले लिया गया।) यह सचमुच एक अजीब और चौंकाने वाली घटना है।

कुछ ऐसी ही स्थिति उस प्रेस्बिटररी (चर्चों के समूह) में भी बनती दिख रही है जिससे हमारा चर्च जुड़ा है। प्रेस्बिटररी के एक बड़े चर्च में दो गुट बन गए हैं, और यह झगड़ा कानूनी लड़ाई में बदल गया है। हालाँकि

प्रेसिडेंसी ने सुलह कराने और शांति बहाल करने की कोशिश की, लेकिन उस चर्च के एक समूह ने, जो प्रेसिडेंसी के कामों से खुश नहीं था, उस समूह से अलग होने का फैसला किया। मुझे पूरी जानकारी नहीं है, लेकिन पिछले हफ्ते मैंने एक कोरियाई अखबार में एक आंतरिक झगड़े के बारे में रिपोर्ट देखी जो गुस्से के कारण लड़ाई में बदल गया—एक ऐसी स्थिति जिसमें पुलिस को भी दखल देना पड़ा। यह सचमुच शर्मनाक बात है।

वे क्यों लड़ते हैं? इसके कई कारण हो सकते हैं, लेकिन मेरा मानना है कि गुस्सा ही झगड़े की आग को भड़काता है, और अक्सर शामिल पक्षों को अदालत तक ले जाता है। आज का पाठ हमें कई सबक देता है कि गुस्से पर हमें कैसे प्रतिक्रिया देनी चाहिए। पहली बात जिस पर ध्यान देना चाहिए, वह यह है कि हमें गुस्से में भरे "शासक" को किस नज़रिए से देखना चाहिए।

यहाँ "शासक" का मतलब राजा हो सकता है, या व्यापक अर्थ में, कोई नेता, वरिष्ठ अधिकारी, पादरी या पति जो गुस्से में हो। उपदेशक 10:3 कहता है कि गुस्से में भरा "शासक" समझदारी की कमी के कारण अपनी ही मूर्खता ज़ाहिर करता है। समझदारी की यह कमी इसलिए होती है क्योंकि व्यक्ति परमेश्वर के वचन का पालन नहीं करता और उसके अनुसार जीवन नहीं जीता—एक ऐसी प्रक्रिया जो व्यक्ति के दिल को बड़ा बनाती है। दूसरे शब्दों में, ऐसा व्यक्ति बुद्धि के बजाय भावनाओं को ज़्यादा महत्व देता है। चूँकि वे अपनी भावनाओं को परमेश्वर के वचन से निर्देशित नहीं होने देते, इसलिए उनमें भावनाओं पर काबू रखने की कमी होती है। नतीजतन, वे जल्दी ही अपना गुस्सा निकाल देते हैं। नीतिवचन 25:28 कहता है, "जिस व्यक्ति का मन काबू में नहीं होता, वह उस शहर की तरह है जिसकी दीवारें टूट चुकी हों।" बाइबल ऐसे व्यक्ति का वर्णन करती है—जिसमें आत्म-नियंत्रण और समझदारी की कमी हो और जो आसानी से गुस्से में आ जाता हो—उसे मूर्ख बताती है जो अपनी ही मूर्खता को उजागर करता है।

दूसरी बात जिस पर ध्यान देना चाहिए, वह यह है कि गुस्से में भरे "शासक" की मौजूदगी में हमें कैसा व्यवहार करना चाहिए।

आज का वचन हमें बताता है, "अपनी जगह न छोड़ें।" इसका मतलब है कि चाहे "शासक" कितना भी बुरा क्यों न हो—और भले ही हमारे साथ अन्यायपूर्ण व्यवहार किया जाए—हमें उस "शासक" का विरोध नहीं करना चाहिए। इसका मतलब है कि जब कोई वरिष्ठ अधिकारी गुस्सा करे, तो हमें गुस्से में जवाब नहीं देना चाहिए। फिर भी, मैं मानता हूँ कि कई बार ऐसा हुआ है जब मेरी पत्नी के गुस्से में होने पर मुझे भी गुस्सा आ गया। यह मेरी अपनी मूर्खता को उजागर करता है और परमेश्वर के वचन की अवज्ञा करने के पाप को दर्शाता है। उपदेशक 8:3 हमें आज्ञा देता है: "राजा के सामने से हटने में जल्दबाज़ी न करें, और किसी बुरे काम पर अड़े न रहें।" दाऊद ने इसका उदाहरण पेश किया। हालाँकि दुष्ट राजा शाऊल उसे मार डालना चाहता था, फिर भी दाऊद ने शाऊल के खिलाफ़ कोई जवाबी कार्रवाई नहीं की क्योंकि वह परमेश्वर से डरता था। हमें किसी ऐसे "शासक" (जैसे पादरी, पति, वरिष्ठ अधिकारी या राष्ट्रपति) का विरोध नहीं करना चाहिए जो गुस्से में काम कर रहा हो।

तीसरी और आखिरी बात जिस पर ध्यान देना चाहिए, वह यह बहुमूल्य सीख है कि गुस्से में भरे "शासक" की मौजूदगी में हमें शांत और संयमित रहना चाहिए। कोरियाई बाइबिल में आयत 4 में *गोंगसुन* (आदर/विनम्रता) शब्द का इस्तेमाल किया गया है, जबकि अंग्रेज़ी अनुवादों में "कामनेस" (NIV) या "कम्पोज़र" (NASB) यानी शांति या संयम का इस्तेमाल किया गया है। संयमित व्यक्ति की आत्मा शांत पानी की तरह होती है। बाइबिल के अनुसार, ऐसे व्यक्ति का स्वभाव कोमल होता है। यही बुद्धिमान व्यक्ति की पहचान है। बुद्धिमान व्यक्ति जानता है कि अपने गुस्से पर कैसे काबू पाया जाए; वे "गुस्से में धीमे" होते हैं और "अपनी आत्मा पर काबू रखने वाले" होते हैं (नीतिवचन 16:32)। इसके अलावा, वे "शासक" के गुस्से को शांत करने वाले होते हैं। एक संयमित और बुद्धिमान व्यक्ति गुस्से वाले इंसान के क्रोध को शांत कर देता है (नीतिवचन 16:14)। यह कैसे संभव है? मुझे इसका जवाब नीतिवचन 25:15 में मिला: "धैर्य से शासक को मनाया जा सकता है, और कोमल जीभ हड्डी को भी तोड़ सकती है।" धैर्य और कोमल वाणी गुस्से से भरे व्यक्ति के क्रोध को शांत कर देती है।

हम ऐसे लोगों और हालात से घिरे हैं जो गुस्सा दिलाते हैं। हम ऐसे समाज में रहते हैं जहाँ भावनाएँ हर पल भड़कने को तैयार रहती हैं। यह बात सिर्फ़ समाज तक ही सीमित नहीं है; हम चर्च के अंदर भी—यहाँ तक कि पादरियों के बीच भी—गुस्से का भड़कना देखते हैं। हमें कैसी प्रतिक्रिया देनी चाहिए? चूँकि गुस्से वाला

व्यक्ति समझदारी की कमी के कारण अपनी मूर्खता ज़ाहिर करता है, इसलिए हमें बदले में गुस्सा नहीं करना चाहिए; इसके बजाय, हमें शांत रहना चाहिए और उनके गुस्से को शांत करने में मदद करनी चाहिए। हालाँकि, ऐसा करने के लिए हमें सबसे पहले अपने खुद के गुस्से पर काबू पाना होगा।

एक खास बुराई

[उपदेशक 10:5-7]

आजकल आप टीवी पर किस तरह के विज्ञापन देखते हैं? मैं अक्सर 2 नवंबर को होने वाले अमेरिकी मध्यावधि चुनावों (midterm elections) से जुड़े विज्ञापन देखता हूँ। इन चुनावी विज्ञापनों में, तीन खास विज्ञापन हैं जिन्होंने मेरा ध्यान खींचा है: कैलिफ़ोर्निया सीनेट और गवर्नर पद के लिए चुनाव, और—सबसे ज़रूरी—प्रस्ताव 19 (Proposition 19)। प्रस्ताव 19 में मेरी दिलचस्पी—सिर्फ़ विज्ञापनों ही नहीं, बल्कि खबरों को भी देखने के कारण—इसलिए है क्योंकि इसमें मारिजुआना (गांजा) से जुड़ा एक कानूनी बदलाव प्रस्तावित है, जिसे हम आम तौर पर एक नशीला पदार्थ मानते हैं। यहाँ कैलिफ़ोर्निया में, जहाँ मैं रहता हूँ, सीमित मात्रा में मनोरंजन के लिए मारिजुआना को कानूनी मान्यता देने की कोशिश चल रही है; हाल की खबरों से पता चलता है कि इसे कानूनी मान्यता देने के समर्थन में लगभग 40% लोग हैं, जबकि विरोध में लगभग 44% लोग हैं। प्रस्ताव 19 के अलावा, कैलिफ़ोर्निया में रहने के कारण स्वाभाविक रूप से मेरा ध्यान सीनेट और गवर्नर पद के चुनाव अभियानों पर भी जाता है। रिपब्लिकन और डेमोक्रेटिक दोनों उम्मीदवारों के टीवी विज्ञापन देखने पर, एक-दूसरे पर कीचड़ उछालने और छवि खराब करने वाले अभियान बहुत ज़्यादा दिखाई देते हैं। मैं यह इसलिए बता रहा हूँ क्योंकि मेरा मानना है कि कैलिफ़ोर्निया के निवासी होने के नाते, हमें यह पता होना चाहिए कि वे कौन से नेता हैं जो हमारे राज्य को भविष्य की ओर ले जाएँगे। मेरी यह सोच इसलिए है क्योंकि नेक नेताओं की नियुक्ति—चाहे देश के लिए हो या राज्य के लिए—बहुत ज़रूरी है। एक पादरी के तौर पर, मैं चर्च के अहम पदों पर अधिकारियों की नियुक्ति को बहुत महत्वपूर्ण मानता हूँ; इसलिए, नेताओं को चुनने की प्रक्रिया में गहरी दिलचस्पी लेना मेरे लिए स्वाभाविक है।

तो फिर, चर्च को किस तरह के नेताओं को नियुक्त करना चाहिए? हमारा चर्च ऐसे नेता को नियुक्त करना चाहता है जो खुद पर या लोगों पर नहीं, बल्कि मसीह पर केंद्रित हो। यहाँ, "मसीह-केंद्रित" का मतलब है ऐसा नेता जो यीशु मसीह को प्रभु मानता है और उनके वचन का पालन करता है। हमारे चर्च का विज़न ऐसे नेताओं को तैयार करना है जो आज्ञा का पालन करें—और ऐसा विनम्रता और ईमानदारी के साथ करें। हालाँकि, इस विज़न को पूरा करने में एक चुनौती चरित्र और जीवन में बदलाव की कमी है। मेरी निजी राय में, आज चर्च ऐसे बदलाव के बिना भी लोगों को आसानी से नेतृत्व के पदों पर नियुक्त कर देते हैं। दूसरे शब्दों में, अयोग्य लोगों को बिना सोचे-समझे एल्डर (बुजुर्ग), नियुक्त डीकन और सीनियर डीकनेस के तौर पर नियुक्त करके, चर्च अपनी ही व्यवस्था और शांति को बिगाड़ता है। मेरा मानना है कि हमारे प्रेस्बिटेरियन चर्चों में इस पापपूर्ण स्थिति की जड़ 'सेशन' (Session) में है—जो पादरियों और एल्डर्स (बुजुर्गों) से बनी मुख्य लीडरशिप बॉडी है। मुझ जैसे पादरी इसके लिए खास तौर पर जिम्मेदार हैं, और इसकी असली वजह हमारी समझदारी की कमी है।

आज के वचन, उपदेशक 10:5 में, राजा सुलैमान कहते हैं: "मैंने सूरज के नीचे एक बुराई देखी है—एक ऐसी गलती जो शासक की ओर से होती है।" "एक बुराई" के बारे में, हमने पहले उस खास बुराई पर विचार किया था जिसे सुलैमान ने इस दुनिया में देखा था, जैसा कि उपदेशक 6:1 में बताया गया है। वह बुराई लोगों पर डाले गए भारी बोझ से जुड़ी है: किसी को परमेश्वर से धन-दौलत और सम्मान मिल सकता है—दिल की हर चाहत पूरी हो सकती है—फिर भी उसे असल में उनका आनंद लेने की क्षमता नहीं मिलती, चाहे वह कितने भी लंबे समय तक जीवित रहे। इसके बजाय, परमेश्वर इन चीज़ों का आनंद उन्हें देता है जो उसे खुश करते हैं। इस खास बुराई को देखने से पहले, राजा सुलैमान ने उपदेशक 5:13-20 में एक "गंभीर बुराई" के बारे में बात की थी। और वह "गंभीर बुराई" और कुछ नहीं बल्कि मालिक का अपने ही नुकसान के लिए धन जमा करना है (वचन 13)। इसके अलावा, यह देखा गया कि मालिक ने अपने धन की रक्षा इस तरह से की जिससे उसे ही नुकसान पहुँचा, और आखिर में उसे बर्बादी का सामना करना पड़ा और सब कुछ खो दिया, जिससे उसके बच्चों के लिए कुछ भी नहीं बचा। यह कितनी भयानक त्रासदी है! जीवन खाली हाथ शुरू होता है और खाली हाथ खत्म होता है; धन से इतनी ज़ोर से क्यों चिपके रहना कि उससे खुद को ही नुकसान पहुँचे?

क्या फायदा अगर आखिर में बर्बादी आ जाए और सारा धन खो जाए? क्या हम भी इस दुनिया में रहते हुए इस तरह की गंभीर बुराई नहीं देखते हैं?

राजा सुलैमान ने इस दुनिया में कौन सी एक बुराई देखी? यह शासक की ओर से होने वाली एक गलती थी (10:5)। यहाँ शासक की "गलती" पर चर्चा करते समय, हम उपदेशक 10:4 को फिर से देख सकते हैं, जिस पर हमने पहले ही विचार किया है। आइए उपदेशक 10:4 को फिर से देखें: "यदि शासक का क्रोध तुम्हारे विरुद्ध भड़क उठे, तो अपना पद न छोड़ो; शांति बड़ी गलतियों को शांत कर देती है।" राजा सुलैमान कह रहे हैं कि भले ही कोई अन्यायपूर्ण शासक हमारे साथ अनुचित व्यवहार करे और हमारे क्रोध को भड़काए, फिर भी हमें उसके विरुद्ध खड़े होने के बजाय अपने पद पर बने रहना चाहिए। क्यों? क्योंकि अपने शासक का विरोध करके, हम परमेश्वर के विरुद्ध एक बड़ी गलती—यानी, एक बड़ा पाप—कर सकते हैं। आज के अंश, उपदेशक 10:5 में, राजा सुलैमान फिर से "गलती" की बात करते हैं। यह किसकी गलती है? यह शासक की ओर से होने वाली गलती है। तो, शासक की यह गलती क्या है? यह शासक की मूर्खता से उपजा निर्णय है। हम आयत 6 में ऐसे निर्णय का उदाहरण देखते हैं: "मूर्खता को ऊँचा स्थान दिया जाता है, जबकि धनी लोग नीची जगह पर बैठते हैं।" इसका क्या अर्थ है? इसका अर्थ है कि एक मूर्ख शासक मूर्खों को ऊँचे पदों या कार्यालयों में बिठाता है, जबकि "धनी" लोगों को नीची जगहों या कार्यालयों में रखता है (वियर्सबे)। "धनी" लोगों को नीची जगहों पर रखने के उल्लेख के संबंध में, हालाँकि हम वर्तमान में धनी लोगों को ऊँचा दर्जा रखने वाले के रूप में सोच सकते हैं—यहाँ तक कि कलीसिया के भीतर भी—लेकिन यहाँ "धनी" शब्द का अर्थ बुद्धिमान लोगों से है (वाल्वूड)। नीतिवचन 14:24 पर विचार करें: "बुद्धिमानों का धन उनका मुकुट है, लेकिन मूर्खों की मूर्खता केवल मूर्खता ही पैदा करती है।" जब मैं अधिकार वाले व्यक्ति द्वारा लिए गए इस मूर्खतापूर्ण निर्णय पर विचार करता हूँ, तो मैं सोचता हूँ कि किसी देश का क्या होगा यदि कोई अयोग्य राष्ट्रपति—अपनी मूर्खता के कारण—मूर्खों को ऊँचे पदों पर नियुक्त करे और बुद्धिमानों को नीची जगहों पर धकेल दे। यही बात किसी कंपनी पर भी लागू होती है। एक अयोग्य CEO न केवल कर्मचारियों के साथ अन्यायपूर्ण व्यवहार करता है और उनके क्रोध को भड़काता है, बल्कि—अपनी मूर्खता के कारण—मूर्खों को ऊँचे पदों पर और बुद्धिमानों को नीची जगहों पर भी बिठाता है। यही बात कलीसिया के लिए भी सच है। खासकर आज के हालात में, जब चर्च में अक्सर बिना सोचे-समझे नियुक्तियाँ की जाती हैं, मैं हमारे प्रेस्बिटेरियन माहौल के बारे में सोचता हूँ: क्या हमारे चर्च के सेशन कभी-कभी समझदारी की कमी दिखाते

हैं—यानी बेवकूफी भरा काम करते हैं—जब वे काबिल लोगों को अहम ज़िम्मेदारियाँ नहीं सौंपते, बल्कि अलग-अलग बहाने बनाकर उन्हें ऐसे लोगों को सौंप देते हैं जो बिल्कुल भी काबिल नहीं होते? मिसाल के तौर पर, चर्च की अहम ज़िम्मेदारियाँ ऐसे लोगों को सौंपी जानी चाहिए जिन्हें लीडरशिप—पास्टर और एल्डर—मंडली की तरफ़ से सिफारिश के लायक समझती है और जिनकी चर्च में इज़्ज़त है (रोमियों 16:1-6 देखें)। फिर भी, मेरा मानना है कि चर्च परमेश्वर की महिमा को कम करता है जब वह लापरवाही से "एल्डर," "ऑर्डेन्ड डीकन," या "सीनियर डीकनेस" जैसे पद ऐसे लोगों को दे देता है जिनमें ज़रूरी काबिलियत नहीं होती। चर्च में ऐसी बातें लगातार क्यों होती रहती हैं? क्या आपको इसका कारण पता है? हालाँकि यह निश्चित रूप से चर्च के लीडरों की बेवकूफी की वजह से होता है, लेकिन और साफ़ तौर पर कहें तो, यह "अधिकार रखने वाले व्यक्ति की मनमानी" (वोल्बोल्ड) से पैदा होता है। चर्च का उदाहरण लें तो, कोई कह सकता है कि मेरे जैसा पास्टर—अपनी मनमानी करते हुए—काबिल और समझदार लोगों को अहम ज़िम्मेदारियाँ नहीं सौंपता और इसके बजाय उन्हें बेवकूफ लोगों को सौंप देता है। किसी शासक की बेवकूफी अक्सर बहुत ज़्यादा झुकने या आसानी से बहक जाने की वजह से होती है (वियर्सबे)। जब कोई शासक बहुत ज़्यादा झुकता है, और उसमें ज़रूरी चरित्र और हिम्मत की कमी होती है, तो वह नियुक्तियों के बारे में बिल्कुल उल्टे-सीधे फैसले ले सकता है: बेवकूफों को ऊँचे पदों पर बिठाना और समझदारों को नीचे पदों पर रखना। चर्च के माहौल में, ऐसा तब हो सकता है जब लीडरशिप—जैसे पास्टर और एल्डर्स का बोर्ड—सही काम करने की हिम्मत नहीं जुटा पाती क्योंकि वे दूसरों की बातों में आसानी से आ जाते हैं।

इसका नतीजा क्या होता है? दूसरे शब्दों में, तब क्या होता है जब कोई राष्ट्रीय नेता—बेवकूफी में आकर, चाहे मनमानी की वजह से हो या बहुत ज़्यादा झुकने की वजह से—समझदार लोगों को ऊँचे पद पर नहीं पहुँचाता, बल्कि उन ऊँचे पदों को बेवकूफ लोगों को दे देता है? आज के वचन, उपदेशक 10:7 को देखें: "मैंने सेवकों को घोड़ों पर देखा है, जबकि राजकुमार सेवकों की तरह ज़मीन पर चल रहे हैं।" जब किसी शासक के बेवकूफी भरे कामों से ऐसी स्थिति पैदा होती है, तो देश की व्यवस्था बिगड़ जाती है, शांति खत्म हो जाती है, और देश मज़बूती से खड़ा नहीं रह पाता। ज़रा सोचिए: उस देश का क्या हाल होगा जहाँ नौकर घोड़ों पर सवार होकर सम्मान पाते हैं, जबकि राजकुमार—जिन्हें असल में घोड़ों पर सवार होना चाहिए और

सम्मान मिलना चाहिए—नौकरों की तरह ज़मीन पर चलने को मजबूर हैं? मेरा मानना है कि यह बात घर, काम की जगह और चर्च, तीनों पर समान रूप से लागू होती है। उदाहरण के लिए, ऐसे घर के बारे में सोचिए जहाँ पति मुखिया है, लेकिन पत्नी ऐसे व्यवहार करती है जैसे वही मुखिया हो; तो उस परिवार की व्यवस्था का क्या होगा? बाइबल साफ़ तौर पर पत्नियों को निर्देश देती है कि वे अपने पतियों का सम्मान करें और उनके अधीन रहें, और पति अपनी पत्नियों से प्रेम करें; फिर भी, अगर कोई पत्नी अपने पति का सम्मान नहीं करती—बल्कि अपनी और पति की भूमिकाओं को लेकर भ्रमित हो जाती है और खुद को घर का मुखिया मानकर सम्मान की मांग करती है—तो उस परिवार का क्या होगा? यही बात काम की जगह पर भी लागू होती है। एक कंपनी में प्रेसिडेंट और कर्मचारी होते हैं; अगर कोई कर्मचारी प्रेसिडेंट की कुर्सी पर बैठ जाए और सारा सम्मान पाए, जबकि प्रेसिडेंट कर्मचारी का काम करे, तो उस कंपनी का क्या हाल होगा? चर्च भी इससे अलग नहीं है। पास्टर, एल्डर और नियुक्त डीकन वाले चर्च में क्या होगा अगर लोग अपनी सही स्थिति और भूमिका को न पहचानें और अपनी सोच व कामों में मर्यादा लांघ जाएं? ऐसे परिवार, काम की जगहें और चर्च अपनी व्यवस्था और शांति खो देते हैं, और वे मज़बूती से टिक नहीं पाते। ठीक ऐसी ही गलती एक मूर्ख नेता की वजह से होती है। क्या आप अपने चर्च के पास्टर, अपनी कंपनी के प्रेसिडेंट या घर के मुखिया (पति या पिता) में ऐसी गलतियां देखते हैं?

इस हिस्से पर मनन करते हुए, मैंने खुद से पूछा, "परमेश्वर किसी देश के लोगों को ऐसे मूर्ख प्रेसिडेंट को चुनने की अनुमति क्यों देते हैं?" इसका कारण यह है कि परमेश्वर ने ऐसे मूर्ख नेता की गलतियों के ज़रिए देश का न्याय करने का फैसला किया है (पार्क युन-सन)। दूसरे शब्दों में, परमेश्वर क्रमशः मूर्ख प्रेसिडेंट, मूर्ख पास्टर या घर के मूर्ख मुखिया के ज़रिए देश, चर्च या परिवार का न्याय करते हैं। खास तौर पर, परमेश्वर किसी अयोग्य व्यक्ति को ऊंचे ओहदे पर बैठने की अनुमति देकर इन संस्थाओं को अनुशासित करते हैं—जिससे देश, चर्च या परिवार की व्यवस्था और शांति भंग हो जाती है। तो फिर, जब हमें यह सच्चाई पता चले तो हमें कैसा व्यवहार करना चाहिए? दूसरे शब्दों में, परिवार, चर्च या देश को चलाने वाले नेताओं को कैसा आचरण करना चाहिए? उन्हें अपनी मूर्खता को छोड़कर परमेश्वर से बुद्धि मांगनी चाहिए, ताकि वे समझदारी से सोचें और काम करें। खासकर, नेताओं को महत्वपूर्ण पद समझदार लोगों को सौंपने चाहिए, न कि जल्दबाजी में मूर्खों को; उन्हें यह पक्का करना चाहिए कि जो लोग सम्मान के हकदार हैं, उन्हें उचित सम्मान मिले। जब ऐसा होगा, तो राष्ट्र, कलीसिया और कार्यस्थल प्रभु में मज़बूती से खड़े रहेंगे और उसकी दी हुई शांति का

आनंद लेंगे। मेरी प्रार्थना है कि हमारे परिवार, कलीसियाएँ, और यह राष्ट्र व इसके लोग ऐसे समुदाय बन जाएँ।

सफलता के लिए बुद्धिमानी फायदेमंद है

[सभोपदेशक 10:8-11]

आप "सफलता" किसे मानते हैं? क्या आपको लगता है कि दुनिया जिस "सफलता" की बात करती है, वह बाइबल में बताई गई "सफलता" जैसी ही है? या आपको लगता है कि दोनों में फ़र्क है? अगर फ़र्क है, तो आपको क्या लगता है कि वे किस तरह अलग हैं? क्या आपने कभी खुद से ये सवाल पूछे हैं? व्यक्तिगत रूप से, मेरा मानना है कि दुनिया जिस "सफलता" की बात करती है और बाइबल जिस "सफलता" की बात करती है, वे अलग-अलग हैं। हालाँकि, समस्या यह है कि हम ईसाई भी बाइबल के नज़रिए के बजाय सफलता के दुनियावी नज़रिए से अंधे हो जाते हैं। टोनी नेल्सन की किताब *सक्सीड बाय गॉड्स स्टैंडर्ड्स* (Succeed by God's Standards) की भूमिका में यह अंश है: "हमारा इंसान-केंद्रित समाज सफलता के पीछे पागल है। हर कोई सफलता के बारे में बात करता है और उसे पाना चाहता है। फिर भी, इतने सारे लोग असफलता का कड़वा स्वाद चखने के बाद अपराध-बोध और पछतावे के साथ क्यों संघर्ष करते हैं? ऐसा इसलिए है क्योंकि वे बाइबल में बताई गई सफलता के असली अर्थ को नहीं समझते हैं। सच्ची सफलता धन-दौलत नहीं है। यह सिर्फ़ खुशहाल ज़िंदगी जीना नहीं है। सफलता कोई ऐसी चीज़ नहीं है जिसे हम हासिल करते हैं, बल्कि यह हम कौन हैं—हमारा अस्तित्व ही है। सफलता का मतलब यह नहीं है कि लोग हमसे प्रभावित हों, बल्कि यह है कि परमेश्वर हमसे खुश हों" (इंटरनेट)। क्या आपको यह बात समझ में आती है? क्या आप बाइबल के अनुसार सफलता का असली अर्थ जानते हैं? अपनी किताब में, टोनी नेल्सन तर्क देते हैं कि हालाँकि हम पर लगातार सफलता के दुनियावी नज़रिए की बौछार होती रहती है—जो इसे पैसे, प्रतिष्ठा, सम्मान और समृद्धि से जोड़ता है—हमें इसके बजाय परमेश्वर के मानकों पर आधारित सफलता का बाइबल-सम्मत नज़रिया अपनाना चाहिए। वे अपनी किताब में बाइबल-सम्मत सफलता के बारह सिद्धांतों के बारे में बताते हैं। सफलता की उन बारह कुंजियों में से पहली के बारे में वे कहते हैं: "पहला, सफलता की बाइबल-

सम्मत कुंजी हमारे नज़रिए को बदलने से शुरू होती है। सफलता की शुरुआत परमेश्वर का भय मानने और बुद्धिमानी हासिल करने से होती है। सफलता की नींव परमेश्वर की उपस्थिति पर पूरी तरह निर्भर रहने में है—इस हद तक कि यह यकीन कि हम उनके बिना कुछ नहीं कर सकते, हमारी ज़िंदगी को चलाए। क्योंकि हम परमेश्वर के स्वभाव और उनकी सर्वोच्च सत्ता को जानते हैं, इसलिए हम ज़िंदगी में खुद पर भरोसा करके एक भी कदम नहीं उठाते" (इंटरनेट)। इस बयान के बारे में आप क्या सोचते हैं? क्या आप सहमत हैं? उत्पत्ति 39 में यूसुफ की कहानी बताती है कि बाइबल के अनुसार सफलता में मुश्किलें और दुख भी शामिल हैं। बाइबल के अनुसार सच्ची सफलता वह है जिसे बाइबल "समृद्धि" (या "सफलता") कहती है, और उस समृद्धि का मुख्य आधार हमारे साथ परमेश्वर का होना है। यूसुफ इसका एक बेहतरीन उदाहरण है। उत्पत्ति 39 हमें बताती है: "प्रभु यूसुफ के साथ थे, और वह एक सफल व्यक्ति बन गया..." (वचन 2); "उसके मालिक ने देखा कि प्रभु उसके साथ थे और प्रभु ने उसके हाथों से किए गए सभी कामों को सफल बनाया" (वचन 3); "लेकिन प्रभु यूसुफ के साथ थे और उन्होंने उस पर दया की, और जेल के दारोगा की नज़र में उसे कृपा दिलाई" (वचन 21); "...क्योंकि प्रभु उसके साथ थे; और उसने जो कुछ भी किया, प्रभु ने उसे सफल बनाया" (वचन 23)। हम ईसाइयों के लिए सच्ची सफलता (समृद्धि) का यही रहस्य है। क्योंकि प्रभु—इममानुएल—हमारे साथ हैं, इसलिए हम इस दुनिया में भी सफलता (समृद्धि) का आनंद ले सकते हैं। इसीलिए भजनहार ने परमेश्वर से प्रार्थना की: "हे प्रभु, मैं विनती करता हूँ, अब बचा ले; हे प्रभु, मैं विनती करता हूँ, अब समृद्धि भेज" (भजन संहिता 118:25)। उपदेशक 10:10 के दूसरे भाग में, जिस पर हम आज विचार कर रहे हैं, राजा सुलैमान कहते हैं: "बुद्धिमत्ता सफलता लाती है।" यह कौन सी बुद्धिमत्ता है जो सफलता की ओर ले जाती है? यह वह बुद्धिमत्ता है जिसे हम अपने रोज़मर्रा के जीवन में अपनाते हैं; उपदेशक 10:8-11 में, राजा सुलैमान इसके दो खास पहलुओं पर ज़ोर देते हैं:

पहला, सफलता की ओर ले जाने वाली बुद्धिमत्ता हमें खतरे से बचाती है।

उपदेशक 10:8-9 को देखें: "जो कोई गड्ढा खोदता है, वह उसमें गिर सकता है; जो कोई दीवार तोड़ता है, उसे साँप काट सकता है। जो कोई पत्थर निकालता है, वह उनसे घायल हो सकता है; जो कोई लकड़ी चीरता है, उसे उनसे खतरा हो सकता है।" जिस दुनिया में हम रहते हैं, वह खतरों से भरी है। हमारे चारों ओर ऐसी चीज़ें हैं जो हमें मुसीबत में डाल सकती हैं। एक ऐसा ही खतरा तब पैदा होता है जब वे लोग जो हमें नुकसान

पहुँचाना चाहते हैं, हमें फँसाने के लिए जाल खोदते हैं। भजनकार ने यह अनुभव करने के बाद लिखा: “अहंकारियों ने मेरे लिए फंदा छिपाया है; उन्होंने रास्ते में रस्सियों का जाल बिछाया है और मेरे लिए जाल लगाए हैं” (भजन संहिता 140:5)। सचमुच, अहंकारी लोग हमें नुकसान पहुँचाने के लिए फंदे, रस्सियाँ, जाल और ट्रैप लगाते हैं। इन खतरों के बीच, मुझे नीतिवचन 23:27 की चेतावनी विशेष रूप से चिंताजनक लगती है: “क्योंकि व्यभिचारिणी एक गहरा गड्ढा है, और भटकने वाली पत्नी एक संकरा कुआँ है।” व्यभिचारिणी का जाल विशेष रूप से खतरनाक है क्योंकि बहुत से ईसाई इसमें फँस जाते हैं और परमेश्वर के विरुद्ध पाप करते हैं। इसका मूल कारण क्या है? यह हमारी अपनी मूर्खता है (नीतिवचन 7:7)। हमारी अपनी मूर्खता के कारण, जब व्यभिचारिणी गड्ढा खोदती है और मीठी बातों से हमें लुभाती है, तो हम—जैसे कसाईखाने ले जाए जाने वाले बैल—सीधे सज़ा की बेड़ियों में चले जाते हैं (पद 21–22)। ऐसी सच्चाई का सामना हमें कैसे करना चाहिए? उपदेशक 10:8–9 में, राजा सुलैमान गड्ढे खोदने, दीवारें गिराने, पत्थर निकालने और लकड़ी चीरने की बात करते हैं; ये काम उन लोगों के विनाशकारी इरादों को बताते हैं जो हमारा बुरा चाहते हैं—ऐसे काम जो हमें आसानी से खतरे में डाल सकते हैं। जब हमारे चारों ओर ऐसे खतरे घात लगाए बैठे हों और हमें गिराने की कोशिश कर रहे हों, तो हमें क्या करना चाहिए? जब हमारा बुरा चाहने वाले हमें खतरे में डालने के लिए गड्ढे खोदते हैं, दीवारें गिराते हैं, पत्थर निकालते हैं और लकड़ी चीरते हैं, तो हमें कैसा व्यवहार करना चाहिए? हमें परमेश्वर से पुकार करनी चाहिए। भजन संहिता 141:9 को देखें: “मुझे उन फंदों से बचा जो उन्होंने मेरे लिए बिछाए हैं, बुरे काम करने वालों के जाल से बचा।” भजनकार की तरह, हमें परमेश्वर से छुटकारा पाने की विनती करनी चाहिए। हमें प्रार्थना करनी चाहिए कि परमेश्वर हमें उन लोगों द्वारा लगाए गए जालों से बचाए जो हमारा बुरा चाहते हैं। इसके अलावा, हमें अपनी मूर्खता को त्याग देना चाहिए और परमेश्वर से बुद्धि मांगनी चाहिए। क्योंकि जब हमें परमेश्वर की बुद्धि मिलती है, तो हम उन लोगों द्वारा बिछाए गए जालों से बचने में सक्षम हो जाते हैं जो हमें नुकसान पहुँचाना चाहते हैं। नीतिवचन 13:14 और 2:16 पर विचार करें: “बुद्धिमान की शिक्षा जीवन का स्रोत है, जो मनुष्य को मृत्यु के फंदों से बचाती है” (13:14)। “बुद्धि तुम्हें पराई स्त्री से, और उस बहकाने वाली स्त्री से बचाएगी जो अपनी लुभावनी बातों से फुसलाती है” (2:16)।

दूसरी और आखिरी बात यह है कि सफलता दिलाने वाली बुद्धि के लिए पहले से अच्छी तैयारी ज़रूरी है।

आज के वचन, उपदेशक 10:10-11 को देखिए: "अगर लोहे की धार कुंद हो जाए और उसे तेज़ न किया जाए, तो ज़्यादा ज़ोर लगाना पड़ता है; लेकिन बुद्धि सफलता दिलाती है। अगर साँप मंत्र से वश में होने से पहले ही काट ले, तो सपेरे का कोई फ़ायदा नहीं।" यहाँ संदेश यह है कि किसी भी काम में सफल होने के लिए पहले से अच्छी तैयारी करनी चाहिए। बिना योजना और तैयारी के किया गया कोई भी काम नाकाम ही होता है (पार्क युन-सन)। यहाँ राजा सुलैमान दो उदाहरण देते हैं:

(1) पहला उदाहरण यह है कि अगर चाकू की धार कुंद हो, तो उसे इस्तेमाल करने में ज़्यादा मेहनत लगती है।

इसका क्या मतलब है? इसका मतलब है कि चाकू को पहले से तेज़ करने से मेहनत कम लगती है। एक मशहूर कहावत है: "ज़्यादा मेहनत मत करो—स्मार्ट तरीके से काम करो!" (वियर्सबे)। दूसरे शब्दों में, यह हमें सलाह देता है कि काम को बिना वजह मुश्किल बनाने के बजाय समझदारी से काम करें। अक्सर हम अपने काम को बेढंगे या बेवकूफी भरे तरीके से करते हैं; लेकिन हमें समझदारी से काम करने की ज़रूरत है। एक समझदार व्यक्ति स्मार्ट तरीके से काम करता है। अच्छी तरह से तेज़ किए गए चाकू की तरह, समझदार व्यक्ति अपनी ऊर्जा बचाते हुए और ज़्यादा मेहनत से बचते हुए कामों को असरदार ढंग से पूरा करता है।

(2) दूसरा उदाहरण एक सपेरे का है, जिसे साँप को संभालने के लिए सबसे पहले अपने खास तरीकों का इस्तेमाल करना पड़ता है।

इसका क्या मतलब है? इसका मतलब है कि एक समझदार सपेरे को साँप को संभालने की कोशिश करने से पहले ज़रूरी तरीकों और हुनर में माहिर होना चाहिए। बाइबल में लूका 14:28 में "चेला बनने की कीमत" के बारे में बताया गया है: "मान लीजिए आपमें से कोई एक मीनार बनाना चाहता है। क्या आप पहले बैठकर उसकी लागत का अंदाज़ा नहीं लगाएंगे कि उसे पूरा करने के लिए आपके पास काफ़ी पैसे हैं या नहीं?" यहाँ मुख्य बात क्या है? आज की भाषा में कहें तो, कोई इमारत बनाने से पहले हमें लागत का पता लगाने के लिए बजट बनाना होगा। हमें बैठकर अपने पास मौजूद पैसे के हिसाब से खर्चों का हिसाब-किताब करना होगा।

जिस तरह निर्माण की लागत का पहले से अच्छी तरह हिसाब लगाना ज़रूरी है, उसी तरह यीशु सिखाते हैं कि अगर हम उनके चेले बनना चाहते हैं तो हमें पूरी तरह तैयार रहना होगा। दूसरे शब्दों में, हमें यीशु के पीछे चलने में होने वाले त्याग का अंदाज़ा लगाना होगा और उसी के अनुसार अपने दिल को तैयार करना होगा। हम अपने दिल को कैसे तैयार करें? यीशु के चेलों के तौर पर, हमें ज़रूरी त्याग करने का पक्का इरादा करना होगा। दूसरे शब्दों में, हमें अपनी पूरी जिंदगी के साथ यीशु के पीछे चलना होगा। अभी कोरिया के नामयांगजू में एक छोटा चर्च और एक किंडरगार्टन बनाया जा रहा है। जब मैं इस बात पर सोच रहा था कि समझदारी—जो सफलता के लिए फ़ायदेमंद है—में बहुत ज़्यादा तैयारी शामिल होती है, तो मुझे वहाँ बन रहे चर्च का ख़्याल आया। उस चर्च का नाम "प्रिपेयर्ड चर्च" (तैयार चर्च) है। इसके अलावा, उस चर्च के पादरी मेरे दोस्त हैं जिनके साथ मैं बड़ा हुआ हूँ; हम एक ही चर्च में जाते थे जहाँ मेरे पिता ने लगभग ग्यारह साल तक पादरी के तौर पर सेवा की थी, जब मैं एक साल का था। जब मैं उन प्रार्थना-अनुरोधों को देखता हूँ जो उन्होंने मेरे साथ साझा किए थे—जैसे "तैयार काम करने वाले भेजें" या "गिदोन के 300 तैयार सैनिकों जैसे काम करने वाले तैयार करें"—तो मैं देखता हूँ कि "तैयार..." शब्द लगभग सभी में आता है। हाल ही में अपनी छुट्टी (सबैटिकल) के दौरान, मैं अपने दोस्त—जो एक पादरी हैं—और एक रिटायर्ड पादरी, जो मेरे पिता के दोस्त थे, के साथ निर्माण स्थल पर गया; हम सब मिलकर चर्च की अधूरी इमारत में गए और परमेश्वर से प्रार्थना की। मैंने एक और पादरी से सुना कि परमेश्वर ने सालों से मेरे दोस्त को कैसे तैयार किया था, और यह सुनकर मेरा विश्वास और पक्का हो गया कि परमेश्वर सचमुच उन सेवकों को तैयार करते हैं जिनका वे इस्तेमाल करना चाहते हैं। मेरा मानना है कि एक तैयार सेवक सुंदर होता है और एक तैयार काम करने वाला कीमती होता है। दोस्तों, समझदार लोग अच्छी तरह तैयारी करते हैं, और परमेश्वर उन समझदार लोगों को सफलता देते हैं जिन्होंने अच्छी तैयारी की है।

हाल ही में, कोरियाई ईसाई समुदाय में एक ऐसे पादरी के बारे में काफी चर्चा हुई है जिन्होंने युवा मंत्रालय का सफलतापूर्वक नेतृत्व किया था लेकिन बाद में वे भटक गए; एक माफीनामा पत्र जिसमें उन्होंने अपनी गलती मानी है, ऑनलाइन जारी किया गया है। कोरिया में अपनी छुट्टी के दौरान, मैंने एक युवा व्यक्ति से सुना कि यह पादरी "सक्सेसिज़्म" (सफलता-केंद्रित सोच) के पीछे भागते थे। ऐसा लगता है कि जो लोग उनकी आलोचना करते हैं, उनका मानना है कि वे दुनियावी सफलता-उन्मुख मंत्रालय के पीछे भाग रहे थे। मैंने पहले कभी इस तरह से नहीं सोचा था, लेकिन युवाओं और चर्च के सदस्यों से ऐसी बातें सुनने के बाद,

मैं सोचने लगा, "क्या सच में ऐसा है?" फिर, जब उस पादरी से जुड़ा यौन दुर्व्यवहार का मामला सामने आया, तो मैंने उस कहानी में दिलचस्पी ली और ऑनलाइन लेख और लोगों की टिप्पणियाँ पढ़ीं, जिससे मेरे मन में कई तरह के विचार आए। इस बीच आज का संदेश तैयार करते समय, टोनी नेल्सन के बाइबिल-आधारित सफलता के बारह कौशलों में से पहले कौशल की सच्चाई ने मुझे प्रभावित किया: "सफलता की शुरुआत परमेश्वर का भय मानने और ज्ञान प्राप्त करने से होती है।" मेरा मानना है कि यह बात न केवल उस पादरी पर, बल्कि मुझ पर, आप सभी पर और हर ईसाई पर लागू होती है। सफलता की शुरुआत परमेश्वर का भय मानने और ज्ञान प्राप्त करने से होती है। इसका कारण यह है, जैसा कि आज के वचन—सभोपदेशक 10:8-11—में कहा गया है कि "ज्ञान सफलता लाता है" (सभोपदेशक 10:8-10)। हमें इस बात को भी स्वीकार करना चाहिए कि जो ज्ञान सफलता की ओर ले जाता है, वही हमें खतरे से भी बचाता है। यह परमेश्वर से मिली बुद्धि ही है जो हमें शैतान की चालों और इस दुनिया के कई प्रलोभनों और जाल से बचा सकती है। इसके अलावा, हमें यह मानना होगा कि सफलता दिलाने वाली बुद्धि के लिए पहले से बहुत तैयारी की ज़रूरत होती है। उदाहरण के लिए, अगर हम ईसाई तैयार नहीं हैं, तो बहुत शोहरत मिलने, चर्च के तेज़ी से बढ़ने या अमीर बनने पर हममें घमंड आ सकता है; यह घमंड अक्सर हमें शैतान के बिछाए जाल में फँसा देता है, जिससे हम परमेश्वर के विरुद्ध पाप कर बैठते हैं। खासकर, जब मैं ऐसे ईसाइयों को देखता हूँ जो इन जालों में फँसकर पाप करते हैं, तो मुझे लगता है कि उनके चरित्र में ही तैयारी की कमी थी। चाहे किसी के पास बाइबल का कितना भी ज्ञान हो, धर्म-विज्ञान की ट्रेनिंग हो या कोई पेशेवर हुनर हो, अगर उनमें यीशु जैसा चरित्र—खासकर विनम्र चरित्र—नहीं है, तो वे ज़रूर प्रलोभन में फँसेंगे और परमेश्वर के विरुद्ध पाप करेंगे। मेरी उम्मीद है कि हम सब राजा सुलैमान के आज के संदेश—"बुद्धि सही राह दिखाने में फायदेमंद है"—को अपने दिलों में बसा लेंगे और जब हम परमेश्वर से सच्ची सफलता दिलाने वाली बुद्धि माँगेंगे, तो हम उनकी महिमा के लिए बुद्धिमानी से जी पाएँगे।

मूर्ख के होंठ

[उपदेशक 10:12-15]

क्या आप "शब्दों की अद्भुत, छिपी हुई शक्ति" के बारे में जानते हैं? मुझे एक ऑनलाइन लेख मिला जिसमें बताया गया था कि हमें जन्म से लेकर मृत्यु तक बोलना पड़ता है; इसमें कहा गया था कि जैसे एक खुरदरा पत्थर कटने और पॉलिश होने के बाद हीरा बन जाता है, वैसे ही हमारे शब्द—जब उन्हें बेहतर और सुधारा जाता है—तो वे एक ऐसे जीवन की खुशबू फैला सकते हैं जो रत्न की तरह चमकता है। उस लेख में कुछ सुझाव दिए गए थे: (1) "जो मन में आए, वह न बोलें। यहाँ तक कि जब आप अपने शब्दों को ध्यान से छानते हैं—जैसे छलनी से—तब भी कुछ गलतियाँ हो ही जाती हैं।" (2) "शब्दों का अपना स्वाद होता है। ऐसे शब्दों से बचें जो मुँह में बुरा स्वाद छोड़ते हैं; इसके बजाय, ऐसे शब्द बोलें जो सुखद और अच्छे हों।" (3) "प्रशंसा, आभार और प्यार भरे शब्दों का अक्सर इस्तेमाल करें। लोग स्वाभाविक रूप से आपकी ओर आकर्षित होंगे।" (4) "शब्दों से लगे घाव जीवन भर रह सकते हैं। शब्दों को मिटाने के लिए कोई इरेज़र नहीं होता, इसलिए सावधानी से बोलें।" (5) "शब्द बीज की तरह होते हैं। ध्यान से सोचें कि आप किस तरह के बीज बो रहे हैं।" आपके बारे में क्या? आप कैसे बोलते हैं? क्या आप और मैं अपने होंठों से परमेश्वर की महिमा कर रहे हैं, या हम उसकी महिमा को कम कर रहे हैं?

आज के भाग—उपदेशक 10:12-15—में राजा सुलैमान मूर्ख के होंठों के बारे में बात करते हैं: "मूर्ख के होंठ" (पद 12), "उसके मुँह के शब्द" (पद 13), और "मूर्ख बहुत ज़्यादा शब्द बोलता है" (पद 14)। वह मूर्ख की बोली की चार विशेषताएँ बताते हैं। ये चार विशेषताएँ क्या हैं?

पहली बात, मूर्ख के होंठ उसे ही नुकसान पहुँचाते हैं। आज का भाग, उपदेशक 10:12 देखें: "बुद्धिमान के मुँह से निकले शब्द अनुग्रहकारी होते हैं, लेकिन मूर्ख के होंठ उसे ही खा जाते हैं।" राजा सुलैमान कहते हैं कि जहाँ बुद्धिमान के शब्द अनुग्रहकारी होते हैं, वहीं मूर्ख के होंठ उसे ही खा जाते हैं। यहाँ, "खुद को खा जाने" का मतलब है खुद को नुकसान पहुँचाना; दूसरे शब्दों में, मूर्ख के होंठ मूर्ख को ही नुकसान पहुँचाते हैं। वे कैसे नुकसान पहुँचाते हैं? एक मूर्ख अपने ही होंठों से खुद को कैसे नुकसान पहुँचाता है? नीतिवचन 10:32 देखिए: "धर्मी लोग जानते हैं कि क्या कहना सही है, लेकिन दुष्ट लोग हमेशा गलत बातें ही बोलते हैं।" क्योंकि बुद्धिमान लोग जानते हैं कि दूसरों को कैसे खुश किया जाए, इसलिए वे "सही समय पर सही शब्द" बोलते हैं (नीतिवचन 25:11)। लेकिन मूर्ख व्यक्ति दूसरों को खुश करने के बजाय खुद को खुश करने के लिए बोलता है; वह सुनने वाले की परवाह किए बिना और यह सोचे बिना कि इससे किसी को दुख हो सकता है, बेपरवाही से बोलता है। ऐसा करके, मूर्ख व्यक्ति दूसरों को चोट पहुँचाता है और आखिर में अपना ही नुकसान कर बैठता है। दूसरों—और खुद—को नुकसान पहुँचाने वाले होंठों के बारे में बाइबल कहती है: "जो व्यक्ति अपने पड़ोसी के खिलाफ झूठी गवाही देता है, वह गदा, तलवार और तेज़ तीर के समान है" (नीतिवचन 25:18)। नीतिवचन लिखने वाला पड़ोसी के खिलाफ झूठी गवाही देने वाले होंठों की तुलना गदा, तलवार और तेज़ तीर से करता है। मूर्ख के होंठ भी ठीक वैसे ही होते हैं—गदा, तलवार और तेज़ तीर की तरह—जो दूसरों को नुकसान पहुँचाने, चोट देने और यहाँ तक कि बर्बाद करने की क्षमता रखते हैं। इसके अलावा, प्रेरित याकूब जीभ को न केवल "आग, बुराई की दुनिया" कहता है, बल्कि "एक बेकाबू बुराई, जो जानलेवा ज़हर से भरी है" भी बताता है (याकूब 3:5-8)। जीभ सचमुच एक डरावनी चीज़ है। मूर्ख की जीभ खतरनाक होती है—सचमुच बहुत खतरनाक। हमें मूर्ख की जीभ से सावधान रहना चाहिए, क्योंकि यह खुद को ही नुकसान पहुँचाती है।

दूसरी बात, मूर्ख के होंठों से निकलने वाली बातें बदतर होती जाती हैं।

आज का वचन देखिए, उपदेशक 10:13: "उसके मुँह से निकलने वाली बातों की शुरुआत मूर्खता से होती है, और उसकी बातचीत का अंत पागलपन भरी बकवास में होता है।" एक मूर्ख व्यक्ति अपनी मूर्खता के कारण

न केवल दूसरों का, बल्कि अपना भी नुकसान करता है। स्वभाव से ही, एक मूर्ख व्यक्ति मूर्खतापूर्ण बातें किए बिना नहीं रह सकता। इसीलिए राजा सुलैमान कहते हैं कि मूर्ख की बातचीत की शुरुआत मूर्खता से होती है। अगर शुरुआत मूर्खता से होती है, तो अंत क्या होता है? राजा सुलैमान कहते हैं कि अंत "पागलपन भरी बकवास" होता है। इसका क्या मतलब है? इसका मतलब है कि मूर्ख की बातचीत का नतीजा बुरा और पागलपन भरा व्यवहार होता है। मूर्ख अक्सर बेतुकी बातें करते हैं। वे ऐसी बातें कहकर शुरुआत करते हैं जो आम समझ के खिलाफ होती हैं, और जितना ज़्यादा वे बोलते हैं, उतने ही वे पागल जैसे लगते हैं। जैसे एक खाली डिब्बा शुरू में तो धीरे-धीरे खड़खड़ाता है, लेकिन बाद में ज़ोर-ज़ोर से कई बार खड़खड़ाने लगता है, वैसे ही मूर्ख की बेतुकी बातें भी धीरे-धीरे तेज़ और बेतरतीब होती जाती हैं, यहाँ तक कि वे किसी ऐसे व्यक्ति जैसी लगने लगती हैं जिसने अपना मानसिक संतुलन खो दिया हो। नीतिवचन 29:11 पर विचार करें: "मूर्ख अपने मन की सारी बातें कह देता है, लेकिन बुद्धिमान उन्हें काबू में रखता है।" मूर्ख न केवल मूर्खतापूर्ण बातें करता है, बल्कि अपना गुस्सा भी पूरी तरह ज़ाहिर कर देता है। वह बकवास करता है और अपनी भावनाओं पर काबू न रख पाने के कारण, गुस्से में शब्दों की बौछार कर देता है, जिससे वह किसी पागल व्यक्ति जैसा लगता है। आखिरकार, भले ही किसी व्यक्ति की मूर्खता की शुरुआत हल्के-फुल्के ढंग से हो, लेकिन वह पागलपन भरे व्यवहार तक पहुँच सकती है। हमें मूर्ख के मुँह से अच्छी, समझदारी भरी या फ़ायदेमंद बातें सुनने की उम्मीद नहीं करनी चाहिए, क्योंकि उसकी बातें तो बस और बिगड़ती ही जाती हैं। हमें यह समझना चाहिए कि मूर्ख के साथ बातचीत करने से कोई फ़ायदा नहीं होता और इसलिए ऐसी बातचीत बंद कर देनी चाहिए; हमें उससे दूर हो जाना चाहिए। अगर हम रुकते नहीं हैं और मूर्ख के साथ बातचीत जारी रखते हैं, तो आखिरकार हम उसकी मूर्खता को पागलपन में बदलते हुए देखेंगे।

तीसरी बात, मूर्ख व्यक्ति अपनी बातों पर काबू नहीं रख पाता और बहुत ज़्यादा बोलता है।

आज के वचन में उपदेशक 10:14 का पहला हिस्सा देखिए: "मूर्ख बहुत बातें करता है..." मूर्ख व्यक्ति बहुत ज़्यादा बोलता है। जैसे खाली डिब्बा सबसे ज़्यादा आवाज़ करता है, वैसे ही ज्ञान की कमी वाला मूर्ख व्यक्ति बहुत ज़्यादा बोलकर अपनी मूर्खता ज़ाहिर करता है। समझदारी की कमी के कारण, मूर्ख व्यक्ति जिससे भी मिलता है, उसके सामने अपनी मूर्खता दिखाता है (10:3)। वह अपनी मूर्खता कैसे ज़ाहिर करता है? वह न सिर्फ़ छोटी-मोटी मूर्खतापूर्ण हरकतें करता है, बल्कि अपने शासक का विरोध भी करता है (वचन 1 और 4)। इसे उपदेशक 10:14 के पहले हिस्से से जोड़कर देखें तो पता चलता है कि मूर्ख व्यक्ति मूर्खतापूर्ण बातों को

हल्के में लेता है, इसलिए वह खुद पर काबू नहीं रख पाता; वह मूर्खतापूर्ण बातें करता रहता है और आखिर में और भी बड़ी मूर्खतापूर्ण बातें कह बैठता है। इसके अलावा, मूर्ख व्यक्ति अपने गुस्से पर काबू न रखकर और अपने शासक का विरोध करके—कम से कम अपनी बातों से—अपनी मूर्खता ज़ाहिर करता है। इसीलिए नीतिवचन का लेखक हमसे कहता है: "जहाँ बहुत बातें होती हैं, वहाँ पाप की कमी नहीं होती, लेकिन जो अपने होंठों पर काबू रखता है, वह समझदार है" (नीतिवचन 10:19)। हमें अपनी ज़बान का इस्तेमाल करने में जल्दबाज़ी नहीं करनी चाहिए। क्यों? नीतिवचन 18:21 देखिए: "ज़बान में मौत और ज़िंदगी की ताकत होती है, और जो लोग इसे पसंद करते हैं, वे इसका फल खाते हैं।" इसके बजाय, हमें कम बोलना चाहिए। हमें बोलने में संयम बरतना चाहिए, जैसा कि समझदार लोग करते हैं (नीतिवचन 17:27)। चौथी बात, मूर्ख व्यक्ति अपनी ही बड़ाई करता है।

उपदेशक 10:14 (पहला हिस्सा) से 15 तक का हिस्सा देखिए: "कोई नहीं जानता कि आगे क्या होने वाला है—कौन किसी और को बता सकता है कि उनके बाद क्या होगा? मूर्खों की मेहनत उन्हें थका देती है; वे शहर जाने का रास्ता नहीं जानते।" हालाँकि कोई भी भविष्य के बारे में नहीं जानता—सिर्फ परमेश्वर ही जानते हैं—फिर भी मूर्ख व्यक्ति ऐसे बकवास करता है जैसे कि वह सब कुछ जानता हो या उसका भविष्य उसके अपने काबू में हो (वियर्सबे)। नतीजतन, मूर्ख व्यक्ति अपने आस-पास के सभी लोगों को परेशान और बेचैन करता है (वचन 15) (पार्क युन-सन)। यह कितनी अजीब बात है? राजा सुलैमान कहते हैं कि मूर्ख "शहर जाने का रास्ता भी नहीं जानता" (पद 15)। दूसरे शब्दों में, शहर का रास्ता खुला है और सभी को पता है, फिर भी मूर्ख को इसका भी पता नहीं होता (पार्क युन-सन); तो फिर, वह ऐसे कैसे बोल सकता है मानो उसे भविष्य के बारे में सब कुछ पता हो? एक तरह से, मूर्ख भविष्य के बारे में इसलिए बकवास करता है क्योंकि वह अपने वर्तमान कामों को ठीक से नहीं करता। तो फिर, मूर्ख इतना क्यों बोलता है, और ऐसा व्यवहार क्यों करता है मानो उसे पता हो कि आगे क्या होने वाला है? उसका मकसद क्या है? बस अपनी डींगें मारना। नीतिवचन 27:1 साफ कहता है, "आने वाले कल के बारे में डींगें मत मारो, क्योंकि तुम नहीं जानते कि कल क्या होगा," फिर भी मूर्ख अपनी डींगें मारता है मानो उसे कल के बारे में सब कुछ पता हो। ऐसे व्यक्ति से परमेश्वर याकूब 4:14-16 के ज़रिए कहते हैं: "तुम नहीं जानते कि कल क्या होगा। आखिर तुम्हारा जीवन क्या है? यह तो बस एक भाप की तरह है जो थोड़ी देर के लिए दिखाई देती है और फिर गायब हो जाती है।

इसके बजाय तुम्हें कहना चाहिए, 'अगर प्रभु की इच्छा हुई, तो हम जीवित रहेंगे और यह या वह काम करेंगे।' लेकिन अब तुम अपने घमंड में डींगें मारते हो। ऐसी सारी डींगें मारना बुरा है।"

हाल ही में, जब मैं उपदेशक की किताब पर मनन करता हूँ, तो मैं अपने जीवन के बारे में सोचने लगता हूँ। ऐसा करते हुए, मुझे एहसास होता है कि मैं कितना मूर्ख हूँ। इसलिए, जब मैं परमेश्वर से प्रार्थना करता हूँ, तो मैं अपनी मूर्खता को स्वीकार करता हूँ और उनसे बुद्धि माँगता हूँ। सच तो यह है कि हम असल में सिर्फ अपनी मूर्खता को ही अपना कह सकते हैं; इसके बीच, जिस चीज़ पर हमें गर्व करना चाहिए, वह है परमेश्वर की बुद्धि। इसलिए, प्रेरित पौलुस की तरह, हमें भी यह स्वीकार करना चाहिए: "क्योंकि परमेश्वर की मूर्खता मनुष्यों की बुद्धि से अधिक बुद्धिमान है, और परमेश्वर की कमज़ोरी मनुष्यों की शक्ति से अधिक शक्तिशाली है" (1 कुरिन्थियों 1:25)। हमें परमेश्वर की बुद्धि माँगनी चाहिए। अपने शब्दों का इस्तेमाल खुद को नुकसान पहुँचाने के बजाय, हमें दूसरों को दिलासा देने और उन्हें बेहतर बनाने के लिए करना चाहिए, जिससे हमें भी दिलासा और उन्नति मिले। इसके अलावा, हमारी बातचीत की शुरुआत और अंत बुद्धि से होना चाहिए; हमारे शब्द और भी अच्छे होने चाहिए, और हमें अपनी ज़बान पर काबू रखना सीखना चाहिए (नीतिवचन 19:19)। हमें अपने होंठों का इस्तेमाल यीशु की बड़ाई करने और यीशु मसीह की खुशखबरी सुनाने के लिए करना चाहिए। मैं प्रार्थना करता हूँ कि परमेश्वर हमें ऐसे समझदार होंठ दे।

मुसीबत में फँसा देश

[उपदेशक 10:16–20]

कल सुबह—मंगलवार को—मुझे ऑनलाइन खबर मिली कि उत्तर कोरिया ने दक्षिण कोरिया के योनप्योंग द्वीप पर तोपों से हमला किया है। *चेओनान* जहाज के डूबने की घटना के कुछ ही समय बाद, योनप्योंग द्वीप पर हुई इस गोलाबारी में दो युवा मरीन और दो आम नागरिकों की जान चली गई। कोरियाई प्रायद्वीप पर ऐसी घटनाएँ क्यों होती रहती हैं, इस पर विचार करते हुए मेरा व्यक्तिगत रूप से मानना है कि समस्या की जड़ उत्तर कोरिया के नेतृत्व में है। मैंने एक बार स्वर्गीय ह्वांग जांग-योप का हवाला देते हुए एक लेख पढ़ा था, जिसमें उन्होंने तर्क दिया था कि उत्तर कोरिया के सर्वोच्च नेता, किम जोंग-इल का मरना ज़रूरी है। यह सचमुच दुखद सच्चाई है कि एक अकेला नेता इतने सारे लोगों को प्रताड़ित कर सकता है और मार सकता है। यह इस बात को उजागर करता है कि किसी देश का नेता कितना महत्वपूर्ण होता है। कई मायनों में, यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि किसी देश का उत्थान और पतन उसके नेता पर निर्भर करता है।

आज के अंश, उपदेशक 10:16–20 में, राजा सुलैमान "मुसीबत में फँसे देश" के बारे में बात करते हैं। आयत 16 को देखें: "हे देश, तुझ पर हाय! जिसका राजा बच्चा है और जिसके राजकुमार सुबह ही दावतें उड़ाते हैं।" यह कैसा देश है जो ऐसी मुसीबत का सामना कर रहा है? हम इसकी तीन विशेषताएँ पहचान सकते हैं।

पहला, उचित नेतृत्व के बिना देश मुसीबत में होता है।

उपदेशक 10:16 को फिर से देखें: "हे देश, तुझ पर हाय! जिसका राजा बच्चा है और जिसके राजकुमार सुबह ही दावतें उड़ाते हैं।" इस आयत का अर्थ है कि भले ही किसी देश में राजा और अधिकारी हों, लेकिन अगर राजा शासन करने के लिए बहुत छोटा है और अधिकारी (या "राजकुमार") शासन करने के बजाय अय्याशी में लगे रहते हैं, तो देश का मुसीबत में पड़ना तय है (पार्क युन-सन)। बेशक, राजा की कम उम्र का मतलब यह नहीं है कि वह देश पर शासन करने में असमर्थ है। इसका एक बेहतरीन उदाहरण यहूदा का राजा योशियाह है, जिसका ज़िक्र 2 इतिहास 34 में मिलता है; वह आठ साल की उम्र में सिंहासन पर बैठा (आयत 1) और सिर्फ़ आठ साल बाद, सोलह साल की उम्र में धार्मिक सुधार शुरू किए (आयत 3)। हालाँकि, उपदेशक 10:16 में जिस "युवा राजा" का ज़िक्र है, वह ऐसा शासक है जो न सिर्फ़ उम्र में छोटा है बल्कि नासमझ भी है और सिर्फ़ अपनी मनमानी करता है (वियर्सबे)। इस हिस्से में बताए गए युवा राजा में बच्चे जैसी सादगी और मासूमियत नहीं है, बल्कि एक बिगड़े हुए बच्चे जैसी मनमानी और बचकानी हरकतें हैं (जेमिसन)। अगर किसी देश का नेता ऐसा हो, तो उसके अधिकारियों को समझदार और सतर्क होना चाहिए ताकि वे बुद्धिमानी से शासन चला सकें; लेकिन इसके उलट, ये अधिकारी सुबह-सुबह ही मौज-मस्ती में डूबे रहते हैं (आयत 16)। दूसरे शब्दों में, वे दिन की शुरुआत में ही अय्याशी में पड़ जाते हैं (पार्क युन-सन)। तो फिर ऐसे देश का क्या होगा? जब राजा नासमझ और बच्चे की तरह मनमानी करने वाला हो, और अधिकारी सुबह से ही मौज-मस्ती में खोए हों, तो क्या यह कहा जा सकता है कि देश का कोई शासक नेता है?

मैंने इस बात को अपने चर्च पर लागू करके देखा। मिसाल के तौर पर, मान लीजिए कि मैं, नेता के तौर पर, नासमझ होता और मनमानी करता; अगर एल्डर यून—जो मेरे साथ सेवा करते हैं और जिनका विश्वास मज़बूत है—चर्च को सही दिशा दिखाते, तो हम कम से कम यह कह सकते थे कि हमारे चर्च का एक शासक नेता है। लेकिन क्या होता अगर मेरे युवा, नासमझ और मनमानी करने वाले होने के साथ-साथ, एल्डर यून भी सुबह से ही मौज-मस्ती और अय्याशी में डूब जाते? तब हमारे चर्च का क्या होता? क्या हम सच में कह सकते थे कि कोई नेता चर्च का संचालन कर रहा है? यही बात परिवार पर भी लागू होती है। परिवार में व्यवस्था और तालमेल तब बना रहता है जब पति—परिवार के मुखिया के तौर पर—समझदार हो और पत्नी, जो उसका साथ देती है, बुद्धिमान हो, जिससे वे मिलकर घर को अच्छे से चला सकें। लेकिन उस परिवार का क्या होगा जहाँ पति, मुखिया होने के बावजूद नासमझ है और अपनी मनमानी करता है, जबकि पत्नी भी सुबह से ही दुनियावी सुख-सुविधाओं में लगी रहती है? क्या ऐसे परिवार के बारे में सच में कहा जा सकता है

कि उसका नेता अच्छे से शासन करता है? जिन परिवारों, चर्चों और देशों पर ऐसी मुसीबत आती है, उनमें सही नेतृत्व की कमी होती है। इसके उलट, राजा सुलैमान एक ऐसे देश की बात करते हैं जो आशीष पाता है। आज के वचन, उपदेशक 10:17 को देखिए: "हे देश, तू धन्य है जब तेरा राजा कुलीन लोगों का बेटा हो और तेरे राजकुमार सही समय पर दावत करें—ताकत के लिए, न कि नशे के लिए।" इसका क्या मतलब है? "कुलीन लोगों का बेटा" वाक्यांश का अर्थ है वह व्यक्ति जिसका चरित्र नेक या कुलीन हो (पार्क युन-सन)। यदि किसी देश पर शासन करने वाला राजा "कुलीन लोगों का बेटा" है—यानी उसका चरित्र नेक है—तो वह देश का शासन अच्छी तरह से क्यों नहीं चला पाएगा? इसके अलावा, सुलैमान बताते हैं कि ऐसे राजा के अधिकारी—उसके मंत्री—"सही समय पर दावत करते हैं—ताकत के लिए, न कि नशे के लिए"; इसका मतलब है कि नेक चरित्र वाले राजा के अधिकारी अय्याशी भरी ज़िंदगी नहीं जीते, बल्कि अपने खान-पान में भी संयम बरतते हैं (पार्क युन-सन)। यह उस देश के नेताओं से कितना अलग है जिस पर न्याय हो रहा हो! ऐसे देश में, राजा और अधिकारी दोनों ही परिपक्व और नेक चरित्र वाले होते हैं और देश का शासन प्रभावी ढंग से चलाते हैं; इसलिए, वह सचमुच एक धन्य देश है। दूसरे शब्दों में, सचमुच धन्य देश वह है जहाँ नेक शासन किया जाता है (पार्क युन-सन)।

मेरा मानना है कि यही बात कलीसिया और परिवार पर भी लागू होती है। यदि कलीसिया और घर के नेताओं का चरित्र नेक है और वे अय्याशी के बजाय संयमपूर्ण जीवन जीते हैं, तो उनके मार्गदर्शन में रहने वाले परिवार और कलीसियाएँ सचमुच धन्य होते हैं। इस संदर्भ में, मुझे दो ऐसी बातों की याद आती है जो नेताओं के लिए बहुत ज़रूरी हैं—चाहे वे घर में हों, कलीसिया में हों या देश में: चरित्र और संयम। बेशक, नेताओं के लिए योग्यता और क्षमता भी ज़रूरी है; लेकिन चरित्र और भी ज़्यादा महत्वपूर्ण है। कोई नेता कितना भी कुशल या सक्षम क्यों न हो, अगर उसका चरित्र खराब है, तो उसका अनुसरण करने वाले लोग सच्ची खुशी नहीं पा सकते। उन्हें शायद कुछ हासिल करने का एहसास हो, लेकिन वे उस तरह के बदलाव का अनुभव नहीं कर पाएँगे जो सकारात्मक प्रभाव से आता है। नेताओं के लिए संयम भी उतना ही ज़रूरी है। जब वे शैतान के कई प्रलोभनों के खिलाफ आध्यात्मिक लड़ाई लड़ते हैं, तो जिन नेताओं में संयम की कमी होती है—जो पवित्र आत्मा का एक फल है—वे अनिवार्य रूप से प्रलोभन में पड़ जाते हैं और परमेश्वर तथा लोगों के विरुद्ध पाप करते हैं। इसलिए, चाहे किसी देश, चर्च या परिवार का नेतृत्व करना हो, एक नेक चरित्र और बुराइयों व

ऐशो-आराम जैसे प्रलोभनों को ठुकराने के लिए आत्म-संयम की ज़रूरत होती है। ऐसे नेताओं का अनुसरण करने वाले नागरिक, चर्च के सदस्य और बच्चे सचमुच सौभाग्यशाली होते हैं। मैं प्रार्थना करता हूँ कि कोरिया और संयुक्त राज्य अमेरिका दोनों ही ऐसे सौभाग्यशाली देश बनें। मैं प्रार्थना करता हूँ कि हमारा चर्च भी ऐसा ही सौभाग्यशाली चर्च बने। मैं प्रार्थना करता हूँ कि हमारे परिवार—आपके और मेरे—ईश्वर के आशीर्वाद वाले परिवार बनें।

दूसरी बात, जिस देश का नेता आलसी और अनैतिक जीवन जीता है, वह देश अभिशप्त होता है। आज के वचन, उपदेशक 10:18–19a को देखें: “आलस के कारण छत की कड़ियाँ झुक जाती हैं; हाथ पर हाथ धरे रहने से घर टपकने लगता है। दावतें हँसी-मज़ाक के लिए होती हैं, और शराब जीवन को आनंदमय बनाती है...।” ये वचन आलसी शासकों के अनैतिक जीवन का वर्णन करते हैं जो अपने देश को बर्बादी की ओर ले जाते हैं। वे मनोरंजन के लिए मौज-मस्ती में डूबे रहते हैं और आनंद के लिए लगातार शराब पीते हैं। लोगों की सेवा के प्रति उनमें ज़िम्मेदारी या न्याय की कोई भावना नहीं होती (पार्क युन-सन)। ज़रा सोचिए: उस देश का क्या होगा जिसके नेताओं में लोगों की सेवा करने के लिए ज़िम्मेदारी या न्याय की कोई भावना न हो? उस देश की क्या हालत होगी जिसके नेता अपने कर्तव्यों को भूलकर केवल हृदय से ज़्यादा शराब पीने और मौज-मस्ती करने में अपना समय बिताते हों? कभी-कभी, कोरिया के अतीत पर आधारित ऐतिहासिक नाटक देखते समय, शाही अधिकारियों को अनैतिक जीवन जीते, शराब और औरतों में डूबे हुए देखा जा सकता है। वे भ्रष्ट होते हैं और अपनी ज़िम्मेदारियाँ निभाने में विफल रहते हैं; इसके बजाय, वे उन ईमानदार अधिकारियों के खिलाफ़ साज़िश रचते हैं और उनकी हत्या कर देते हैं जो वास्तव में अपने कर्तव्यों का पालन करना चाहते हैं।

लोकप्रिय कोरियाई ड्रामा *डेमुल* (बिग थिंग) में राष्ट्रपति को एक अच्छे इंसान के तौर पर दिखाया गया है, जबकि विपक्षी पार्टी के नेता को भ्रष्ट दिखाया गया है। मेरा मानना है कि ऐसे ड्रामा कोरिया के इतिहास और असलियत की एक झलक दिखाते हैं—एक ऐसी असलियत जिसे एक शब्द में कहा जा सकता है: भ्रष्टाचार। हम न सिर्फ़ ड्रामा में बल्कि खबरों में भी देखते हैं कि राजनेता, जिन्हें अच्छे से शासन करना चाहिए और नागरिकों की खुशहाली सुनिश्चित करनी चाहिए, वे अपने पद का गलत इस्तेमाल करके भ्रष्टाचार करते हैं और लालच में अपनी जेबें भरते हैं। वे सचमुच गैर-जिम्मेदार नेता होते हैं। पादरी वियर्सबे ने एक बार कहा

था, "नेताओं में कुछ ऐसे होते हैं जो अपने पद का *इस्तेमाल* करते हैं और कुछ ऐसे जो बस पद पर *बने रहते* हैं (1 तीमुथियुस 3:10)। नासमझ लोग पद से मिलने वाली सुविधाओं का मज़ा तो लेते हैं लेकिन अपनी ज़िम्मेदारियों को भूल जाते हैं; वहीं समझदार लोग अपनी ज़िम्मेदारियों को ही सुविधा मानते हैं और दूसरों की भलाई के लिए उन्हें निभाते हैं।" यह बात सही है। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि कुछ नेता अपने पद का सक्रिय रूप से इस्तेमाल करते हैं और कुछ बस पद पर बने रहते हैं। लेकिन मैं इससे आगे बढ़कर यह कहूंगा कि असली समस्या उन नेताओं के साथ है जो नागरिकों की सेवा करने के बजाय अपने फायदे के लिए पद का गलत इस्तेमाल करते हैं। चर्च के मामले में भी, कुछ लोग पद पर तो होते हैं लेकिन बस नाम के लिए, वे पद का इस्तेमाल मंडली की सही ढंग से सेवा करने के लिए नहीं करते। कुछ पदाधिकारी नासमझ और अपने काम के प्रति वफादार नहीं होते, या आलसी होते हैं और मसीह की देह के सदस्य के तौर पर अपनी भूमिका निभाने से इनकार करते हैं। लेकिन इससे भी बड़ी समस्या चर्च में ऐसे नेताओं का होना है जो अपने पद का गलत इस्तेमाल करते हैं और सेवा करने के बजाय सेवा करवाना पसंद करते हैं। ऐसे नेताओं की वजह से चर्च को नुकसान हो रहा है। अपनी किताब *लेज़िनेस* (आलस) में पादरी किम नाम-जून आलस के बारे में बताते हैं: "आलस का सार थकान है; इसकी जड़ खुद से प्यार है; इसका अगला कदम वासना है; इसका चुनाव लापरवाही है; और इसका नतीजा दुख है..." जब किसी देश के नेता आलसी होते हैं, तो वह आलस वासना से प्रेरित होकर खुद से प्यार करने की भावना में बदल जाता है; इससे अनैतिक जीवनशैली और भ्रष्टाचार पनपता है, और आखिरकार देश मुसीबत में घिर जाता है।

हमें पादरी चार्ल्स आर. स्विंडोल की बातों पर ध्यान देना चाहिए। उन्होंने कहा कि एक "पेशेवर चोर" है जो हमारे दिलों में घुसकर जीवन के प्रति हमारे स्वस्थ उत्साह और जुनून को चुरा लेता है—और वह चोर है "टालमटोल" (procrastination)। दूसरे शब्दों में, आलसी रवैया जो कामों को बोझ समझता है और उन्हें टालता रहता है, वह जीवन के लिए ज़रूरी जुनून और चुनौती की भावना को कमज़ोर कर देता है; आखिरकार, यह हमें उस सच्ची खुशी से वंचित कर देता है जिसका हम आनंद ले सकते थे। इसलिए, "मेहनत" (diligence) एक ऐसा गुण है जिस पर आज के समय में फिर से ज़ोर दिया जाना चाहिए। असल में, मेहनत एक राष्ट्रीय नेता के लिए ज़रूरी गुण है। जो नेता आलसी और अनैतिक जीवन जीता है, वह कभी भी एक समृद्ध राष्ट्र का निर्माण नहीं कर सकता; बल्कि, परमेश्वर मेहनती और वफादार नेताओं के ज़रिए ही राष्ट्र की स्थापना करते हैं। यही बात परिवारों और चर्चों पर भी लागू होती है। प्रभु परिवारों और चर्चों को बनाने के लिए आलसी नेताओं का इस्तेमाल नहीं करते; इसके बजाय, वे उन्हें स्थापित करने के लिए वफादार और मेहनती नेताओं

का इस्तेमाल करते हैं। इस प्रकार, परमेश्वर की नज़र में सचमुच समृद्ध राष्ट्र, चर्च या परिवार बनाने के लिए, हमारे नेताओं का मेहनती होना ज़रूरी है। तीसरी बात, जिस राष्ट्र का नेतृत्व ऐसा नेता करता है जो मानता है कि पैसा सब कुछ हल कर सकता है, वह राष्ट्र श्राप के अधीन होता है।

आज के पाठ में 'उपदेशक' (Ecclesiastes) 10:19 के बाद वाले हिस्से को देखें: "...पैसा सब कुछ हल करता है।" इसका मतलब है कि ऐसे श्रापित राष्ट्र के नेता आलसी और अनैतिक होते हैं, और वे मानते हैं कि सिर्फ़ पैसा ही देश की सभी समस्याओं को हल कर सकता है। जो नेता ऐसा सोचते हैं, वे साफ़ तौर पर पैसे से प्यार करते हैं और परमेश्वर के बजाय पैसे पर भरोसा करते हैं। नतीजतन, यह सोचकर कि पैसा ही एकमात्र समाधान है, वे आलस और अय्याशी से भरा गैर-ज़िम्मेदाराना जीवन जीते हैं और हर मुद्दे को पैसे से सुलझाने की कोशिश करते हैं। अपनी ज़िम्मेदारियाँ पूरी करने में नाकाम रहने के कारण—यहाँ तक कि जब देश बर्बाद हो रहा होता है और नागरिक दुख झेल रहे होते हैं—वे देश की समस्याओं को ठीक करने की बेकार कोशिश में बस टैक्स बढ़ाते रहते हैं (मैकआर्थर)। इसका नतीजा क्या होता है? आखिरकार, जो नेता पैसे से प्यार करते हैं और हर समस्या को पैसे से हल करना चाहते हैं, वे उसी पैसे की वजह से बर्बाद हो जाते हैं।

हमें उस सोच से बचना चाहिए जो मानती है कि पैसा सब कुछ हल कर सकता है। आज बहुत से लोग अपने विश्वास को इस सोच के साथ अपनाते हैं कि "पैसा ही ताकत है।" यह सचमुच एक खतरनाक सोच है। अगर किसी राष्ट्र, चर्च या परिवार का नेतृत्व ऐसा व्यक्ति करता है जिसकी सोच ऐसी है, तो उन्हें पैसे की वजह से ज़रूर मुश्किलों का सामना करना पड़ेगा। इसके अलावा, उस देश, चर्च या परिवार पर आखिर में मुसीबत आएगी। इसलिए, हमें न सिर्फ़ इस सोच से सावधान रहना चाहिए कि पैसा सब कुछ ठीक कर सकता है, बल्कि उन नेताओं से भी सावधान रहना चाहिए जो ऐसी सोच रखते हैं। हमें उन नेताओं से भी सावधान रहना चाहिए जो पैसे पर निर्भर रहते हैं। साथ ही, हमें ऐसे नेताओं के पीछे नहीं चलना चाहिए, क्योंकि उन पर आने वाली मुसीबत में हम भी फंस सकते हैं। इसके बजाय, हमें ऐसे नेताओं का अनुसरण करना चाहिए जो ईश्वर को मानने वाले हों और पैसे के बजाय ईश्वर पर भरोसा करते हों। हमें ऐसे नेताओं को देखना चाहिए जिन्होंने प्रेरित पौलुस की तरह, बहुत कुछ होने और कमी होने—दोनों स्थितियों में संतोष का रहस्य सीखा हो। हमें अपनी संतुष्टि पैसे में नहीं, बल्कि सिर्फ़ यीशु में ढूँढनी चाहिए। जब हम ऐसा करते हैं, तो हमारे परिवारों, हमारे चर्चों और हमारे देश पर ईश्वर की कृपा होगी।

मेरा मानना है कि किसी देश का उत्थान और पतन ईश्वर के अधिकार में है; यही बात परिवारों, कंपनियों और चर्चों पर भी लागू होती है। समस्या तब पैदा होती है जब नेता—जिन्हें अच्छी तरह शासन करके और ईश्वर का भय मानकर ईमानदारी से अपने कर्तव्यों का पालन करना चाहिए—इसके बजाय आलसी और अनैतिक जीवन जीते हैं, और इस सोच से चलते हैं कि पैसा सब कुछ ठीक कर सकता है। इसका नतीजा क्या होता है? ऐसे नेता निश्चित रूप से उस देश, परिवार या चर्च पर मुसीबत लाते हैं जिसका वे नेतृत्व करते हैं। अगर हम ऐसे देश में रह रहे हैं जिस पर ऐसी मुसीबत आने वाली है, तो हमें क्या करना चाहिए? हमें उपदेशक 10:20 की बातों पर ध्यान देना चाहिए: "राजा को अपने मन में भी बुरा न कह, और न अपने शयनकक्ष में किसी अमीर को बुरा कह; क्योंकि आकाश का कोई पक्षी तेरी आवाज़ ले जा सकता है, और उड़ता हुआ पक्षी उस बात की खबर दे सकता है।" इसका क्या मतलब है? अगर हमारे नेता आलस, अनैतिकता और इस सोच के कारण कि पैसा ही सब कुछ है, ठीक से शासन करने में नाकाम हो रहे हैं, तो हमें सावधान रहना चाहिए कि हम उन्हें बुरा न कहें या उनकी आलोचना न करें। क्यों? क्योंकि जो बातें हम चुपके से कहते हैं—हमारी बुराई या आलोचना—वे उनके कानों तक पहुँच सकती हैं। इसलिए, हमें अपनी ज़बान पर काबू रखना चाहिए; कमियों वाले नेताओं को बुरा कहने या उनकी आलोचना करने के बजाय, हमें उनके लिए ईश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए। हमें ईश्वर की दया, करुणा और कृपा के लिए प्रार्थना करनी चाहिए, और साथ ही उनके सही न्याय के लिए भी प्रार्थना करनी चाहिए। इसके अलावा, हमें अपने देश (या परिवार और चर्च) के नेताओं के लिए प्रार्थना करनी चाहिए और परमेश्वर से यह मांगना चाहिए कि वे उन्हें यीशु जैसा स्वभाव सिखाएं—खासकर 'आत्मा का फल' यानी संयम, साथ ही ईमानदारी और सिर्फ़ यीशु में संतुष्ट रहने से मिलने वाली तृप्ति का रहस्य। जब हम ऐसा करते हैं, तो हमारे देश (या परिवार और चर्च) को परमेश्वर का आशीर्वाद मिलेगा।

आइए उस दिन के बारे में सोचें!

[सभोपदेशक 11:1-8]

जब मैं पिछले साल को याद करता हूँ, तो परमेश्वर की कृपा और प्रेम के लिए आभारी होने के कई कारण मिलते हैं जो उन्होंने हम पर बरसाए हैं। हमारी कलीसियाई समुदाय के बारे में, मैं बहुत आभारी हूँ कि परमेश्वर ने डीकन किम को जीवन का दूसरा मौका दिया। व्यक्तिगत स्तर पर, मैं आभारी हूँ कि परमेश्वर ने मेरे ससुर की उम्र बढ़ाई। इन दो लोगों के बारे में सोचने से मुझे कुछ बातें समझ आई—भले ही मेरी समझ पूरी न हो। एक बात जो समझ आई, वह यह है कि परमेश्वर सचमुच हमारी प्रार्थनाओं का जवाब देते हैं। मुझे वह पल अच्छी तरह याद है जब डीकन किम इंटेंसिव केयर यूनिट (ICU) में थे; जब मैं उनसे मिलकर लौट रहा था, तो उनकी पत्नी—जो खुद भी एक डीकन हैं—मेरे पास आई और कहा, "पास्टर, मैं बस परमेश्वर से एक चमत्कार के लिए प्रार्थना कर रही हूँ।" परमेश्वर ने उनकी सच्ची प्रार्थना का जवाब दिया, और हमने सचमुच एक अद्भुत चमत्कार देखा। मेरे ससुर के बारे में भी डॉक्टर ने कहा था कि वे अब नहीं बचेंगे, फिर भी परमेश्वर ने इतने सारे लोगों की प्रार्थनाओं का जवाब दिया, और उनकी सेहत में इतना सुधार देखना वाकई कमाल की बात है। मुझे वे पल साफ-साफ याद हैं—जब डॉक्टरों ने डीकन किम और मेरे ससुर, दोनों से कहा था कि वे मौत के करीब हैं। मैंने सोचा कि अगर मैं उनकी जगह होता तो कैसा महसूस करता। इसके अलावा, मैंने सोचा कि अगर कोई डॉक्टर मुझसे कहे, "आपके पास जीने के लिए छह महीने से भी कम समय है," तो मैं अपने बाकी दिन कैसे बिताऊँगा। मेरे मन में दो विचार आए। पहला एक किस्सा था जो मैंने यूनिवर्सिटी के दिनों में एक दोस्त से सुना था। एक कहानी है जिसमें भिक्षु अपने मठ में सॉकर खेल रहे थे। जब मठ के प्रमुख (एबट) वहाँ आए और पूछा, "अगर कल तुम्हारी मौत हो जाए, तो तुम क्या करोगे?" तो

भिक्षुओं ने अलग-अलग जवाब दिए—जैसे कि और लगन से सुसमाचार का प्रचार करना, बाइबल को और ध्यान से पढ़ना, या और ज़्यादा प्रार्थना करना—लेकिन एक भिक्षु ने जवाब दिया, "मैं कल भी सॉकर ही खेलूँगा।" मुझे यह कहानी बहुत पसंद है क्योंकि यह मेरी अपनी इच्छा को दिखाती है कि मैं जो काम कर रहा हूँ, उसे पूरी निष्ठा से करता रहूँ, भले ही कल मेरी मौत हो जाए। इसने मुझे वेस्टमिंस्टर थियोलॉजिकल सेमिनरी के मेरे सीनियर साथी, स्वर्गीय पास्टर ली की भी याद दिला दी। मुझे याद है कि कैंसर से मरने से पहले, जब वे उस चर्च में उपदेश दे रहे थे जहाँ वे सेवा करते थे, तो उन्हें उल्टी हो गई और उन्हें एम्बुलेंस से अस्पताल ले जाना पड़ा। पास्टर ली के बारे में सोचकर, जिन्होंने अपनी आखिरी सांस तक प्रभु की देह—यानी चर्च—के प्रति अपनी ज़िम्मेदारियाँ ईमानदारी से निभाईं, मेरे मन में भी यह इच्छा और मज़बूत हो गई कि मैं भी मरने के दिन तक मुझे सौंपी गई ज़िम्मेदारियों को ईमानदारी से निभाऊँ।

सभोपदेशक 11:8 में कहा गया है: "चाहे कोई मनुष्य कितने भी साल जिए, उसे उन सभी का आनंद लेना चाहिए। लेकिन उसे अंधेरे के दिनों को याद रखना चाहिए, क्योंकि वे बहुत होंगे। आगे आने वाली हर चीज़ व्यर्थ है।" राजा सुलैमान हमें "अंधेरे के दिनों को याद रखने" के लिए कह रहे हैं। तो, "उस दिन"—यानी "अंधेरे के दिनों"—से उनका क्या मतलब है? इसका मतलब है मृत्यु का दिन (पार्क युन-सन)। वे हमें इस बात के प्रति जागरूक रहकर जीने के लिए प्रोत्साहित कर रहे हैं कि मृत्यु का दिन आएगा। तो, उस अंधेरे दिन—यानी मृत्यु के दिन—को ध्यान में रखकर जीने का क्या मतलब है? हम तीन पहलुओं पर विचार कर सकते हैं। पहला, अपनी मृत्यु के दिन को ध्यान में रखकर जीने का मतलब है समझदारी और विश्वास के साथ जीना।

आज के अंश—सभोपदेशक 11:2, 5 और 6—में एक ही वाक्यांश तीन बार दोहराया गया है: "तुम नहीं जानते" (पद 2), "जैसे तुम नहीं जानते" (पद 5), और "तुम नहीं जानते" (पद 6)। राजा सुलैमान क्या कहते हैं कि हम नहीं जानते? वह है भविष्य। वे कहते हैं कि हम नहीं जान सकते कि आगे क्या होने वाला है। सभोपदेशक 7:14 को देखें: "समृद्धि के दिन आनंदित रहो, और विपत्ति के दिन विचार करो: परमेश्वर ने दोनों ही बनाए हैं, ताकि मनुष्य अपने बाद होने वाली किसी भी चीज़ का पता न लगा सके।" इसका क्या मतलब है? इसका मतलब है कि परमेश्वर हमारे जीवन में समृद्धि और विपत्ति, दोनों तरह के दिन देते हैं। ऐसा करने

के पीछे उनका क्या उद्देश्य है? यह सुनिश्चित करना कि हम अपने भविष्य को पूरी तरह से समझ या जान न सकें। तो फिर, हम—जो भविष्य नहीं जान सकते—कैसे जिएँ? भविष्य के बारे में डरने, चिंता करने या परेशान होने के बजाय, हमें पूरी तरह से परमेश्वर पर भरोसा और निर्भर होकर जीना चाहिए, जो भविष्य को जानते हैं और उस पर पूरी तरह नियंत्रण रखते हैं (7:14)। इसके अलावा, ठीक इसलिए क्योंकि हम भविष्य के बारे में नहीं जानते, हमें अधिक समझदारी से योजना बनानी चाहिए और अपना जीवन जीना चाहिए (वियर्सबे)। हमें कभी भी बिना योजना के या बेतरतीब ढंग से विश्वास में जीने के नाम पर नहीं जीना चाहिए। हमें समझदारी से काम लेना चाहिए। हमें इस धरती पर परमेश्वर द्वारा दिए गए जीवन को उनकी महिमा के लिए सावधानी और ईमानदारी से जीना चाहिए।

दूसरा, अपनी मृत्यु के दिन को ध्यान में रखकर जीने का अर्थ है अपने पड़ोसी के प्रति प्रेम का जीवन जीना।

यहाँ, पड़ोसी के प्रति प्रेम का अर्थ विशेष रूप से दान-पुण्य के कार्यों और ज़रूरतमंदों की मदद करने से है। दूसरे शब्दों में, हमें अपनी मृत्यु के दिन को ध्यान में रखते हुए जीना चाहिए और ज़रूरतमंद पड़ोसियों की लगन से मदद करनी चाहिए। तो फिर, हमें अपने पड़ोसियों की मदद कैसे करनी चाहिए?

(1) हमें बिना कंजूसी के उदारतापूर्वक देना चाहिए।

आज के वचन, उपदेशक 11:1 को देखें: "अपनी रोटी पानी पर डाल दे, क्योंकि बहुत दिनों बाद तू उसे फिर पाएगा।" यहाँ "अपनी रोटी पानी पर डाल दे" वाक्यांश का क्या अर्थ है? इसका अर्थ है कि जब हम अपने पड़ोसियों की मदद करते हैं, तो हमें उदार हृदय से ऐसा करना चाहिए, बिना किसी कंजूसी के (पार्क युन-सन)। दूसरे शब्दों में, राजा सुलैमान हमें मृत्यु के दिन—उस अंधेरे दिन—को ध्यान में रखकर जीने के लिए प्रोत्साहित करते हैं; वे हमें उदारता का जीवन जीने और बदले में किसी इनाम की उम्मीद किए बिना दूसरों की मदद करने का आग्रह करते हैं (पार्क युन-सन)। जिन लोगों की हम मदद करते हैं, उनसे हमें इनाम की उम्मीद क्यों नहीं करनी चाहिए? ऐसा इसलिए है क्योंकि हम प्रभु पर भरोसा करते हैं और इनाम के लिए उनकी ओर देखते हैं (पद 1b)।

(2) हमें बहुत से लोगों के प्रति भरपूर दया दिखानी चाहिए।

आज के वचन, उपदेशक 11:2 को देखें: "सात या आठ लोगों को हिस्सा दे, क्योंकि तू नहीं जानता कि धरती पर क्या विपत्ति आ सकती है।" "सात या आठ लोगों को हिस्सा देने" के निर्देश का अर्थ है कि हमें जितना संभव हो उतने तरीकों और क्षेत्रों में दया के कार्य करने चाहिए। इसका अर्थ यह भी है कि हम जितने अधिक लोगों पर दया कर सकें, करें (पार्क युन-सन)। इसका क्या कारण है? इसका कारण यह है कि हमें नहीं पता कि धरती पर किस तरह की आपदा आ सकती है (वचन 2b)। दूसरे शब्दों में, चूँकि हमें नहीं पता कि हमारी मृत्यु कब होगी, इसलिए हमें ईश्वर द्वारा दी गई भौतिक आशीषों का उपयोग करके अपने पड़ोसियों पर दया करनी चाहिए और उन्हें राहत पहुँचानी चाहिए; हम ऐसा इसलिए करते हैं क्योंकि हमें कभी नहीं पता होता कि कब कोई विपत्ति आ सकती है, जिससे हम दूसरों की मदद करने में असमर्थ हो सकते हैं। यह निश्चित है कि जैसे "यदि बादल बारिश से भरे हों, तो वे धरती पर बरसते हैं, और यदि कोई पेड़ दक्षिण या उत्तर की ओर गिरता है, तो वह वहीं पड़ा रहता है"—तूफान के बाद ठीक उसी जगह पड़ा रहता है जहाँ वह गिरा था—ठीक वैसे ही, जब इस धरती पर आपदा आती है, तो लोग अनिवार्य रूप से उस नियति का सामना करते हैं जो उन पर आती है (वचन 3) (पार्क युन-सन)। तो फिर, हमें कैसे जीना चाहिए जब हमें नहीं पता कि धरती पर या हमारे अपने जीवन में कब आपदा आ सकती है? हम किसी संभावित, अप्रत्याशित विपत्ति की चिंता के कारण दूसरों की सेवा और मदद करने में हिचकिचा सकते हैं। इसीलिए राजा सुलैमान कहते हैं: "जो हवा को देखता है वह बीज नहीं बोएगा, और जो बादलों को देखता है वह फसल नहीं काटेगा" (11:4)। इसका क्या अर्थ है? इसका अर्थ है कि हमें भविष्य की आपदाओं की चिंता के कारण दूसरों की मदद करने में हिचकिचाना नहीं चाहिए। यह हमें विश्वास के साथ दूसरों की मदद करने के लिए प्रेरित करने वाला एक सबक है, क्योंकि यदि हम विभिन्न परिस्थितियों का आकलन करने में उलझ गए, तो हम कभी भी वह मदद नहीं कर पाएँगे।

प्रियजनों, केवल ईश्वर ही हमारा भविष्य जानते हैं। चूँकि हमें नहीं पता कि हमारे जीवन के लिए भविष्य में क्या है, इसलिए जब भी ईश्वर हमें समृद्धि के दिन देते हैं, हमें बहुत दया दिखानी चाहिए और कई लोगों को राहत पहुँचानी चाहिए। क्यों? क्योंकि हमें नहीं पता कि हमारे जीवन में कब विपत्ति का दिन आ सकता है (सभोपदेशक 7:14)।

तीसरी बात, अपनी आने वाली मौत के बारे में जानते हुए जीना, असल में परमेश्वर के वचन को मानने और उनके काम को लगन से करने के लिए खुद को समर्पित करना है।

आज के वचन, उपदेशक 11:5-6 पर गौर करें: “जैसे तुम हवा का रास्ता नहीं जानते, या यह नहीं जानते कि माँ के पेट में शरीर कैसे बनता है, वैसे ही तुम परमेश्वर के कामों को नहीं समझ सकते, जो सब चीज़ों का बनाने वाला है। सुबह बीज बोओ, और शाम को भी अपने हाथ खाली मत रखो, क्योंकि तुम नहीं जानते कि कौन सा बीज सफल होगा—यह या वह, या दोनों ही अच्छे से फलेंगे।” इसका क्या मतलब है? हम हवा का रास्ता नहीं जानते। न ही हम यह जानते हैं कि माँ के पेट में बच्चे की हड्डियाँ कैसे बनती हैं और बढ़ती हैं। इसी तरह, हम परमेश्वर की योजना को पूरी तरह नहीं समझ सकते—कि वह सब कुछ कैसे पूरा करता है। इसलिए, राजा सुलैमान हमसे कहते हैं कि “सुबह बीज बोओ और शाम को अपने हाथ खाली मत रखो।” हमें अपनी जवानी (यानी “सुबह”) में नेकी के लिए अपने साधनों से परमेश्वर की सेवा में खुद को लगाना चाहिए और बुढ़ापे (यानी “शाम”) में भी ऐसा ही करते रहना चाहिए (पार्क युन-सन)। एक किसान की तरह, हमें अपनी पूरी ज़िंदगी में, चाहे जवानी हो या बुढ़ापा, लगन से बीज बोते रहना चाहिए। और जब हम बीज बोएँ, तो हमें रोते हुए भी ऐसा करना चाहिए (भजन संहिता 126:6)। अगर हम ऐसा करते हैं, तो हम ज़रूर खुशी के साथ अनाज की फसल लेकर लौटेंगे। संक्षेप में, हमें अपनी पूरी ज़िंदगी परमेश्वर की सेवा लगन से करने की कोशिश करनी चाहिए। चूँकि हम नहीं जानते कि परमेश्वर क्या फल देगा, इसलिए हमें अपने हाथ खाली नहीं रखने चाहिए, बल्कि प्रभु के लिए कड़ी मेहनत और लगन से काम करना चाहिए। आज दोपहर, मुझे पास्टर गोमेज़ से एक दुखद खबर मिली, जो हमारी हिस्पैनिक मिनिस्ट्री (हिस्पैनिक लोगों के लिए सेवा कार्य) का नेतृत्व करते हैं। एक हिस्पैनिक भाई, जो हमारे चर्च में आते थे, मेक्सिको चले गए थे; खरीदारी करते समय, उन्हें लूट लिया गया और उनकी पीठ में गोली मार दी गई, जिससे उन्हें लकवा मार गया और उन्हें अस्पताल में भर्ती होना पड़ा। यह सचमुच बहुत दुखद खबर है। उनकी पत्नी एक बहन हैं जिन्होंने हमारे चर्च की वफादारी से सेवा की है, और उनके पति की उम्र सिर्फ चौतीस साल के आसपास है। यह सुनने के कुछ घंटों बाद, मुझे कोरिया में एक साथी विश्वासी से खबर मिली कि एक *क्वोंसा* (वरिष्ठ महिला सदस्य) का निधन हो गया है—वही महिला जिन्होंने कोरिया की मेरी यात्रा के दौरान मेरे परिवार को खाना खिलाया था और बातचीत के लिए हमें अपने घर बुलाया था। उनकी मेरी आखिरी याद यह है कि वे चर्च के ऑफिस में कुर्सी

पर बैठी थीं, उन्हें बहुत परेशानी हो रही थी और वे ज़ोर-ज़ोर से आवाज़ें निकाल रही थीं जैसे गले में कुछ फँस गया हो, और मैंने उनकी मदद के लिए उनकी पीठ थपथपाई थी। मुझे पता चला कि उनका निधन हो गया है—या तो कल रात या आज सुबह-सुबह। उस दोपहर मुझे फिर से एहसास हुआ कि यह दुनिया मौत की सच्चाई से कितनी भरी हुई है। तो फिर, हमें कैसे जीना चाहिए? हमें अपनी रोज़मर्रा की ज़िंदगी में उस दिन—उस काले दिन—को ध्यान में रखकर जीना चाहिए जब हमारा सामना मौत से होगा। हमें समझदारी और विश्वास के साथ जीना चाहिए; साथ ही, अपने पड़ोसियों से प्यार करने के यीशु के आदेश के अनुसार, हमें दया दिखाने और दान-पुण्य के कामों में खुद को लगाने की कोशिश करनी चाहिए। हमें परमेश्वर के वचन का पालन भी करना चाहिए और लगन से परमेश्वर का काम करना चाहिए। ऐसा जीवन परमेश्वर की नज़र में सचमुच सुंदर होता है, और यह वह जीवन है जो उस खुशी के आनंद में जिया जाता है जिसे परमेश्वर खुद देते हैं। मैं प्रार्थना करता हूँ कि आप और मैं एक ऐसा खुशी भरा जीवन जिँएँ जो परमेश्वर की नज़र में सुंदर हो।

“हे जवान”

[सभोपदेशक 11:9-10]

क्या इन दिनों आपके दिल में खुशी है, या आप चिंता के बोझ तले दबे हुए हैं?

हमने पहले ही जीवन जीने के बारे में तीन सबक सीखे हैं—अपनी मृत्यु के दिन पर विचार करते हुए—जो सभोपदेशक 11:1-8 और “आइए उस दिन के बारे में सोचें” विषय पर आधारित हैं: (1) पहला, हमें अपनी बाकी ज़िंदगी समझदारी से और पूरी तरह से परमेश्वर पर भरोसा करते हुए (विश्वास के ज़रिए) जीनी चाहिए; (2) दूसरा, अपनी मृत्यु के दिन को ध्यान में रखते हुए—और यह जानते हुए कि हम भविष्य में आने वाली आपदाओं का पहले से अंदाज़ा नहीं लगा सकते—हमें अपने पड़ोसियों से प्यार करने और मौजूदा हालात में भलाई के काम करने की कोशिश करनी चाहिए; और (3) तीसरा, अपनी मृत्यु के दिन को याद रखते हुए, हमें परमेश्वर के काम को लगन से करना चाहिए। हमने सीखा कि परमेश्वर के वचन का पालन करते हुए और अपनी मृत्यु के दिन को ध्यान में रखकर जिया गया जीवन सचमुच एक सुंदर जीवन है (वचन 7)।

आज, मैं सभोपदेशक 11:9-10 और “हे जवान” विषय के आधार पर राजा सुलैमान द्वारा युवाओं को दी गई सलाह पर चर्चा करना चाहता हूँ। हालाँकि इस हिस्से में खास तौर पर युवाओं के लिए परमेश्वर का संदेश है, लेकिन इसमें बताई गई बातें हम सभी पर लागू होती हैं; इसलिए, हमें इसे ध्यान से सुनना चाहिए।

पहला, युवाओं को अपनी जवानी का आनंद लेना चाहिए।

आज के पाठ में सभोपदेशक 11:9 के पहले हिस्से को देखें: “हे जवान, अपनी जवानी में खुश हो और अपनी युवावस्था के दिनों में अपने दिल को आनंदित होने दे; अपने दिल की राह पर चल और जो कुछ तेरी आँखों को सही लगे...” सभोपदेशक 11:7-8 में, राजा सुलैमान कहते हैं कि “आँखों के लिए सूरज को देखना सुखद है” (वचन 7) और “अगर कोई व्यक्ति कई साल जीता है, तो उसे उन सभी सालों में खुश होना चाहिए” (वचन 8)। फिर, वचन 9 में—जो आज हमारे सामने है—वे खास तौर पर युवाओं से बात करते हुए कहते हैं, “अपनी जवानी में खुश हो और अपनी युवावस्था के दिनों में अपने दिल को आनंदित होने दे।” आखिरकार, चाहे हम युवा हों, अपनी जवानी के दिनों में हों, परिपक्व हों या बुजुर्ग, हमें “उस दिन” (पद 8)—यानी अपनी मौत के दिन—की ओर देखते हुए खुशी ढूँढनी चाहिए। साथ ही, हमें परमेश्वर के वचन का पालन करना चाहिए, पूरी तरह से उस पर भरोसा रखना चाहिए और लगन से भलाई के काम (अपने पड़ोसियों से प्यार करना) और परमेश्वर के काम में लगे रहना चाहिए। इस संदर्भ में, राजा सुलैमान पद 9 और 10 में खास तौर पर युवाओं पर ध्यान केंद्रित करते हैं। फिर भी, जब वे उनसे “आनंदित होने और खुश रहने” के लिए कहते हैं, तो पद 9 के दूसरे हिस्से में यह भी जोड़ते हैं: “...लेकिन जान लो कि इन सब बातों के लिए परमेश्वर तुम्हारा न्याय करेगा।”

इस हिस्से पर मनन करने से पहले, मुझे पद 9 थोड़ा उलझन भरा लगता था। यह तो साफ था कि राजा सुलैमान युवाओं से आनंदित होने और खुश रहने के लिए कह रहे थे; लेकिन पद का दूसरा हिस्सा “लेकिन” शब्द के साथ परमेश्वर के न्याय की बात करता है। मुझे पक्का नहीं पता था कि क्या वे सचमुच उन्हें आनंदित होने के लिए प्रोत्साहित कर रहे थे, या वे कुछ ऐसा कह रहे थे जैसे, “आगे बढ़ो—जो तुम्हारा दिल चाहे और जो तुम्हारी आँखों को सही लगे, वह करो; लेकिन अगर तुम ऐसा करते हो, तो परमेश्वर तुम्हारा न्याय करेगा।” तो फिर, हमें पद 9 का अर्थ कैसे समझना चाहिए? “अपने दिल की राहों पर चलने और जो तुम्हारी आँखें देखें, उसे करने” का निर्देश असल में एक व्यंग्यात्मक टिप्पणी है। दूसरे शब्दों में, यह कहने का एक तरीका है, “अगर तुम ऐसा करने की कोशिश करना चाहते हो, तो ज़रूर करो।” हालाँकि, यह परमेश्वर के न्याय की याद दिलाता है, जिसका मतलब है कि इसमें खतरे भी शामिल हैं (पार्क युन-सन)। फिर भी, दूसरे विद्वानों की

व्याख्याएँ थोड़ा अलग अर्थ बताती हैं। उदाहरण के लिए, एक विद्वान का सुझाव है कि हालाँकि युवाओं को अपनी जवानी का आनंद लेना चाहिए और जैसा उनका दिल चाहे खुश रहना चाहिए, लेकिन उन्हें परमेश्वर के न्याय को ध्यान में रखते हुए अपनी इच्छाओं पर संयम भी रखना चाहिए (वाल्डबोल्ड)। हालाँकि मैं पक्के तौर पर नहीं कह सकता कि कौन सी व्याख्या सही है, लेकिन उपदेशक 11:7-8 के संदर्भ को देखते हुए, ऐसा लगता है कि राजा सुलैमान युवाओं से आग्रह कर रहे हैं कि वे परमेश्वर के न्याय को ध्यान में रखते हुए और अपनी इच्छाओं पर संयम रखते हुए अपनी जवानी का आनंद लें।

तो फिर, युवा सचमुच अपनी जवानी का आनंद कैसे ले सकते हैं? उपदेशक के उन हिस्सों को याद करते हुए जिन पर हमने पहले ही मनन किया है, राजा सुलैमान अक्सर जीवन का आनंद लेने के बारे में बात करते हैं; इन विचारों को इस तरह संक्षेप में बताया जा सकता है: "खाने-पीने में खुशी ढूँढ़ना" (2:24; 3:13; 8:15; 9:7), "शादीशुदा जिंदगी की खुशी का आनंद लेना" (9:9), "अपनी मेहनत में संतुष्टि पाना" (2:24; 5:18), और "अपने काम में खुश होना" (3:22)। आखिर में, हम इसे युवाओं के लिए एक ऐसे संदेश के तौर पर देख सकते हैं जो उन्हें खुशी और आनंद का अनुभव करने के लिए प्रोत्साहित करता है—चाहे वह खाने-पीने और काम करने जैसे साधारण काम हों, या फिर प्रभु में जीवनसाथी के साथ शादी की खुशी हो। फिर भी, जब मैंने इस बारे में सोचा कि युवाओं को अपनी जवानी का आनंद कैसे लेना चाहिए, तो भजन संहिता 119:9 के शब्द याद आए: "एक युवा व्यक्ति पवित्रता के रास्ते पर कैसे चल सकता है? आपके वचन के अनुसार जीकर।" हमारे युवाओं के दिलों में सच्ची खुशी और आनंद लाने वाली चीज़ परमेश्वर के वचन के अनुसार एक साफ़-सुथरा जीवन—यानी पवित्रता—जीना है। संक्षेप में, युवाओं के लिए अपनी जवानी का सही मायने में आनंद लेने का तरीका पवित्रता और शुद्धता को अपनाना है।

दूसरी और आखिरी बात, युवाओं को अपने दिलों से चिंता को दूर करना चाहिए और अपने शरीर को बुराई से बचाकर रखना चाहिए।

आज के वचन, उपदेशक 11:10 को देखें: "इसलिए, अपने दिल से चिंता को दूर करो और अपने शरीर की परेशानियों को हटा दो, क्योंकि बचपन और जवानी के दिन बहुत कम समय के लिए होते हैं।" अगर युवा अपने जीवन और चाल-चलन में परमेश्वर के वचन के अनुसार पवित्रता नहीं अपनाते हैं, तो उनके दिलों में

चिंता ज़रूर घर कर लेगी। इसके अलावा, जब वे परमेश्वर के वचन के अनुसार जीने में नाकाम रहते हैं, तो वे अपने शरीर से पापपूर्ण काम ज़रूर करेंगे। अगर कोई युवा बिना किसी रोक-टोक के अपनी मनमानी करता है और जो चाहे करता है, तो उसे आखिरकार ऐसी स्थितियों का सामना करना पड़ेगा जो दुख लाती हैं और बुराई से उसके शरीर को अपवित्र करती हैं (पार्क युन-सन)। इसलिए, राजा सुलैमान युवाओं को सलाह देते हैं: "अपने दिल से चिंता को दूर करो और अपने शरीर की परेशानियों को हटा दो।" यह कैसे मुमकिन है? जब युवा परमेश्वर के वचन के अनुसार पवित्रता अपनाते हैं और अपने दिलों में सच्ची खुशी और आनंद पाते हैं, तो वे उस चिंता, दुख और पाप से आज़ादी का आनंद ले सकते हैं जो शरीर और मन दोनों को परेशान करते हैं (वचन 9)। तो फिर, नौजवानों—और असल में हम सभी—को दिल में खुशी रखते हुए, परमेश्वर के वचन के अनुसार पवित्र जीवन क्यों जीना चाहिए? इसका कारण बस यह है कि जवानी का समय बहुत तेज़ी से बीत जाता है (पद 10)।

आप क्या सोचते हैं? क्या आपको नहीं लगता कि समय बहुत तेज़ी से बीतता है? अपनी जवानी के बारे में सोचिए। क्या वह बहुत तेज़ी से नहीं गुज़री? क्या आपको अपनी ज़िंदगी के उस दौर में खुशी मिली? क्या आपने अपनी जवानी का आनंद लिया? क्या आपका दिल खुशी और आनंद से भरा था—जो परमेश्वर के वचन के अनुसार पवित्र जीवन जीने से मिलता है—या फिर वह चिंता, दुख और पाप के बोझ से दबा हुआ था? या फिर आपने अपनी जवानी ऐसे बोझों से भरे शरीर और मन के साथ बिताई? आप नौजवानों को क्या सलाह देंगे? नौजवानों को खुश रहना चाहिए और अपने दिल में आनंद महसूस करना चाहिए; उन्हें अपनी जवानी का मज़ा लेना चाहिए। उन्हें खाना-पीना चाहिए, कड़ी मेहनत करनी चाहिए और खुशहाल परिवार बनाना चाहिए। साथ ही, उन्हें परमेश्वर के वचन के अनुसार अपना चाल-चलन पवित्र रखकर जवानी की खुशियों का आनंद लेना चाहिए। उन्हें कभी भी अपनी जवानी को मानसिक परेशानी, शारीरिक दुख या पाप से दागदार नहीं होने देना चाहिए। परमेश्वर के न्याय और जवानी के कम समय तक रहने वाली प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, नौजवानों को मिले हुए समय में खुश रहना चाहिए—और प्रभु में सच्ची खुशी ढूँढ़नी चाहिए।

“अपनी जवानी के दिनों में अपने बनाने वाले को याद रखो”

[सभोपदेशक 12:1-8]

सभोपदेशक 11:9-10 पर ध्यान देते हुए, हमने पहले ही दो बातें सीखी हैं जो राजा सुलैमान ने युवाओं को “हे जवान” विषय के तहत बताई हैं। (1) पहली बात, युवाओं को अपनी जवानी का आनंद लेना चाहिए, लेकिन संयम के साथ, ताकि वे हृदय से ज़्यादा न करें और परमेश्वर के विरुद्ध पाप न करें। दूसरे शब्दों में, जीवन का आनंद लेते हुए—चाहे रोज़मर्रा के कामों में, शादी-शुदा ज़िंदगी में, या काम-काज में—उन्हें परमेश्वर के न्याय को ध्यान में रखना चाहिए और उसके वचन के अनुसार पवित्र जीवन जीना चाहिए। (2) दूसरी बात, युवाओं को अपने दिलों से चिंता और अपने शरीरों से बुराई को दूर करना चाहिए। आज के भाग, सभोपदेशक 12:1 में, राजा सुलैमान कहते हैं: “अपनी जवानी के दिनों में अपने बनाने वाले को याद रखो, इससे पहले कि मुसीबत के दिन आ जाएँ और वे साल करीब आ जाएँ जब तुम कहोगे, ‘मुझे इनमें कोई मज़ा नहीं आता।’” हमें परमेश्वर को, जो हमारा बनाने वाला है, याद रखना चाहिए।

तो फिर, हमें अपने बनाने वाले परमेश्वर को कब याद करना चाहिए? ठीक “अपनी जवानी के दिनों” में। दूसरे शब्दों में, जब हम जवान और मज़बूत हों, तब हमें अपने बनाने वाले परमेश्वर को याद करना चाहिए। इसका क्या कारण है? जब हम जवान और जोश से भरे हों, तब हमें अपने बनाने वाले परमेश्वर को क्यों याद करना चाहिए? कारण यह है कि मुसीबत के दिन जल्द ही हम पर आ पड़ेंगे (पद 1)। ये “मुसीबत के दिन” किस तरह के दिन हैं जो हमारा इंतज़ार कर रहे हैं? ये वे दिन हैं जब हम खुद कहेंगे, “मुझे इनमें कोई मज़ा नहीं

आता" (पद 1)। हम आम तौर पर कब कहते हैं, "मुझे इनमें कोई मज़ा नहीं आता"? तब, जब हम बूढ़े हो जाते हैं और हमारा शरीर कमज़ोर पड़ने लगता है। इसलिए, आज के भाग के पद 2 से 6 में, राजा सुलैमान इंसानों के बूढ़े होने और कमज़ोर पड़ने की प्रक्रिया का वर्णन करने के लिए लाक्षणिक भाषा का इस्तेमाल करते हैं। उदाहरण के लिए, पद 2 में वाक्यांश—"इससे पहले कि सूरज और रोशनी और चाँद और तारे धुंधले पड़ जाएँ, और बारिश के बाद बादल लौट आएँ"—फिलिस्तीन के सर्दियों के मौसम की ओर इशारा करता है; क्योंकि सर्दियों में बारिश होती थी, इसलिए दिन अक्सर बादलों से घिरे और उदास होते थे। राजा सुलैमान इस बात को समझाने के लिए कुछ उदाहरणों का इस्तेमाल करते हैं कि बुढ़ापा खुशियों से खाली और अक्सर उदास होता है—जैसे बादलों वाला या बारिश का दिन—और इसलिए वे लोगों से कहते हैं कि वे जवानी के दिनों में ही अपने बनाने वाले परमेश्वर को याद रखें। आयत 3 में "घर की रखवाली करने वाले कांपने लगेंगे" का मतलब है बुढ़ापे में हाथों का कांपना, जबकि "ताकतवर लोग झुक जाएंगे" का मतलब है पैरों की ताकत कम हो जाना। इसके अलावा, "पीसने वाले कम होने के कारण काम बंद हो जाएगा" (आयत 3) वाली बात दांतों की हालत के बारे में है, जो बताती है कि उम्र बढ़ने के साथ दांत बहुत खराब हो जाते हैं। "खिड़कियों से देखने वालों की नज़र धुंधली हो जाएगी" (आयत 3) का मतलब है बुढ़ापे में नज़र कमज़ोर हो जाना। आयत 4 में, "गली के दरवाज़े बंद हो जाएंगे" का मतलब है सुनने की शक्ति कम हो जाना। "चक्की की आवाज़ धीमी हो जाएगी" (आयत 4) का मतलब है कि बुजुर्ग, जिनके दांत नहीं होते, वे लगभग बिना आवाज़ किए खाना खाते हैं। "पक्षी की आवाज़ से नींद खुल जाएगी" (आयत 4) का मतलब है कि बुजुर्ग गहरी नींद नहीं सो पाते और पक्षियों की चहचहाहट से आसानी से जाग जाते हैं। "गाने वाली सब बेटियां धीमी पड़ जाएंगी" (आयत 4) का मतलब है कि गले की नसें कमज़ोर हो जाती हैं, जिससे ज़ोर से बोलना या गाना मुश्किल हो जाता है। आखिर में, राजा सुलैमान कहते हैं कि बुजुर्गों के पास "अपने हमेशा के घर लौटने" (आयत 5) के अलावा कोई चारा नहीं होता। दूसरे शब्दों में, इसका मतलब है कि बुजुर्गों को मौत का सामना करना ही पड़ता है। हालांकि यह सच है कि जवान और बूढ़े दोनों को एक दिन मरना ही है, लेकिन हम इस बात से इनकार नहीं कर सकते कि बुजुर्ग उस अंत के ज़्यादा करीब होते हैं। इसलिए, खासकर बुजुर्गों को अपनी बाकी ज़िंदगी मौत को ध्यान में रखकर जीनी चाहिए। जवानों को भी—यह जानते हुए कि समय तेज़ी से बीतता है और वे भी जल्द ही बूढ़े हो जाएंगे—मौत के बारे में इसी नज़रिए से जीना चाहिए और अपने बनाने वाले परमेश्वर को याद रखना चाहिए।

तो, जब बाइबल हमसे जवानी के दिनों में अपने बनाने वाले परमेश्वर को याद रखने के लिए कहती है, तो उसका क्या मतलब होता है? इसे तीन बातों में समझाया जा सकता है (वोल्बोल्ड):

पहला, "बनाने वाले को याद रखने" के हुक्म का मतलब है परमेश्वर का डर मानना। उपदेशक (Ecclesiastes) की किताब का निष्कर्ष आयत 12:13 में मिलता है: "अब सब कुछ सुना जा चुका है; बात का निष्कर्ष यह है: परमेश्वर का भय मानो और उसकी आज्ञाओं का पालन करो, क्योंकि सभी मनुष्यों का यही कर्तव्य है।" सृष्टिकर्ता को याद करते हुए जीवन जीने का ठीक यही अर्थ है। व्यर्थता की इस दुनिया में रहते हुए, युवाओं को अपना जीवन बेकार के भविष्य के पीछे बर्बाद नहीं करना चाहिए (11:8, 10)। इससे बचने के लिए, उन्हें अपनी जवानी के दिनों में परमेश्वर का भय मानना चाहिए—वही जो जीवन, मृत्यु, सौभाग्य और दुर्भाग्य को पूरी तरह नियंत्रित करता है। इसके अलावा, परमेश्वर का भय मानते हुए, उन्हें उसके वचन के अनुसार पवित्रता (आचरण की शुद्धता) का पालन करना चाहिए (11:10)। जब वे ऐसा करते हैं, तो वे अपने दिलों में चिंता से मुक्त रहेंगे और अपने शरीर से पाप नहीं करेंगे (आयत 10)।

दूसरा, "सृष्टिकर्ता को याद रखने" की आज्ञा का अर्थ है ज़िम्मेदारी से जीते हुए प्रभु में जीवन का आनंद लेना।

उपदेशक 11:9–10 को फिर से देखें, जिस पर हम पहले ही मनन कर चुके हैं, तो हम पाते हैं कि राजा सुलैमान ने युवाओं को आनंद मनाने और अपने दिलों में खुशी खोजने के लिए प्रोत्साहित किया। साथ ही, उन्होंने युवाओं से यह भी कहा कि वे परमेश्वर के न्याय को ध्यान में रखें, अपने दिलों से चिंता दूर करें और अपने शरीर से बुराई को दूर करें। दूसरे शब्दों में, युवाओं को जो आनंद मिलना चाहिए, वह अपनी ज़िम्मेदारियों को पूरा करते हुए मिलने वाला आनंद है। बाइबिल निश्चित रूप से जवानी के दिनों में व्यर्थ चीज़ों के पीछे भागते हुए गैर-ज़िम्मेदाराना जीवन जीने को बढ़ावा नहीं देती है। तो फिर, युवा ज़िम्मेदार रहते हुए जीवन का आनंद कैसे ले सकते हैं? यह तब संभव होता है जब वे जीवन को मृत्यु के नज़रिए से देखते हैं। आज के अंश, उपदेशक 12:6–7 पर विचार करें: "उसे तब याद करो जब चांदी की डोरी ढीली हो जाए, या सोने का कटोरा टूट जाए, या सोते पर घड़ा टूट जाए, या कुएं पर पहिया टूट जाए, और धूल वैसे ही धरती पर लौट जाए जैसी वह थी, और आत्मा उस परमेश्वर के पास लौट जाए जिसने उसे दिया था।" ये दो आयतें हमारी

मृत्यु के बारे में बताती हैं। राजा सुलैमान युवाओं से—जो अंततः बूढ़े होंगे और मरेंगे—कह रहे हैं कि जब वे अभी युवा और मज़बूत हैं, तो प्रभु में जीवन का आनंद लें और ज़िम्मेदारी से जिएं। आखिरकार, आनंद और ज़िम्मेदारी दोनों से भरा जीवन वही है जो प्रभु के लिए जिया जाए। जब हम ज़िम्मेदारी की भावना के साथ प्रभु के लिए जीते हैं और केवल उन्हीं में अपनी संतुष्टि पाते हैं, तो हमें सच्ची खुशी मिलती है।

तीसरी बात, "अपने सृष्टिकर्ता को याद रखने" के आदेश का अर्थ है परमेश्वर के नियमों और आज्ञाओं का ईमानदारी से पालन करना।

आज के वचन, उपदेशक 12:1 में, राजा सुलैमान हमें "अपने सृष्टिकर्ता को याद रखने" के लिए प्रोत्साहित करते हैं। जब हम व्यवस्थाविवरण 8:18 और भजन संहिता 119:55 को देखते हैं, तो "याद रखने" का वाक्यांश "नियम का पालन करने" के निर्देश से बहुत मिलता-जुलता है। इसके अलावा, "याद रखने" का वाक्यांश भजन संहिता 63:6 (वाल्बोर्ड) में पाए जाने वाले "परमेश्वर पर मनन करने और ईमानदारी से उनका अनुसरण करने" के विचार के समान है। दूसरे शब्दों में, "सृष्टिकर्ता को याद रखने" के आदेश का अर्थ है परमेश्वर के नियमों (आज्ञाओं) को ईमानदारी से मानना और उनका पालन करना।

तो फिर, हमें अपनी जवानी में सृष्टिकर्ता परमेश्वर को क्यों याद रखना चाहिए? इसके दो कारण हैं:

(1) हमें अपनी जवानी में सृष्टिकर्ता परमेश्वर को याद रखना चाहिए क्योंकि यह समय परीक्षाओं से भरा होता है (पार्क यू-सन)।

हालांकि जवानी जीवन का आनंद लेने का अवसर देती है, लेकिन साथ ही यह समय प्रलोभनों से भी भरा होता है। खासकर युवा लोगों के सामने यह जोखिम होता है कि वे परमेश्वर के नियमों का पालन करने के बजाय दुनिया की खोखली खुशियों के पीछे भागें। इसका एक कारण शायद जवानी में होने वाली मानसिक और शारीरिक ऊर्जा की अधिकता है। जब तक कोई उस मानसिक और शारीरिक शक्ति को परमेश्वर की महिमा के लिए जीने में नहीं लगाता, तब तक जवानी आसानी से ऐसा समय बन सकती है जब व्यक्ति अनिवार्य रूप से दुनिया की खोखली महिमा के पीछे भागता है।

(2) हमें अपनी जवानी में सृष्टिकर्ता परमेश्वर को याद रखना चाहिए क्योंकि हमारी मानसिक और शारीरिक शक्ति हमें जोश के साथ प्रभु की सेवा करने और उनका अनुसरण करने में सक्षम बनाती है (पार्क यू-सन)।

हमें जवानी में प्रभु के लिए लगन से काम करना चाहिए, क्योंकि जब हम बूढ़े हो जाते हैं, तो शायद हम ऐसा न कर पाएं, भले ही हम चाहें। चूंकि जवानी जल्दी बीत जाती है, इसलिए हमें प्रभु के लिए लगन और जोश के साथ काम करना चाहिए, जब तक हमारे पास ऐसा करने की शक्ति और शारीरिक क्षमता है (11:10)। इसी उद्देश्य के लिए, हमें अपनी जवानी में सृष्टिकर्ता परमेश्वर को याद रखना चाहिए। हमें अपनी जवानी के दिनों में ही ईश्वर, यानी अपने रचयिता को याद रखना चाहिए—इससे पहले कि मुश्किलों का समय आए और वे साल करीब आए जब हम कहें, "अब मुझे इनमें कोई मज़ा नहीं आता।" इससे पहले कि हमारा शरीर कमज़ोर हो जाए और हम कुछ भी करने लायक न रहें, हमें ईश्वर का आदर करना चाहिए और पूरी निष्ठा से उनकी आज्ञाओं का पालन करना चाहिए। इसलिए, हमें अपनी जवानी का आनंद लेते हुए ज़िम्मेदारी के साथ जीवन जीना चाहिए। मेरी प्रार्थना है कि आपको ऐसे ही आशीर्वाद मिलें।

“सारी बात का निचोड़ सुनने के बाद”

[सभोपदेशक 12:9–14]

जब मैं किताबें खरीदने के लिए किसी किताबों की दुकान पर जाता हूँ, तो आम तौर पर सबसे पहले उन लेखकों की किताबें ढूँढ़ता हूँ जिन्हें मैं पसंद करता हूँ। फिर, मैं देखता हूँ कि क्या कोई ऐसी किताब है जिसे मैंने अभी तक खरीदा या पढ़ा नहीं है। अगर मुझे कोई ऐसी किताब मिलती है जिसे मैंने नहीं पढ़ा है, तो मैं उसकी विषय-सूची (table of contents) देखने के लिए उसे खोलता हूँ; ऐसा मैं इसलिए करता हूँ ताकि मुझे किताब के विषय का अंदाज़ा हो सके। किताब खरीदने का पक्का फैसला करने से पहले, मैं अक्सर उसके आखिर में दिए गए निष्कर्ष (conclusion) को पढ़ता हूँ। निष्कर्ष पढ़ने से मुझे लेखक की लिखी बातों का मुख्य सार समझ में आ जाता है।

आज, हम आखिरकार 'सभोपदेशक' की किताब के निष्कर्ष पर पहुँच रहे हैं—अध्याय 12 की आयतें 9 से 14। यहाँ, उपदेशक राजा सुलैमान हमें अपनी आखिरी सलाह देते हैं। इस आखिरी सलाह का मुख्य सार आयत 13 में मिलता है: “सारी बात का निचोड़ सुनने के बाद, परमेश्वर का भय मान और उसकी आज्ञाओं का पालन कर, क्योंकि मनुष्य का यही पूरा कर्तव्य है।” हमने सबसे पहले बुधवार, 17 अक्टूबर, 2009 को 'सभोपदेशक' की किताब पर मनन करना शुरू किया था। उस समय, हमने शुरुआती हिस्से—सभोपदेशक 1:1–11—पर “एक व्यर्थ संसार” शीर्षक के तहत विचार किया था। अब, लगभग एक साल और दो महीने बाद, हम 'सभोपदेशक' 12:9–14 में किताब के निष्कर्ष पर अपना ध्यान केंद्रित कर रहे हैं। इस हिस्से पर ध्यान देते हुए, और “सारी बात का निचोड़ सुनने के बाद” शीर्षक के तहत, मैं विनम्रतापूर्वक उस आखिरी सलाह को ग्रहण करना चाहता हूँ जो परमेश्वर 'सभोपदेशक' की किताब के ज़रिए हमें बताना चाहते हैं।

सबसे पहले, हमें "सारी बात का निचोड़ सुनने के बाद" वाक्यांश पर विचार करना चाहिए और खुद से पूछना चाहिए: आखिर यह "सारी बात का निचोड़" क्या है जिसे हमने सुना है? असल में, यह सच्चाई का ईमानदार वचन है। आज के पाठ, सभोपदेशक 12:10 को देखें: "उपदेशक ने मनभावन शब्द ढूँढ़ने की कोशिश की, और जो उसने लिखा वह सीधा था—सच्चे शब्द।" जैसा कि हम जानते हैं, राजा सुलैमान दुनिया के सबसे बुद्धिमान व्यक्ति थे (1 राजा 3:3-28)। परमेश्वर से मिली बुद्धि (सभोपदेशक 12:9) के साथ, उन्होंने न केवल इस्राएल के लोगों—परमेश्वर के लोगों—को ज्ञान सिखाया, बल्कि गहरे चिंतन और अध्ययन के ज़रिए कई कहावतें भी लिखीं (पद 9)। चाहे इस्राएलियों को ज्ञान सिखाना हो या कहावतें लिखना, राजा सुलैमान ने हमेशा अच्छे और प्रभावशाली शब्दों को खोजने और इस्तेमाल करने की पूरी कोशिश की (पद 10)। पद 10 में, वे कहते हैं कि सभोपदेशक की किताब, जिसे उन्होंने लिखा है, उसमें "सही और सच्ची बातें" हैं। दूसरे शब्दों में, राजा सुलैमान का कहना है कि सभोपदेशक का जो संदेश उन्होंने सिखाया है, वह सच है—झूठ नहीं। ऐसा कहकर, वे हमें बताते हैं कि इस किताब में परमेश्वर के वचन का अधिकार है (पार्क युन-सन)। तो फिर, परमेश्वर के अधिकार वाले सभोपदेशक के वचनों को सुनने के बाद हमें कैसा व्यवहार करना चाहिए? इस किताब के ज़रिए परमेश्वर का वचन सुनने के बाद हमें कैसे जीना चाहिए? मैं इससे चार बातें सीखना चाहूँगा।

पहली बात, सभोपदेशक का संदेश सुनने के बाद, हमें महसूस होना चाहिए कि परमेश्वर का वचन हमारे दिल और अंतरात्मा को छू रहा है।

आज के वचन, सभोपदेशक 12:11 को देखिए: "बुद्धिमानों के वचन पैने अंकुशों की तरह होते हैं..." यहाँ, "अंकुश" का मतलब उन औज़ारों से है जिनका इस्तेमाल चरवाहे अपने झुंड को सही रास्ते पर ले जाने के लिए करते थे; परमेश्वर का सच्चा वचन भी ठीक यही काम करता है। जब हम दाएं या बाएं भटकने लगते हैं, तो परमेश्वर का सच्चा वचन हमारे दिल और अंतरात्मा को चुभता है, जिससे हमें अपनी गलती का एहसास होता है और हम सही रास्ते पर वापस आ जाते हैं। इब्रानियों के लेखक कहते हैं: "क्योंकि परमेश्वर का वचन जीवित और प्रभावशाली है, और किसी भी दोधारी तलवार से ज़्यादा तेज़ है; यह आत्मा और प्राण, जोड़ों और मज्जा को अलग-अलग करने तक भेद देता है..." (इब्रानियों 4:12)। इसके अलावा, प्रेरितों के काम अध्याय

2 में, जब प्रेरित पतरस ने परमेश्वर का वचन सुनाया, तो सुनने वालों के "दिल में चुभन हुई" और उन्होंने पतरस और दूसरे प्रेरितों से पूछा, "भाइयों, हम क्या करें?" (पद 37)। पीटर ने जवाब दिया, "पश्चाताप करो और अपने पापों की माफ़ी के लिए यीशु मसीह के नाम पर बपतिस्मा लो, और तुम्हें पवित्र आत्मा का वरदान मिलेगा" (पद 38)। उस दिन, लगभग 3,000 लोगों ने पीटर के ज़रिए परमेश्वर का वचन सुना, उनके दिल पर गहरी चोट लगी, उन्होंने पश्चाताप किया और बपतिस्मा लिया (पद 41)। इस तरह, परमेश्वर का सच्चा वचन हमारे दिलों और अंतःकरण को भेदता है। इसलिए, एक साल से ज़्यादा समय तक बुधवार की प्रार्थना सभाओं में 'उपदेशक' (Ecclesiastes) की किताब पर मनन करने के बाद, हममें से हर एक को खुद से यह सवाल पूछना चाहिए: क्या परमेश्वर के वचन ने हमारे दिलों और अंतःकरण को भेदा है? आपके साथ कैसा है? व्यक्तिगत रूप से, 'उपदेशक' की किताब ने मेरे दिल और अंतःकरण को झकझोरा है क्योंकि यह जानते हुए भी कि मुझे ऐसी चीज़ों के पीछे नहीं भागना चाहिए जो पूरी तरह से बेकार हैं, मैं बार-बार ऐसी व्यर्थ चीज़ों के पीछे भागता रहता हूँ। मिशनरी जिम एलियट ने मशहूर बात कही थी, "वह मूर्ख नहीं है जो वह चीज़ दे देता है जिसे वह रख नहीं सकता, ताकि वह उसे पा सके जिसे वह खो नहीं सकता।" फिर भी, क्योंकि मैं ऐसी चीज़ों के पीछे भागता हूँ जो टिकती नहीं हैं—क्षणभंगुर, बेकार सुख-सुविधाएँ ('उपदेशक' 2:1-11)—इसलिए 'उपदेशक' में बताए गए परमेश्वर के वचन की सच्चाई मेरे दिल और अंतःकरण को भेदती है। दूसरी बात, 'उपदेशक' का पूरा संदेश सुनने के बाद, हमें यह पक्का करना चाहिए कि परमेश्वर का सच्चा वचन हमारे दिलों में "मज़बूती से गड़ी हुई कील" की तरह बन जाए। दूसरे शब्दों में, हमें जीवन की सभी समस्याओं का समाधान परमेश्वर के वचन की नींव पर करना चाहिए।

आज के वचन, 'उपदेशक' 12:11 को देखिए: "बुद्धिमानों के वचन पैने अंकुश की तरह होते हैं, और सभाओं के अगुवों के वचन मज़बूती से गड़ी हुई कीलों की तरह होते हैं, जो एक ही चरवाहे से मिले हैं।" जब प्रभु—जो सच्चे बुद्धिमान और हमारे शिक्षक हैं—हमसे बात करते हैं, तो उनके वचन न केवल पैने अंकुश की तरह होते हैं जो हमारे दिलों और अंतःकरण को चुभते हैं, बल्कि "मज़बूती से गड़ी हुई कीलों" की तरह भी होते हैं। सच्चाई के वचन का "मज़बूती से गड़ी हुई कील" की तरह होने का क्या मतलब है? इसका मतलब है कि

जैसे ज़रूरी चीज़ों को मज़बूती से ठोकी गई कील पर टांगा जाता है, वैसे ही ज़िंदगी की सभी मुश्किलों को परमेश्वर के वचन के सहारे सुलझाया जा सकता है (पार्क युन-सन)।

प्रभु की भेड़ें होने के नाते, हमें न सिर्फ़ चरवाहे की बातें सुननी चाहिए और उनके अनुसार चलना चाहिए, बल्कि उनसे समझ भी हासिल करनी चाहिए ताकि हम ज़िंदगी की चुनौतियों का सामना कर सकें और उन्हें सुलझा सकें। हमें कभी भी परमेश्वर के सच्चे वचन से अलग होकर ज़िंदगी की मुश्किलों को सुलझाने की बेवकूफी नहीं करनी चाहिए। इसके लिए, परमेश्वर का वचन हमारे दिलों में मज़बूती से जमी हुई कील की तरह बसा होना चाहिए। ज़रा सोचिए: अगर दीवार में कील मज़बूती से न लगी हो, तो उस पर ज़रूरी चीज़ें कैसे टांगी जा सकती हैं? उसी तरह, अगर परमेश्वर का सच्चा वचन हमारे दिलों में गहराई से नहीं बसा होगा, तो ज़िंदगी की मुश्किलों का सामना करते समय न तो हम उसकी ओर लौटने की कोशिश करेंगे और न ही ऐसा कर पाएंगे। इसलिए, अब जबकि हमने 'उपदेशक' (Ecclesiastes) की किताब का अध्ययन पूरा कर लिया है, आइए हम इसकी सच्चाई को अपने दिलों में बसा लें और परमेश्वर के वचन की शक्ति से ज़िंदगी की चुनौतियों पर जीत हासिल करने के लिए आगे बढ़ें। तीसरी बात, 'उपदेशक' की बातें सुनने के बाद, हमें उनके ज़रिए दी गई परमेश्वर की चेतावनी पर ध्यान देना चाहिए।

आज के वचन, उपदेशक 12:12 को देखें: “हे मेरे पुत्र, सावधान हो जा: बहुत सी किताबें लिखने का कोई अंत नहीं है, और बहुत ज़्यादा पढ़ाई-लिखाई शरीर को थका देती है।” परमेश्वर का वचन “शिक्षा, डांट-फटकार, सुधार और धार्मिकता में निर्देश देने के लिए फायदेमंद है” (2 तीमुथियुस 3:16)। हमें परमेश्वर के सत्य वचन से न केवल निर्देश, बल्कि डांट-फटकार भी मिलनी चाहिए। हालाँकि, डांट-फटकार से पहले हमें परमेश्वर से आमतौर पर क्या मिलता है? वह है ‘चेतावनी’। परमेश्वर हमें डांटने से पहले चेतावनी देते हैं। अगर हम परमेश्वर की चेतावनी पर ध्यान दें और उसे मानें, तो हमें उनकी प्रशंसा मिलेगी; लेकिन अगर हम उसे सुनकर भी न मानें, तो हमें निश्चित रूप से उनकी डांट-फटकार का सामना करना पड़ेगा।

आज के वचन, उपदेशक 12:12 में राजा सुलैमान हमें क्या चेतावनी देते हैं? संक्षेप में, यह है: बाइबिल के अलावा दुनियावी किताबों पर भरोसा न करें। ऐसा क्यों है? क्योंकि बाइबिल के विपरीत, इस दुनिया में चाहे कितनी भी किताबें क्यों न छपें, वे कोई सच्ची संतुष्टि नहीं देतीं (उनका कोई अंत नहीं है) और उन्हें पढ़ने वालों को केवल

थकान देती हैं (पार्क युन-सन)। आप क्या सोचते हैं? क्या दुनिया में उपलब्ध बहुत सी किताबें आपकी आत्मा को संतुष्ट करती हैं? क्या आप सच में मानते हैं कि केवल बाइबिल का वचन ही हमारी आत्माओं को संतुष्ट कर सकता है? हमें “केवल धर्मशास्त्र” (*सोला स्क्रिप्टुरा*) पर भरोसा करते हुए विश्वास से जीना चाहिए। ऐसा करने के लिए, हमें परमेश्वर के वचन को ग्रहण करना चाहिए, जो हमारी आत्माओं का भोजन है। इसके अलावा, उस वचन को मानकर, हम न केवल उसे पचाते हैं, बल्कि उसे अपनी आध्यात्मिक ताकत बनने देते हैं। इसलिए, हमें परमेश्वर के वचन पर दृढ़ रहना चाहिए, उस पर भरोसा करना चाहिए और परमेश्वर की इच्छा का पालन करना चाहिए, जिससे उन्हें महिमा मिले। चौथा और आखिरी बात, उपदेशक का संदेश सुनने के बाद, हमें परमेश्वर का भय मानना चाहिए और उसकी आज्ञाओं का पालन करना चाहिए।

आज के वचन, उपदेशक 12:13 को देखें: “अब सब कुछ सुना जा चुका है; बात का निष्कर्ष यह है: परमेश्वर का भय मानो और उसकी आज्ञाओं का पालन करो, क्योंकि यही सभी मनुष्यों का कर्तव्य है।” यह आयत पूरी उपदेशक की किताब का निष्कर्ष है। वह निष्कर्ष ठीक यही है कि परमेश्वर का भय माना जाए और उसकी आज्ञाओं का पालन किया जाए। यही “इंसान का फ़र्ज़” है। यहाँ, “इंसान का फ़र्ज़” का मतलब है “इंसान का पूरा जीवन”। दूसरे शब्दों में, इंसानी ज़िंदगी का मकसद परमेश्वर का डर मानना और उनके हुक्मों को मानना है, और ज़िंदगी की कीमत पूरी तरह से परमेश्वर की सेवा करने पर निर्भर करती है (पार्क युन-सन)। हमारे लिए, ज़िंदगी का “पूरा” मतलब है ज़िंदगी के मकसद और कीमत को जानना और उसी मकसद और कीमत के लिए जीना। हमारी ज़िंदगी की कीमत क्या है? यह पूरी तरह से परमेश्वर की सेवा करने पर निर्भर करती है। इसके अलावा, हमारी ज़िंदगी का मकसद क्या है? परमेश्वर का डर मानना और उनके हुक्मों को मानना। हमें इस बात पर यकीन करना चाहिए कि “परमेश्वर हर काम का हिसाब लेगा, हर छिपी हुई बात का भी, चाहे वह अच्छी हो या बुरी” (12:14) और धरती पर इंसान के तौर पर अपना फ़र्ज़ ईमानदारी से पूरा करना चाहिए।

मैं इस चिंतन को यहीं समाप्त करना चाहता हूँ। हमने सीखा है कि सभोपदेशक 12:9-14 के शब्दों के ज़रिए, परमेश्वर चाहते हैं कि हम—जिन्होंने इस किताब का सच्चा और ईमानदार संदेश सुना है—चार खास तरीकों से प्रतिक्रिया दें: (1) पहला, परमेश्वर चाहते हैं कि उनके अधिकारपूर्ण वचन से हमारे दिल और ज़मीर पर असर हो। (2) दूसरा, परमेश्वर चाहते हैं कि हम ज़िंदगी की सभी समस्याओं को उनके वचन के आधार पर सुलझाएँ। (3) तीसरा, परमेश्वर चाहते हैं कि हम बाइबल के अलावा दुनियावी किताबों पर भरोसा न करने की चेतावनी पर

ध्यान दें। (4) आखिर में, परमेश्वर चाहते हैं कि सभोपदेशक का संदेश सुनने के बाद, हम उनसे डरें और उनके हुक्मों को मानें। मेरी प्रार्थना है कि इस नश्वर दुनिया में रहते हुए, परमेश्वर से मिली समझदारी के ज़रिए हम इंसान के तौर पर अपना फ़र्ज़ ईमानदारी से पूरा करें, ताकि जब हम प्रभु के सामने खड़े हों, तो हम ये शब्द सुन सकें: "शाबाश, अच्छे और वफ़ादार सेवक।"

